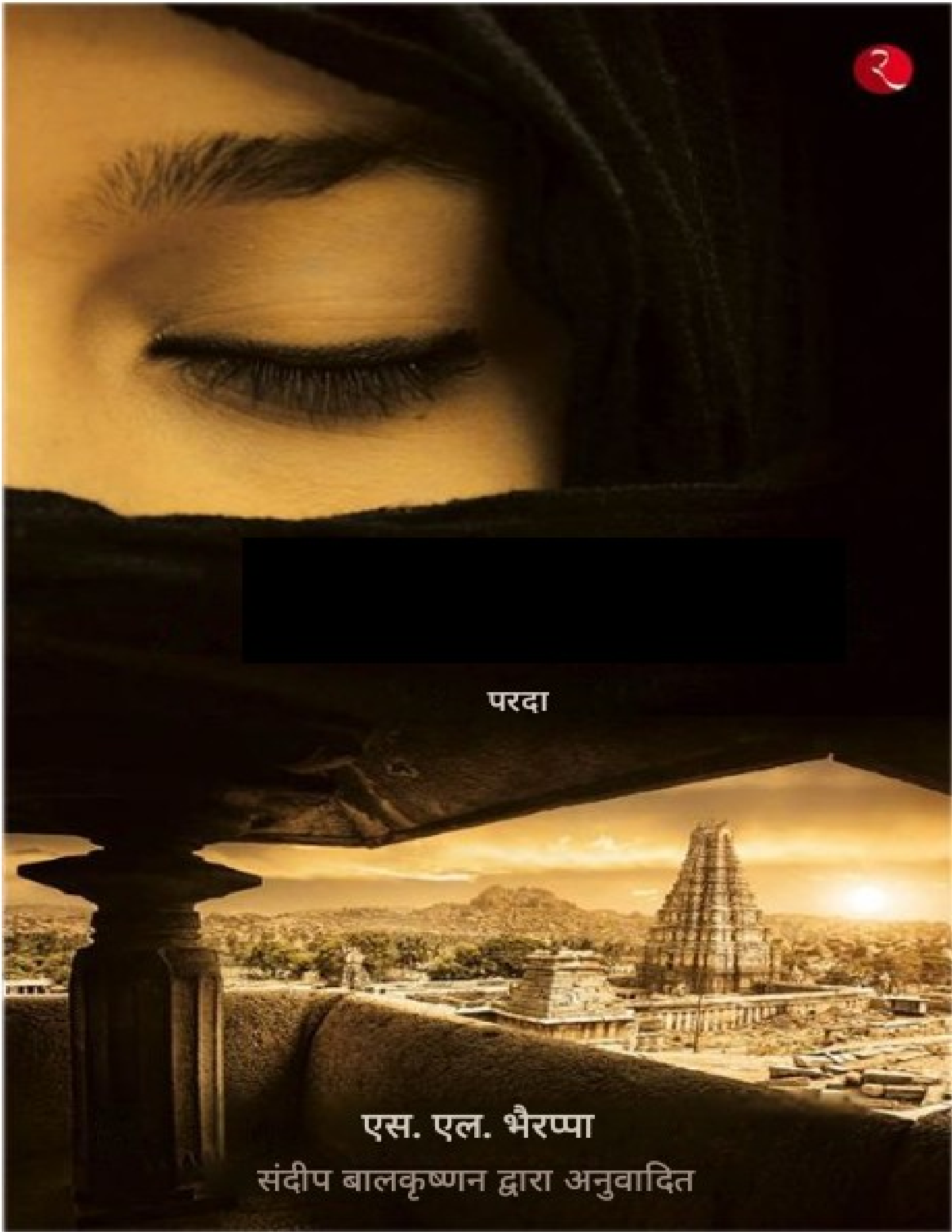

परदा

एस. एल. भैरप्पा

संदीप बालकृष्णन द्वारा अनुवादित

Table of Contents

परदा
लेखक के बारे में
पुस्तक जानकारी
कॉपीराइट
प्रस्तावना
अध्याय 1
अध्याय दो
अध्याय 3
अध्याय 4
अध्याय 5
अध्याय 6
अध्याय 7
अध्याय 8
अध्याय 9
अध्याय 10
अध्याय 11
अध्याय 12
अध्याय 13
अध्याय 14
अध्याय 15
अध्याय 16
स्वीकृतियाँ
पीछे का कवर

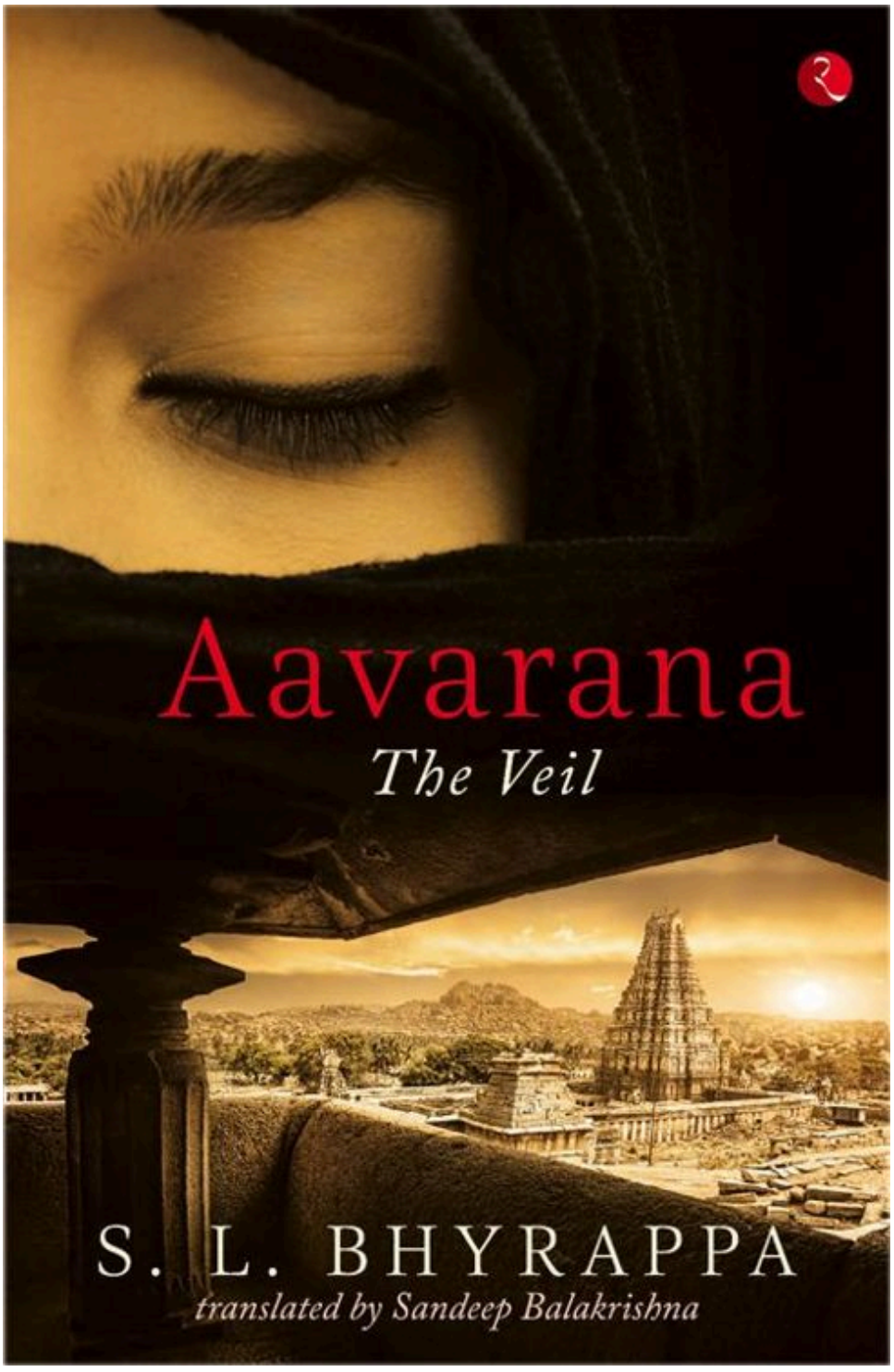
Aavarana
The Veil
S. L. BHYRAPPA
translated by Sandeep Balakrishna

AAVARANA

डॉ. एस.एल. भैराप्पा को कन्नड़ साहित्य के सबसे महान जीवित उपन्यासकार के रूप में व्यापक रूप से जाना जाता है। पचास वर्षों से अधिक के अपने साहित्यिक जीवन में उन्होंने बाईस उपन्यास लिखे हैं, जिनका अनुवाद उर्दू सहित अधिकांश प्रमुख भारतीय भाषाओं में हो चुका है। उनकी रचनाओं के कई पुनर्मुद्रण हो चुके हैं और वे अनेक विद्वतापूर्ण अध्ययनों के साथ-साथ सार्वजनिक बहसों का भी विषय रही हैं। उनकी पुस्तकों में से, दातु को साहित्य अकादमी पुरस्कार मिला, जबकि मंद्रा के लिए उन्हें प्रतिष्ठित सरस्वती सम्मान से सम्मानित किया गया। वे मैसूर में रहते हैं।

संदीप बालकृष्ण एक लेखक, स्तंभकार, अनुवादक और पूर्व आईटी पेशेवर हैं। वे 'टीपू सुल्तान: द टायरेन्ट ऑफ मैसूर' पुस्तक के लेखक हैं और वर्तमान में विजयनगर साम्राज्य के इतिहास पर शोध कर रहे हैं। संदीप इंडियाफैक्ट्स के प्रमुख हैं, जो एक ऑनलाइन पोर्टल है जिसका उद्देश्य मीडिया और सार्वजनिक चर्चा में संतुलन और तथ्यात्मक सटीकता को बहाल करना है।

परदा

एस. एल. भैरप्पा

संदीप बालकृष्णन द्वारा अनुवादित

प्रकाशित
रूपा पब्लिकेशन इंडिया प्राइवेट लिमिटेड 2014
7/16, Ansari Road, Daryaganj
नई दिल्ली 110002

बिक्री केंद्र:

इलाहाबाद बेंगलुरु चेन्नई
Hyderabad Jaipur Kathmandu
Kolkata Mumbai

कॉपीराइट © एस.एल. भैराप्पा 2014
अनुवाद का कॉपीराइट © संदीप बालकृष्ण 2014

यह एक काल्पनिक रचना है। इस उपन्यास में उल्लिखित कुछ प्रसिद्ध ऐतिहासिक और सार्वजनिक हस्तियों को छोड़कर, सभी स्थितियाँ, घटनाएँ, संवाद और पात्र लेखक की कल्पना की उपज हैं और इन्हें वास्तविक नहीं माना जाना चाहिए। इनका उद्देश्य वास्तविक घटनाओं या व्यक्तियों का चित्रण करना या रचना के पूर्णतः काल्पनिक स्वरूप को बदलना नहीं है। अन्य सभी मामलों में, जीवित या मृत व्यक्तियों से कोई भी समानता पूरी तरह से संयोगवश है।

ईआईएसबीएन: 9788129131966

सर्वाधिकार सुरक्षित।
प्रकाशक की पूर्व अनुमति के बिना इस प्रकाशन के किसी भी भाग को किसी भी रूप में या किसी भी माध्यम से, इलेक्ट्रॉनिक, यांत्रिक, फोटोकॉपी, रिकॉर्डिंग या अन्य किसी भी प्रकार से पुन: प्रस्तुत, प्रसारित या किसी पुनर्प्राप्ति प्रणाली में संग्रहीत नहीं किया जा सकता है।

लेखक के नैतिक अधिकार का दावा किया गया है।

यह पुस्तक इस शर्त के अधीन बेची जाती है कि प्रकाशक की पूर्व सहमति के बिना, इसे व्यापारिक रूप से या किसी अन्य तरीके से, उधार नहीं दिया जाएगा, पुनर्विक्रय नहीं किया जाएगा, किराए पर नहीं दिया जाएगा या किसी अन्य प्रकार से प्रसारित नहीं किया जाएगा, सिवाय उस रूप में जिसमें यह प्रकाशित हुई है।

प्रस्तावना

सत्य को छुपाने को 'आवरण' और असत्य को फैलाने को 'विक्षेप' कहते हैं। जब ये क्रियाएं व्यक्तिगत स्तर पर होती हैं, तो इन्हें 'अविद्या' कहा जाता है और जब ये किसी समूह या विश्व स्तर पर होती हैं, तो इन्हें 'माया' कहा जाता है। वेदांतियों द्वारा प्रतिपादित इन अवधारणाओं पर बौद्ध दार्शनिकों ने भी सहमति जताई है।

भारतीय दार्शनिक विचारधाराओं को सत्य और असत्य की समस्या को दर्शनशास्त्र के स्तर तक उठाकर स्पष्ट करने का गौरव प्राप्त है। हालांकि, एक समस्या मुझे बचपन से ही परेशान करती रही है। कुछ साल पहले जब मैंने साक्षी (द विटनेस) लिखा था, तब यह समस्या मुझे व्यक्तिगत रूप से भी परेशान कर रही थी। उपन्यास का अंत इस प्रश्न से होता है, 'हे प्रभु, असत्य की जड़ क्या है? क्या इसे कभी नष्ट नहीं किया जा सकता?' हालांकि इस प्रश्न ने साक्षी उपन्यास का अंत कर दिया, लेकिन इससे न तो मेरी अंतरात्मा को शांति मिली और न ही मेरी बुद्धि को। हालांकि, आवरण लिखने के बाद, मुझे यह महसूस हुआ - और आज भी होता है - कि सत्य और असत्य की यही समस्या सामाजिक और राष्ट्रीय दोनों आयामों को ग्रहण कर चुकी है।

हम अपने आप को, अपने राष्ट्र के इतिहास को, या वास्तव में, पूरे विश्व के इतिहास को तब तक सही मायने में नहीं समझ सकते, जब तक हम झूठे ज्ञान, इच्छा और कर्म के बंधनों से खुद को मुक्त नहीं कर लेते और बुद्धि को तटस्थ अवलोकन की अवस्था तक नहीं पहुंचा देते।

~

इस उपन्यास में ऐतिहासिक तत्वों के संदर्भ में, मैं मौलिकता का दावा नहीं करता। पात्रों के हर विवरण और व्यवहार का वर्णन प्रमाणों द्वारा समर्थित है और कलात्मक स्वतंत्रता की सीमाओं का उल्लंघन किए बिना यह पुस्तक का अभिन्न अंग है। रचनात्मक लेखक और पारखी पाठक दोनों ही उपन्यास की लेखन शैली के विकसित होते ही इस पहलू को समझ जाएंगे। इस उपन्यास के भीतर उपन्यास लिखने वाली पात्र अपने लेखन के लिए आवश्यक ऐतिहासिक प्रमाण प्रस्तुत करती है। मौलिकता का मेरा एकमात्र दावा इसे दिए गए स्वरूप तक सीमित है। यदि ऐतिहासिक सत्य की पृष्ठभूमि में कोई साहित्यिक गुण उत्पन्न हुआ है, तो मैं इस उपन्यास को साहित्य की एक सफल कृति मानता हूँ।

इतिहास लेखन का कार्य शुरू करने वाले किसी भी व्यक्ति को हर छोटी से छोटी बात को पुष्ट करने के लिए ठोस शोध करना अनिवार्य है। लेखक का उत्तरदायित्व उस

विषय की ऐतिहासिक सत्यता के प्रति होता है जिस पर उसका कार्य आधारित है। जब सत्य और सौंदर्य की तुलना की जाती है, तो लेखक की निष्ठा हमेशा सत्य के पक्ष में होनी चाहिए। किसी लेखक को सत्य का उल्लंघन करने और केवल एक रचनात्मक कलाकार होने का बहाना बनाने का नैतिक अधिकार नहीं है।

सत्य की खोज में पाठक की भी लेखक के समान ही जिम्मेदारी होती है। उसे वस्तुनिष्ठ सत्य—तथ्यात्मक और कलात्मक दोनों—के प्रकाश में पात्रों और परिस्थितियों को समझना चाहिए। इस प्रकार की मानसिक संरचना साहित्यिक कृति को पढ़ने के अनुभव का आनंद लेने में सहायक होती है, न कि व्यक्तिगत पूर्वाग्रहों के साथ उसे पढ़कर उत्तेजित होने में। हम अपनी पिछली पीढ़ियों द्वारा की गई गलतियों के लिए जिम्मेदार नहीं हैं। हालांकि, यदि हम स्वयं को उनके समान मानते हैं और स्वयं को उनका उत्तराधिकारी समझते हैं, तो हमें उनकी गलतियों की जिम्मेदारी भी स्वीकार करनी होगी। हम तब तक परिपक्वता प्राप्त नहीं कर पाएंगे जब तक हम यह विवेक विकसित नहीं कर लेते कि हमें अपने पूर्वजों के किन कार्यों को अस्वीकार करना है और किन उपलब्धियों से प्रेरणा लेनी है। यदि इतिहास से सबक सीखना ज्ञानोदय का प्रतीक है, तो उससे मुक्त होना भी उतना ही महत्वपूर्ण है। यह बात हर धर्म, जाति, पंथ और समूह पर समान रूप से लागू होती है।

—एस.एल. भैराप्पा

1

शाम की ठंडी हवा धीरे-धीरे रज़िया के बालों को छू रही थी, मानो उन्हें सहला रही हो। वह खिड़की से बाहर देख रही थी। हवा का प्रवाह तुंगभद्रा नदी के किनारे बने सरकारी गेस्ट हाउस की सबसे ऊपरी मंजिल पर स्थित उसके कमरे में आ रहा था और हम्पी के खंडहरों में दिन भर घूमने से थके उसके शरीर को सुकून दे रहा था। 'क्या मैं चाय मंगवाऊं?' आमिर का सवाल अनसुना रह गया। जब उसने कोई जवाब नहीं दिया, तो वह असमंजस में पड़ा रहा। शायद हवा के कारण उसकी आवाज़ दब

गई थी, या वह बस अपने किसी खास मूड में थी। और यह पहली बार नहीं था। वह उसकी अचानक, समझ से परे चुप्पी से परिचित था। वह भी उसकी तरह एक कलाकार थी, और अपनी कुछ आदतों की मालिक थी। लेकिन अब सूर्यास्त की हवा के स्पर्श से लहराती नदी का नज़ारा बेहद रोमांटिक था। उसे बोलना ही था। 'क्या तुम्हें पता है कि इस गोधूलि बेला में तुम्हारे बाल कितने खूबसूरत लग रहे हैं? तुम्हें इन्हें रंग लेना चाहिए था।' 'चमक और भी प्यारी लगेगी!' उसने प्यार भरी कोमल आवाज़ में कहा। उसने कोई जवाब नहीं दिया। रंग लगाने वाली बात कोई नई नहीं थी। पहले भी कई बार उसने इसका जवाब देते हुए कहा था, 'मैं अपने बाल बिल्कुल वैसे ही रंगवाने को तैयार हूँ जैसे आपको पसंद हैं, लेकिन आपको अपनी दाढ़ी भी रंगवानी होगी।' उसने एक पल के लिए इस पर विचार किया। घनी काली मौलाना दाढ़ी में कोई समस्या नहीं थी, लेकिन उसकी दाढ़ी मार्क्सवादी-बौद्धिक किस्म की थी, जिसे हर हफ्ते किसी विशेषज्ञ से ट्रिम करवाना पड़ता था। हेयर स्टाइलिस्ट वैसे भी रंगे हुए हिस्से को काट देता था। पुरुषों में सफेद बाल आकर्षण, उपलब्धि और यहाँ तक कि बुद्धिमत्ता का प्रतीक होते हैं, लेकिन महिलाओं में ये केवल बुढ़ापे की निशानी होते हैं। लेकिन उसे उसकी बात समझ नहीं आई और उसने पुरुषों और महिलाओं के समान अधिकारों के बारे में बात करना शुरू कर दिया। खैर, आगे कुछ कहना और उस पुराने झगड़े को फिर से छेड़ने का कोई फायदा नहीं था।

चाय और बिस्कुट लेकर आया वेटर उनके डिनर के ऑर्डर का इंतज़ार कर रहा था। उसने धीरे से कहा कि आमिर जो भी ऑर्डर करेगा, उसे कोई दिक्कत नहीं होगी और चाय का कप हाथ में लिए खड़ी होकर खिड़की के पास लौट गई, एक बार फिर अपने विचारों में खो गई। यह उसके स्वभाव के बिल्कुल विपरीत था। जब भी वे बाहर जाते, रज़िया आमतौर पर मेनू की ज़िम्मेदारी खुद संभालती थी और ऑर्डर करने के लिए चीज़ें ध्यान से चुनती थी। आमिर ने वेटर से कहा, 'अगर चिकन पुलाव है तो ठीक है, अगर नहीं है तो चिकन बिरयानी।'

'आज मांसाहारी भोजन उपलब्ध नहीं है, महोदय। हमारे यहाँ कोई और मेहमान नहीं हैं। लेकिन मैं आपके लिए एक शानदार शाकाहारी भोजन बना दूँगा, महोदय—चपाती और आलू की करी, साथ में चावल, सांभर और दही।'

अमीर गुस्से से आग बबूला हो गया, 'मैं सुबह से शाकाहारी खाने पर जी रहा हूँ! जब मैं कहता हूँ कि मुझे दिन में कम से कम एक बार मांसाहारी भोजन चाहिए, तो

आपको यह समझना कितना मुश्किल है? बिना मांस के मैं सामान्य रूप से कैसे काम कर पाऊँगा? क्या आप चाहते हैं कि मैं यहाँ के खाने की गुणवत्ता के बारे में आपके मालिकों से शिकायत करूँ? हम सरकार के मेहमान हैं!'

वेटर, जो इस तरह के गुस्से का आदी था, ने कोई जवाब नहीं दिया, लेकिन उसकी शर्मिंदगी भरी मुस्कान भी नहीं बदली। वह भी जानता था कि आमिर को सरकारी गेस्ट हाउसों के कामकाज की जानकारी थी। आमिर का गुस्सा सिर्फ एक रणनीति थी, लगभग औपचारिक, ऐसे वेटरों को उनकी औकात में रखने के लिए किया गया अभ्यास। आमिर मान गया, 'ठीक है। लेकिन मैं कल नाश्ते में ऑमलेट ही खाना चाहता हूँ!'

'जी हां, महोदय! मैं अभी हॉस्पेट से अंडे मंगवाता हूं,' वेटर ने जवाब दिया और चला गया।

अचानक आमिर को दिनभर की सैर से अपने शरीर पर चिपके पसीने का एहसास हुआ। थोड़ी देर बाद, वह शॉवर के नीचे था और अपने शरीर पर गिरते पानी का आनंद ले रहा था। जब वह बाहर आया, तो रजिया अभी भी खिड़की से नहीं हटी थी। उसने अपनी इस्त्री की हुई पैंट पहनी और कहा, 'मैं बांध पर टहलने जा रहा हूँ। आधे घंटे में वापस आ जाऊँगा,' और वह चला गया।

वह ठंडी हवा में धीरे-धीरे चल रहा था। उसे अच्छा लग रहा था। उसने सोचा, इस बांध को छोड़कर पूरा इलाका खून से लथपथ भट्टी जैसा था। हम्पी तो विशेष रूप से जहन्नम था, धधकती नरक जैसी जगह। उन्होंने इसे अपनी राजधानी क्यों चुना? क्या इसलिए कि यह सुरक्षित था? विजयनगर साम्राज्य के संस्थापक हक्का और बुक्का हम्पी के बकरी चराने वाले थे। क्या इसलिए कि वे इस जगह से अच्छी तरह परिचित थे? यह स्पष्टीकरण अधिक तर्कसंगत लग रहा था। वैसे भी, ऐसी छोटी-छोटी बातों पर ध्यान देना रजिया का काम था। शोध, पटकथा और वर्णन की जिम्मेदारी उसी की थी।

लेकिन शाम को गेस्ट हाउस लौटने के बाद से ही वह इतनी चिड़चिड़ी क्यों थी? दरअसल, यह दोपहर के आसपास शुरू हुआ था। अब यह बात उसे परेशान करने लगी थी। कलाकार चाहे कितने भी सनकी क्यों न हों, वे मूड का बहाना बनाकर अनिश्चित काल तक अपने काम की उपेक्षा नहीं कर सकते। उसे याद आया कि इस मुद्दे पर वे पहले भी कई बार झगड़ चुके थे। फिल्म निर्माण एक गंभीर कला है—और एक खर्चीला व्यवसाय भी—जिसे किसी के मूड और सनक के भरोसे नहीं छोड़ा जा

सकता। ऐसा करने से अंततः निर्माता आत्महत्या कर लेगा। सौभाग्य से, रज़िया का शूटिंग में लगभग कोई दखल नहीं था। फिर भी, जैसा कि आमिर ने कुछ चिढ़कर याद किया, समय सीमा के भीतर स्क्रिप्ट जमा करने का उसका रिकॉर्ड हमेशा खराब रहा था। उसे आश्चर्य हुआ कि क्या वह हम्पी प्रोजेक्ट के लिए भी अपनी इस अनियमितता को बरकरार रखेगी। यह बात उसे चिंतित कर रही थी। हम्पी प्रोजेक्ट सीधे केंद्र सरकार के विरासत विभाग को रिपोर्ट करता था। यह अपने उद्देश्य में महत्वाकांक्षी, अपने दायरे में विशाल और क्रियान्वयन की तत्काल आवश्यकता वाला प्रोजेक्ट था। इस पहल में भारत के सभी प्रमुख विरासत स्थलों पर वृत्तचित्र बनाना शामिल था। हम्पी प्रोजेक्ट की जिम्मेदारी उसे सौंपी गई थी। इससे आमिर के मन में एक महत्वपूर्ण बात याद आ गई - वृत्तचित्रों को फिल्माने के तरीके के बारे में सरकार का अलिखित फरमान: मंदिर के खंडहरों, टूटी मूर्तियों और क्षतिग्रस्त कलाकृतियों की तस्वीरों को नरम तरीके से दिखाया जाना चाहिए ताकि दर्शकों में मुस्लिम विरोधी भावनाएं न भड़कें।

इस याद ने एक और सवाल खड़ा कर दिया: इस फरमान के पीछे सरकार का तर्क। हाल ही में हिंदू कट्टरपंथ की तीव्रता बढ़ गई थी। उसने सोचा, यह सच है कि बहुसंख्यक वर्ग के अत्याचार से बुरा कोई अत्याचार नहीं होता। अगर बहुसंख्यक वर्ग पूरी तरह कट्टरपंथी बन गया, तो देश के एकजुट रहने की कोई उम्मीद नहीं रह जाएगी। करीब एक महीने पहले, हिंदू कट्टरपंथ में वृद्धि के भयावह सबूत सामने आए थे। ठीक एक महीना और आठ दिन पहले। वह भयानक दिन। वह घड़ी जब आजादी के बाद से अल्पसंख्यकों को मिली सुरक्षा की चादर चकनाचूर हो गई। वह क्षण जब पूरा देश डर से कांप उठा। वह अकेली घटना जिसने अंतरराष्ट्रीय मंच पर देश की प्रतिष्ठा को धूमिल कर दिया। आमिर ने इस पर एक पल के लिए विचार किया—मैं अयोध्या नहीं गया हूँ, लेकिन मुझे पता है कि वहाँ क्या हाल है। वह जगह पूरी तरह से सभी के लिए बंद है, चौबीसों घंटे पुलिस सुरक्षा और गश्त लगी रहती है। एक महीना और आठ दिन और सब कुछ बदल गया। बाबरी मस्जिद, जो भारत के अल्पसंख्यकों के लिए पवित्र मस्जिद थी, को ध्वस्त करने के बाद वे और क्या उम्मीद कर सकते थे? लेकिन महज पुलिस कार्रवाई या बल प्रयोग से भविष्य में ऐसी घटनाओं को रोका नहीं जा सकेगा। ऐसा प्रतीत होता था कि सरकार को यह अहसास हो गया था कि नागरिकों के मन में विभिन्न धर्मों के प्रति सहिष्णुता का भाव पैदा करना समय की

सबसे बड़ी आवश्यकता है। विरासत स्थलों पर बनी वृत्तचित्र फिल्में सामाजिक और धार्मिक सहिष्णुता को बढ़ावा देने के लिए चलाए जा रहे मूलभूत कार्यक्रमों की एक श्रृंखला के व्यापक उद्देश्य का हिस्सा थीं। साथ ही, एक और तात्कालिक आवश्यकता अल्पसंख्यकों को यह आश्वस्त करना था कि वे बहुसंख्यक वर्ग के कट्टरवाद से सुरक्षित हैं। सत्ताधारी दल, धर्मनिरपेक्ष दल और वामपंथी दल इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए शुरू किए गए सभी उपायों - शिक्षा, मीडिया प्रचार और सभी क्षेत्रों में अल्पसंख्यकों के लिए अधिक प्रतिनिधित्व और दृश्यता - के समर्थन में एकजुट थे। इससे भी महत्वपूर्ण बात यह थी कि उनके बारे में नकारात्मक बोलने वाले किसी भी व्यक्ति को कड़ी सजा दी जाए।

इससे उनके मन में संदेह पैदा हुआ—क्या उन्होंने मुझे यह प्रोजेक्ट सिर्फ इसलिए दिया क्योंकि मैं अल्पसंख्यक समुदाय से हूं या इसलिए कि मैं वाकई एक प्रतिभाशाली फिल्म निर्माता हूं? उन्होंने सोचा, उनकी राय चाहे जो भी हो, मुझे पता है कि मैं अच्छा हूं...और...वे भी यह जानते हैं। यह ऐसा प्रोजेक्ट नहीं है जिसे कोई साधारण फिल्म निर्माता संभाल सके। अगर यह इतना चुनौतीपूर्ण न होता तो मैं इसे स्वीकार नहीं करता।

लेकिन सबसे बड़ी चुनौती दीर्घकालिक वादा था। सरकार ने पहले ही संकेत दे दिया था कि अगर वे हम्पी परियोजना को समय पर और उनकी अपेक्षाओं के अनुरूप पूरा कर देते हैं, तो उन्हें शेष परियोजनाएं मिल सकती हैं। इसका मतलब था करोड़ों का राजस्व। उनके विचार हम्पी की ओर लौट गए, एक ऐसी जगह जहाँ वे अतीत में कई बार जा चुके थे। बस इस बार उन्हें इसे एक अलग नज़रिए से देखना था। लेकिन रज़िया ही उनकी मार्गदर्शक थीं, उन्होंने खुशी से कहा। वह विशेषज्ञ साहित्य पढ़ेंगी, नोट्स बनाएंगी, स्क्रिप्ट और वॉइस-ओवर के लिए नरेशन तैयार करेंगी। निर्देशक के रूप में, मैं स्टिल फोटोग्राफर को तस्वीरें लेने का निर्देश दूंगा, उन्हें स्क्रिप्ट के अनुसार व्यवस्थित करूंगा और वास्तविक डॉक्यूमेंट्री की शूटिंग करूंगा।

अगला कदम वैसे तो ज़रूरी नहीं था, लेकिन वह शूटिंग के दौरान रज़िया की मौजूदगी चाहता था। उसका सुझाव 90 प्रतिशत मामलों में बहुत उपयोगी साबित हुआ था, चाहे उसका मूड कैसा भी हो। और फिर अचानक उसे एहसास हुआ कि आज वह सिर्फ़ उदास नहीं थी। वह निराश, लगभग मायूस लग रही थी... शायद वह

थक गई थी। हम्पी की गर्मी आम नहीं थी। यह हर दिशा से लहरों की तरह आती थी, विशाल चट्टानों से ज़बरदस्त तीव्रता के साथ निकलती थी।

उन्होंने एक कार किराए पर ली थी, जिसका उन्होंने ज़्यादा इस्तेमाल नहीं किया क्योंकि रज़िया को खंडहर पैदल देखना ज़्यादा पसंद था। वह हर खंडहर पर रुकती और बारीकी से उसका निरीक्षण करती। इसका मतलब था कि उन्हें लंबे समय तक एक ही जगह पर खड़े रहना पड़ता था, झुकना, बैठना और पैर की उंगलियों पर बैठना पड़ता था ताकि वे और करीब से देख सकें। लगातार तीन दिनों तक ऐसा करने से उनके शरीर में इतना तनाव आ गया कि चौवन साल की महिला के लिए इसे सहना मुश्किल था... लेकिन हमारी उम्र एक जैसी है, और मैं बिल्कुल ठीक महसूस कर रही हूँ। उन्होंने सोचा—मैं बहुत सावधानी से नहाती हूँ और हर दिन लंबी सैर करती हूँ। वह घमंडी मुस्कान के साथ मुस्कुराए। लैंगिक समानता को लेकर चाहे जितना शोर हो, कोई भी बुनियादी सच्चाई को नहीं बदल सकता: एक महिला हमेशा शारीरिक और बौद्धिक रूप से कमज़ोर होती है। ईश्वर की रचना झूठी नहीं हो सकती।

रात के खाने के दौरान रजिया कुछ अंतर्मुखी और गुमसुम लग रही थी। बाद में बिस्तर पर उसने कहा, 'मुझे लगता है हमने यहाँ सब कुछ कवर कर लिया है। अगर हमें पता होता कि आज ही काम खत्म हो जाएगा, तो हम आज रात बैंगलोर जाने वाली ट्रेन पकड़ सकते थे। लेकिन एक तरह से यह अच्छा ही है। कल हमारे पास आराम करने के लिए पूरा दिन है और हम रात को ट्रेन पकड़ लेंगे। वैसे भी आपके पास और भी शोध कार्य है, या आप वर्णन की रूपरेखा पर काम करना शुरू कर सकते हैं। क्या आप वर्णन को याद करके तैयार कर सकते हैं? अगर आपको और सामग्री की आवश्यकता हो, तो हम एक अच्छे स्थानीय गाइड को किराए पर ले सकते हैं जो हमें दिखाई जाने वाली प्रत्येक वस्तु के लिए प्रासंगिक ऐतिहासिक जानकारी देगा।'

जब उसने कोई जवाब नहीं दिया तो उसे शक हुआ: क्या वह महज़ खराब मूड में थी या उससे नाराज़ थी? दिन भर की घटनाओं में से उसे कुछ भी याद नहीं आ रहा था कि उसने ऐसा क्या किया था जिससे वह नाराज़ हो गई हो। और फिर, उसने तुरंत सोचा, महिलाओं के इस अजीब व्यवहार का कोई तार्किक कारण नहीं होता। उसकी इस बार की चुप्पी ने उसे कुछ कहने को नहीं छोड़ा था, और बातचीत शुरू करने की कोई भी कोशिश उसके आत्मसम्मान को ठेस पहुँचाती। और यह पहली बार नहीं था जब इतने सालों के वैवाहिक जीवन में उसके स्वाभिमान को ठेस पहुँचने का खतरा

था। लेकिन उसने इन सभी को गरिमा के साथ सहन किया था, अहंकार के टकराव को वैवाहिक जीवन का एक अभिन्न अंग मान लिया था।

उसका ध्यान खुली खिड़कियों से कमरे में आती ठंडी हवा और बांध की दीवार से लगातार टकराती नदी की लहरों की आवाज़ पर केंद्रित हो गया। उसने खिड़की के पास खड़े होकर नदी को बहते हुए देखने का सोचा, लेकिन उसे एहसास हुआ कि यह व्यर्थ प्रयास होगा। अंधेरे में कुछ भी देखना असंभव था। रज़िया ने आखिरकार चुप्पी तोड़ी और बोली, 'इस तरह के विषय पर स्क्रिप्ट और नरेशन लिखना इतना आसान नहीं है। हमें दर्शकों को दिखाई जाने वाली हर तस्वीर और कलाकृति के लिए सटीक ऐतिहासिक पृष्ठभूमि प्रदान करनी होगी। तस्वीरें और शब्द एक ही कहानी बयां करने चाहिए। हम दर्शकों को कुछ दिखाकर और उसे कुछ और बताकर मूर्ख नहीं बना सकते... कैमरे से झूठ नहीं बुलवाया जा सकता। लेकिन अगर आपको लगता है कि यह असहज साबित होगा, तो अप्रिय ऐतिहासिक सच्चाइयों को न दिखाएं; ऐसे में हम्पी डॉक्यूमेंट्री बनाना भी व्यर्थ है, है ना?'

उन्हें राहत मिली। 'बहुत खूब! और मैं सहमत हूँ! लेकिन मुझे उदाहरण दीजिए कि आपका क्या मतलब है। एक कलाकार निश्चित रूप से अधिकांश लोगों की तुलना में शर्मिंदगी और लज्जा की कृत्रिम धारणाओं को दूर करने में कहीं अधिक सक्षम होता है और दुनिया के सामने सच्चाई दिखाने से नहीं डरता!'

उन्होंने कहा, “क्या आपको उग्र नरसिम्हा की मूर्ति याद है? अपने वर्तमान विकृत रूप में, यह पहचानना मुश्किल है कि यह वास्तव में उग्र नरसिम्हा है या लक्ष्मी नरसिम्हा। खैर, यह अपनी कारीगरी, अनुपात, संतुलन, जटिलता और कलात्मकता के लिए सचमुच अनुकरणीय है! इसे मात्र देखने मात्र से ही आप एक अलग ही स्तर पर पहुँच जाते हैं! लेकिन मूर्ति के हाथ-पैर किसने तोड़े? और विजया विट्ठला मंदिर को किसने ध्वस्त किया? मूल रूप से, नरसिम्हा की मूर्ति विजया विट्ठला के समान आकार के एक मंदिर परिसर के भीतर थी। मंदिर के अंदर लकड़ी के बड़े-बड़े लट्ठों के ढेर लगा दिए गए और उनमें आग लगा दी गई। आग ने धीरे-धीरे कठोर पत्थर को तब तक जलाया जब तक कि उसमें दरारें नहीं पड़ गईं। और फिर नरसिम्हा की मूर्ति के हाथ-पैर लोहे की बड़ी छड़ों से तोड़ दिए गए। यहाँ के अधिकांश मंदिरों के साथ ऐसा ही व्यवहार किया गया।” उदाहरण के लिए, एक अनाड़ी व्यक्ति भी आसानी से पहचान सकता है कि विजया विट्ठला मंदिर को भी दो चरणों में ध्वस्त किया गया था,

क्योंकि नष्ट हुए मंदिरों के जले हुए पत्थरों के अवशेष अभी भी उस स्थान के आसपास दिखाई देते हैं। यदि हम यह सब दिखाते हैं, तो हमें दर्शकों को यह भी बताना होगा कि इन मंदिरों को किसने और क्यों नष्ट किया—यदि हम वृत्तचित्र की विश्वसनीयता को लेकर गंभीर हैं। यदि हम गंभीर नहीं हैं, तो हमारा वर्णन बेईमान होगा।

'बिल्कुल, बिल्कुल! दर्शकों को मध्यकालीन सामंती समाज का सच्चा इतिहास और हम्पी के विनाश का कारण बनने वाली सामंतवाद की ताकतों के बारे में जानना चाहिए!' आमिर ने उत्साह से बोलते हुए भाषण देना शुरू कर दिया। 'इस विषय पर मेरी अपनी राय है, जिससे मुझे पूरा यकीन है कि हमारे बुद्धिजीवी भी सहमत होंगे। विजयनगर साम्राज्य अपने समय का अतुलनीय रूप से सबसे धनी साम्राज्य था, जहाँ सोने, हीरों, मोतियों और रत्नों को बल्लों में मापा जाता था। हालाँकि यह निश्चित रूप से केंद्रीकृत अर्थव्यवस्था का एक अत्यंत परिष्कृत रूप दर्शाता है, हमें दूसरी, भयावह सच्चाई से अनजान नहीं रहना चाहिए: यह इतनी विशाल संपत्ति कैसे जमा कर पाया? एक सामंती समाज में, यह केवल श्रमिक वर्गों के क्रूर शोषण से ही संभव था। स्वाभाविक रूप से श्रमिक वर्गों के भीतर विद्रोह पनप रहा था। उन्होंने विजयनगर के विरोधियों के साथ गुप्त रूप से साजिश रची और उन्हें विजयनगर पर हमला करने के लिए उकसाया। युद्ध में, वे शत्रु के साथ हो गए और अंततः उस अन्यायपूर्ण पूंजीवादी शासन को पराजित कर दिया जिसने उन्हें इतने लंबे समय तक सताया था। लेकिन वे यहीं नहीं रुके। समाज की संपत्ति में अपना उचित हिस्सा न मिलने के कारण सदियों से दबी हुई नाराजगी मंदिरों और मूर्तियों के बड़े पैमाने पर विनाश के रूप में प्रकट हुई, जो उनके पूर्व शासकों की धार्मिक मान्यताओं के भौतिक प्रतीक थे। इस व्याख्या के बारे में आपकी क्या राय है? मुझे यकीन है कि हमारे बुद्धिजीवी इससे सहमत होंगे।

वह कुछ नहीं बोली। उसकी चुप्पी ही उस क्रांतिकारी व्याख्या को खोज निकालने की उसकी तीव्र उत्तेजना को शांत करने के लिए काफी थी। कुछ मिनटों बाद वह बोली, "क्या आपको एहसास नहीं है कि आपकी व्याख्या कितनी अविश्वसनीय लगती है? आप दो असंबद्ध ऐतिहासिक घटनाओं को जोड़ने की कोशिश कर रहे हैं। जिस वर्ग विद्रोह की आप बात कर रहे हैं, वह औद्योगिक क्रांति के बाद हुआ, जबकि विजयनगर साम्राज्य का विनाश एक विशुद्ध कृषि प्रधान समाज में हुआ। इससे भी महत्वपूर्ण बात यह है कि जिन मूर्तिकारों ने ये मंदिर बनाए और जिन कारीगरों ने सुंदर मूर्तियाँ गढ़ीं, वे केवल जीविका कमाने के लिए अपना पेशा नहीं अपनाते थे। उनका

पेशा उनके धर्म से अलग नहीं था; मंदिर निर्माण उनके उस धर्म के प्रति उनकी गहरी श्रद्धा की अभिव्यक्ति थी। यह अकल्पनीय है कि ये लोग वास्तव में इतने सुनियोजित और विस्तृत मंदिर विध्वंस में शामिल होंगे, और हथौड़ों और लोहे की छड़ों से अपने ही देवताओं की मूर्तियों को जलाकर तोड़ देंगे। उनकी तुलना ताजमहल बनाने वाले कारीगरों से कीजिए। उन्होंने अपनी कला का उपयोग केवल जीविका कमाने के साधन के रूप में किया।" एक विजयी राजा के लिए अपने पराजित प्रतिद्वंद्वी की संपत्ति लूट लेना पूरी तरह से तर्कसंगत है। लेकिन जो बात मेरी समझ से परे है, वह यह है कि एक विजयी राजा को पराजित शत्रु के धर्म के मंदिरों, मूर्तियों और अन्य प्रतीकों को नष्ट करने के लिए प्रेरित करने वाली मानसिकता क्या है।

अमीर अब चुप हो गया था। उसने आगे कहा, "मुझे अपने बचपन की एक घटना आज भी याद है; मुझे लगता है मैं लगभग दस साल की थी। मेरा गाँव, नरसपुरा, और पास का गाँव, कलेनहल्ली, आपस में नफरत से भरे हुए थे। क्योंकि मेरा गाँव ऊँचाई पर स्थित था, इसलिए आसपास की पहाड़ियों से सारा बारिश का पानी बहकर हमारे गाँव की झील में जमा हो जाता था। लेकिन कलेनहल्ली गाँव बहुत नीचे स्थित था, इसलिए वहाँ बहुत कम पानी आता था और उसका जलाशय हमेशा खाली रहता था। वहाँ के खेतों में सिंचाई ठीक से नहीं होती थी और फसलें सूख जाती थीं क्योंकि वहाँ भूजल लगभग न के बराबर था, और उनके कुओं में कभी भी पर्याप्त पानी नहीं होता था। कलेनहल्ली का जलाशय तभी भरता था जब बहुत तेज बारिश से हमारे जलाशय का बांध टूट जाता था और पानी उनके जलाशय में बह जाता था। उस साल, नरसपुरा समेत पूरे इलाके में भयंकर सूखा पड़ा था। पानी के सभी स्रोत सूख गए थे। लेकिन कलेनहल्ली के लोगों ने यह निष्कर्ष निकाला कि हमने जानबूझकर उन्हें पानी देने से इनकार कर दिया था। एक रात, उस गाँव के कुछ युवकों ने हमारे जलाशय से निकलने वाले छोटे से निकास को खोदकर उसमें भारी मात्रा में डायनामाइट विस्फोट कर दिया।" तटबंध टूट गया और जलाशय देखते ही देखते खाली हो गया। अगली सुबह जब हमारे लोगों को पता चला कि क्या हुआ है, तो उन्होंने कलेनहल्ली पर युद्ध छेड़ दिया। नरसपुरा के सभी लोग बड़े-बड़े लकड़ी के डंडे और लाठियाँ लेकर कलेनहल्ली में घुस आए और एक भयंकर लड़ाई छिड़ गई। दोनों तरफ से लोग घायल हुए। कलेनहल्ली को अंततः हार माननी पड़ी क्योंकि हमारी संख्या उनसे कहीं अधिक थी। लड़ाई में दो लोगों की मौत हो गई और घायलों को उनके घावों का इलाज

करने के लिए वहीं छोड़ दिया गया। मैं इस लड़ाई का प्रत्यक्षदर्शी था। लेकिन घर लौटते समय, मेरे विजयी गाँव के लोग कलेनहल्ली की ग्राम देवी कलाम्मा के मंदिर में रुके, अपने हथियार नीचे रख दिए, मंदिर के सामने प्रणाम किया और उनकी कृपा प्राप्त करने के बाद अपनी यात्रा फिर से शुरू की। कलेनहल्ली के लोग भी अलग नहीं थे। जब भी वे किसी अन्य स्थान की यात्रा पर नरसपुरा से गुजरते, वे हमारे गाँव की देवी - गड्डे केम्पम्मा - की पूजा करते, कुछ देर मंदिर के प्रांगण में बैठते और फिर आगे बढ़ जाते। यह सदियों पुरानी परंपरा इस क्षेत्र के सभी गांवों पर लागू होती थी।' रजिया थोड़ी देर रुकी, फिर बोली, 'मैंने यह कहानी एक खास वजह से सुनाई है। आर्थिक कारणों से समूहों, गुटों और पूरे गांवों का एक-दूसरे का खून बहाना आज भी आम बात है। इसके बावजूद, उन्होंने एक-दूसरे के देवी-देवताओं की पूजा करने की प्रथा कभी नहीं छोड़ी। इस पृष्ठभूमि और अपने अनुभव को देखते हुए, मुझे हम्पी में मूर्तियों के विध्वंस को वर्ग विद्रोह की घटना के रूप में व्याख्या करना असंभव लगता है।'

अमीर ने कोई जवाब नहीं दिया, हालाँकि उसके दिमाग में उसके तर्कों का खंडन करने के लिए पर्याप्त तर्क मौजूद थे। लेकिन ये वे तर्क थे जिनसे वह परिचित थी, जिन पर उन्होंने कई वर्षों तक गहन चर्चा की थी। एक की बात शुरू होते ही दूसरी भी शुरू हो जाती। इतने वर्षों का साझा बौद्धिक चिंतन! लेकिन अब उसे लग रहा था कि वह धीरे-धीरे उस बंधन को तोड़ रही है जो उन्हें एक साथ बांधे रखता था और एक अलग दिशा में बढ़ रही है। उसे लग रहा था कि अब वह जो कुछ भी कहेगा, उससे बहस शुरू हो जाएगी। चुप रहना ही सबसे अच्छा उपाय था।

रज़िया ने अपनी आँखें बंद कर लीं और अँधेरे में पीठ के बल लेट गई, उसे समझ नहीं आ रहा था कि आमिर सचमुच सो रहा है या नहीं। उसकी साँसों में कोई लय नहीं थी जिसे वह महसूस कर सके। शायद इसका कारण यह था कि अब उनके विचार पूरी तरह से अलग-अलग दुनिया में खो गए थे।

लेकिन आंखें बंद करने से भी कोई फायदा नहीं हुआ। जब से उसने उसे देखा था, उसकी आंखों के सामने नरसिम्हा की विशाल, बुरी तरह से क्षत-विक्षत मूर्ति का दृश्य छाया हुआ था। उसे याद आया कि मूर्तियों में नरसिम्हा को आमतौर पर कैसे दर्शाया जाता है: आधा मनुष्य, आधा शेर, और अभिमानी राक्षस हिरण्यकश्यप उसकी जांघों पर फैला हुआ, जिसकी आंतें नरसिम्हा के नुकीले नाखूनों से फटी हुई। हम्पी की

नरसिम्हा मूर्ति में इसका अधिकांश भाग विकृत था... लेकिन वह समझ नहीं पा रही थी कि यह मूर्ति उसे इतना क्यों परेशान कर रही है, जबकि हम्पी के समृद्ध खंडहरों में इससे कहीं अधिक भव्य कई अन्य टूटी हुई मूर्तियां मौजूद हैं। उसने बहुत सोचा। अंततः उत्तर धीरे-धीरे उसकी स्मृति से, उसके जन्मस्थान से, सामने आया। नरसिम्हा मंदिर नरसपुरा के प्रमुख मंदिरों में से एक था और इसकी मूर्ति हम्पी की मूर्ति से मिलती-जुलती थी। लेकिन नरसपुरा की नरसिम्हा मूर्ति इतनी विशाल नहीं थी। यह देवता उसके कुलदेवता थे। उसके दादा और पिता दोनों का नाम इसी देवता के नाम पर रखा गया था—नरसप्पा गौड़ा और नरसिम्हे गौड़ा। लेकिन नरसिम्हे की एक खंडित मूर्ति ने उन यादों को फिर से क्यों ताजा कर दिया, जो अट्ठाईस साल पहले की थीं, जब उसने अपने जन्मस्थान, अपने पिता, अपने देवताओं और जीवन जीने के पूरे तरीके को त्यागकर उनसे नाता तोड़ लिया था? धीरे-धीरे वह अतीत में खो गई। उसे याद आया कि उसके पिता ने उससे क्या कहा था जब उसने हठपूर्वक कहा था कि वह आमिर के अलावा किसी और से शादी नहीं करेगी।

'अमीर के साथ तुम्हारा विवाह केवल तुमसे या तुम्हारे वर्तमान कार्यों से संबंधित नहीं है। तुम्हारा बच्चा, या तुम्हारे बच्चे का बच्चा या बच्चे, या भविष्य में तुम दोनों की आने वाली पीढ़ियों में से कोई भी एक दिन हमारे मंदिरों को नष्ट कर देगा। बेहतर होगा कि तुम अभी से समझ लो कि उस पाप के लिए तुम सीधे तौर पर उत्तरदायी होगी।'

'आप किस युग में जी रहे हैं, पिताजी? क्या आप अब भी इस बकवास पर विश्वास करते हैं?' मैंने आश्चर्यचकित होकर पूछा था।

मुगल बादशाह जहांगीर और शाहजहाँ, दोनों ही हिंदू रानियों के पुत्र थे। फिर भी, दोनों ने ही गद्दी पर बैठते ही हिंदू मंदिरों को नष्ट कर दिया। लेकिन हम उन्हें दोष नहीं दे सकते क्योंकि उनका धर्म ही उन्हें मंदिर और मूर्तियाँ नष्ट करने का आदेश देता है —जहाँगीर और शाहजहाँ तो बस अपने धर्म के सिद्धांतों का पालन कर रहे थे, जो आज तक अपरिवर्तित हैं। लेकिन तुम प्रेम में हो। तुम्हारा प्रेम और जवानी का जोश तुम्हें इस बात से अंधा कर रहा है, तुम इसे अभी नहीं समझ पाओगे।

पिताजी ने इससे पहले कभी इतनी कठोर भाषा का प्रयोग नहीं किया था। वे एक कट्टर गांधीवादी थे, जो चक्र-मंत्र का अभ्यास करते थे; महात्मा गांधी की ही तरह, उनका मानना था कि चक्र-मंत्र एक तपस्या है। वे हर सुबह जल्दी उठकर दो घंटे तक

पूरी एकाग्रता से चक्र-मंत्र करते थे—चक्र-मंत्र करना मात्र प्रतीकात्मक था, वास्तव में यह एक प्रकार का ध्यान था और उनका मानना था कि इसका उद्देश्य मन की अशुद्धियों को दूर करना, क्रोध और घृणा जैसी नकारात्मक भावनाओं को मिटाना और ऐसी अवस्था प्राप्त करना है जहाँ व्यक्ति सभी को समान रूप से प्रेम कर सके। जब मैं केवल तीन वर्ष का था, तब माताजी का देहांत हो गया और पिताजी तैंतीस वर्ष की आयु में विधवा हो गए। अपनी युवावस्था में किसी समय, पिताजी ने ब्रह्मचर्य का पालन करने का संकल्प लिया था ताकि वे महात्मा गांधी द्वारा दिखाए गए मार्ग पर चलते हुए अपना जीवन पूरी तरह से ग्रामीण जनता की सेवा में समर्पित कर सकें। हालाँकि, नरसिम्हा मंदिर के पुजारी, शेष शास्त्री, जो उनसे चार वर्ष बड़े थे, ने उन्हें इसके विपरीत समझा दिया। 'गरीबों की सेवा करना बहुत ही नेक कार्य है।' हालांकि, आपको गृहस्थ के रूप में अपने कर्तव्यों का भी निर्वाह करना होगा—समाज की सेवा करने के अलावा, विवाह करें और प्रतिदिन अपने घर में जरूरतमंदों को भोजन कराएं। अपने पूर्वजों के ऋण को पूरा करने के लिए कम से कम दो संतानें उत्पन्न करें। विवाह करें।

उसी शेष शास्त्री ने मुझे आमिर से शादी करने से रोकने के लिए भगवद गीता के उन उद्धरणों का हवाला दिया था जिनमें कर्तव्य पालन के महत्व का उल्लेख था। चिंता से व्याकुल होकर मैं स्पष्टीकरण लेने के लिए बेंगलुरु भागी। ‘आमिर, क्या हमारे बच्चे मंदिर नष्ट कर देंगे?’ उनका जवाब तुरंत आया और मुझे यकीन हो गया, ‘बकवास! यह सांप्रदायिक लोगों द्वारा मुसलमानों और इस्लाम को बदनाम करने के लिए इस्तेमाल किया जाने वाला एक आम जुमला है। ज़्यादा से ज़्यादा, यह मनगढ़ंत कहानी है। मुझे तो आश्चर्य है कि तुमने इस पर विश्वास भी कर लिया!’ बस इतना ही काफी था। जब आप प्यार में होते हैं, तो प्रिय के एक शब्द का महत्व हजारों वर्षों के शोध के निष्कर्ष से कहीं अधिक होता है। पिताजी गलत थे, बेशक। उनकी पीढ़ी के लोग सच्चे प्यार का अर्थ नहीं समझते थे। उनकी दुनिया अर्थहीन पूजा और कर्तव्य के पुराने विचारों में डूबी हुई थी। प्रेम ही एकमात्र वास्तविकता थी। पिताजी के धर्म संबंधी विचार झूठे थे। आमिर के शब्दों में वह दृढ़ता थी जो पिताजी के शब्दों में नहीं थी। उन्होंने सिर्फ एक आत्मविश्वास भरे वाक्य से मेरे सारे संदेह दूर कर दिए। उनके आत्मविश्वास ने मुझे जीत लिया... जब हम पुणे फिल्म संस्थान में साथ-साथ पढ़ते हुए मिले थे, तभी से। जब हमें पता चला कि हम दोनों कर्नाटक से हैं, तो हम करीब आ गए

और बेंगलुरु के किस्से एक-दूसरे से साझा करने लगे। हम शामें फर्ग्यूसन हिल की चोटी पर बैठकर सूर्यास्त देखते हुए बिताते थे, जहाँ युवा कॉलेज के जोड़े बड़े-बड़े पत्थरों के पीछे प्यार से लिपटे रहते थे। जल्द ही हमारे बीच कोमल भावनाएँ जाग उठीं। हम एक-दूसरे को रोमांटिक हिंदी फिल्मी गाने सुनाते, कविताएँ गुनगुनाते और हमेशा साथ रहने का वादा करते, ऐसा प्यार जो धर्म, परिवार और समाज की सीमाओं को तोड़ दे।

अमीर तो बड़े ही भावुक थे! और आखिरकार मैं उनकी मीठी-मीठी बातों में मान गई। रविवार और छुट्टियों में हम पुणे के गुमनाम लॉजों में प्यार करते थे। हर बार वह मुझे बिल भरने नहीं देते थे। भला मुझे क्या फर्क पड़ता, जब मेरा सारा ध्यान तो बस उनकी मदहोश कर देने वाली नज़दीकी का आनंद लेने, उनकी बाहों में होने के रोमांच का इंतज़ार करने में ही लगा रहता था? और मैं सपने में भी कैसे सोच सकती थी कि हमारे धर्मों में इतना बड़ा अंतर है? समय के साथ, यह अंतर एक ऐसी सच्चाई बन गया जो साल दर साल और भी गहरा होता गया। तब मुझे सच में लगता था कि मैं प्रगतिशील हूँ; मैं धर्म, जाति और पंथ जैसे खुद को धोखा देने वाले और इंसानों द्वारा बनाए गए बंधनों से ऊपर उठ चुकी हूँ। लेकिन तीस साल पहले मैं अमीर से शादी करने पर इतनी ज़िद क्यों कर रही थी? आह! अपनी सारी प्रगतिशीलता के बावजूद, मैं अपने कुछ गहरे विश्वासों को नहीं छोड़ पा रही थी—मैं उस आदमी के अलावा किसी और से शादी नहीं कर सकती थी जिसे मैंने अपना कौमार्य दिया था। शायद मैं पिताजी की इच्छा के आगे झुक जाता, लेकिन इस एक बेहद महत्वपूर्ण कारण की वजह से ऐसा नहीं हुआ।

इसके अलावा, पिताजी ने एक तरह से सुलह का प्रस्ताव रखा: 'अगर वह सचमुच तुमसे उतना ही प्यार करता है जितना तुम कहती हो, तो उसे हिंदू धर्म अपना लेने दो और अपना नाम बदल लेने दो। तुम्हें मेरा आशीर्वाद मिलेगा। मैं पारंपरिक हिंदू रीति-रिवाजों के अनुसार विवाह संपन्न कराऊंगा।' जब मैंने आमिर को यह बताया, तो उसने एक पल भी संकोच नहीं किया: 'इसका सीधा सा मतलब है कि तुम अभी भी धर्म के कृत्रिम भेदों से मुक्त नहीं हो पाई हो।' मैंने भी उतनी ही तेज़ी से जवाब दिया: 'अगर मेरे इस्लाम धर्म अपनाने के बिना हमारी शादी नहीं हो सकती, तो क्या तुम्हारा यही तर्क तुम पर लागू नहीं होता?' वह अवाक रह गया। मैंने उस पर दबाव डाला। 'अच्छा...उम्म...लेकिन क्या यह प्रथा नहीं है कि दुल्हन दूल्हे के धर्म में परिवर्तित हो?'

उसने कमज़ोर स्वर में उत्तर दिया। 'तो फिर, क्या तुम मुझे बता सकते हो कि अगर कोई हिंदू पुरुष अपनी प्रेमिका मुस्लिम लड़की से शादी करना चाहता है तो उसे इस्लाम में परिवर्तित होना अनिवार्य क्यों है?' मैंने पलटवार किया। 'ठीक है, चूंकि तुम ज़िद कर रही हो। मेरा धर्म न तो पुरुष को और न ही लड़की को इस्लाम छोड़ने की अनुमति देता है। अगर वे कोशिश भी करते हैं, तो उन्हें मार दिया जाता है। और बात सिर्फ इतनी ही नहीं है।' वे उस व्यक्ति को भी मार डालते हैं जो इस तरह की प्रेरणा देता है। बात ये है: मैं तुमसे प्यार करता हूँ और तुम्हारे बिना अपनी बाकी ज़िंदगी जीने की कल्पना भी नहीं कर सकता। जहाँ तक मेरा सवाल है, हम पहले से ही एक जोड़ा हैं... शाश्वत प्रेम के बंधन में बंधे हुए। मैं किसी भी धर्म में विश्वास नहीं करता। और मुझे पता है कि तुम भी नहीं करते। हम केवल प्रेम के बंधन में बंधे रहेंगे। लेकिन फिर भी मुझे समझ नहीं आ रहा कि तुम क्यों उलझन में हो—खासकर प्रगतिशील विचारों में तुम्हारी दृढ़ आस्था को देखते हुए। ध्यान से सुनो: तुम्हारा धर्म परिवर्तन महज़ परिस्थितिजन्य और रणनीतिक है। ये सिर्फ़ नाम बदलने की बात है। याद रखो, हमारी शादी एक बड़े उद्देश्य को प्राप्त करने का भी प्रयास है—एक ऐसा समाज बनाना जो धर्म से मुक्त हो, जो जनता के लिए अफ़ीम है। वो दिन दूर नहीं। लेकिन तब तक, हमें इस रणनीति की ज़रूरत है।

वर्षों से उसकी साँसों की आवाज़ से परिचित होने के कारण उसे पता चल गया था कि आमिर अब गहरी नींद में सो रहा है। वह चुपचाप उठी और शयनकक्ष का दरवाजा बंद करके बैठक में चली गई। उसने रिक्लाइनर को बड़ी खिड़की की ओर खींचा और खिड़की से बाहर देखने लगी। चाँदनी रात में उसे नदी की लहरों की निरंतर ध्वनि के अलावा कुछ भी सुनाई नहीं दे रहा था।

इस्लाम धर्म अपनाने के बाद आमिर से निकाह के छह महीने बाद मैं गर्भवती हो गई। मेरे दिल में धीरे-धीरे उठने वाली बेचैनी गर्भावस्था के साथ-साथ और तीव्र होती गई। मुझे पिता के घर जाना ही था, यह जानते हुए भी कि माँ जीवित नहीं थीं। मुझे जाना ही था, यह जानते हुए भी कि वे शायद घर पर नहीं होंगे, क्योंकि वे अपने अथक सामाजिक सेवा दौरों पर गाँव-गाँव घूमते रहते थे। अपनी जड़ों से जुड़ने की, कम से कम उस घर को देखने की तड़प, जहाँ मेरा जन्म हुआ और मैं पली-बढ़ी, मुझे व्याकुल कर रही थी। लेकिन मैं कुछ नहीं कर सकती थी। पिता के कठोर और कठोर शब्दों ने

इस पीड़ा को कम नहीं किया: 'तुम अब मेरी बेटी नहीं हो। अब से तुम्हारा मेरे लिए कोई महत्व नहीं है। मैं तुम्हें त्यागता हूँ, न केवल अपने जीवनकाल तक, बल्कि हमेशा के लिए।' वे दृढ़ विश्वासों वाले व्यक्ति थे, अनुकरणीय। वे सादगीपूर्ण जीवन जीने और किसी भी परिस्थिति में क्रोध पर विजय पाने के महत्व पर बल देते थे। हर कोई उन्हें चाहता था—वे गाँव के सबसे हिंसक झगड़ों को सुलझाते थे और यह सुनिश्चित करते थे कि झगड़ने वाले पक्ष अपनी समस्याओं का समाधान करें और भाईचारे से विदा हों। उन्होंने धैर्यपूर्वक बातचीत और लोगों के दिलों को छूने वाले तरीकों से जातिगत भेदभाव को खत्म करने में मदद की और छुआछीपी को मिटाने का प्रयास किया, जिससे लोगों को उनकी बातों में सच्चाई नज़र आने लगी। यह उनके प्रयास थे, न कि कानून या सरकार का डर, जिसके कारण रेस्तरां, मंदिर और सामुदायिक कुओं में हरिजनों को प्रवेश की अनुमति दी गई। यह उनके व्यक्तित्व की प्रबल नैतिक शक्ति थी जिसने लोगों के दिलों को बदल दिया। मैं सपने में भी नहीं सोच सकता था कि यह व्यक्ति अपने पुत्र के प्रति इतनी निर्दयता दिखा सकता है... और किसलिए? क्या इसलिए कि मैं इस्लाम धर्म अपनाने वाला था? क्या इसलिए कि इतिहास के किसी कोने में किसी ने कुछ मंदिरों को नष्ट कर दिया था? क्या यही कारण उनके लिए अपनी ही बेटी के प्रति प्रेम को समाप्त करने के लिए पर्याप्त था?

मैंने कई बार सोचा कि उन्हें सहानुभूति दिलाने के लिए एक पत्र लिखूँ—'मैं गर्भवती हूँ, पिताजी। मुझे आपसे मिलने का मन कर रहा है। मैं फिर से आपकी नन्ही बच्ची बनना चाहती हूँ।' या फिर मैंने सोचा कि अगली बस पकड़कर नरसपुरा जाऊँ और सीधे उनके पास पहुँच जाऊँ। मुझे पूरा यकीन था कि जब वे मेरा फूला हुआ, गर्भवती पेट देखेंगे तो उनका दिल पिघल जाएगा। क्या माँ जीवित होती तो इतनी कठोर हृदय वाली रहतीं? क्या वे पिताजी को अपनी कठोरता बनाए रखने देतीं?

मैंने वह पत्र नहीं लिखा था। अपने तमाम सामाजिक कार्यों के बावजूद, पिताजी दृढ़ निश्चयी व्यक्ति थे। उन्हें बस एक फैसला करना होता था—कोई भी चीज़ उन्हें एक मिलीमीटर भी नहीं हिला सकती थी। मेरे पास तो उनकी तरफ देखने की भी हिम्मत नहीं थी। या शायद मैं इसलिए पीछे रह गई क्योंकि मुझे पिताजी की कुछ ज़िद्दीपन विरासत में मिली थी? अगर वे अब मुझे अपने जीवन में नहीं चाहते थे, तो मैं खुद को उन पर थोपना नहीं चाहती थी। मैं आमिर के घर पर ही रुक गई... अपने घर पर। मुझे शक था कि पिताजी को पता भी था कि मैं गर्भवती हूँ। उन्हें कैसे पता चलता जब उन्हें

बताने वाला कोई था ही नहीं, सिवाय शायद प्रोफेसर शास्त्री के, जो एकमात्र कड़ी थे? उस आदमी में हिम्मत थी। वह जानता था कि उसे क्या करना है, और उसने समझदारी से अपने माता-पिता से मिलवाने से पहले एक श्वेत ब्रिटिश महिला से शादी कर ली थी। उसके पिता शेषा शास्त्री और माता अच्चम्मा सख्त, रूढ़िवादी ब्राह्मण थे जो इस शादी को कभी स्वीकार नहीं करते। हालाँकि, उसकी माँ ने आखिरकार नई बहू को स्वीकार कर लिया। फिर सस्ते, चुगलखोर ग्रामीणों की समस्या भी थी। लेकिन प्रोफेसर शास्त्री स्वभाव से ही बेहद आकर्षक थे। वे नरसपुरा के उन बुजुर्गों और सामाजिक रूप से महत्वपूर्ण लोगों के पास जाते, जो इस शादी के खिलाफ थे, और एक खास तरह की मुस्कान बिखेरते, जिससे वे शर्मिंदा हो जाते। वे साल में कम से कम एक बार नरसपुरा आते थे, और हमेशा अपनी उस शर्मिंदगी भरी मुस्कान से सबको स्तब्ध कर देते थे। देखते-देखते, एक विदेशी से उनकी शादी की भयावह घटना एक मामूली घटना बनकर रह गई। जब वे एक साल के लिए विजिटिंग प्रोफेसरशिप का कार्यकाल स्वीकार करके संयुक्त राज्य अमेरिका गए, तब मैं अभी भी गर्भवती थी... लेकिन एक गर्भवती महिला अपनी मां के घर—मेरे मामले में, पिता के घर—क्यों जाना चाहती है? वह अपनी मां के घर में प्रसव कराने, अपने बच्चे को सबसे पहले अपनी मां को दिखाने की इतनी तीव्र इच्छा क्यों रखती है?

अकारण इच्छाएँ; असंबद्ध, अनुत्तरित प्रश्न। उसे याद आया कि गर्भावस्था के दौरान एक ही विचार उसके मन में घर कर गया था: अगर माँ जीवित होतीं, तो क्या वह पिताजी की तरह जिद्दी होतीं? अगर उसने किसी हिंदू से शादी की होती, चाहे वह किसी भी जाति का हो, तो क्या पिताजी उसकी इतनी देखभाल करते? हाँ, वह यह सुनिश्चित करते कि उसे भरपूर लाड़-प्यार मिले—घर की नौकरानी, निंगाव्वा, हमेशा उसके साथ रहती, प्रसव के बाद उसकी छोटी से छोटी ज़रूरत का भी ध्यान रखती। इन दिवास्वप्नों ने उसे अमीर के घर में नई दुल्हन के रूप में बिताए अपने शुरुआती दिनों की याद दिला दी।

मुझे पता था कि मेरी सास मुझसे अपनी नापसंदगी को मुश्किल से ही छुपाती थीं, लेकिन इसमें उनकी कोई गलती नहीं थी। उनकी यह नफरत इस बात से जुड़ी नहीं थी कि मैं मूल रूप से हिंदू थी; मैं शुरू से ही कभी भी 'मुस्लिम' पत्नी और बहू नहीं रही थी। एक बहुत ही धर्मनिष्ठ मुस्लिम पत्नी और माँ होने के नाते, मेरी सास शुरू में मुझे

आदेश देती थीं—दिन में पाँच बार नमाज़ पढ़ो और उसे उसी कमरे में पढ़ो जो नमाज़ के लिए बना है। मैं उनका यह हुक्म नहीं मान सकती थी। मैंने आमिर से शादी इसलिए की क्योंकि हमारा प्यार प्रगतिशील आंदोलन में साझा विश्वास की नींव पर बना और फला-फूला। मैंने अपने जन्म के धर्म को इसलिए त्याग दिया क्योंकि मेरा मानना था कि सभी धर्म निरर्थक बकवास हैं जिन्हें पूंजीपतियों ने लोगों का शोषण करने के लिए बनाया है। इस हिसाब से, किसी दूसरे धर्म के रीति-रिवाजों को सीखना और उनका पालन करना भी उतना ही बेतुका था। इसके अलावा, मेरे जन्म के धर्म में वे पाबंदियाँ नहीं थीं जो मेरे अपनाए हुए धर्म में थीं—किसी को इस बात की परवाह नहीं थी कि मैं रोज़ नरसिम्हा मंदिर जाती हूँ या नहीं। लेकिन इस्लाम में मौजूद पाबंदियों की चौंका देने वाली श्रृंखला ने मुझे जकड़ लिया—हर दिन पांचों वक्त नमाज़ अदा करने का कड़ा ज़िद, शुक्रवार को अनिवार्य नमाज़ और रमज़ान के महीने में सुबह से शाम तक रोज़ा रखना। मुझे सबसे ज़्यादा हैरानी इस बात पर हुई कि जमात के मौलवी हमारे जीवन में किस तरह दखल देते थे। ये लोग हमारे घर आते थे—ज़्यादातर अचानक—यह देखने के लिए कि क्या हम वाकई इस्लाम के शुद्ध तबलीगी रीति-रिवाजों का पालन करते हैं! और फिर त्योहारों पर अनिवार्य पशु बलि का रिवाज था। जहाँ तक मुझे याद है, मुझे पशु बलि से कभी भी सहजता नहीं थी। बचपन में मैंने वार्षिक रथ उत्सव के हिस्से के रूप में हमारे गाँव की देवी केम्पम्मा को भेड़ और बकरियों की बलि देते हुए देखा था। हालाँकि, पिताजी के प्रयासों और सरकार द्वारा पशु बलि पर प्रतिबंध के कारण, नरसपुरा में यह प्रथा अंततः बंद हो गई थी। लेकिन मेरा अपनाया हुआ धर्म अलग था। इतने सालों तक मुसलमान रहने के बावजूद, मैंने किसी ऐसे व्यक्ति को नहीं देखा था जो पशु बलि को निंदनीय बताने की हिम्मत जुटा सके। आखिरकार, पैगंबर मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने स्वयं मक्का की तीर्थयात्रा के दौरान एक ऊंट की कुर्बानी दी थी। सच्चा मुसलमान होने का अर्थ है पैगंबर मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के आचरण का अनुकरण करना। जिन मुसलमानों के पास ऊंट खरीदने के साधन नहीं थे, वे इसके बदले बकरियों या भेड़ों का इस्तेमाल कर सकते थे। हमारे बेटे नाज़िर के जन्म का सातवाँ दिन बेहद यादगार था: दो बकरियों के बच्चों को घर लाया गया, उनके शवों को किबला की दिशा में लिटाया गया और फिर यह दुआ पढ़ी गई—inni wajjahtu waj hiyalillilla di farah rassa maawaati wal arda hanifan wama anaminal mushrikin (मैंने

पूरी श्रद्धा से अपना मुख धरती और आकाश के रचयिता अल्लाह की ओर किया है और मैं शपथ लेता हूँ कि मैं अनेक देवताओं की पूजा करने वालों में से नहीं हूँ। मुझे पूरा विश्वास है कि मेरी नमाज़, मेरे बलिदान, मेरा जीवन, मेरी मृत्यु और जो कुछ भी मेरा है, वह सब उसी का है जो समस्त संसार का स्वामी और रक्षक है। यह किसी और का नहीं, केवल उसी का है। मुझे यही आदेश दिया गया है और मैं पूर्णतः उसी के चरणों में समर्पित हूँ, और मैं एक मुसलमान हूँ। हे अल्लाह! यह जो तूने हमें दिया है, वह तेरा ही है!) इस दुआ के बाद 'बिस्मिल्लाहि अल्लाहु अकबर' का नारा लगाया गया और फिर तेज धार वाली तलवार बकरियों के बच्चों की गर्दनों पर आ गिरी। तलवार धीरे-धीरे गर्दन काट रही थी, मानो यह आवाज़ गूंज रही हो, 'हे अल्लाह! यह अकीक नाज़िर की भेंट है। हम पर दया करो और इसे स्वीकार करो। जिस प्रकार तूने इसे अपने प्रियतम मोहम्मद (उन पर शांति हो) और अपने मित्र इब्राहिम से स्वीकार किया, उसी प्रकार इसे हमसे भी स्वीकार कर। यह (बकरे का) रक्त मेरे बच्चे के रक्त का हल है, यह (बकरे का) मांस मेरे बच्चे के मांस का हल है, और यह (बकरे के) बाल मेरे बच्चे के बालों का हल है। हे अल्लाह! इसे स्वीकार कर!' दिभा की रस्म अब आधिकारिक रूप से समाप्त हो चुकी थी। यह एक भव्य अवसर था। फिर बकरियों के मांस को विशेष सावधानी से पकाया गया और स्वादिष्ट बिरयानी तैयार की गई, जिसे रिश्तेदारों और पड़ोसियों में बाँटा गया।

स्वास्थ्य लाभ कक्ष में लेटे हुए, मैं तुलना करने से खुद को रोक नहीं पाया। उन बेचारे बच्चों को मारने के बजाय, वे पारंपरिक हिंदू व्यंजनों की तरह कोई प्रसाद तैयार कर सकते थे—केले, नारियल और गुड़ का स्वादिष्ट मिश्रण, और दही-चावल अलग से परोसे जाते—और उसे भगवान को अर्पित कर सकते थे। किसी जानवर की बलि देना और उसके रक्त और मांस को दयालु भगवान को पवित्र प्रसाद के रूप में अर्पित करना आध्यात्मिक स्तर पर मुझे विचलित कर रहा था।

लेकिन उसी रात प्रोफेसर शास्त्री के फोन ने मुझमें कुछ ऐसा बदल दिया जो हमेशा के लिए बदल गया। आमिर ने मुझे रिसीवर थमा दिया। 'बधाई हो लक्ष्मी! अरे! क्या तुम नाराज़ हो कि मैंने तुम्हें "रज़िया" नहीं कहा? आदत की बात है, मेरी प्यारी बच्ची। तुम पूरी दुनिया के लिए रज़िया हो, लेकिन मेरे लिए तुम हमेशा लक्ष्मी रहोगी।' उनकी आवाज़ में जो गर्माहट थी, वह सुकून देने वाली थी। 'मैं पिछले रविवार को एक सेमिनार में आमिर से मिला था। उसने मुझे बताया कि तुम्हें बेटा हुआ है... खैर, इससे

कोई फर्क नहीं पड़ता कि बेटी है या बेटा। मैंने सोचा था कि तुम्हें उसी समय फोन कर दूं, लेकिन मुझे दिल्ली जाना पड़ा और उसी शाम वापस लौटना पड़ा। और आज सुबह गांधी अध्ययन केंद्र ने मुझे "गांधी और मार्क्स: तुलना" विषय पर एक अध्ययन शिविर का उद्घाटन करने के लिए आमंत्रित किया था। मैं वहां तुम्हारे पिता से मिला। मैंने उन्हें बताया कि वे अब दादा बन गए हैं। लेकिन उन्होंने कोई प्रतिक्रिया नहीं दी। मुझे लगता है कि उन्हें मेरी बात पसंद नहीं आई।' तो मैंने उनसे पूछा, "चाचा जी, क्या आप अब भी धर्मों के बीच इन बनावटी भेदों में विश्वास करते हैं? मानवता धर्म से बड़ी है, चाचा जी। क्या आप सहमत नहीं हैं?" मैं उनके कठोर उत्तर से और भी अधिक चकित हो गया, "नारायण, फालतू बातें करना बंद करो! क्या मैंने तुमसे लक्ष्मी के बारे में कोई जानकारी मांगी थी? अपने काम से मतलब रखो।" हालांकि उनके जवाब ने मुझे चौंका दिया, लेकिन मैं उनसे नाराज़ नहीं हूँ। वे बुजुर्ग हैं, मेरे पिता के घनिष्ठ मित्र हैं और उनके प्रति मेरे मन में हमेशा सर्वोच्च सम्मान रहेगा। लेकिन मैं यहाँ एक गहरे मुद्दे पर बात कर रहा हूँ—आपके पिता इतिहास में घटित होती रही घटनाओं का एक और उदाहरण मात्र हैं। देखिए, हमें यह कभी नहीं भूलना चाहिए कि धर्म किस प्रकार लोगों को बुनियादी मानवता की भावना से भी वंचित कर देता है और एक पिता और उसकी अपनी बेटी के बीच शाश्वत शत्रुता की अटूट दीवार खड़ी कर देता है! मुझे नहीं पता कि मुझे यह कितनी बार दोहराना पड़ेगा, लेकिन मैं फिर से कहूँगा: जब तक धर्म का नाश नहीं हो जाता, मानवता के अस्तित्व की कोई आशा नहीं है। खैर, आपसे फुर्सत में बात किए हुए काफी समय हो गया है। अपनी सेहत सुधारें। हम किसी दिन लंच के लिए बाहर जाएंगे।

उस एक बातचीत ने पिता के प्रति मेरे मन में पनप रही कड़वाहट को और बढ़ा दिया। मैं धर्म से इतनी तीव्र घृणा करने लगा, एक ऐसी हिंसा जो मुझे भी आश्चर्यचकित कर गई। मैं उस धर्म से घृणा करने लगा जिसे मैंने त्याग दिया था। यदि वह मेरे पिता जैसे व्यक्ति को—एक कट्टर शाकाहारी, जिसने मांसाहार इसलिए छोड़ दिया था क्योंकि वह अहिंसा के सिद्धांत का उल्लंघन करता था—बुनियादी मानवता को त्यागने के लिए प्रेरित कर सकता था, तो वह केवल तिरस्कार का पात्र था। सेमिनारों में, अकादमिक लेखों में, अखबारों के स्तंभों में, रेडियो और टीवी पर, मैं हिंदू धर्म के सबसे मुखर आलोचकों में से एक बन गया। मैंने अपनी आलोचना को इन विषयों के इर्द-गिर्द बुना: कोई अन्य धर्म हिंदू धर्म जितना निर्दयी नहीं है; इसकी कठोर

पदानुक्रम प्रणाली के कारण इसमें सामाजिक समानता की कोई अवधारणा नहीं है और निम्न जातियों, दलितों और विधवाओं के विरुद्ध हिंसा का इसका इतिहास विश्व के किसी भी सामाजिक व्यवस्था में अद्वितीय है। मैंने ठीक इसी कारण से हिंदू धर्म को त्याग दिया और इस्लाम धर्म अपना लिया, एक ऐसा धर्म जो सार्वभौमिक भाईचारे और असीम एकता की भावना की ठोस नींव पर टिका है। इसमें आश्चर्य की बात नहीं है कि यही कारण है कि इस्लाम का विश्वभर में बल और संख्या में वृद्धि हुई है और यह निरंतर बढ़ती जा रही है। यह उस समतावादी समाज की सबसे प्रारंभिक अवधारणा है जिसे हम आज जानते हैं। 1400 वर्ष पूर्व ऐसी व्यवस्था की कल्पना करना ही इसके मूल में निहित प्रतिभा का प्रमाण है।

प्रोफेसर शास्त्री ने हर कदम पर मेरा साथ दिया। उन्होंने मुझे किताबें, नोट्स, व्याख्याएं और अंतर्दृष्टि प्रदान कीं। शुरुआत में मैं घबराई हुई थी। देश की 85 प्रतिशत आबादी द्वारा माने जाने वाले धर्म की सार्वजनिक रूप से निंदा करना और इतनी तीखी निंदा करना आसान नहीं था। मुझे आश्चर्य हुआ कि प्रतिक्रिया बिल्कुल विपरीत थी। अखबारों ने मेरी तस्वीर पहले पन्ने पर छापी और मुझे 'साहसी महिला' जैसे खिताबों से नवाजा। उन्होंने मेरे सेमिनार के शोधपत्रों को हूबहू प्रकाशित किया। हर प्रगतिशील या क्रांतिकारी संगठन चाहता था कि मैं उनके द्वारा आयोजित किसी भी कार्यक्रम का उद्घाटन करूं। मैं एक सेलिब्रिटी, एक तरह की स्टार बन गई। इससे मेरा विश्वास और भी मजबूत हो गया। मेरा पूर्व धर्म रीढ़विहीन था: एक ऐसा धर्म जिसके अनुयायी श्रद्धापूर्वक उसी जल को पीते थे जिसका उपयोग उनके देवताओं के चरणों को अभिषेक करने में किया जाता था। तीर्थ, पवित्र जल! हा! जिस धर्म में मैंने धर्मांतरण किया था, वह साहसी था। कोई भी, उसके भीतर या बाहर, उसके किसी भी पहलू के खिलाफ एक शब्द भी नहीं बोल सकता था। बचाव तुरंत होता था और सजा उससे भी तेज। और वह भी सार्वजनिक रूप से। दोषी को माफी मांगने या जुर्माना भरने के लिए मजबूर किया जाता था। या फिर, बेहद गंभीर मामलों में, तलवार से सज़ा दी जाती थी। यही इसकी सबसे बड़ी ताकत थी: ऐसा माहौल बनाने की क्षमता जहाँ कोई भी बाहरी व्यक्ति इसके बारे में अपमानजनक शब्दों में बात करने की हिम्मत नहीं करता था। यह आत्मसम्मान का धर्म था। समय के साथ यह दृढ़ विश्वास और भी मजबूत होता गया। यही मेरा सच्चा धर्म है; मैं तो बस जन्म से हिंदू हूँ। समय बीतने के साथ, जब भी मैं घर पर होता, मैं हर दिन पाँचों वक्त की नमाज़ पढ़ना कभी नहीं

भूलता था। मेरी सास अपना प्यार दिखाने लगीं और मेरे ससुर भी बहुत खुश थे। फिर भी, मेरे कुछ व्यवहारों से वे पूरी तरह सहमत नहीं थीं। किसी भी आम मुस्लिम परिवार की तरह, मेरा घर दो हिस्सों में बँटा हुआ था—मर्दाना और ज़नाना। ज़नाना घर के अंदरूनी हिस्से में था, परिवार के सदस्यों के अलावा लगभग सभी के लिए बंद था, और आगंतुकों के लिए एक अलग प्रवेश द्वार था। यह घर के सामने वाले हिस्से, मर्दाना से एक बड़ी दीवार से अलग था। अगर घर काफी बड़ा होता, तो ज़नाना किसी शौचालय जैसा लगता था। अगर कोई पुरुष द्वार पर दिखाई देता, तो रिवाज था कि 'घोषा! घोषा!' चिल्लाया जाए। घर की महिलाएं तब भीतरी कमरों में चली जातीं—या फिर किसी दीवार या दरवाजे के पीछे छिप जातीं। घर का कोई पुरुष सदस्य या नौकरानी उस आगंतुक से बात करती और उसे द्वार तक छोड़ देती ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि वह घर से चला गया है। जिस दिन मैंने घर में प्रवेश किया, मेरी सास ने मुझे इस रिवाज के बारे में विस्तार से बताया। मैंने कुछ नहीं कहा, बस इसे मानने से इनकार कर दिया। और मैं कभी भी बुर्का पहनने के लिए खुद को मना नहीं सकती थी। अगर कोई द्वार पर होता—चाहे वह पुरुष हो या महिला—मैं बस उसके पास जाकर उससे बात करती और उसे अंदर आने देती। मेरी सास को यह बात बिल्कुल पसंद नहीं थी।

'अगर तुम ऐसा करती हो तो तुम एक अच्छी मुस्लिम महिला नहीं हो।'

मेरा हमेशा का जवाब होता था: 'मैं फिल्म इंडस्ट्री में काम करता हूँ और स्क्रिप्ट व डायलॉग लिखता हूँ। अगर मैं शूटिंग लोकेशन पर होता हूँ, तो कभी-कभी मैं एक्टर्स को बताता हूँ कि क्या करना है। क्या मैं 'घोशा' को अपने काम से बचने का बहाना बना सकता हूँ?'

तो फिर वह नौकरी छोड़ दो और घर पर रहो। यह तो पुरुषों का काम है। अगर कोई मुस्लिम महिला सम्मान पाना चाहती है तो उसे मुस्लिम महिला की तरह व्यवहार करना चाहिए। अगर तुम ऐसा करती रहोगी तो अल्लाह तुमसे नाराज़ होगा।

'आपके बेटे ने मेरी इस शर्त को मान लिया है कि वह शादी के बाद भी फिल्म इंडस्ट्री में काम करता रहेगा। आप उससे इस बारे में पुष्टि कर लें।' वह बहुत गुस्से में थी, लेकिन उसने कुछ नहीं कहा।

लेकिन मेरे ससुर ने मीठी-मीठी बातें करके मुझे मनाने की कोशिश की। 'दुखी मत हो, बेटी। मेरी बात सुनो। पढ़ी-लिखी औरत अपनी खूबसूरती खो देती है। क्योंकि

वह काम पर जाती है, सूरज उसके चेहरे की नमी सोख लेता है और उसकी प्राकृतिक सुंदरता को खत्म कर देता है। याद रखो, सिर्फ औरत के शरीर में ही यह खास ताकत होती है कि वह नियमित व्यायाम के बिना भी स्वस्थ रह सकता है। इसीलिए मैं कहता हूं कि औरत को घर से बाहर नहीं निकलना चाहिए।'

'मैं इसलिए काम नहीं करता क्योंकि मुझे अपना स्वास्थ्य बनाए रखना है या कमाना है। मैं काम इसलिए करता हूँ क्योंकि इससे मेरी रचनात्मक प्रवृत्ति संतुष्ट होती है।' मैंने मानव रचनात्मकता को व्यक्त करने के विभिन्न तरीकों के बारे में जो कुछ सीखा था, उसका हवाला देते हुए यह समझाने की कोशिश की कि यह कैसे काम करता है, लेकिन उसे कुछ समझ नहीं आया।

मैंने बदलने से इनकार कर दिया और उन्होंने तब तक नाराज़ रहना बंद नहीं किया, जब तक कि एक दिन...

'अगर तुम जन्म से मुस्लिम लड़की होतीं, तो तुम हमसे इस तरह बात नहीं करतीं —हर बात पर बिना सम्मान के। तुम आमिर की तरफ इसलिए आकर्षित हुईं क्योंकि वह सुंदर है, फिल्म निर्देशक है और उसका भविष्य उज्ज्वल है। तुम्हें इस घर के रीति-रिवाजों की परवाह क्यों है? तुम्हें हमारे धर्म का सम्मान क्यों करना चाहिए?'

इसके बाद मैं उनके साथ एक ही घर में नहीं रह सकती थी और मैंने आमिर से कहा कि हम दोनों को उसके माता-पिता के घर से बाहर निकलना होगा।

'बिल्कुल नहीं! कृपया थोड़ा समझौता कीजिए। थोड़ा समझदारी से काम लीजिए।'

मैंने पूछा, '"समझदारी" का अर्थ समझाइए।'

'घर पर काले रंग का गाउन पहनना। इससे माँ खुश होंगी,' उसने मुस्कुराते हुए कहा।

ठीक है, लेकिन आप यह भूल जाते हैं कि जब मैं बाहर होती हूँ, तो प्रेस और प्रचार वाले मेरी तस्वीरें खींचते हैं और उन्हें प्रकाशित करते हैं। उन मौकों पर मुझे क्या पहनना चाहिए? क्या मैं बुर्का पहनकर अपना चेहरा छुपा लूँ? इससे ज़बरदस्त प्रचार होगा: रज़िया, क्रांतिकारी-प्रगतिशील-नारीवादी नायिका! सनसनीखेज सुर्खियाँ! मेरी छवि को पूरी तरह से नष्ट करने के लिए काफी।

अमीर को समझ नहीं आ रहा था कि क्या कहे। लेकिन वह जानती थी कि वह अपने माता-पिता का लाडला था, अपनी आठ बहनों का इकलौता भाई। वह कल्पना

भी नहीं कर सकती थी कि वह अपने माता-पिता से बहस करेगा, उसकी बात तो दूर की थी। इसके अलावा—और यह बात उसे समय के साथ समझ में आई—उसमें अभी भी धार्मिक रूढ़िवादिता के कुछ अंश बाकी थे। एक और बात ने मामले को और जटिल बना दिया। वर्षों से, उसके परिवार को समुदाय में एक गहरे पारंपरिक परिवार के रूप में बहुत सम्मान दिया जाता था।

तबलिगी समूह ने, जिसने हर जगह जासूस तैनात कर रखे थे ताकि यह देखा जा सके कि मुस्लिम परिवार वास्तव में सभी इस्लामी आदेशों का पालन कर रहे हैं या नहीं, अंततः मेरे उल्लंघन के बारे में पता चला, वे घर आए और आमिर के माता-पिता से पूछताछ की।

‘तुम उससे सीधे बात क्यों नहीं करती? वह एक अवज्ञाकारी बहू है!’ मेरी सास का लहजा तीखा था।

दोनों ने मेरी ओर रुख किया।

हमें जानकारी मिली है कि आप अक्सर अपने माथे पर बिंदी (सिंदूर) लगाती हैं। क्या यह सच है?

‘मैं फिल्म उद्योग में काम करती हूं। अगर किसी परिस्थिति में बिंदी लगाने या किसी विशेष तरीके से कपड़े पहनने की मांग होती है, तो मैं मना नहीं कर सकती।’

लेकिन घर लौटने के बाद आप इसे मिटाते नहीं हैं। हम यह भी जानते हैं कि यह सच है।

‘खैर, हिंदू परंपरावादी इस बात पर जोर देते हैं कि महिलाओं को हमेशा बिंदी लगानी चाहिए। आप इसके विपरीत जोर देते हैं। आपके धर्म को इस बात से क्या लेना-देना है कि मैं बिंदी लगाती हूं या नहीं?’

इस्लामी परंपरा के दाढ़ीधारी पहरेदार एक पल के लिए स्तब्ध रह गए और फिर एक साथ चिल्लाए,

‘हमें चिंता क्यों है? क्योंकि यह काफिरों की परंपरा है!’

'काफ़िर एक अपमानजनक शब्द है। इससे यह साबित नहीं होता कि बिंदी पहनना इस्लामी परंपरा के खिलाफ है।'

उनमें से एक ने तुरंत जवाब दिया, 'आपकी उर्दू गलत है। आप अपनी अज्ञानता को छिपाने के लिए कन्नड़ शब्दों का इस्तेमाल कर रहे हैं।'

‘मलयाली मुसलमान उर्दू नहीं बोलते। न ही तमिल मुसलमान बोलते हैं। वैसे भी, उर्दू का ज्ञान धर्म से कैसे जुड़ा है?’ मुझे यह सब बहुत अच्छा लग रहा था। ऐसा लग रहा था जैसे मैं किसी स्क्रिप्ट पर अभिनय कर रहा हूँ, जिसमें नायक, एक उग्र विद्रोही, एक दयनीय, अंधविश्वास में डूबे परंपरावादी को घेर लेता है। मैंने खुद को स्क्रिप्ट राइटर और नायक दोनों के रूप में देखा।

‘क्या? हैं? क्या? क्या?’ उन्हें एहसास हुआ कि यह बिल्कुल वैसा नहीं था जैसा उन्होंने सोचा था और उन्होंने अपना रास्ता बदल लिया।

‘हमें जानकारी मिली है कि आप गोमांस नहीं खाते हैं। क्या यह सही है?’

जिस धर्म में मेरा जन्म हुआ, उसमें गोमांस खाना पाप माना जाता है। इस्लाम धर्म अपनाने से पहले तक मैं इसी मान्यता और प्रथा का पालन करता था। मुझे इसे खाने से घिन आती है। लेकिन बताइए, इसमें कहाँ लिखा है कि मुसलमान कहलाने के लिए गोमांस खाना अनिवार्य है?

इस बार वे न तो हकलाए और न ही हिचकिचाए। वे एक साथ बोले: दो शरीर, एक आवाज।

‘इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि यह बात कहाँ और कैसे कही गई है। ये सवाल हमारी उस जाँच का हिस्सा हैं जिससे हम यह पता लगाएंगे कि आपने अपने काफ़िर जड़ों को पूरी तरह से काट दिया है या नहीं। और याद रखिए, यह तो बस शुरुआती जाँच है। अगर हम और विस्तृत जाँच शुरू करते हैं, तो हमारे पास ऐसे सौ सवाल होंगे!’

मैंने तुरंत जवाब दिया, 'आपका तर्क तो कमाल का है! अगर कोई मुसलमान संयोगवश धर्म परिवर्तन करके हिंदू बन जाता है, और हिंदू परंपरावादी इस बात पर जोर देते हैं कि उसे सूअर का मांस खाना ही होगा ताकि यह साबित हो सके कि उसने अपने पूर्व धर्म की जड़ों से खुद को पूरी तरह से अलग कर लिया है?'

‘तुमने अभी क्या कहा?’ वे सब एक साथ चिल्लाए। फिर लंबी, बर्फ़ जैसी सफ़ेद दाढ़ी वाले ने मेरी बात दूसरे तबलीगी को समझाई, जिसकी दाढ़ी उसके साथी जितनी ही लंबी थी। सफ़ेद दाढ़ी वाला तबलीगी अपनी जगह से उछल पड़ा और मुझ पर चिल्लाया।

‘तुम्हारी हिम्मत कैसे हुई! तबलीगी समुदाय से ये सवाल पूछने की हिम्मत तुम्हें कहाँ से हुई? सच्चे धर्म में जन्मा कोई भी व्यक्ति इसे छोड़कर धर्म परिवर्तन नहीं कर

सकता। कभी नहीं! वो तो सूअर का मांस देखने तक भी जीवित नहीं रहेगा, चखने की तो बात ही छोड़ो! धर्मत्याग की एकमात्र सज़ा मृत्यु है। क्या तुम ये नहीं जानते?' फिर उन्होंने मेरी तरफ पीठ करके मेरे ससुर से बात की। 'क्या आपने उसकी बातें सुनीं, यूनुस कुरैशी साहब? आपकी बहू पथभ्रष्ट हो गई है—उसे सही राह पर लाना आपकी ज़िम्मेदारी है। अगर आप नाकाम रहे, तो आपको समुदाय से बहिष्कृत कर दिया जाएगा। समुदाय का कोई भी व्यक्ति आपके घर नहीं आएगा। आपको किसी से भी मिलने की अनुमति नहीं होगी। ये नियम आपकी बेटियों पर भी लागू होगा। आपके घर में किसी की मृत्यु होने पर भी आपको कोई मदद नहीं मिलेगी।' वे जाने के लिए मुड़े, फिर रुके। 'और हाँ, अपने बेटे आमिर को भी हमसे मिलने के लिए कह देना।' और वे मुझे देखे बिना ही चले गए।

अमीर गुस्से से आग बबूला हो गया। 'भगवान के लिए, आप लोग समझदारी से काम क्यों नहीं ले सकते? क्या आपको अंदाजा है कि अगर वे हमें समाज से बहिष्कृत कर देंगे तो क्या होगा?'

'ठीक है! तो तुम मुझसे मेरी व्यक्तिगत पहचान को खत्म करने के लिए कह रहे हो। आमिर, मैं ऐसा कुछ क्यों करूँ जो मुझे समझ में ही नहीं आता?'

'वे "मुझे समझ नहीं आता" को इस्लाम में आस्था की कमी के रूप में समझेंगे। आप ऐसा क्यों होने देना चाहते हैं?'

'आप क्या सुझाव देते हैं? कि मैं बुर्का पहनकर गायब हो जाऊं और अपने ही हाथों से अपनी पहचान का कत्ल कर दूं?'

'मैंने ऐसा नहीं कहा! ठीक है, तो बात ये है। अगर आप शूटिंग के दौरान बिंदी लगाती हैं, तो घर आने से पहले उसे हटा दें। बुर्का न पहनें; काम के बाद घर आने पर काले शॉल से अपना चेहरा, सिर और गर्दन ढक लें। गोमांस कभी-कभार ही खाएं। वैसे भी, क्या फर्क पड़ता है? गाय भी तो भेड़ या बकरी की तरह ही एक जानवर है।'

'आपकी आवाज़ बिल्कुल तबलीगी दंपत्तियों जैसी लग रही है।'

वह चुप था। उसके माता-पिता ने मुझसे बात करना बंद कर दिया था, लेकिन उस बातचीत के बाद उन सिद्धांतों का पालन करने के लिए उसका आग्रह और भी बढ़ गया। मैंने हार न मानने का फैसला किया। यह केवल शिष्टाचार का सवाल नहीं था: इसमें आत्मसमर्पण करना, न केवल अपनी रचनात्मकता बल्कि अपनी व्यक्तिगत पहचान को भी कुचलना शामिल था। हालांकि, एक बार मैंने आमिर को ठीक इसी

तरह चौंका दिया। एक गर्म दोपहर में, मैं उसे होटल अम्मान ले गई, गोश्त बिरयानी मंगाई और उसे खाते हुए वह मुझे देखता रहा। उसकी आँखें संतुष्टि भरी खुशी से चमक रही थीं। दोपहर का भोजन समाप्त होने पर, मैंने उससे कहा, 'आमिर, मैंने गोश्त इसलिए खाया ताकि यह साबित कर सकूँ कि मैंने अपने पिछले धर्म की जड़ों से खुद को पूरी तरह से अलग कर लिया है। लेकिन अगर मैं इसे घर पर हर दिन खाऊँगी, तो इसका मतलब होगा कि मैंने अपने आत्मसम्मान का बलिदान कर दिया है। मुझे घर पर तुम्हारे समर्थन की ज़रूरत है; मुझे अपने आत्मसम्मान की रक्षा के लिए तुम्हारी ज़रूरत है।'

उन्होंने कहा, 'रज़िया, इससे बेवजह के टकराव पैदा होंगे। घर में पहले से ही तनाव है। और यह सिर्फ तबलीगियों के डर का सवाल नहीं है। मेरे माता-पिता को तो सच में लगता है कि अगर वे तुम्हें ये सब करने देते रहे—जिसमें तुम्हारा गोमांस न खाना भी शामिल है—तो मरने के बाद उन्हें हमेशा के लिए नरक में जाना पड़ेगा। तुमने आज तो गोमांस खा ही लिया है। तो जब भी घर में गोमांस बने, तुम उसे क्यों नहीं खाती रहती?'

अब मुझे गुस्सा आ रहा था। 'तुम फिर वही बात दोहरा रहे हो! मैंने तुमसे पहले भी कहा था, चलो अलग रहते हैं। हम एक फ्लैट किराए पर लेंगे और वहीं रहेंगे। इससे सारी समस्याएँ हल हो जाएँगी। तुम्हारे माता-पिता को अब तबलीगी के डर या नरक की सज़ा के डर से नहीं जूझना पड़ेगा।' उसने कोई जवाब नहीं दिया। मैं समझ गई कि वह क्या सोच रहा है। अकेले रहना आसान नहीं था। हमारे काम से हमें नियमित आमदनी नहीं मिलती थी। मौजूदा व्यवस्था ठीक चल रही थी, कम से कम आर्थिक रूप से तो – एक बड़ा घर, नौकर-चाकर और आरामदेह जीवन। खाने-पीने और दूसरे मामूली लगने वाले, लेकिन नियमित खर्चों का भुगतान हमें नहीं करना पड़ता था। जब मैं काम के सिलसिले में कुछ दिनों के लिए शहर से बाहर जाती थी, तो आमिर के माता-पिता अपने पोते का बहुत अच्छे से ख्याल रखते थे। सबसे महत्वपूर्ण बात यह थी कि आमिर अपने माता-पिता से उतना ही जुड़ा हुआ था जितना मैंने पहले सोचा भी नहीं था। फिर भी, अलग फ्लैट में जाना बोझिल तो साबित होगा, लेकिन नामुमकिन नहीं। मैंने ज़िद की। आमिर ने मना कर दिया और मैं भी नहीं मानी।

अंत में उसने कहा, 'अगर तुम यहां नहीं रुक सकते तो चले जाओ। मैं नहीं आऊंगा।'

‘इसका क्या मतलब है? क्या आपको ठीक से पता है कि आपने अभी क्या कहा?’

‘आप संवाद लेखक हैं।’

'आइए, इसे आपके अपने शब्दों में सुनें!'

‘मेरे अपने शब्दों में! तुम मुझसे ही सुनना चाहोगी...’ अचानक, उसके बाएं हाथ ने मेरे बाल ज़ोर से पकड़े और मेरी गर्दन नीचे की ओर धकेल दी। मैं महसूस कर सकती थी कि उसका दाहिना हाथ हवा में उठा हुआ है, मानो मुझे मारने के लिए तैयार हो।

दरवाजा बंद था। मेरा बच्चा अपनी दादी के साथ सो रहा था। मैं स्तब्ध रह गई। पहले भी हमारे बीच अनगिनत बहसें और तीखी नोकझोंक हुई थीं, लेकिन यह बर्बर व्यवहार पहली बार था। मैं एक पल के लिए डर गई, लेकिन मेरे आत्मसम्मान ने मुझे हिम्मत दी। 'मुझे छोड़ दो! अभी! अगर मैंने पलटकर तुम्हें एक बार भी थप्पड़ मार दिया, तो कुछ भी नहीं, कुछ भी नहीं, तुम अपनी मर्दानगी, अपना पुरुषत्व वापस पा सकोगे!'

वह उसी मुद्रा में जम गया। उसका बायाँ हाथ, जो अब भी मेरे बालों में फंसा हुआ था, वहीं रुका रहा और मुझे दर्द देता रहा। उसका उठा हुआ दायाँ हाथ अपनी जगह पर स्थिर रहा। उसकी आँखों में उलझन थी। मैंने उसकी नज़रें मिलाईं। और फिर मैंने महसूस किया कि उसकी पकड़ ढीली पड़ रही है। उसने अपना दायाँ हाथ नीचे कर लिया और धीरे-धीरे अपनी नज़रें मुझसे हटाकर ज़मीन पर टिका दीं। और अचानक वह ऐसे कमरे से बाहर निकल गया जैसे किसी युद्ध में हार गया हो। दो मिनट में वह लौटा और लगभग चिल्लाते हुए बोला: 'तुम्हारे जैसी पत्नी तलाक के लायक है। तलाक! तलाक! तलाक!' और कमरे से बाहर निकल गया।

एक पल के लिए मुझे लगा कि यह किसी फिल्म का दृश्य है। मैंने पूरी घटना का विश्लेषण करना शुरू किया: जिस तरह से वह कमरे से बाहर निकला, उसके कदमों की भारी आवाज़, मेरे सामने खड़े होने का उसका अंदाज़ और जिस लहजे में उसने तीन बार तलाक कहा। और फिर कंपकंपी शुरू हो गई। कि उसने सचमुच वे शब्द कह दिए थे। और वह गंभीर था। उसने अभी-अभी मुझे तलाक दे दिया था... या रुको... मेरा दिमाग उस एक पंक्ति पर अटक गया। मुझे तलाक की वैधता पर हुई बहस याद आ गई। क्या तलाक वैध होता है अगर पति उसे एक ही बार में तीन बार कहे, जैसा उसने अभी किया, या क्या इसे वैध होने में तीन महीने लगते हैं—हर महीने एक बार तलाक कहना? इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। दोनों ही मामलों में, तलाक

कहने का पूरा अधिकार उसी का था। इससे भी ज़्यादा महत्वपूर्ण बात यह थी कि शब्द का अपने आप में कोई अर्थ नहीं था; यह विचार था, इसके प्रयोग का मात्र विचार ही हमारे विवाह में प्रेम के अंत की शुरुआत का संकेत था। मुझे पसीना आ रहा था और मुझे लग रहा था कि मेरी अंडरवियर मेरी त्वचा से असहज रूप से चिपक रही है। अब मुझे थोड़ा अजीब सा महसूस होने लगा। मैं बिस्तर पर लेट गई, डर लग रहा था कि कहीं एक पल भी खड़ी रही तो गिर न जाऊं। शायद मुझे समय का एहसास नहीं रहा, लेकिन मुझे यकीन था कि काफी समय बीत चुका है जब मैंने आमिर के स्कूटर के स्टार्ट होने की आवाज़ सुनी। वह कहीं जा रहा है। उसने अपने माता-पिता को इस बातचीत के बारे में नहीं बताया है। चाहे कितना भी गुस्सा हो, वह सावधानी बरत रहा है—वह जानता है कि अगर उसने गलती से भी इसका ज़िक्र किया तो उसकी माँ हमारी शादी को आगे नहीं बढ़ने देगी। मुझे थोड़ी राहत मिली। यह एक बातचीत थी। उसका ऐसा कोई इरादा नहीं था। वह बस मुझे धमकी दे रहा था, लेकिन उसने वह डरावना शब्द कह दिया था और अब उसे मिटाया नहीं जा सकता था। और पहली बार मुझे लगा कि हमारी शादी में एक दरार पड़ गई है। कुछ देर बाद, मुझे हमारी शादी के दौरान हुई रस्में याद आने लगीं। तब, मैं उन्हें पूरी तरह से समझ नहीं पाई थी। मैंने तो बस इस्लाम धर्म अपनाने का विरोध किया था। मैंने जो विकल्प सुझाए थे उनमें से एक यह था कि हम दोनों में से कोई भी अपना धर्म बदले बिना रजिस्ट्रार कार्यालय में शादी कर लें। लेकिन मैंने कितनी आसानी से उसकी बात मान ली थी जब उसने मुझसे कहा था: 'देखो लक्ष्मी, मेरे माता-पिता और मेरा समुदाय इस शर्त को कभी नहीं मानेंगे। और वैसे भी, पत्नी का पति के धर्म में परिवर्तित होना कोई खास बात नहीं है। लेकिन मैं जानता हूँ और तुम भी जानती हो कि तुम्हारा धर्म परिवर्तन एक नाटक है, इन धार्मिक भोले-भाले लोगों को यह यकीन दिलाने के लिए किया गया एक दिखावा है कि हमने उन्हें अपनी मनमानी करने दी है। हम दोनों में से कोई भी धर्म में विश्वास नहीं करता।'

और अब, तलाक बोलकर उसने अपने धर्म में सिर्फ पुरुषों के लिए आरक्षित विशेष अधिकार का दुरुपयोग किया है। मैं गुस्से से उबल पड़ी और अनजाने में ही दांत पीसने लगी। मुझे धोखा महसूस हुआ। मेरे मन में एक शक्तिशाली, बेकाबू जानवर की छवि उभर आई, जिसे उसने धोखे से अपने वश में कर लिया था और अब अपनी मर्जी से उसे यातना दे रहा था।

वह उस रात बहुत देर से लौटा। डेढ़ साल का नाज़िर अपने पालने में गहरी नींद में सो रहा था। मैंने कुछ नहीं कहा। उसने भी कुछ नहीं कहा, बस मेरे बगल में बिस्तर पर लेट गया। उसके हाथ हमेशा की तरह मेरे शरीर को छूने नहीं लगे। मेरा आत्मसम्मान, जो उसके जाने पर ठेस पहुँचाता था, अचानक जाग उठा जब मैंने इस आदमी की मौजूदगी महसूस की... मेरा पति, मुझसे बस दो इंच की दूरी पर सो रहा था... भला कोई तलाक़ कैसे कह सकता है, जो महिलाओं पर अत्याचार का एक बेमिसाल हथियार है? मेरे दिमाग में यह बात बार-बार घूम रही थी, लेकिन मेरे स्वाभिमान ने मुझे बातचीत शुरू करने नहीं दी।

और इस तरह हमारे बीच सारी बातचीत बंद हो गई। अब हम एक-दूसरे के बगल में इतनी दूरी पर सोते थे कि हमें एक-दूसरे की सांसें भी महसूस नहीं होती थीं। उसके माता-पिता को अब भी पता नहीं था। और जब मैं इसे और सहन नहीं कर पाई, तो एक रात मैंने उससे पूछा, 'तुम मुझे अपने मन की बात बता ही दो। खामोशी में घुटते रहने से बेहतर हम दोनों के लिए यही होगा।'

'इस तरह साथ रहने से बेहतर यही होगा कि हम अलग होकर शांति से रहें। मैंने तलाक की पहली रस्म पूरी कर ली है। दो और बाकी हैं। मैं अगले दो महीनों में वह औपचारिकता भी पूरी कर लूंगा। मैं तुम्हारे बगल में सिर्फ इसलिए सो रहा हूं क्योंकि इद्दत के दौरान यह भी एक औपचारिकता है—तुम्हारे बगल में सोने के बावजूद तुम्हें न छूकर मैं यह साबित कर दूंगा कि हम एक-दूसरे के अनुकूल नहीं हैं।'

मुझे उसी वक्त रोने का मन हुआ। लेकिन मैं उसके सामने रोना नहीं चाहती थी, क्योंकि इसका मतलब होता कि मैं अपनी गरिमा को ठेस पहुँचा रही हूँ। मैंने अपने आँसू रोके रखे, लेकिन तुरंत वॉशरूम की ओर भागी। जैसे ही मैंने कुंडी लगाई, मैं फूट-फूट कर रोने लगी। धिक्कार है इन आँसुओं पर—ये तो उबलते हुए दूध की तरह बह रहे हैं। उबलते तो रहते हैं, पर फिर नहीं बहते। मैंने अगले आधे घंटे तक वॉशरूम में रोते हुए बिताए, जब तक मुझे यकीन नहीं हो गया कि मेरे अंदर अब और आँसू नहीं बचे हैं। मैंने ठान लिया कि मैं फिर कभी नहीं रोऊँगी, फिर बेडरूम में लौटकर बिस्तर पर अपनी तरफ सो गई।

अब उसके दो 'बचे हुए' तलाकों का इंतज़ार करने का कोई मतलब नहीं था। मैं उसके घर से जल्दी निकल सकती थी, अपने लिए कोई सस्ता फ्लैट किराए पर ले सकती थी और वहाँ अकेले रह सकती थी। मैंने मन ही मन खर्चों का हिसाब लगाया:

फ्लैट के लिए जमा राशि, किराया और बुनियादी मासिक घरेलू खर्चे। इससे मुझे आत्मविश्वास मिला। मैंने तय किया कि मैं अपनी मौजूदा कमाई से सब कुछ संभाल लूंगी, लेकिन... नाज़िर? नाज़िर किसका होगा? मुझे फिर से - बड़े दर्द के साथ - एहसास हुआ कि मुझे इस्लामी कानून के बारे में कितना कम पता है। इसके अलावा, मेरे अनियमित काम के शेड्यूल की वजह से नाज़िर अपने दादा-दादी से बहुत घुलमिल गया था। उसकी कस्टडी का अधिकार किसका था - उनका या मेरा? उसका गर्भनाल मेरा था, उनका नहीं। लेकिन क्या उनके कानून के अनुसार यह बात मायने रखती थी? मैं आमिर की तरफ मुड़ी: वह सो रहा था। मैं चुपचाप उठी और नाज़िर के पालने के पास गई, और अपने सोते हुए बच्चे को काफी देर तक देखती रही। मैं झुकी और उसके माथे पर धीरे से चुंबन किया। अगर मुझे उसकी कस्टडी मिल जाती है, तो मैंने तय किया कि मैं उसकी देखभाल के लिए एक आया रखूंगी।

अब मैं तलाक के लिए तैयार थी। लेकिन पहले मुझे प्रोफेसर शास्त्री से बात करनी थी और उन्हें बताना था कि मेरी इस दुर्दशा में उनका भी कुछ योगदान है और इस पर उनकी नैतिक जिम्मेदारी बनती है। हालांकि, असल में मुझे उनकी मदद चाहिए थी, कोई हल। वे मेरे ही गांव के थे और मेरे पिता के करीबी दोस्त शेषा शास्त्री के बेटे थे।

मेरा मन पुणे फिल्म संस्थान के दिनों में खो गया... 'प्यार में पड़ना' अंग्रेजी में कितना अर्थपूर्ण मुहावरा है। मैं प्यार में पड़ गई थी: मैंने उस समय खुद से यह बात हज़ार बार कही थी। प्यार में पड़ना खुद को पूरी तरह से समर्पित कर देना है। मैंने जो बेतहाशा उत्साह महसूस किया था, वह सचमुच का था। प्यार में पड़ना मूर्खता है। भविष्य और उसके परिणामों के बारे में सोचना कायरों का काम था। प्यार में पड़ना उसी बेपरवाही पर सहज रूप से भरोसा करना है, जो भविष्य का मार्ग दिखाती है। जब हमने अपनी डिग्रियां प्राप्त कर लीं, बैंगलोर लौट आए और शादी की वास्तविक संभावना का सामना किया, फिर एक-दूसरे के माता-पिता के पारिवारिक विरोध का सामना किया, तब प्रोफेसर शास्त्री चट्टान की तरह हमारे साथ खड़े रहे। उन्होंने हमारी शादी को हकीकत बनाने में बहुत बड़ी भूमिका निभाई। सिर्फ इतना ही नहीं। वे एक तरह से आदर्श थे—इंग्लैंड में उनकी उच्च शिक्षा, एक श्वेत ईसाई लड़की से उनकी शादी और अपने रूढ़िवादी पिता की कड़वी दुश्मनी का सामना करने में उन्होंने जो साहस दिखाया था, उसने उन्हें एक प्रखर क्रांतिकारी बना दिया था, जो अकादमिक और बौद्धिक जगत में अनुकरणीय थे। वह किसी विदेशी से शादी करने

वाले पहले भारतीय नहीं थे, लेकिन उनसे पहले किसी भी भारतीय को उनके जैसी क्रांतिकारी छवि प्राप्त नहीं थी। अलग जाति या धर्म में शादी करने की इच्छा रखने वाले जोड़े उनसे सलाह लेने के लिए उत्सुक रहते थे। हमने भी उन्हीं का अनुसरण किया... नहीं, असल में, मैंने ही उनसे पहले संपर्क किया था। कई सालों बाद उनसे मुलाकात हो रही थी। हम विश्वविद्यालय स्थित उनके कमरे में अकेले थे।

'लक्ष्मी! इतने सालों बाद तुम्हें देखकर कितना अच्छा लग रहा है! कितनी लंबी और कितनी सुंदर हो गई हो तुम! तुम्हारी खूबसूरती नरसपुरा के प्राकृतिक, बेबाक आकर्षण और बैंगलोर की बौद्धिक परिपक्वता का एक अनूठा संगम है!' उन्होंने मुझे गले लगा लिया। मुझे इस तरह के अचानक और आवेगपूर्ण स्नेह प्रदर्शन की आदत थी। पहले तो मुझे शर्म आती थी, लेकिन धीरे-धीरे मैंने इसे अपने पेशेवर जीवन का एक अनिवार्य हिस्सा मान लिया, जिसकी शुरुआत शौकिया थिएटर से हुई और बाद में फिल्म जगत में भी। लेकिन उनके आलिंगन में एक ऐसी गर्माहट थी जो मात्र स्नेह से कहीं बढ़कर कुछ और संकेत दे रही थी...उन्होंने मेरे शरीर को छू लिया था, भले ही वह आलिंगन बस कुछ पल के लिए ही क्यों न रहा हो। मैंने ऐसा व्यवहार किया जैसे कुछ हुआ ही न हो और कहा, 'धन्यवाद, अंकल!', इस बात का फायदा उठाते हुए कि वह मुझसे दस साल बड़े थे।

'अंकल!' उसने हैरानी से कहा और काफी देर बाद दर्द भरी आह भरी। 'आप कब सीखेंगे? जब तक आप अपने दिमाग से ये घिनौने बुर्जुआ रिश्ते के लेबल नहीं मिटाते, हमारा प्रगतिशील आंदोलन एक मिलीमीटर भी आगे नहीं बढ़ेगा: अंकल! मुझे नारायण कहिए। या शास्त्री। या प्रोफेसर।'

मैंने कहा, 'मुझे लगता है कि 'प्रोफेसर' शब्द स्वाभाविक लगता है।'

'यह तो अच्छी बात है! तो नरसपुरा से क्या ताज़ा खबर है? मैं वहाँ नहीं जा सकता... मुझे वहाँ जाने की मनाही है।'

'अच्छा ठीक है...तो लगता है मुझे भी आपके नक्शे कदम पर ही चलना होगा।'

'सच में? वाह! वो खुशनसीब कौन है? वाह! अब मुझे लगता है मैंने जल्दबाजी कर दी। अगर मुझे पता होता कि ये फूल मेरे ही आंगन में खिल रहा है तो मैं किसी गोरी औरत से शादी नहीं करता! खैर, मुझे लगता है कि शादियां तो स्वर्ग में ही तय होती हैं।' उनका चेहरा खुशी से दमक रहा था, उनकी आँखों में चाहत झलक रही थी। मैंने उन्हें अपनी समस्या बताई और उन्होंने इतनी ध्यान से सुना मानो मेरी समस्या ही उनके

लिए एकमात्र वास्तविकता हो। यह अजीब तरह से सुकून देने वाला था। जब मैंने अपनी बात खत्म की, तो वे आगे झुके और सीधे मेरी आँखों में देखा। ऐसा लग रहा था मानो वे अतीत, वर्तमान और भविष्य के सभी छिपे हुए सत्यों को प्रकट करने के लिए तैयार हों। यह मेरे लिए कोई नई बात नहीं थी। मैंने अपने बचपन के अधिकांश वर्ष मंच पर और अनौपचारिक माहौल में भी उनके जोशीले भाषण सुनते हुए बिताए थे। वे पेशेवर अभिनेताओं को भी मात देने वाले अभिनेता थे। मेरे जानने वालों में से किसी ने भी प्रोफेसर शास्त्री की तरह हर शब्द को इतनी कुशलता से निभाने की कला में महारत हासिल नहीं की थी। जब उन्होंने अंत में बोलना शुरू किया, तो उनकी आँखें भविष्यसूचक थीं। 'लक्ष्मी, ध्यान से सुनो। एक समर्पित क्रांतिकारी का हर कदम प्रगतिशील आंदोलन के इतिहास की निरंतर और अटूट यात्रा में एक विशाल कदम होता है। तुमने अपना कदम आगे बढ़ा दिया है। पीछे मत हटना। मैं तुम्हारे साथ हूँ। बुद्धिजीवी वर्ग की पूरी ताकत तुम्हें आगे बढ़ाने के लिए तुम्हारे साथ है। अंतर-धार्मिक विवाह अंतर-जातीय विवाह से कहीं अधिक क्रांतिकारी होता है!' वह आगे झुका, मेरे हाथ अपने हाथों में लिए और कसकर दबाए।

फिर उन्होंने आमिर को फोन किया। 'मुझे पता है कि उसने अपरिहार्य सामाजिक बाध्यता को पूरा करने के लिए इस्लाम धर्म अपना लिया है। मैं उसकी स्वतंत्रता पर कोई प्रतिबंध नहीं लगाऊंगा। इसके अलावा, हम दोनों प्रगतिशील आंदोलन के प्रति समर्पित हैं और फिल्म जगत में अपने करियर में साथ-साथ आगे बढ़ना चाहते हैं। मैं उससे बेहतर जानता हूं कि अगर वह किसी अन्य मुस्लिम पत्नी की तरह ज़नाना में बैठी रहेगी तो इनमें से कोई भी लक्ष्य हासिल नहीं किया जा सकता,' आमिर ने उन्हें आश्वस्त किया।

इसके बाद प्रोफेसर ने मुझे अलग से बुलाया। 'पूर्ण क्रांति लाने के लिए कोई पूर्वनिर्धारित तरीके नहीं हैं। रास्ता खुद ही रास्ता दिखाता है। हमें हर बदली हुई या नई परिस्थिति के अनुसार अपने तरीकों में बदलाव करना होगा। लचीलापन ही कुंजी है। आपके मामले में, आपको व्यवस्था के भीतर प्रवेश करने, उसे गहराई से जानने और फिर धीरे-धीरे उसे भीतर से खत्म करने के तरीके खोजने के लिए "धर्म परिवर्तन" करना होगा। इस समय की सबसे बड़ी आवश्यकता हिंदू समाज की परंपराओं को नष्ट करना है क्योंकि यह बहुसंख्यक समुदाय है। इसी तरह, हमें इसे मुस्लिम समाज पर भी लागू करना होगा। आपको अपने "धर्म परिवर्तन" को इसी परिप्रेक्ष्य में देखना

चाहिए। क्रांति सभी दिशाओं से फैलनी चाहिए। लक्ष्मी, अपनी तमाम कमियों के बावजूद, इस्लाम समानता का प्रतीक है। आपके पास जो कुछ भी है, उसे बराबर भागों में बाँटें। यदि आज धर्म में कभी कोई क्रांति होती है, तो वह इन्हीं सिद्धांतों पर आधारित होगी जिन्हें इस्लाम पहले से ही अपनाता है। हिंदू धर्म तो बस एक कमजोर अवशेष है जो किसी काम का नहीं है।'

अब बात समझ में आने लगी। प्रोफेसर शास्त्री का तर्क पूरी तरह से मेरे शौकिया रंगमंच के दिनों में सीखी बातों और बाद में फिल्म संस्थान में विस्तार से अध्ययन की बातों से मेल खाता था—फिल्म निर्माण सामाजिक परिवर्तन को संभव बनाने का एक माध्यम था, न कि कला, जीवन और इसी तरह की पुरानी व्याख्याओं पर गहन चिंतन का साधन। मैं आश्वस्त हो गया। अपनी एकजुटता दिखाने के लिए, उन्होंने मेरे निकाह समारोह के बाद विश्वविद्यालय में एक छोटा सा कार्यक्रम आयोजित किया। यह कार्यक्रम क्रांतिकारी छात्र संघ के बैनर तले हुआ, जिसकी स्थापना उन्होंने ही की थी। अवसर को देखते हुए यह कार्यक्रम काफी भव्य था: सिर्फ एक शादी। एक विशाल खुला रंगमंच, भव्य ढंग से सजाया गया। प्रोफेसर शास्त्री ने एक प्रेरक भाषण दिया जिसमें उन्होंने बताया कि कैसे आमिर और लक्ष्मी (अब रजिया) पुरानी सामाजिक और धार्मिक मान्यताओं के खिलाफ साहसी विद्रोह का प्रतिनिधित्व करते हैं। उन्होंने दूसरों को हमारा अनुकरण करने के लिए प्रोत्साहित किया और अपना भाषण हमें माला पहनाकर समाप्त किया। बेंगलुरु के सभी समाचार पत्रों ने हमारे चित्र अपने पहले पृष्ठों पर प्रकाशित किए, साथ ही सुविचारित रिपोर्टें भी थीं। दो प्रगतिशील पत्रिकाओं ने इस ऐतिहासिक घटना पर शानदार संपादकीय लिखे और इसे कला जगत और बुद्धिजीवियों की सामाजिक परिवर्तन के अभिकर्ताओं के रूप में भूमिका की एक और जीत के रूप में वर्णित किया।

~

प्रोफेसर से मेरी मुलाकात काफी समय से नहीं हुई थी। लेकिन मेरी शादी में आए चिंताजनक घटनाक्रम ने मुझे तुरंत उनसे सलाह लेने के लिए मजबूर कर दिया। ऑटोमैटिक डायरेक्टरी सर्विस ने मुझे बताया कि उनका घर का फोन नंबर बदल गया है। मैंने विश्वविद्यालय स्थित उनके कार्यालय में फोन किया और जैसा कि उम्मीद थी, किसी ने मेरा फोन नहीं उठाया। आखिरकार, मुझे उनका नया घर का नंबर मिल गया। वे शहर से बाहर थे, कलकत्ता में एक सेमिनार के लिए गए हुए थे, जिसके बाद वे

अगले शनिवार को बीजिंग के लिए रवाना होंगे। मैं उनसे सोमवार से शुक्रवार के बीच विश्वविद्यालय में मिल सकती थी। उनके लौटने के बाद, मैंने सोचा कि विश्वविद्यालय जाना शायद ठीक नहीं रहेगा। मुझे पता था कि वे काम में बहुत व्यस्त होंगे। उनसे अकेले में मिलना लगभग नामुमकिन होगा। लेकिन फिर भी मैं गई और वहाँ प्रशंसकों, छात्रों और मदद मांगने वालों की भारी भीड़ देखी, सभी युवा लोग थे। उन्होंने मुझे देखा और मुस्कुराते हुए मेरा परिचय समूह से कराया।

मुझे यकीन है कि आप सभी विद्रोही और लोकप्रिय फिल्म हस्ती रजिया को जानते होंगे।

भीड़ में मौजूद लड़कियां प्रशंसा से मुंह खुला रखकर मेरी ओर देखने लगीं।

'क्या आप सभी प्यारी महिलाएं अपनी नायिका की तरह बनना चाहती हैं या बस उन्हें विस्मय भरी निगाहों से देखती रहेंगी?' प्रोफेसर शास्त्री का लहजा व्यंग्यात्मक था। फिर उन्होंने सीधे मुझसे कहा, 'लक्ष्मी, अगर तुम मुझसे व्यक्तिगत रूप से मिलने आई हो, तो मुझे यकीन है कि कोई बहुत गंभीर बात होगी। मैं इन नवोदित प्रगतिवादियों से बात खत्म करके चार बजे तुमसे मिलूंगा। तब तक तुम पुस्तकालय जाकर कुछ पढ़ क्यों नहीं लेती?'

मैंने पुस्तकालय में लगभग पांच घंटे बिताने के बाद ठीक शाम 4 बजे उनके कार्यालय में प्रवेश किया।

'यहाँ नहीं। चलो गाड़ी में चलते हैं। अगर मैं यहाँ रहा, तो मुझे यकीन है कि इनमें से कोई न कोई बदमाश हमें परेशान करने का बहाना ढूंढ लेगा।' मुझे यह विचार अच्छा लगा। जैसे ही उसकी कार विश्वविद्यालय परिसर से निकली, उसने अपना बायाँ हाथ मेरे दाहिने कंधे पर रखा और उसे हल्के से सहलाने लगा। मुझे इस तरह के व्यवहार की उम्मीद थी।

'काफी समय हो गया...तो, तुम ठीक हो? सब कैसा चल रहा है? चलें बिग बनयान ट्री? इस समय वहाँ अपेक्षाकृत कम भीड़ होती है। हम बिना किसी रुकावट के बात कर सकते हैं।'

मैंने सिर हिलाया। उनका हाथ सहलाना बंद नहीं हुआ। अपनी बेचैनी दिखाए बिना मैंने कहा, 'मैं...उम्म...मुझे नहीं पता कहाँ से शुरू करूँ...खैर! मैंने इस्लाम धर्म इसलिए अपनाया ताकि मैं आमिर से शादी कर सकूँ और...और इसके जीर्ण-शीर्ण

स्वरूप को नष्ट करने के उत्साह में। लेकिन अब मुझे एहसास हो रहा है कि मैं उस धर्म में रहकर भी उसी जीर्ण-शीर्ण स्वरूप का हिस्सा बन जाऊँगी।'

'सच में? यह तो दुखद है! लेकिन आपने धर्म परिवर्तन किया ही क्यों? आप और आमिर दोनों अपने-अपने धर्मों को छोड़ सकते थे। आप नागरिक विवाह का विकल्प चुन सकते थे। तब आप प्रगतिशील दंपत्ति के रूप में अग्रणी आदर्श बन सकते थे,' उन्होंने कहा।

मैं उनकी प्रतिक्रिया से दंग रह गया। ये वही व्यक्ति थे जिन्होंने चार साल पहले मुझे व्यवस्था में घुसपैठ करके उसे ध्वस्त करने के महत्व के बारे में समझाया था। मैंने अपनी हैरानी तो नहीं दिखाई, लेकिन उन्हें उस बातचीत की याद दिला दी।

'ओह हां हां हां! मुझे याद आ गया...माफ़ कीजिए...अब मुझे विस्तार से बताइए। क्या गड़बड़ हुई?'

मैंने उसे अपनी कहानी सुनाई और जब तक मेरी चार साल की कहानी खत्म हुई, हम बिग बनयान ट्री पहुँच चुके थे। हम एक बरगद के पेड़ की धूप से बचने वाली शाखाओं के नीचे एक पत्थर की बेंच पर बैठ गए। कई मिनट तक हम चुप रहे। फिर वह मेरी ओर मुड़ा और उसने वही भविष्यसूचक दृष्टि अपनाई जो अब मुझे लगता था कि उसी की खासियत बन गई थी।

क्या आप देख पा रही हैं कि यह बरगद का पेड़ कितना सटीक रूपक है? आदिम बरगद का पेड़ बढ़ता ही जाता है और अपनी हवाई जड़ों को एक विशाल क्षेत्र में फैलाता है। ये हवाई जड़ें वर्षों से धैर्यपूर्वक नीचे उतरती हैं, जब तक कि वे धरती को छूकर उससे भी आगे न बढ़ जाएं। फिर वे जड़ें बन जाती हैं और सौ समान बरगद के पेड़ों को जन्म देती हैं, जो बदले में अपनी हवाई जड़ों को फैलाना शुरू कर देते हैं। हमें ऐसा लगता है कि यह विशाल पेड़ सैकड़ों जड़ों पर खड़ा है। क्या आप मुझे इस पेड़ की मूल जड़ दिखा सकती हैं, जिससे यह हरियाली उत्पन्न हुई? मैं आपको बताती हूँ। वास्तव में, उस पहले पेड़ की जड़ सदियों पहले मर चुकी है। सोचो, लक्ष्मी—कोई जड़ कितने समय तक जीवित रह सकती है? लेकिन फिर, हर हवाई जड़ जो धरती को छूती है और फिर जमीन में चली जाती है, खुद को मूल जड़ होने का दावा करती है। अब बताइए, क्या हमारा धर्म बिल्कुल ऐसा ही नहीं है?

हमेशा की तरह, मैं उनके शब्दों को सुनकर मंत्रमुग्ध हो गई। ऐसा लगा जैसे वे मुझे एक नया दृष्टिकोण, एक नई अंतर्दृष्टि प्रदान कर रहे हों, हालांकि तब तक मैं पूरी

तरह से जान चुकी थी कि उनके शब्द लुभाने और राजी करने के लिए थे। मुझे यह नहीं पता था कि आकर्षण अक्सर सतही होता है। मैं पूरी तरह से बरगद के पेड़ की छवि में खो गई थी। वे मेरे बाईं ओर बैठे थे और अचानक मुझे अपने कंधे पर उनका दाहिना हाथ महसूस हुआ। अगले ही पल उन्होंने अपनी बाहें मेरे चारों ओर लपेट लीं और मुझे हल्के से गले लगा लिया, एक ऐसा आलिंगन जो केवल शारीरिक नहीं बल्कि एक ही दृष्टि में लीन दो बुद्धियों का मिलन प्रतीत हुआ। उन्होंने मेरे कानों में फुसफुसाया, 'लक्ष्मी, मुझ पर भरोसा करो, यह सहज है... यह इसलिए हुआ क्योंकि मैं जानता हूं कि इस समय हम दोनों एक ही बौद्धिक रहस्योद्घाटन में डूबे हुए हैं। यह आलिंगन उस साझा रहस्योद्घाटन की एक गहरी छाप है।'

मैंने विरोध नहीं किया, बल्कि गर्दन घुमाकर धीरे-धीरे सड़ते हुए बरगद के पेड़ पर अपनी निगाहें गड़ा दीं। कुछ देर बाद मैंने कहा, 'महोदय, आपने मुझे बताया था कि इस्लाम ही एकमात्र ऐसा धर्म है जो समानता पर आधारित है। मेरे सवालों से आमिर असहज हो गया, इसलिए उसने अपनी उस पत्नी को तलाक दे दिया जिसने उसके लिए सब कुछ त्याग दिया था, क्योंकि उसका धर्म उसे यह अधिकार देता है। अब मेरी क्या स्थिति है, महोदय? क्या आपके पास मेरे लिए कोई समाधान है?'

प्रोफेसर ने मुझे छोड़ दिया। उनके चेहरे पर आत्मचिंतन का भाव था। मैंने कुछ नहीं कहा।

'हर समस्या का समाधान होता है। मुझे आमिर का नंबर दे दो।'

पांच दिन बाद, आमिर ने अपनी मर्जी से मुझसे बात की। मुझे थोड़ा आश्चर्य हुआ क्योंकि मैं आमिर की इस इच्छा के पीछे की असली वजह का अंदाज़ा लगा सकता था। मुझे कभी पता नहीं चला कि उसे किसने फोन किया, वह कहाँ गया या किससे मिला। तलाक़ देने से पहले तक हम हर दिन अपनी योजनाओं और कार्यक्रमों के बारे में एक-दूसरे से बात करते थे। लेकिन उस रात के बाद से हमने एक-दूसरे से बात नहीं की थी।

देखो, मैंने पिछले कुछ दिनों से इस बारे में बहुत सोचा है। मेरे माता-पिता के लिए अपनी सोच और मान्यताओं को सुधारना या बदलना नामुमकिन है। वे परंपराओं में बुरी तरह जकड़े हुए हैं और काफी उम्रदराज भी हैं। जैसा तुमने कहा, चलो घर छोड़कर अलग रहने लगते हैं। मैं उन्हें बता दूँगी कि यह घर स्टूडियो से बहुत दूर है, हमारा समय अनियमित है, रात को घर लौटना भी असुरक्षित है, इसलिए हमें लगता है

कि स्टूडियो के पास एक फ्लैट किराए पर लेना एक अच्छा विकल्प है। हम छुट्टियों और रविवार को उनसे मिलने जाएँगे और मुझे यकीन है कि वे मान जाएँगे—लेकिन तुम्हें मुझसे एक वादा करना होगा। जब भी हम उनके घर जाएँगे, तुम एक मुस्लिम पत्नी की तरह रहोगी। मुझे पता है कि वे कभी फ्लैट में नहीं आएँगे।

यह इस बदलाव के पीछे प्रोफेसर की भूमिका की पुष्टि करने के लिए काफी था। इससे भी महत्वपूर्ण बात यह थी कि आमिर ने मुझसे यह नहीं पूछा कि मैं प्रोफेसर से क्यों मिली थी या मैंने उनसे क्या बातें साझा की थीं, और न ही मैंने उन्हें बताने की पहल की। मुझे राहत मिली कि मैंने अपनी स्वतंत्रता वापस पा ली थी। उन पर अपना प्रेम जताने में मैं गलत नहीं थी। वे स्वभाव से एक अच्छे इंसान थे, लेकिन अपने धर्म के दबाव में आ गए थे। कुछ ही दिनों में हमारा रिश्ता फिर से सामान्य हो गया, हमारे बीच अतीत की कोई कड़वाहट नहीं बची थी।

मैंने प्रोफेसर से उनके बीजिंग यात्रा से लौटने के बाद मिलने का समय तय किया। उन्होंने मुझे बताया कि वे परसों शाम पांच बजे के बाद खाली रहेंगे। विश्वविद्यालय में उनका कार्यालय सुनसान था और मुझे लगा कि क्या उनसे अकेले वहाँ मिलना सही फैसला था। लेकिन मुझे पूरा भरोसा था कि मैं उनसे निपट लूंगी। फिल्म उद्योग में दिन-रात तरह-तरह के लोगों के साथ काम करने के अनुभव ने मुझे हर तरह के लोगों से निपटने के लिए पर्याप्त कौशल प्रदान कर दिया था। अभिवादन करने के एक मिनट के भीतर ही उन्होंने अपनी बीजिंग यात्रा का वृत्तांत शुरू कर दिया। उन्होंने कहा कि चीन में उन्होंने जो कुछ देखा, उससे वे बहुत प्रभावित हुए। चीनी समाजवाद रूसी मॉडल से कहीं बेहतर था। एक सार्थक क्रांति वह होती है जो सबसे निचले तबके के किसान से शुरू होती है। इस दृष्टिकोण से, माओ की अंतर्दृष्टि, दायरे और गहराई के मामले में, लेनिन और स्टालिन दोनों से कहीं आगे थी। अब मेरा ध्यान उनकी ओर था—मैं फिर से एक छात्रा बन गई थी और ये मेरे प्रोफेसर थे जो समाजवाद पर एक प्रेरणादायक व्याख्यान दे रहे थे। उनका भाषण प्रभावशाली था और उनका जोश अदम्य। लगभग एक घंटे बाद, मैंने बातचीत को अपनी स्थिति की ओर मोड़ दिया।

'सर, आमिर ने अपने माता-पिता को उस घर से निकलने के हमारे फैसले के बारे में बता दिया है और जैसे ही हमें नया घर मिल जाएगा, हम उसे खाली कर देंगे। मुझे

पता है कि केवल आप ही उसे सही रास्ते पर ला सकते हैं। मुझे यह जानना है कि आपने उसे ठीक-ठीक क्या कहा जिससे वह रातोंरात बदल गया!'

प्रोफेसर ने हाथ हिलाते हुए कहा, 'अरे, ये तो कुछ भी नहीं! आमिर तो वैसे भी अच्छा लड़का है। वो यहीं बैठा था, इसी कुर्सी पर'—उन्होंने मेरी कुर्सी की ओर इशारा करते हुए कहा—'मैंने उससे कहा था कि शादी के बाद माता-पिता के साथ रहना एक बुर्जुआ जीवनशैली की पहचान है—उसे तुम्हारे साथ बहुत पहले ही आ जाना चाहिए था क्योंकि ये ज़िम्मेदारी का प्रतीक है। देखो, इस मामले में ज़िम्मेदारी ही सबसे अहम शब्द है, चाहे समाज कोई भी हो: पूंजीवादी हो या समाजवादी।' मैंने उससे कहा, "देखो, आमिर; अगर तुमने रंगमंच और फिल्म जगत में काम करने वाली किसी सच्ची मुस्लिम महिला से शादी की होती, तो मुझे यकीन है कि तुम्हारे परिवार में भी ऐसे ही टकराव होते। तब तुम क्या करते? लेकिन देखो तुमने अब क्या कर दिया! क्या तुम्हें अंदाज़ा है कि इसका क्या अंजाम होगा? तुम्हारे तलाक की खबर फैल जाएगी। तुम एक कलाकार हो, एक उभरते हुए निर्देशक हो जिसका भविष्य उज्ज्वल है। प्रेस और सार्वजनिक संगठन तुम्हारे तलाक को विश्वासघात के रूप में देखेंगे—वे प्रचार करेंगे कि तुम्हारी शादी एक भोली-भाली हिंदू लड़की को बहला-फुसलाकर धर्म परिवर्तन कराने और फिर उसे छोड़ देने की एक चाल थी। मेरी बात ध्यान से सुनो: कोई भी प्रगतिशील संगठन तुम्हारी मदद के लिए आगे नहीं आएगा; बल्कि वे तुम्हारा बहिष्कार करेंगे! निर्माता तुम्हें काम नहीं देंगे। तुम्हारा करियर बर्बाद हो जाएगा। तुम्हारे हर कदम पर कड़ी नज़र रखी जाएगी। किसी भी सार्वजनिक हस्ती के निजी जीवन में किए गए किसी भी काम का हमेशा एक सार्वजनिक पहलू और परिणाम होता है। क्या तुमने यह नहीं सोचा कि तुम्हारा तलाक उन सैकड़ों युवा लड़के-लड़कियों को क्या संदेश देता है जो तुम्हें आदर्श मानते हैं? अंतरधार्मिक विवाह? तुम्हें क्या हो गया है? तुम्हारी जल्दबाजी देखकर मुझे निराशा हुई है—सामाजिक रूप से जिम्मेदार होने का दावा करने वाले व्यक्ति में यह गुण अच्छा नहीं है।" लक्ष्मी, आखिरकार उसे मेरी बात समझ में आ गई... उसका गुस्सा शांत हो गया। और याद रखना, मैं हमेशा तुम्हारे साथ हूँ—अभी भी और भविष्य में भी। अगर वह फिर से तुम्हारे लिए मुसीबत खड़ी करे तो मुझे बताना,' उसने विजयी मुस्कान के साथ अपनी बात समाप्त की।

‘धन्यवाद...धन्यवाद, धन्यवाद...बहुत-बहुत धन्यवाद, महोदय!’ मैंने झुककर उनका हाथ जोरदार तरीके से मिलाया।

‘फिर से वही शुरू हो गया! अब तुम मुझे “सर” कह रही हो। तुम्हें पता है इससे मुझे कितना बुरा लगता है? आखिरी बार कह रही हूँ, तुम मेरे लिए खास हो! तुम मेरे पिता के करीबी दोस्त की बेटी हो। हम दोनों का एक-दूसरे पर विशेष अधिकार है, है ना?’ उन्होंने मेरी तरफ देखा। मैंने कोई जवाब नहीं दिया।

‘हाँ? या ना? तुम्हें जवाब देना ही होगा!’ उसने जोर देकर कहा।

क्या मुझे वाकई इसका जवाब देना होगा?

“अच्छा...ठीक है...दरअसल आप सही कह रहे हैं। भावनाओं को शब्दों में व्यक्त करने से मौन आत्मीयता भंग हो जाती है। ओह, और मैं बिल्कुल भूल ही गया था! कुछ समय पहले मेरी मुलाकात कलेनाहल्ली के शिव गौड़ा से हुई थी। उन्होंने मुझे बताया कि आपके पिता ने लगभग सामाजिक सेवा करना बंद कर दिया है। ऐसा लगता है कि वे अपने घर में बंद रहते हैं और सारा दिन कुछ न कुछ पढ़ते रहते हैं।”

मेरे पिता का ज़िक्र होते ही मुझे अचानक—और फिर से—यह एहसास हुआ कि प्रोफ़ेसर ही मेरे और मेरे पिता के बीच एकमात्र कड़ी थे, उनके बारे में थोड़ी-बहुत जानकारी पाने का एकमात्र ज़रिया थे। लेकिन प्रोफ़ेसर की स्थिति मुझसे काफ़ी अलग थी। उन्होंने अपना धर्म नहीं बदला था और अपने माता-पिता की नाराज़गी के बावजूद, उन्हें गाँव में आने और वहाँ के कुछ लोगों से बात करने की इजाज़त थी। इसके अलावा, वे एक पुरुष थे। और फिर मैंने सोचा कि वे मुझसे बिना पूछे ही ये सब बातें मुझे क्यों बता रहे थे। क्या ये मेरे साथ घनिष्ठता का भ्रम बनाए रखने का उनका तरीका था? शायद। मैंने खिड़की से बाहर देखा और पाया कि अंधेरा हो रहा था, फिर मैंने अपनी घड़ी देखी। वे समझ गए और उठ गए।

‘आपको शिवाजीनगर पहुंचना है... हम्म... चलिए मैं आपको जयनगर छोड़ देता हूँ। आप वहाँ से बस ले सकती हैं,’ उन्होंने मेरे पास आते हुए कहा और मुझे कसकर गले लगा लिया। फिर उन्होंने मेरा चेहरा ऊपर उठाया और मेरे होंठों को प्यार से चूमा। मुझे कुछ महसूस नहीं हुआ। ऐसा लगा जैसे मैं रिहर्सल में किसी अभिनेता को सीन समझाते हुए चूम रही हूँ। फिर उन्होंने मेरे कानों में धीमी आवाज़ में कहा, ‘लक्ष्मी... तुम... मैं... मुझे तुमसे असाधारण स्नेह है... मुझे... मुझे बताना अगर तुम किसी परेशानी में हो... कोई भी परेशानी। मैं यहाँ हूँ। हमेशा।’ और उन्होंने फिर से

मेरा चेहरा थाम लिया, उनके होंठ मेरे होंठों को छू रहे थे। मैंने उनसे संपर्क तोड़ा और धीरे से कहा, ‘मैं आपकी बहुत आभारी हूँ सर। चलिए चलते हैं, मुझे देर हो रही है। मुझे जल्दी घर पहुंचना है।’

कार में, प्रोफेसर शास्त्री ने अपने विशिष्ट अकादमिक लहजे में बात करना शुरू कर दिया, मानो कुछ देर पहले हमारे बीच कुछ हुआ ही न हो। 'आजकल आप क्या पढ़ रहे हैं? मैंने अक्सर देखा है कि आप जैसे कला प्रेमी लोग अपने रचनात्मक कार्यों में व्यस्त होते ही गंभीर पठन-पाठन छोड़ देते हैं। यह बुरा है, नहीं, बल्कि आपके व्यक्तिगत विकास के लिए खतरनाक है।'

मैंने भी उनका साथ दिया।

'आप सही कह रहे हैं, महोदय। केवल सिनेमाई तकनीकों का अध्ययन करना ही पर्याप्त नहीं है। हमें साहित्य, संगीत, चित्रकला और मूर्तिकला से भी परिचित होना चाहिए।'

‘वाह, मेरी प्यारी बेटी!’ वह मुस्कुराया। ‘आपको हमेशा व्यक्ति की सामाजिक जिम्मेदारी को ध्यान में रखना चाहिए और उस दिशा में अपनी आलोचनात्मक सोच विकसित करनी चाहिए। याद रखें, अंततः हम सभी इतिहास के प्रति जवाबदेह हैं।’

जयनगर से शिवाजीनगर की बस यात्रा के दौरान प्रोफेसर से हुई बातचीत पर मैं सोचने लगी। मैं ये सारी बातें आमिर से भी कह सकती थी, लेकिन क्या उनका वैसा ही असर होता? मैं भी उतनी ही लोकप्रिय थी, बल्कि शायद उससे भी ज़्यादा। आमिर का तलाक एक बेहद चर्चित घटना थी। साथ ही, मैं एक महिला थी और महिला मुक्ति आंदोलन का पूरा समर्थन मेरे साथ होता। मीडिया भी मेरी परेशानी को लेकर ज़्यादा संवेदनशील होता। लेकिन इनमें से किसी बात ने मुझे प्रभावित नहीं किया था। और अगले ही पल मुझे जवाब मिल गया। प्रोफेसर शास्त्री एक माहिर वार्ताकार थे।

दरवाजा खुलने की आवाज ने उसकी तंद्रा भंग कर दी और उसे वर्तमान में वापस ले आई। तभी उसने आमिर की आवाज सुनी, 'अंधेरे में अकेले क्यों बैठी हो?'

‘कुछ नहीं। मैं नदी को देख रहा था।’

‘इस अंधेरे में कुछ भी देखना नामुमकिन है।’

‘ठीक है, मैं अकेला रहना चाहता था। बस ऐसे ही। तुम वापस सो जाओ।’

वह चला गया। अचानक उसे थकान महसूस हुई। अतीत का बोझ। एक पल में, उसने जम्हाई ली और बेडरूम में लौट गई।

लेकिन नरसिम्हा, विट्टला और अन्य देवताओं की टूटी हुई मूर्तियाँ उसे सताती रहीं। हंपी से लौटे हुए उसे एक सप्ताह से अधिक समय हो गया था। हालेबिड और अन्य स्थानों पर इसी तरह टूटी हुई मूर्तियों की उसकी बचपन की यादें उसे उन मुस्लिम आक्रमणकारियों के इतिहास की याद दिलाती थीं जिन्होंने उन्हें तोड़ा था। हंपी का भी यही इतिहास था। सबसे बड़ी चुनौती इस इतिहास को वृत्तचित्र में दर्शाना था।

2

कुछ दिनों बाद, प्रोफेसर ने सुबह 9 बजे लक्ष्मी को फोन किया। आमिर घर पर नहीं था।

‘लक्ष्मी, मुझे तुम्हें एक दुखद खबर देनी है, जो बहुत अप्रिय है। तुम्हारे पिता अब इस दुनिया में नहीं रहे। कुमारेश यह खबर मुझे व्यक्तिगत रूप से देने के लिए नरसपुरा से चलकर घर आया था और उसने मुझे तुमसे कहने को कहा था। पंद्रह दिन बीत चुके हैं। मैंने कल तुम्हें करीब दस बार फोन किया, लेकिन शायद घर पर कोई नहीं था।’

उसे अचानक चक्कर आने लगे और कमजोरी महसूस हुई। उसने अपना मुंह 'ओ' की तरह खोला, लेकिन कोई आवाज़ नहीं निकली।

‘क्या तुम मेरी बात सुन रही हो, लक्ष्मी?’

वह जवाब नहीं दे सकी। उसे लगा जैसे दम घोंटने वाला धुआँ उसकी इंद्रियों को घेर रहा हो, एक ऐसा धुआँ जो झुलसाता नहीं बल्कि धीरे-धीरे अपने मंद, घुटन भरे बल से आपके अंदरूनी अंगों को दबाता है, जो अंधा कर देता है, बहरा कर देता है, मूक कर देता है और अंततः आपको पूरी तरह से वश में कर लेता है।

‘लक्ष्मी...लक्ष्मी! मुझे...मुझे ये चौंकाने वाली खबर तुम्हें खुद बतानी चाहिए थी, लेकिन मुझे एक ज़रूरी काम के लिए दिल्ली जाना है, जिसे मैं रद्द नहीं कर सकती।

यकीन मानो, मैं इस मुश्किल घड़ी में तुम्हारे साथ होती और तुम्हें दिलासा देती। खुद को संभालो। प्लीज़...कितना समय हो गया है? उम्म...उसने तुमसे संपर्क तोड़ दिया था, अट्ठाईस साल हो गए? लेकिन इसका मतलब ये नहीं कि तुम्हारा उससे कोई रिश्ता नहीं है। फ़ोन आमिर को दे दो।'

वह अब भी चुप थी। उसे समझ नहीं आ रहा था कि आमिर को कैसे बताए कि वह घर पर नहीं है। एक मिनट बाद, उसे लगा जैसे कहीं दूर से एक हल्की सी क्लिक की आवाज़ आई हो। उसने फ़ोन काट दिया था। वह अब भी रिसीवर को पकड़े खड़ी थी, जैसे किसी बुरी आत्मा ने उसे जकड़ लिया हो।

फिर आँसू लगातार लेकिन उग्र लहरों की तरह बहने लगे, मानो उसका गला घोंट रहे हों। उसकी साँसें रुक-रुक कर चल रही थीं, जैसे वह खुद से कह रही हो, 'मैं कभी आपकी बेटी कहलाने के लायक नहीं थी। मैंने अपनी ज़िंदगी में क्या किया... इसे खोखले घमंड और अहंकार से भर दिया... मैंने आपको निराश किया है, पिताजी... मैं एक कृतघ्न हूँ! कृतघ्न। एक गद्दार!' अचानक गुस्से में आकर वह अपने माथे को उस दीवान के बगल वाली दीवार पर पटकने लगी जिस पर वह बैठी थी। चक्कर आने लगे और वह इसे और सहन नहीं कर सकी। उसने रिसीवर छोड़ दिया और दीवान पर पीठ के बल गिर पड़ी। उसका सिर दर्द करने लगा। उसके अंदर का खालीपन सारी सोच को रोक रहा था। वह खुद को अनाथ, दुनिया में अकेली महसूस कर रही थी। वह उसका सब कुछ था और अब वह हमेशा के लिए चला गया, जैसे कोई लता अपनी जड़ से कट जाती है। नहीं। जड़ ने अपने ही खून को त्याग दिया था। उसने मुझे एक बार भी फोन नहीं किया, अपने आखिरी पलों में भी नहीं। और वह पूरी तरह टूट गई।

दोपहर होते-होते उसका दिमाग थोड़ा सा साफ़ हो गया था। उसने चीज़ों को समझने की कोशिश की। पंद्रह दिन। सारे अंतिम संस्कार हो चुके थे। अगर नहीं भी हुए होते, तो भी उसके वहाँ जाने का कोई मतलब नहीं था। उसे किसी भी रस्म में शामिल होने की इजाज़त नहीं थी। उसका पुराना धर्म इसकी इजाज़त नहीं देता था। और उसका मौजूदा धर्म इन रस्मों को काफ़िर मानता था, जो न सिर्फ़ निंदनीय थीं, बल्कि नष्ट करने लायक भी थीं। और उसने सोचा, अगर गाँव वाले मुझे दूध और घी चढ़ाकर उसे प्रतीकात्मक अंतिम श्रद्धांजलि देने की इजाज़त भी दे दें, तो भी यह मुसीबत ही लाएगी—तबलिग़ियों को आखिरकार पता चल ही जाएगा... खैर, सिर्फ़ तबलिग़ी ही नहीं, आम मुसलमान भी हंगामा करेंगे। मरा हुआ आदमी झूठे धर्म का था

और उसके लिए हमेशा के लिए जहन्नम के सिवा कुछ नहीं था। और मैंने, जिसने एकमात्र सच्चे धर्म को अपनाया था, ऐसे आदमी को अंतिम श्रद्धांजलि दी थी! लेकिन... मुझे वह सब जानना होगा जो कुमारेश ने प्रोफ़ेसर को बताया था।

उस शाम जब उसने आमिर को यह खबर सुनाई तो आमिर ने अपनी सहानुभूति व्यक्त की। उसने उसके पिता को कभी नहीं देखा था। उसे शक था कि उसकी सहानुभूति उसके दिवंगत पिता के प्रति नहीं बल्कि उसके शोक में डूबे होने के कारण उसके प्रति अधिक थी। उसने आमिर से कहा कि वह अगले ही दिन अपने गाँव जाकर कुमारेश से बात करना चाहती है। 'अगर वह इतनी दूर से यहाँ आया है, तो मुझे यकीन है कि कोई महत्वपूर्ण बात होगी।'

'ठीक है, लेकिन मैं तुम्हारे साथ आऊंगा।'

'नहीं।'

उसने कुछ देर सोचा और मान गया। गाँव का माहौल उसे बेहद असहज कर देता। वह कुनिगल तक बस ले सकती थी और वहाँ से नरसपुरा के लिए दूसरी बस। इसमें एक छोटी सी समस्या थी क्योंकि कुनिगल से उसके गाँव तक बस सेवाएँ भरोसेमंद नहीं थीं। कम से कम अट्ठाईस साल पहले तो थीं ही। अब उसे पक्का पता नहीं था और वह कोई जोखिम नहीं लेना चाहती थी। उसने आमिर से कहा कि वह गाड़ी से जाएगी और उसी रात वापस आ जाएगी।

या फिर मैं दो-तीन दिन यहीं रुक सकता हूँ। आप स्कूटर का इस्तेमाल कर सकते हैं।

गाड़ी चलाते हुए उसके विचार नरसपुरा की ओर मुड़ गए। उसे नहीं पता था कि उसे किससे मिलना है। उसकी मंज़िल उसका घर थी। राजमार्ग उसके लिए अनजान नहीं था—इन अट्ठाईस वर्षों में, वह मंगलौर, हसन और चिकमगलूर में आउटडोर शूटिंग के दौरान अनगिनत बार इस सड़क पर सफ़र कर चुकी थी। रास्ते में वह कई बार कुनिगल में नाश्ते या दोपहर के भोजन के लिए रुकी थी। तब वह अपने पिता की अतार्किक ज़िद को दोष देकर अपने अपराधबोध को कम करती थी। जब उसकी गाड़ी नरसपुरा में दाखिल हुई, तो उसने कुछ छोटे-मोटे बदलाव देखे... यहाँ समय मानो ठहर सा गया था। गाँव के प्रवेश द्वार पर एक हाई स्कूल ने उसका स्वागत किया, जिस पर 'श्री लक्ष्मी नरसिम्हा हाई स्कूल' का बोर्ड लगा था। उसके बगल में एक आयुर्वेदिक अस्पताल था। उसके ठीक सामने गाँव की देवी गड्डे केम्पम्मा का मंदिर

था। मंदिर के सामने खड़ा ऊँचा स्तंभ, सिदिकंबा, आज भी वैसा ही था, समय के साथ उसमें कोई बदलाव नहीं आया था। इसी सिदिकंबा पर भक्त ने अपनी मन्नत पूरी की थी। वह अपनी पीठ की नसों में लोहे का हुक गाड़कर सिदिकंबा से झूलता रहता था। वह मुख्य सड़क पर दाईं ओर मुड़ी। लक्ष्मी नरसिम्हा मंदिर—जिस देवता के नाम पर उसके गाँव का नाम पड़ा था—तीस फुट ऊँची चट्टानी पहाड़ी की चोटी पर स्थित था। पहाड़ी की चोटी से लगभग पूरा गाँव, साथ ही उसके चारों ओर फैली बड़ी झील और धान के खेत दिखाई देते थे। उसने मंदिर का चक्कर लगाया और अपने घर के सामने कार रोक दी। घर में कोई बदलाव नहीं हुआ था। गारे से बना बड़ा बरामदा, सामने की छत पर मद्रास की छज्जी और पीछे का आँगन, जिस पर मैंगलोर की टाइलें लगी थीं।

घर अंदर से बंद था। उसने चार-पांच बार दरवाजा खटखटाया और फिर चिल्लाकर पूछा, 'कौन है?'

अपनी ही आवाज़ सुनकर वह खुद हैरान रह गई: वह अपने देहाती तौर-तरीकों को भूली नहीं थी। एक मिनट बाद, उसने दरवाज़ा खुलने की आवाज़ सुनी। लगभग तीस साल की एक महिला उसके सामने खड़ी थी। रज़िया ने उसकी साड़ी, चूड़ियाँ और बिंदी देखकर अंदाज़ा लगाया कि वह एक किसान की पत्नी है।

'आप कौन हैं?'

‘यहां कौन रहता है?’ रजिया ने पलटवार करते हुए पूछा।

‘हम जानते हैं, लेकिन आप कौन हैं?’

अचानक रजिया अवाक रह गई। वह उचित जवाब खोजने लगी। और फिर उसने सच बताने का फैसला किया।

मैं नरसिम्हे गौड़ा की बेटी हूं।

'ओह!'

और फिर, ‘कृपया बैठ जाइए, मैं आपके लिए चटाई लाती हूँ।’ महिला ने बरामदे की ओर इशारा किया और अंदर चली गई। एक मिनट में लौटी और जैसे ही चटाई बिछाने लगी, रज़िया को अचानक एक दर्दनाक एहसास हुआ। यह महिला मुझे बरामदे में बैठने के लिए कह रही है। अगले ही पल, उसे इस स्वागत का पूरा अर्थ समझ आ गया। तब तक उसने देखा कि उसकी कार गाँव के कुछ लड़कों से घिरी हुई थी।

‘कृपया बैठ जाइए। मैं अपने पति को बुलाती हूँ। वह खेतों में हैं।’

वह रजिया को देखती हुई वहीं खड़ी रही, बातचीत जारी रखने में असमर्थ। रजिया को भी समझ नहीं आ रहा था कि वह इस गांव की महिला से क्या कहे। वह पूछ सकती थी कि वह कौन है और कब से घर में रह रही है। लेकिन ऐसा करना शिष्टाचार के विरुद्ध होता। कुछ मिनटों बाद रजिया बोली।

शास्त्री के घर में इस समय कौन-कौन मौजूद है?

‘वह और उसकी पत्नी।’

मैं वहां जाकर जल्दी लौट आऊंगी। मुझे लगता है तब तक आपके पति भी वापस आ जाएंगे।

वह उसी रास्ते पर चल पड़ी जिससे वह आई थी। लगभग चालीस घर पार करने के बाद, वह पहाड़ी की तलहटी में स्थित शास्त्री के घर पहुँची। उसके घर की तरह, यह घर भी वैसा ही था जैसा उसने अट्ठाईस साल पहले आखिरी बार देखा था। दरवाजे तक जाने वाली तीन सीढ़ियों के दोनों ओर गारे के दो चबूतरे बने थे। मुख्य दरवाजे के चौखट पर सिंदूर और हल्दी बड़े करीने से लगी हुई थी। दहलीज के ऊपर लटकी आम के पत्तों की झालर मुरझा गई थी। सीढ़ियों पर रंगोली की डिज़ाइन बनी हुई थी। दरवाजा खुला था। रजिया दहलीज के पास खड़ी होकर बोली, 'क्या आया घर पर हैं?'

'कोण है वोह?'

उसने आवाज पहचान ली।

मैं नरसिम्हे गौड़ा की बेटी लक्ष्मी हूं।

‘ओह! लक्ष्मी! आओ, आओ, स्वागत है! तुम यहाँ कब आई?’

अब उसकी आवाज़ और करीब आ गई थी। उसे अचानक याद आया कि उसने अपने बाल छोटे करवा लिए थे, लेकिन शुक्र है कि उसने साड़ी पहनी हुई थी। हालांकि, उसने बिंदी नहीं लगाई थी, उसे थोड़ा अफसोस हुआ। जैसे ही वह उसके सामने खड़ा हुआ, वह झुकी और उसके पैरों को छुए बिना उसके पैरों के पास ज़मीन को छुआ।

‘मैं ठीक हूँ... मैं यहाँ लगभग दस मिनट पहले आया था।’

शास्त्री का सिर अब गंजा था और उनके गालों और ठोड़ी पर सफेद बाल उग आए थे। उनके माथे पर पवित्र राख लगी थी और उनकी भौहों के ठीक बीच में सिंदूर की गोल बिंदी लगभग चमक रही थी। उन्होंने केसरिया बॉर्डर वाली धोती पहनी थी

और उसी तरह का उत्तरीय वस्त्र अपने शरीर के ऊपरी हिस्से पर लपेटा हुआ था। बिना किसी कारण के उन्हें देखकर उसे अपने पिता की याद आ गई। उसकी आँखों में धुंधलापन छा गया।

'अरे! क्या तुमने सुना? हमारे नरसिम्हे गौड़ा की बेटी लक्ष्मी आ गई है!' उसने अपनी पत्नी को पुकारा।

कुछ ही पल में वह महिला बाहर आई। अब वह अस्सी वर्ष से अधिक उम्र की थीं, कमर से थोड़ी झुकी हुई थीं। दशकों तक हल्दी लगाने के कारण उनके गालों पर स्थायी पीलापन आ गया था। उन्होंने विवाह के सभी चिन्ह धारण कर रखे थे—माथे पर बड़ी बिंदी, गले में मंगलसूत्र और मुरझाई झुर्रीदार हाथों में चूड़ियाँ। रजिया ने उनके चरणों में प्रणाम किया और महिला की चूड़ियों की आवाज सुनी, जब उन्होंने उन्हें आशीर्वाद दिया और फिर पूछा, 'आप कहाँ से आ रही हैं?'

'बैंगलोर। मैं गाड़ी चलाकर गया।'

'बैठ जाओ। मैं डोसा बनाती हूँ।'

नहीं। मैंने कुनिगल के एक रेस्तरां में पहले ही खाना खा लिया है।

'आप बाहर खाना क्यों खाते हैं? यह सेहत के लिए अच्छा नहीं है। मैं अभी कॉफी बना देता हूँ, लेकिन आपको दोपहर का भोजन यहीं करना होगा।'

रजिया लकड़ी की कुर्सी पर शास्त्री के सामने बैठी थी। उनकी पत्नी अच्चम्मा अंदर गईं।

मैंने कुमारेश को बैंगलोर भेजा था। तुम्हारे पिता के देहांत को पंद्रह दिन से अधिक हो गए हैं। तुम्हें उनकी संपत्ति की देखभाल करनी होगी... क्या तुम सीधे यहाँ आए हो?

नहीं। मैं पहले घर गई थी। मैंने अपनी कार वहीं खड़ी कर दी है। मेरे पिताजी के घर में अब एक महिला रहती है। वह अपने पति को लेने गई है। मैंने सोचा कि इस बीच आपका आशीर्वाद ले लूँ।

मुझे खुशी है कि आपने हमारे प्रति सद्भावना बनाए रखी है।

'क्या पिताजी किसी बीमारी से पीड़ित थे, दीदी?'

नहीं। जब उनकी मृत्यु हुई तब वे पचासी वर्ष के थे... हम्म... चलिए देखते हैं... वे मुझसे चार साल छोटे थे। इस हिसाब से तो मुझे पहले जाना चाहिए था, लेकिन बताइए, क्या मृत्यु हमारे हाथ में है? ओह! और पिछली शाम उन्होंने सीने में दर्द की शिकायत की थी... बस, यही अंत था। वे अगले दिन नहीं उठे। वे सुबह जल्दी उठने

वाले थे... सुबह 3:30 बजे ही। केंचप्पा—जिस महिला ने दरवाजा खोला था उसके पति—ने सोचा कि देर रात तक पढ़ने के बाद वे सो गए होंगे, और खेतों में चले गए। जब वे सुबह लगभग 9 बजे लौटे, तो आपके पिता अभी भी सो रहे थे। उन्होंने दरवाजा खोला और जब उन्होंने देखा, तो आपके पिता का शरीर पहले ही ठंडा पड़ चुका था। उन्होंने अपने बेटे के माध्यम से मुझे संदेश भेजा। संदेश... आप जानते हैं क्या।

‘तो क्या उन्हें इस बात का एहसास नहीं था कि उनकी मृत्यु होने वाली है?’ उसने उनसे पूछा।

'नहीं।'

‘हम्म।’ उसने सिर हिलाया। उसने उसके भावहीन इशारे का मतलब समझ लिया, लेकिन बोलने की पहल नहीं की। यह असभ्य होता। थोड़ी देर बाद, वह बोली।

'अगर उसे पता होता, तो क्या वह मुझे फोन करता?'

उसने कोई जवाब नहीं दिया। वह इंतज़ार करती रही। उसने फिर भी कुछ नहीं कहा। लगभग दो मिनट बाद, उसने पूछा, 'कृपया मुझे बताइए, दीदी। आप उसके सबसे करीबी दोस्त थे और मुझे पता है कि आप जानते हैं।'

‘मैं कैसे कह सकता हूँ कि उसके मन में क्या चल रहा था, बच्चे?’ उसने कहा।

यह बात विश्वसनीय नहीं लग रही थी। उसके लहजे और चेहरे के भावों से उसकी झिझक साफ झलक रही थी। वह जानती थी कि वह किसी अप्रिय सच को बोलने से बचने की कोशिश कर रहा है।

‘तो फिर आपने कुमारेश को मुझसे मिलने के लिए बैंगलोर क्यों भेजा?’

‘आप ही उनके इकलौते उत्तराधिकारी हैं और यह उचित है कि उनकी सारी संपत्ति अब आपकी है। उनकी संपत्ति का प्रबंधन और उसे व्यवस्थित करना आपका दायित्व है। अभी नहीं तो कम से कम भविष्य में कभी तो करें। आप जानते हैं कि समय कैसा है, इसलिए जल्दी करें और कुछ भी बिगड़ने से पहले उनकी संपत्ति और वित्त का जायजा लेना शुरू कर दें।’

‘उन्होंने मुझे पूरी तरह से त्याग दिया था। और आपने संकेत दिया कि अगर उन्हें पता भी होता कि वे मर रहे हैं, तो भी वे मुझे नहीं बुलाते। और अब आप मुझसे उनकी संपत्ति का प्रबंधन करने को कह रहे हैं। यह कितना उचित है?’

खैर, चूंकि तुम मुझसे सीधे यह पूछ रहे हो, तो मैं तुम्हें सब कुछ बता देता हूँ। तुम्हारे पिता ने मुझे बताया कि उनकी सारी ज़मीन-जायदाद पुश्तैनी है—लगभग तीन

सौ नारियल के पेड़ों का बाग, दस आम के पेड़ और पाँच कटहल के पेड़, तीन एकड़ दलदली ज़मीन, आठ एकड़ खेती योग्य ज़मीन और वह घर। कानूनी तौर पर, तुम्हारी सहमति के बिना वे यह सब किसी और को वसीयत नहीं कर सकते थे। अगर वे कर भी सकते, तो मैं नहीं कह सकता कि वे क्या करते। याद है निंगाव्वा, वह महिला जिसने बचपन में तुम्हारी देखभाल की थी? वह लगभग चार साल पहले अपने बेटे के साथ रहने के लिए उनका घर छोड़कर चली गई। फिर तुम्हारे पिता केंचप्पा को लाए और उसकी शादी करवा दी। पति-पत्नी उनके साथ रहे, खेतों की देखभाल करते और घर का काम करते रहे, और उनके दो बच्चे हैं। तुम्हारे पिता ने केंचप्पा के भविष्य के लिए कुछ इंतज़ाम किया है। उन्होंने उसे सौ नारियल के पेड़ों का एक खेत, दो एकड़ दलदली ज़मीन और चार एकड़ खेती योग्य ज़मीन वसीयत में दी है। उन्होंने गाँव के बाहर उसके लिए एक घर भी बनवाया है। केंचप्पा ने उसे एक डॉक्टर को किराए पर दे रखा है। केंचप्पा एक वफादार आदमी है और उसकी पत्नी एक अच्छी महिला है। जब तक तुम्हारे पिता जीवित थे, उन दोनों ने उनकी बहुत अच्छी देखभाल की। लेकिन अब तुम जो चाहो कर सकते हो। अगर तुम उनसे जाने को कहोगे तो वे चले जाएंगे।'

वह इस बात पर विचार करने लगी। शास्त्री को अपने पिता के आर्थिक मामलों की इतनी गहरी जानकारी होने पर उसे आश्चर्य नहीं हुआ। वे बहुत करीबी दोस्त थे और यह एक छोटा सा गाँव था, जहाँ हर कोई एक-दूसरे के मामलों के बारे में लगभग सब कुछ जानता था। लेकिन जिस तटस्थ भाव से उसने ये बातें बताईं, उससे वह थोड़ी असहज हो गई। उसे लगा जैसे उसने मानसिक रूप से उससे दूरी बना ली हो। वह उसके पिता के बहुत करीब था और शायद—स्वाभाविक रूप से—उसके बारे में उसके पिता की राय से सहमत था, और इसलिए उसके इस तरह बोलने पर उसे कोई आश्चर्य नहीं हुआ।

उसने जवाब दिया, 'सच कहूँ तो मैं यह सब जानने के लिए यहाँ नहीं आई थी। मुझे अपने पिता की संपत्ति पर अधिकार करने में ज़रा भी दिलचस्पी नहीं है। मुझे पैतृक या स्व-अर्जित संपत्ति के कानूनी पहलुओं के बारे में कुछ भी नहीं पता था और अब भी नहीं है। मैं यहाँ इसलिए आई हूँ क्योंकि आपने मुझे बुलाया था।'

मुझे पहले से ही लग रहा था कि आपको इन सब बातों की जानकारी नहीं है। इसीलिए मैंने आपको बुलवाया था। और मुझे खुशी है कि आप आ गईं। केंचप्पा

वास्तव में थोड़ा डरा हुआ है क्योंकि उसे समझ नहीं आ रहा कि अब क्या करे। नारियल पक चुके हैं और उन्हें काटकर सुखाकर खोपरा निकालने के लिए स्टोर करने का समय आ गया है। और बात सिर्फ नारियल के पेड़ों की ही नहीं है। वह रोज़मर्रा के खेती-बाड़ी के कामों में भी छोटा-सा फैसला लेने से डरता है। उसे व्यापार के तौर-तरीकों की समझ नहीं है। लक्ष्मी, केंचप्पा एक सीधा-सादा लेकिन वफादार नौकर है। अगर कोई और होता, तो वह ऐसे मामलों में लागू कानून का इस्तेमाल करके आपकी सारी संपत्ति हड़प लेता। सबसे पहले, आप अपने पिता का मृत्यु प्रमाण पत्र बनवाकर संपत्ति का मालिकाना हक अपने नाम करवा लें...

भारी कदमों की आहट सुनकर वे दोनों मुड़े और देखा कि लगभग पैंतीस-छत्तीस वर्ष का एक हट्टा-कट्टा ग्रामीण उनकी ओर आ रहा है। उसने सफेद धोती पहनी हुई थी, जो अब भूरी पड़ चुकी थी। उसकी धारीदार निकर पतली धोती के नीचे से दिखाई दे रही थी, जिसे उसने उठाकर अपनी जांघों के चारों ओर लपेट रखा था। उसने धारीदार आधी कमीज पहनी हुई थी और उसके कंधों पर एक तौलिया लटका हुआ था। उसके बाल बिखरे हुए थे और उसके चेहरे पर पाँच दिन पुरानी दाढ़ी थी।

‘अरे वाह! ये रहा केंचप्पा!’ शास्त्री ने कहा।

‘अक्का, तुम कब आई?’ केंचप्पा ने रजिया से सीधे पूछा, मानो वह उसे सालों से जानता हो। रजिया खड़ी हो गई।

शास्त्री ने कहा, 'लक्ष्मी, रुको, दोपहर का खाना लगभग तैयार है। यहीं खाना खा लो और फिर घर जाओ।'

रजिया ने उससे कहा कि वह अपने घर से निकलने के बाद दोपहर के भोजन के लिए वापस आएगी।

बरामदे में प्रवेश करते ही केंचप्पा ने दाहिनी ओर स्थित छोटे कमरे का ताला खोल दिया। उसने कहा, 'यहीं तुम्हारे पिता सोते थे। वे खुद को कमरे में बंद कर लेते थे और दिन-रात पढ़ते रहते थे। हमने उन्हें परेशान नहीं किया... अगर वे अंदर होते तो कोई दरवाजा नहीं खटखटाता था।'

यह कमरा उसके लिए जाना-पहचाना था। वह यहाँ बैठकर प्रतिदिन कम से कम दो घंटे चक्रा करते थे। लेकिन अब, कमरे का अधिकांश भाग तीन विशाल किताबों की अलमारियों से भरा हुआ था। प्रत्येक अलमारी सात फीट ऊँची और साढ़े चार फीट चौड़ी थी और उसमें कांच के स्लाइडिंग दरवाजे लगे थे। प्रत्येक अलमारी में कई

पंक्तियों में किताबें रखी थीं। एक छोटा सा दीवान लगभग दीवार से सटा हुआ था। दीवार के सहारे एक लंबा, मुलायम तकिया रखा था और दीवान के किनारे पर एक अध्ययन डेस्क रखी थी। दीवान के बाईं ओर एक पलंग था। उस पर एक कंबल करीने से तह करके रखा हुआ था। उसने ऊपर देखा और दीवारों पर नजर डाली। गांधी जी की जानी-पहचानी तस्वीर गायब थी। एक और संक्षिप्त नजर डालने पर उसे पता चला कि चक्रा भी गायब था। उसने बिना दरवाजा खोले कांच के दरवाजे से एक अलमारी के अंदर झाँका। उसने कन्नड़ और अंग्रेजी में पवित्र कुरान के कई अनुवाद, मार्गोलीथ, सर विलियम मुइर, मार्टिन लिंग्स द्वारा लिखित पैगंबर मोहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के जीवन पर चार खंड और एक कन्नड़ में लिखी किताब देखी। इनके साथ ही हदीस के कई खंडों, अकबरनामा, बादशाहनामा, तुगलकनामा, तुझुक-ए-बाबरी, इजाज़-ए-खुसरवी के खंड, मसीर-ए-आलमगिरी और इसी तरह की अन्य रचनाओं के अंग्रेज़ी अनुवाद भी थे, जिनमें भारतीय धरती पर इस्लाम की विजयों का इतिहास दर्ज था। ये सभी समकालीन मुस्लिम इतिहासकारों द्वारा लिखित थीं। इसके अलावा, विभिन्न विद्वानों और इतिहासकारों द्वारा लिखित भारतीय इतिहास पर कई खंड भी थे। उसने दरवाज़ा सरकाया और कुछ किताबों पर सरसरी नज़र डाली। हर किताब पर विस्तृत निशान थे, जो दर्शाते थे कि उन्हें खूब पढ़ा गया था। पन्ने चिह्नित थे, पेंसिल से लिखे गए थे, रेखांकित किए गए थे और ऊपर-नीचे खाली जगह में नोट्स लिखे गए थे। उसने अपने पिता की लिखावट पहचान ली। उनके नोट्स कन्नड़ और अंग्रेज़ी दोनों में थे। उसने अंग्रेज़ी में लिखे कुछ नोट्स पढ़ने शुरू किए और उनकी धाराप्रवाह अंग्रेज़ी देखकर आश्चर्यचकित रह गई। जहाँ तक उसे याद था, अंग्रेज़ी पर उनकी पकड़ बहुत ही बुनियादी थी। उन्होंने हाई स्कूल छोड़कर स्वतंत्रता संग्राम में भाग लिया और फिर कुछ साल जेल में बिताए, और स्वतंत्रता के बाद उन्होंने अपना अधिकांश जीवन समाज सेवा में समर्पित कर दिया। उन्होंने एक और अलमारी खोली और विल ड्यूरेंट की 'स्टोरी ऑफ सिविलाइजेशन' का पूरा सेट पाया। उन्होंने एक खंड खोला—वही घिसे-पिटे निशान। उन्होंने उसे वापस रख दिया और अन्य पुस्तकों को देखा, जिनमें ज्यादातर फ्रांसीसी, जर्मन, जापानी, अंग्रेजी और भारतीय विद्वानों द्वारा धर्मों पर लिखी गई पुस्तकें थीं। शेल्फ के निचले पायदानों पर ऑक्सफोर्ड और चैंबर्स अंग्रेजी शब्दकोशों के विभिन्न संस्करण और अंग्रेजी-कन्नड़ और कन्नड़-अंग्रेजी शब्दकोश रखे थे। उनके बगल में तीन मोटी नोटबुक रखी थीं। उन्होंने एक नोटबुक

खोली—जो अंग्रेजी शब्दों और उनके अर्थों से भरी थी, जिन्हें शब्दकोश से हाथ से कॉपी किया गया था। तभी उन्हें किताबों की अलमारी से नेफ़थलीन की गंध आई। वह दरवाजे पर खड़े केंचप्पा की ओर मुड़ीं।

‘ये नेफ़थलीन की गोलियां यहाँ किसने रखीं?’

'शास्त्री अय्या ने मुझे आपके पिता के देहांत के कुछ दिनों बाद उन्हें रिकॉर्ड में छिपा देने के लिए कहा था।'

उसने बिस्तर की ओर देखा और फिर कहा, 'क्या वह यहाँ सोया था?'

‘हम्म। हर दिन...उसकी सांसें यहीं, उसी बिस्तर पर खत्म हो जाती थीं।’

वह चलकर बिस्तर पर थोड़ी देर के लिए बैठ गई। अचानक उसे उस घर के अंदरूनी हिस्सों को फिर से देखने की इच्छा हुई, जिसमें उसे हमेशा के लिए प्रवेश करने से मना किया गया था। उसने अपनी यह इच्छा केंचप्पा को नहीं बताई। अगर वह तैयार भी होते, तो उसे यकीन था कि उनकी पत्नी उसे इस कमरे से आगे कहीं नहीं जाने देतीं। उसने विकल्पों पर विचार किया। वह घर के बाईं ओर से होकर जाने वाले गलियारे से विशाल पिछवाड़े तक जा सकती थी, जो एक छोटे से गौशाला में समाप्त होता था। और उसने तुरंत यह विचार त्याग दिया। उस गलियारे का उपयोग करने का मतलब यह होता कि वह स्वीकार कर रही है कि उसे परिवार के किसी अन्य सदस्य की तरह घर का उपयोग करने से मना किया गया है, क्योंकि वह एक मुस्लिम थी। तभी उसने बरामदे से तेज़ आवाज़ें सुनीं। वह कमरे से बाहर निकली, सामने के दरवाजे से बाहर गई और जैसे ही वह बरामदे के पास पहुँची, पचास साल की एक महिला ने ज़ोर से कहा, 'अरे! क्या तुम हमारे नरसिम्हाप्पा की बेटी नहीं हो... मुझे पता है कि तुमने अपना धर्म बिगाड़ा और भाग गई।' उसका लहजा ज़हरीला नहीं था। और न ही यह कोई आरोप था। बोलने का यही एक तरीका उसे आता था। लेकिन ‘अपने धर्म को कलंकित किया’? ये शब्द उसे अंदर ही अंदर खा गए। वो औरत कुछ भी कह सकती थी, पर ‘अपने धर्म को कलंकित किया’ क्यों? वो तो रज़िया को जानती भी नहीं थी। अपनी निजता पर इस अचानक हमले से वो बहुत नाराज़ थी, लेकिन शिष्टाचार और मर्यादा ने उसे उतनी ही तीव्रता से जवाब देने से रोक दिया। उसने आठ-दस लोगों की छोटी सी भीड़ को देखा, सबकी निगाहें उसी पर टिकी थीं। इस औरत के पास न तो ऐसी परवरिश थी और न ही ऐसे शब्द कि वो कुछ और बोल

सके। इसलिए रज़िया ने बरामदे में बैठे-बैठे सिर हिलाया। ‘हाँ, सही है। मैं नरसिम्हे गौड़ा की बेटी हूँ।’

‘मेरी बच्ची, तुम्हारा माथा खाली क्यों है? तुम्हारे पति की मृत्यु कब हुई?’

इस बार, मामला एक बहुत बूढ़ी औरत से था। रज़िया का चेहरा शर्म से लाल हो गया, लेकिन उसने खुद को संभाले रखा और उन लोगों की पृष्ठभूमि को याद किया जिनसे वह बात कर रही थी। ये औरतें यह कल्पना भी नहीं कर सकती थीं कि पति के जीवित रहते कोई विवाहित महिला माथे पर बिंदी न लगाए। अगर वह उन्हें बताती कि जिस धर्म में उसकी शादी हुई है, उसमें बिंदी लगाना धर्म का उल्लंघन माना जाता है और इसके लिए हमेशा के लिए नरक में जाने की सज़ा दी जाती है, तो वे उसे हैरानी और अविश्वास से देखतीं। वे ऐसे धर्म के अस्तित्व को भी समझ नहीं पा रही थीं। इसलिए उसने बस इतना कहा, 'मैंने लगाई थी। शायद गिर गई होगी।'

तब तक पचास साल का एक आदमी वहाँ पहुँच चुका था और जब उसने यह सुना तो उसने कहा, 'अरे वाह! तुर्क लोग बिंदी नहीं लगाते! क्या तुमने कुनिगल में उनकी औरतों को नहीं देखा?'

उसने एक पल के लिए उसे देखा और फिर बाकी लोगों पर नज़र डाली। उनके लहजे या हावभाव में तिरस्कार, व्यंग्य या निंदा का कोई संकेत नहीं था। लेकिन इससे सच्चाई उसके लिए और भी स्पष्ट हो गई: गाँव में उसकी सही स्थिति का पता लगाने का यही उनका तरीका था। इस तरह की पूछताछ उसके लिए जानी-पहचानी थी और वह जानती थी कि अगर यह सदियों पुरानी प्रथा अट्ठाईस वर्षों में नहीं बदली है, तो अब भी इसके बदलने की संभावना नहीं है।

लेकिन ये पूछताछ सिर्फ गांव तक ही सीमित नहीं थी। उन्हें याद आया कि कैसे उन्होंने और आमिर ने अपार्टमेंट ढूंढने में बहुत तकलीफ झेली थी। बेंगलुरु जैसे आधुनिक शहर में भी लोग अपनी पुरानी आदतों में पक्के थे। आपका पड़ोसी कौन होगा, यह इस बात पर निर्भर करता था कि आप किस जाति के हैं और क्या आप मांसाहारी हैं, हालांकि कुछ लोग जाति के पहलू को नजरअंदाज करने को तैयार थे। कुछ लोग खुद मांसाहारी थे, लेकिन वे दूसरे धर्म के लोगों का स्वागत करने से कतराते थे। और जब आखिरकार उन्हें पारंपरिक मल्लेश्वरम में एक अपार्टमेंट मिल गया, तो उन्होंने पाया कि वे बिल्कुल अकेले हैं। अलग-थलग। कोई उनसे बात नहीं करता था। अपार्टमेंट कॉम्प्लेक्स में उनके ज्यादातर पड़ोसी जानते थे कि उनके बीच एक मशहूर

जोड़ा है, लेकिन फिर भी उनका ठंडा रवैया बना रहा। और उन्हें इस बात का पूरा एहसास था कि यह शोहरत की कीमत थी: उनके पड़ोसी उनके क्रांतिकारी विचारों से बेहद डरे हुए थे। वे नहीं चाहते थे कि वह उनकी बेटियों के लिए आदर्श बनें। अपार्टमेंट कॉम्प्लेक्स के लगभग सभी परिवारों ने अपने बच्चों को उनके सामने मुस्कुराने तक से मना कर दिया था। लेकिन यह शहर में, रूढ़िवादी मल्लेश्वरम में हुआ था, जो पच्चीस साल पहले भी मौन बहिष्कार लागू करने की बारीकियों को जानता था। ये सीधे-सादे ग्रामीण लोग थे, जिनकी स्पष्टवादिता लगभग असभ्य थी।

लगभग पंद्रह साल का एक लड़का अचानक भीड़ में से रास्ता बनाते हुए, बीच में रुका और हांफते हुए चिल्लाया, 'शास्त्री अय्या ने बैंगलोर की मालकिन को अभी अपने घर आने के लिए कहा है! खाना तैयार है!' और भाग गया।

यह एक अप्रत्याशित लेकिन बेहद जरूरी राहत थी। वह उठी और चली गई।

वह शास्त्री अय्या के घर में उनके सामने खंभे के पास बैठी थी, केले के पत्ते पर पानी छिड़कते हुए अपनी पीठ खंभे से टिकाए हुए थी। वह रसोई के ठीक बाहर बैठे थे। ज़्यादा रूढ़िवादी नहीं, उसने सोचा। लेकिन जब भी अस्सी साल से ज़्यादा उम्र की वह महिला उसे खाना परोसने के लिए झुकती, तो उसे अपने आप पर बहुत बुरा लगता। उसे कुछ कहने की तीव्र इच्छा हुई।

‘पिताजी ने ये सारी किताबें कब से पढ़ना शुरू कर दिया? उन्हें तो अंग्रेजी भी ठीक से नहीं आती थी।’

'हमें खाना खाते समय अप्रिय बातों के बारे में बात नहीं करनी चाहिए। मैं तुम्हें बाद में बताऊंगा।'

मुझे बुरा नहीं लगेगा। मुझे सच जानना जरूरी है।

'अब खाओ।'

बातचीत यहीं समाप्त हो गई।

दोपहर का भोजन समाप्त होने पर, वह उठी, हाथ धोए और अपनी जगह लौट आई। रीति-रिवाज के अनुसार, उसने केले का पत्ता मोड़ा, फर्श को पानी से साफ किया और उसके लिए रखे गए कपड़े से पोंछा। फिर वह शास्त्री अय्या के सामने वाली लकड़ी की कुर्सी पर बैठ गई, जो अब दीवान पर आराम कर रहे थे। उन्होंने बातचीत शुरू की।

“बेटा, तुम्हें अंदाज़ा भी नहीं है कि तुम्हारे पिता ने तुम्हारे घर छोड़ने, धर्म परिवर्तन करने और शादी करने के बाद क्या-क्या सहा। लेकिन शुक्र है, वे बहुत दृढ़ थे। और वे हमेशा से ऐसे ही थे। वे बड़े संयमी थे और उन्होंने कभी अपना दर्द, गुस्सा या दुख दुनिया के सामने ज़ाहिर नहीं किया। एक बार उन्होंने मुझसे पूछा, “शास्त्री जी, ये सब क्यों होता है?” उनकी आवाज़ में ज़रा सी घबराहट थी। मैंने उन्हें बताया कि कर्म ही सब कुछ तय करता है, तुम्हारे कर्मों ने ही तुम्हें वो करने पर मजबूर किया जो तुमने किया और हम सबको अपने कर्मों का फल भुगतना ही पड़ता है। लेकिन यह तो बस उन्हें दिलासा देने की मेरी कोशिश थी। वे मेरी बात से सहमत नहीं हुए। उन्होंने बस अपना सिर हिलाया और कहा, “तुम्हारा कर्म का सिद्धांत किसी भी बात का स्पष्ट जवाब नहीं देता।” और फिर आस-पास के गाँवों से कानाफूसी धीरे-धीरे तेज़ होती गई और रोज़मर्रा के लेन-देन में भी सुनाई देने लगी। “उनकी अपनी बेटी ने ऐसा किया और फिर भी वे हमारे यहाँ उपदेश देने आते हैं।” उन्होंने धीरे-धीरे अपने सामाजिक कार्य के दौरे कम कर दिए और एक दिन तो पूरी तरह बंद ही कर दिए। बैंगलोर स्थित गांधी अध्ययन केंद्र में अपनी एक यात्रा के दौरान, उनकी मुलाकात वेंकटरामनय्या नामक एक सज्जन से हुई। उनकी बातचीत समाज, पुस्तकों, गांधी जी और धर्म पर केंद्रित हो गई। वेंकटरामनय्या ने आपके पिता से पूछा कि क्या उन्होंने पवित्र कुरान और पैगंबर मोहम्मद का जीवन पढ़ा है। आपके पिता ने कहा नहीं। वेंकटरामनय्या ने उनसे कहा कि जिन चीजों के बारे में उन्हें बहुत कम जानकारी है, उन पर राय रखना बुद्धिमानी नहीं है। आपके पिता ने बताया कि अरबी भाषा में होने के कारण उन पुस्तकों को पढ़ना असंभव है। सज्जन ने उत्तर दिया कि अंग्रेजी अनुवाद उपलब्ध हैं। आपके पिता ने कहा कि उनकी अंग्रेजी बहुत कमजोर है। वेंकटरामनय्या उन्हें एक पुस्तक की दुकान पर ले गए, उनके लिए एक शब्दकोश खरीदा और अध्ययन के लिए कुछ सामान्य दिशानिर्देश सुझाए: जिन शब्दों का अर्थ आपको नहीं पता, उनके अर्थ लिख लें और समय-समय पर उन्हें देखें। शुरुआत में यह कठिन होगा, लेकिन धीरे-धीरे आपका मन इसके अनुकूल हो जाएगा। इस तरह आपके पिता ने अध्ययन शुरू किया। वे वेंकटरामनय्या के मार्गदर्शन के लिए नियमित रूप से बैंगलोर जाते रहे और अंततः उन्हें इसकी आवश्यकता नहीं रही। बैंगलोर की एक किताबों की दुकान से उन्हें वे किताबें कूरियर द्वारा भेजी जाती थीं जिन्हें वे पढ़ना चाहते थे, ये किताबें भारत और विदेशों में प्रकाशित होती थीं। वे अपनी पढ़ाई में पूरी तरह से लीन हो गए।

मैंने उनसे पूछा कि इतनी पढ़ाई के बाद वे क्या करना चाहते हैं। उन्होंने बताया कि वे कन्नड़ में एक विद्वतापूर्ण रचना लिखना चाहते हैं। लेकिन इससे पहले कि वे ऐसा कर पाते, ईश्वर ने उन्हें अपने पास बुला लिया। आपको पता है, उनकी मृत्यु के कुछ दिनों बाद, तुमकुर से इतिहास के एक व्याख्याता यहाँ, नरसपुरा आए। उन्होंने मुझे यह बताया, "भारतीय इतिहास में नरसिम्हे गौड़ा की विद्वता वास्तव में विस्मयकारी है। भारत पर मुस्लिम विजय के बारे में उनका ज्ञान और अंतर्दृष्टि हमारे विश्वविद्यालय के इतिहास के प्रोफेसरों से कई गुना अधिक है।"

दोनों में से कोई नहीं बोला। रजिया काफी देर तक चुपचाप बैठी रही, सोच में डूबी हुई। अचानक, उसे अपने पिता द्वारा पढ़ी गई सभी किताबें पढ़ने की इच्छा हुई। उसकी अंग्रेजी अच्छी थी। हम्पी असाइनमेंट ने उसे ऐतिहासिक शोध की पद्धति में प्रशिक्षित किया था। कुछ देर बाद उसे एहसास हुआ कि उसने केवल पुस्तिकाएँ और पर्चे जैसे ऐतिहासिक सामग्री पढ़ी थी, जबकि उसके पिता ने प्राथमिक स्रोतों का अध्ययन किया था। उसने मन बना लिया। वह उन सभी को पढ़ेगी और यदि उसे कोई कठिनाई हुई, तो वह विद्वानों से परामर्श करेगी और सुनिश्चित करेगी कि वह... अचानक उसने पूछा, 'दफन कहाँ हुआ था?'

'दाफान क्या है?... ओह, आपका मतलब उस जगह से है जहाँ उनके शरीर को दफनाया गया था?'

'हां। मैं वहां जाकर उन्हें श्रद्धांजलि अर्पित करना चाहता हूं... अकेले।'

'हमारे नरसिम्हे गौड़ा ने स्पष्ट रूप से यह नहीं बताया कि उनकी मृत्यु के बाद उनके शरीर का क्या किया जाए। लेकिन मुझे याद है कि उन्होंने एक बार मुझसे कहा था कि वे दाह संस्कार को दफनाने से बेहतर और अधिक स्वच्छ मानते हैं। आमतौर पर वे मृतकों को अपनी जाति की परंपराओं के अनुसार दफनाते हैं, लेकिन चूंकि मुझे उनकी कही बात याद थी, इसलिए मैंने आपके खेत में बने छोटे टीले पर उनके शरीर का दाह संस्कार करवाया। केंचप्पा ने चिता को अग्नि दी, एक पुत्र की तरह अपना कर्तव्य निभाया। मैंने अनुष्ठान संपन्न कराया। उसके बाद केंचप्पा ने राख को दो अलग-अलग बर्तनों में रखा। उन्होंने उन्हें तीन दिनों तक आपके घर में अपने पास रखा और फिर एक बर्तन को आपके पूर्वजों की कब्रों के पास दफना दिया। वह आपके खेत में बेल के पेड़ के पीछे है। दूसरा बर्तन अभी भी फार्महाउस में है। दाह

संस्कार के ग्यारह दिन बाद उसे संगमा नदी में विसर्जित कर देना चाहिए था। मैं केंचप्पा को कुछ दिनों में संगमा भेज दूंगा।'

'मुझे अब जाना होगा, दीदी, और पिताजी को प्रणाम करना होगा,' उसने भारी स्वर में कहा।

उसने सिर हिलाया। 'ज़रूर। तुम उस जगह को जानते हो। लेकिन फिर भी, केंचप्पा को अपने साथ ले जाओ।'

जब तक वह घर पहुँची, उसने अकेले जाने का निश्चय कर लिया था। वह नहीं चाहती थी कि जब वह अपने पिता की स्मृति में ध्यान करे, तो उसके साथ कोई और हो। उसने केंचप्पा से फार्महाउस की चाबियाँ ले लीं। केंचप्पा ने उसके साथ जाने की पेशकश की, लेकिन उसने मना कर दिया। वह जल्दी से गाँव के बाहरी इलाके में पहुँची और एक बड़े खेत में प्रवेश किया। यह पहला खेत था और उसके पिता का था। इसके बगल वाला खेत मुदिगेरे रंगप्पा का था। फिर दलदली भूमि शुरू हो गई। वह सीधी चलती रही, नहर जैसी धारा को पार किया और अचानक रुककर बाईं ओर देखा। ऐसा लग रहा था मानो मक्के का खेत ज़मीन से फूटकर ऊपर की ओर उग आया हो, और तोते के हरे पत्तों के साथ दोपहर के ढलते सूरज में चमक रहा हो और झूल रहा हो। कुछ कदम चलने के बाद, वह एक चौराहे पर पहुँची। वह वहाँ एक पल के लिए खड़ी रही, यह तय नहीं कर पा रही थी कि किस तरफ मुड़े, लेकिन फिर उसे याद आया—मुझे दाईं ओर मुड़ना है। दो मिनट बाद, वह फार्महाउस के द्वार पर थी। उसने देखा कि अट्ठाईस साल पहले उसने जो बाँस का द्वार देखा था, उसकी जगह लोहे का द्वार लगा दिया गया था। उसने ताला खोला और अंदर चली गई। खेत के अंदर लगे नारियल के पेड़ उन अट्ठाईस वर्षों में और भी ऊंचे हो गए थे। वह फार्महाउस के ठीक बीच में स्थित विशाल कुएं को पार करके बाईं ओर मुड़ी और कुछ कदम चलने के बाद दूर स्थित उस टीले पर पहुँची जिस पर बेल के पेड़ों का झुरमुट था। यह वास्तव में कोई झुरमुट नहीं था, बल्कि छह पेड़ों का एक समूह था। वह टीला एक तरह से उसका छोटा कब्रिस्तान था जहाँ उसके पूर्वज दफन थे। छह कब्रें। और फिर सातवीं। उस पर एक पत्थर की पटिया रखी थी और वह अभी भी नई थी।

उसने अपने जूते उतारे, कब्र तक गई और लगभग उसे छूते हुए खड़ी हो गई। उसने नीचे कब्र को देखा और अपनी आँखें बंद कर लीं, अपने पिता की यादों को

ताज़ा करने की कोशिश की। उसने उन्हें अट्ठाईस साल पहले जैसा देखा। वह कुछ मिनट तक वहीं खड़ी रही, फिर आँखें खोलीं, बैठ गई और अपना माथा पत्थर से छुआकर फिर से आँखें बंद कर लीं। फिर वह खड़ी हुई और दूसरी कब्रों को देखा। उसकी माँ; उसके दादा, नरसे गौड़ा; फिर उसके पिता, शिंगे गौड़ा; फिर उसके पिता, वेंकट गौड़ा; फिर उसके पिता... उसे उनका नाम नहीं पता था। वह अपने पूर्वजों के बीच काफी देर तक चुपचाप खड़ी रही।

जब वह लौटी तो केंचप्पा घर पर नहीं थे। उनकी पत्नी लक्ष्मम्मा ने उनसे पूछा कि क्या उन्हें चाय चाहिए।

'ओह जी हाँ! बिलकुल!' उसने अपने पिता के अध्ययन कक्ष में प्रवेश करते हुए कहा। वहाँ वह उनके सोफे पर बैठ गई और अध्ययन की मेज को अपनी ओर खींच लिया।

~

घंटों गाड़ी चलाने के बाद आखिरकार वो बैंगलोर पहुँच गई। नौकरानी अमीना बानू ने दरवाज़ा खोला और उसे अंदर आने दिया। वो सोफे पर बैठ गई और अचानक दिशाहीन महसूस करने लगी। अमीना बानू घर के सारे काम संभालती है। खाना बनाती है, घर की सफाई करती है और आमिर और मेरे कपड़े धोती है। घर तो चलता ही रहता है, चाहे मैं यहाँ रहूँ या न रहूँ। मैं यहाँ अपना समय बर्बाद कर रही हूँ। नहीं। रुको। असल में, यहाँ कुछ नहीं है। सब कुछ नरसपुरा में है। सारी किताबें। पढ़ने के लिए कितना कुछ है। पिताजी... अचानक वो सोफे से उठी, फिर उतनी ही अचानक बैठ गई और नरम तकिये पर कमज़ोरी से पीछे झुक गई। वो गाड़ी चलाने से थक चुकी थी। और पिछले कुछ घंटों का भावनात्मक तनाव उस पर हावी हो रहा था। मुझे जाना होगा। या फिर वो किताबें यहाँ लानी होंगी। नहीं नहीं नहीं। कोई मतलब नहीं। उसने अपना सिर अपने स्टडी रूम की तरफ घुमाया जहाँ वो अपनी पटकथाएँ और स्क्रिप्ट लिखती थी। नहीं। इस छोटे से स्टडी रूम में जगह नहीं बची है। नाज़िर का कमरा ठीक रहेगा। लेकिन छुट्टियों में यहाँ आने पर उन्हें असुविधा होगी। वैसे भी, उनकी शादी तो आखिरकार हो ही जाएगी... हम एक और कमरा बनवाने की योजना बना सकते थे, लेकिन पैसे कहाँ थे? पिताजी से तो मेरी मुलाकात बिल्कुल नहीं हुई... मुझे शास्त्री अय्या को बता देना चाहिए था कि मैं केंचप्पा के साथ संगम जाकर पिताजी की अस्थियाँ विसर्जित करना चाहती हूँ। या इससे भी बेहतर, मुझे उन्हें बता

देना चाहिए था कि मैं पिताजी की अस्थियाँ अपनी गाड़ी में ले जाऊँगी और इस तरह केंचप्पा और शास्त्री अय्या मेरे साथ चल सकते थे।

फिर उसने सोचा कि क्या यह सब करना व्यर्थ है: उस धर्म की रस्मों में खुद को शामिल करना जिसे उसने त्याग दिया था। फिर भी, वह निश्चित नहीं थी। कल कुछ बदल गया था। अट्ठाईस साल बाद गाँव की उसकी यात्रा और शास्त्री अय्या ने उसे पिता के धीरे-धीरे बदलते रूप के बारे में जो बताया था, उनके द्वारा पढ़ी गई किताबों का वह विशाल ढेर। अंग्रेज़ी पर उनकी अद्भुत पकड़। ज्ञान की खोज में अंग्रेज़ी सीखने के लिए उनका अथक प्रयास। इतिहास के व्याख्याता का अंतिम दर्शन, जो उसके पिता की स्व-अर्जित विद्वत्ता के प्रति सच्चे सम्मान के कारण हुआ था। और फिर जब उसने अपने पिता की कब्र को अपने माथे से छुआ, तो उसे अचानक यह अहसास हुआ: क्या मैंने सचमुच अपने पुराने धर्म को त्याग दिया है?

'मैडम, नाश्ता तैयार है!' अमीना की आवाज कहीं से आई।

उसने एक सैंडविच और एक ऑमलेट खाया और चाय पी। दो मिनट बाद फोन की घंटी बजी। आमिर का फोन था।

मैं लगभग एक घंटे पहले पहुंचा था।

'यह सुनकर मुझे बहुत राहत मिली। मुझे कल आपका आना तय लग रहा था। आप इतने सालों बाद वहां गए थे। मुझे चिंता थी कि उन्होंने आपके साथ कुछ किया होगा।'

कुछ नहीं। उन्होंने मेरे साथ एक ऐसी बेटी की तरह व्यवहार किया जो कई वर्षों बाद अपने माता-पिता के घर आई हो। घर आओ। मैं तुम्हें सब कुछ बता दूंगी।

'हमारे छायाकार गुरु ने मुझसे बात की। उनका शेड्यूल दस तारीख से शुरू होकर अगले तीन महीनों तक खाली है। उनका मानना है कि हम्पी प्रोजेक्ट को जल्द से जल्द शुरू करना अच्छा रहेगा। लेकिन आपका परिचय, उस जगह के इतिहास की व्याख्या... कुछ भी तैयार नहीं है! मैं शूटिंग की रूपरेखा कैसे बनाऊं? हमें आपकी स्क्रिप्ट अभी चाहिए!'

'ओह!'

उन्होंने कहा, 'मैं जितनी जल्दी हो सके घर पहुंचने की कोशिश करूंगा,' और फोन काट दिया।

हम्पी का नाम सुनते ही उग्र नरसिम्हा मंदिर और उसके खंडहरों की टूटी-फूटी तस्वीरें उसके दिमाग में कौंध गईं। ये सब मिलकर उसके मन पर इस कदर हावी हो गए कि वह दंग रह गई। उसे याद आया कि कल ही जब वह नरसपुरा गई थी, तब उसे नरसिम्हा मंदिर दिखाई नहीं दिया था। मंदिर के अंदर तीस फुट ऊंची नरसिम्हा की मूर्ति गांव बसने से पहले से ही वहां मौजूद थी। वह पहाड़ी पर खड़ी थी—और आज भी खड़ी है—पत्थर से बनी एक भव्य रचना। किसी कारणवश, उसे हम्पी के उग्र नरसिम्हा मंदिर की याद आ गई। उसे शक था कि यह मंदिर नरसपुरा और आसपास के कुछ गांवों के अलावा कहीं और जाना-पहचाना नहीं था। और यह आज भी सही-सलामत बचा हुआ था। शायद किसी नवाब या सुल्तान ने इस गांव पर हमला नहीं किया था। इस लगभग अनैच्छिक स्पष्टीकरण से वह थोड़ी हैरान थी। और इसी वजह से विरासत विभाग की इच्छानुसार हम्पी वृत्तचित्र की पटकथा तैयार करना और भी मुश्किल हो गया।

जब आमिर शाम को घर लौटा तो उसने नरसपुरा में जो कुछ देखा था, सब कुछ समझाया और कहा, 'मुझे माफ करना, आमिर, लेकिन मुझे नहीं लगता कि मैं हम्पी की स्क्रिप्ट पढ़ सकती हूँ। मैं बेवजह विवाद नहीं खड़ा करना चाहती। कृपया किसी और को यह काम सौंप दें।'

लेकिन मैंने आपकी पटकथा के बिना कोई फिल्म नहीं की है।

‘इस एक प्रस्ताव को अस्वीकार कर दो। बस यही एक।’

‘यह इतना आसान नहीं है। हम सरकार से निपट रहे हैं। वे इसे आसानी से स्वीकार नहीं करेंगे। अगर मैं इसे अस्वीकार कर देता हूं, तो विरासत विभाग मेरे लिए हमेशा के लिए दरवाजे बंद कर देगा।’

यह बात तर्कसंगत लग रही थी। वह अपनी डेस्क पर बैठ गई, लेकिन शब्द उसके मुंह से नहीं निकल रहे थे। दो दिन बाद, उसे यकीन हो गया कि यह असंभव है। 'मैं यह नहीं कर सकती। मुझे नरसपुरा जाना होगा और फिर पिताजी की अस्थियों को नदी में विसर्जित करने के लिए संगम जाना होगा। मैं फिर से कार से जाऊंगी। लौटने में मुझे पांच दिन लग सकते हैं। स्कूटर का इस्तेमाल करो,' उसने कहा।

अमीर ने कोई जवाब नहीं दिया, लेकिन उसके चेहरे पर गंभीरता थी। उसने उसका हाथ पकड़ा और उसे सहलाया।

'क्या तुम इसलिए नाराज़ हो क्योंकि मैंने पटकथा लिखने से इनकार कर दिया?'

‘तुम खुद को कम्युनिस्ट, तर्कवादी और प्रगतिशील कहते हो। मुझे हंसी आती है —प्रगतिशीलता का प्रतीक धर्म के भद्दे प्रतीकों का सहारा ले रहा है; संगम में पवित्र राख विसर्जित करना... ये सब दृश्य हम अपनी फिल्मों में दिखाते हैं।’ अप्रत्याशित व्यंग्य ने उसे चुभन दी। उसने उसका हाथ छोड़ दिया और उसे घूरने लगी।

आपकी दाढ़ी के प्रतीकवाद के बारे में क्या कहेंगे, जो आपको एक प्रबुद्ध समाजवादी बुद्धिजीवी और एक आधुनिक मुस्लिम दोनों के रूप में प्रस्तुत करता है? वह पलटवार करने के लिए उत्सुक थी लेकिन उसने कुछ नहीं कहा।

उन्होंने कहा, 'मैं कोई और पटकथा लेखक ढूंढ सकता हूं, लेकिन हमारी सोच बिल्कुल मेल खाती है। तुम आखिरी समय में मुझे अकेला नहीं छोड़ सकती, रजिया।'

उसने इस पर भी कोई प्रतिक्रिया नहीं दी।

लेकिन वह बैंगलोर में ही रुकी रही। तीन दिन बाद उसे बेचैनी होने लगी। उसके पिता के अभी अधूरे अंतिम संस्कार की याद और उन सभी किताबों का आकर्षण बढ़ता जा रहा था। उसने एक हफ्ते का सामान एक हल्के सूटकेस में पैक किया, दो बड़े कंबल लपेटे, यह सारा सामान कार की डिक्की में रखा और आमिर को बताया कि वह एक हफ्ते के लिए जा रही है। अब वह चुप था, जैसा कि उस बातचीत के बाद से हमेशा से था। उसे उसे मनाने का मन हुआ, लेकिन इसका मतलब था कि उसे स्क्रिप्ट लिखने के लिए सहमत होना पड़ेगा। और इसलिए वह चली गई। हमेशा की तरह वह उसे विदा करने के लिए बालकनी पर नहीं आया।

~

इस बार उसने बिंदी लगाई थी। उसने अपने पिता के अध्ययन कक्ष में अपना सामान खोला, लक्ष्मम्मा को बताया कि वह एक सप्ताह के लिए यहाँ आई है और उनसे हर दिन उसके लिए दोपहर का भोजन तैयार करने का अनुरोध किया। फिर वह शास्त्री अय्या के घर के लिए निकल पड़ी।

‘ओह! तुम कब आई? बेटी, नाश्ता कर लो,’ शास्त्री अय्या की पत्नी ने स्नेहपूर्वक कहा।

उसने मुस्कुराते हुए विनम्रतापूर्वक मना कर दिया।

‘अय्या, क्या मैं अपने पिता की अस्थियों को विसर्जित कर सकता हूँ?’

‘बिल्कुल! तुम उनकी अपनी बेटी हो।’

लेकिन मैंने इस्लाम धर्म अपना लिया है।

‘धर्म परिवर्तन जैसी कोई बात नहीं है। जिस धर्म में आपका जन्म हुआ है, वह आपके द्वारा उसे त्यागने से समाप्त नहीं हो जाता। महत्वपूर्ण यह है कि क्या आपने कोई पाप किया है। क्या आपने गोमांस खाया है?’

'हाँ।'

‘तो फिर तुम्हें प्रायश्चित करना होगा।’

‘कैसे? मुझे तो अनुष्ठान का पता ही नहीं है...’

‘वास्तव में, अनुष्ठान उतना महत्वपूर्ण नहीं है...जैसे-जैसे हम आगे बढ़ेंगे, आपको पता चल जाएगा। और आपका ध्यान अनुष्ठान पर नहीं, बल्कि उसके सार पर होना चाहिए: आपके मन और चेतना को पहले सच्चाई से यह स्वीकार करना होगा कि आपने पाप किया है, और फिर आपको यह संकल्प लेना होगा कि आप इसे दोबारा कभी नहीं करेंगे। मैं आपको चेतावनी देना चाहता हूँ, यह आसान नहीं है। मुझे बताइए कि क्या आप इसके लिए तैयार हैं। मैं प्रायश्चित अनुष्ठान में व्यक्तिगत रूप से आपकी सहायता करूँगा। एक बार यह हो जाने के बाद, आप अपने पिता की अस्थियों को विसर्जित करने के लिए तैयार हो जाएँगे।’

वह दंग रह गई। क्या यह वाकई इतना आसान था?

‘मैं तैयार हूँ, दीदी,’ उसने दृढ़ता से कहा।

पहले चरण के रूप में, उन्होंने तीन दिन और तीन रातें मंदिर में दूध और फलों के सख्त आहार पर बिताईं। चौथे दिन, शास्त्री अय्या ने उन्हें अग्नि परीक्षा में दीक्षित किया। इन दिनों और परीक्षा के दौरान, उन्होंने स्वयं को याद दिलाया कि वह गोमांस खाने के पाप से मुक्ति पाने के लिए ऐसा कर रही हैं। अगली सुबह, वे संगम के लिए रवाना हुए। अय्या गाड़ी चलाते समय पिछली सीट पर बैठी थीं, उनके पिता की अस्थियों से भरा ढका हुआ पात्र आगे की सीट पर सुरक्षित रूप से रखा था, जिसे एक डोरी से दो बार सीट के चारों ओर घुमाकर कसकर बांधा गया था। संगम के पास पश्चिमा वाहिनी नदी पर, उन्होंने तीन बार जल में डुबकी लगाई। अपने पिता की अस्थियों को विसर्जित करते समय अय्या ने उचित मंत्रों का जाप करना शुरू किया।

वह चौड़ी, चौड़ी सीढ़ियों पर बैठ गई, उसके कपड़ों से अभी भी पानी टपक रहा था। उसके पिता की यादों में अचानक एक ऐसी आत्मीयता जाग उठी जो उसने पहले कभी महसूस नहीं की थी। उसे पूरी तरह यकीन नहीं था कि गोमांस खाना पाप है या नहीं, लेकिन उसे इस बात का सुकून मिला कि उसने अपने पिता को दुख पहुँचाने का

प्रायश्चित कर लिया था। इसके साथ ही, उसके द्वारा बड़ी मेहनत से पढ़ी गई सभी किताबें पढ़ने का उसका संकल्प और भी दृढ़ हो गया। उसे सच में जीविका कमाने के लिए पटकथा लिखने की ज़रूरत नहीं थी। फिल्म निर्माण के अपने करियर की शुरुआत में उसे जो रचनात्मक रोमांच मिलता था, अब उसकी जगह एक नियमित दिनचर्या ने ले ली थी। और उसके पास पर्याप्त पैसा था। साथ ही, अब उसके पास अपने पिता की मामूली संपत्ति भी थी। यह एक सुखद बदलाव था।

उसने अपने पिता के पुस्तकालय को बैंगलोर ले जाने का विचार छोड़ दिया। वह उनके द्वारा बनाए गए वातावरण में उनके एकांत का अनुभव करना चाहती थी। वह अपनी पढ़ाई के माध्यम से उन्हें फिर से जीवंत करना चाहती थी। सबसे बढ़कर, वह उनके साथ भावनात्मक जुड़ाव चाहती थी। उसने अनुमान लगाया कि उसे दो या तीन साल तक बिना किसी बाधा के अध्ययन करने में लग जाएंगे। आमिर... मुझे उनकी बहुत याद आएगी... वह नाराज़ होंगे। वह पहले से ही परेशान हैं... अमीना घर और उनके खाने-पीने का ख्याल रखेगी। उसने महीने में एक बार बैंगलोर जाकर उनके साथ रहने का फैसला किया।

3

प्यारी अम्माजान,
सलाम अलेकुम, बिस्मिल्लाह रहमान उर रहीम
मुझे आपका पत्र मिला। यह जानकर आश्चर्य हुआ कि आप आजकल ज्यादातर अपने गाँव में रहती हैं। मुझे तो पता भी नहीं था कि आपका कोई पैतृक गाँव है। आपने मुझे कभी बताया ही नहीं। मुझे यह भी नहीं पता था कि मेरी माँ की तरफ से मेरे दादाजी थे। सच कहूँ तो, मुझे हाल तक यह भी नहीं पता था कि आपके पिता जीवित थे। अब समझ में आया। आपके पिता बहुत जिद्दी थे। उन्होंने आपसे संबंध तोड़ लिए क्योंकि आपने इस्लाम धर्म अपना लिया था। और यह बात समझ में आती है। मुझे याद है नानी-दादाजी बचपन में मुझसे क्या कहते थे—हिंदू संकीर्ण सोच वाले मूर्तिपूजक होते

हैं और बाकी सभी धर्मों को हीन समझते हैं। मुझे लगता है कि आप अब वहाँ इसलिए रह रही हैं क्योंकि अचानक आपको अपने पैतृक धर्म की ओर आकर्षण महसूस हो रहा है। लेकिन मुझे आपकी बहुत याद आती है, अम्माजान। और मैं आपको फोन भी नहीं कर सकती। आपके गाँव में फोन नहीं है। पत्र लिखना बहुत कष्टदायक है। अमेरिका में इतने लंबे समय तक रहने के बाद, मुझे फोन करना आसान लगता है। लेकिन अब मैं खुलकर लिख भी नहीं सकती क्योंकि सऊदी अरब से बाहर जाने वाला हर पत्र सेंसर अधिकारियों से होकर गुजरता है। मैं डर के मारे लिख नहीं सकती—अधिकारी शब्दों की व्याख्या अपने हिसाब से करते हैं और उनका फैसला अंतिम होता है। आपको फोन करना ही सही रहेगा। कम से कम अपने बेटे की खातिर बैंगलोर वापस आ जाइए। मैंने यह पत्र अपने दोस्त जनाब शब्बीर खान के माध्यम से भेजा है, जो लखनऊ में रहते हैं। उन्होंने मुझे बताया कि वे छुट्टियों में भारत घूमने आए हैं और उन्होंने यह पत्र आपको भेजने की सहमति दी है।

अब मुझे आपको सऊदी अरब के बारे में बताना है। यह सभी अरब देशों में सबसे रूढ़िवादी है। कोई भी अन्य अरब देश इस्लाम का पालन इतनी शुद्धता और सख्ती से नहीं करता। यह वही भूमि है जहाँ पैगंबर मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का जन्म हुआ था! मुझे स्वीकार करना होगा कि जब मैं पहली बार यहाँ आया तो मुझे घुटन महसूस हुई और मुझे लगा कि यह एक ऐसा समाज है जहाँ बिल्कुल भी स्वतंत्रता नहीं है। मेरा मतलब है, टेक्सास के विश्वविद्यालय परिसर में तीन साल से अधिक समय बिताने के बाद, मैं एक अलग तरह की जीवनशैली का आदी हो गया था। लेकिन मैं यहाँ इसलिए आया क्योंकि यहाँ वेतन वास्तव में बहुत अच्छा है—मुझे एशिया में पढ़ने वालों की तुलना में दुगना वेतन मिल रहा है। दरअसल, दुगने वेतन का प्रस्ताव केवल इसलिए नहीं था कि मैंने अमेरिका के एक विश्वविद्यालय से पेट्रोकेमिकल इंजीनियरिंग में शीर्ष रैंकिंग के साथ मास्टर्स किया था, बल्कि इसलिए भी था कि मैं एक मुस्लिम हूँ: मुझे चयन प्रक्रिया में प्राथमिकता दी गई थी। और आपको पता है, अम्माजान, वेतन कर मुक्त है। सऊदी अरब एक स्वर्ग है। किसी अन्य देश में, यहाँ तक कि अमेरिका में भी, इतनी समृद्धि नहीं है। यहाँ हर चीज की अविश्वसनीय विविधता है। इसके अलावा, यहाँ सब कुछ बेहतरीन है—सिर्फ़ ताज़ा खाना, उत्तम हीरे, सोना, गहने, चाँदी और सभी नवीनतम इलेक्ट्रॉनिक गैजेट्स। वे सब कुछ आयात करते हैं और बहुत सस्ते दामों पर बेचते हैं, और तथाकथित विकसित

अर्थव्यवस्थाओं द्वारा मेहनती लोगों पर लगाए जाने वाले उन बेतुके करों का यहाँ कोई नामोनिशान नहीं है। इन सबके बावजूद, अपराध—यहाँ तक कि धोखाधड़ी, जालसाजी और व्यभिचार जैसे छोटे-मोटे अपराध भी, जो तथाकथित स्वतंत्र देशों में आम हैं—लगभग न के बराबर हैं। वे अपने सभी चमकदार, महंगे गहने खुले में प्रदर्शित करते हैं और उन्हें काँच के बक्सों में भी नहीं रखते। वे अपनी दुकानें खुली छोड़ देते हैं और ज़ुहर, असर और मुग़रिब की नमाज़ के लिए अज़ान होते ही मस्जिद की ओर दौड़ पड़ते हैं। जब वे लौटते हैं, तो सब कुछ वैसा ही रहता है। क्या आपको आश्चर्य नहीं होता? कानून कल्पना से परे सख्त है: चोर मिनटों में पकड़ा जाता है। उसके हाथ काट दिए जाते हैं। दया का कोई सवाल ही नहीं उठता और कोई देरी नहीं होती। शरीयत पूरी तरह से लागू होती है। यहाँ अदालतों, अपीलों और प्रति-अपीलों, संदेह का लाभ, सबूत का बोझ और उन सभी टालमटोल वाली चालों का कोई झंझट नहीं है। अपराध के अनुरूप ही दंड कठोर है, और न्याय भी उतनी ही शीघ्रता से मिलता है। मुझे लगता है कि यह व्यवस्था बहुत प्रभावी है। मेरा मानना है कि इससे यह सिद्ध होता है कि समाज में व्यवस्था बनाए रखने के लिए ऐसे कानून आवश्यक हैं।

अम्माजान, मुझे पता है कि आप पार्टियों में जाने के अलावा कभी गहने नहीं पहनतीं। लेकिन जब मैं मॉल जाती हूँ—यहाँ मेरा मनोरंजन बस यही होता है—और वहाँ सोने और गहनों के ढेर देखती हूँ, तो मेरा मन करता है कि आपके लिए कुछ खरीद लूँ। और यहाँ सोने की गुणवत्ता तो कमाल की है! भारत में इतनी शुद्धता वाला सोना कहीं नहीं मिलता। जब आप मुझे पत्र लिखें, तो अपनी कलाई का नाप (सेंटीमीटर में) बता देना। मैं आपके लिए सोने की चूड़ियों का एक सुंदर सेट खरीद लूँगी। आपको इसे जरूर पहनना—यह आप पर बहुत अच्छा लगेगा। बस एक ही समस्या है, वो है भारत में सामान लाने पर लगने वाला भारी कर। मेरे भारतीय सहकर्मी कहते हैं कि मुझे सीमा शुल्क अधिकारियों को रिश्वत देनी पड़ेगी... लेकिन मुझे लगता है कि यह इसके लायक है क्योंकि कर चुकाने के बाद भी यह मेरे लिए सस्ता ही पड़ेगा।

आपका प्रिय पुत्र,

नजीर

रजिया को उसके पत्र का सार समझ में आ गया और उसे उदासी का एक हल्का सा एहसास हुआ।

अमीर के माता-पिता के घर से निकलने के बाद, नाज़िर कुछ समय के लिए अमीना बानू की देखरेख में रहा। मैं अपने बढ़ते करियर को बीच में ही छोड़कर घर पर पूर्णकालिक माँ बनने के लिए तैयार नहीं थी। अशिक्षित नौकरानी नाज़िर के बचकाने नखरों को शांत करने के लिए वही तरीके अपनाती थी जो उसे पता थे—वह उसे धमकाती, चुटकी काटती और जब ये तरीके काम नहीं करते, तो वह उसे पीटती थी। इसलिए हमने नाज़िर को हर दिन उसके दादा-दादी के घर छोड़ने का फैसला किया। अमीर उसे सुबह वहाँ छोड़ता और काम के बाद रात को वापस ले आता। बूढ़ा दंपत्ति बहुत खुश थे और उसे खूब लाड़-प्यार करते थे। वह अपने माता-पिता की तुलना में अपने दादा-दादी से ज़्यादा लगाव रखने लगा, लेकिन उसने बहुत जल्दी यह सीख लिया कि वह जिसके साथ है उसके अनुसार अपना व्यवहार बदल ले। जब वह हमारे साथ होता, तो वह ऐसी बातें कहता और करता जिनसे हमें स्वाभाविक रूप से खुशी मिलती और दादा-दादी के साथ होने पर भी वह यही करता। उसके दादा-दादी ने उसे इस्लामी रूढ़िवादिता की अच्छी शिक्षा दी थी। और हमें इसका एहसास नहीं हुआ... मुझे तो आमिर के माता-पिता की मृत्यु के बाद ही इसका एहसास हुआ। अगर आमिर को पता भी था, तो उसने मुझे नहीं बताया। नाज़िर कहता है कि उसे पता ही नहीं था कि उसकी मां की तरफ से उसका एक दादा था और कहता है कि किसी ने भी—यहां तक कि आमिर ने भी—उसे यह नहीं बताया था... और उसका मानना है कि हिंदू संकीर्ण सोच वाले मूर्तिपूजक हैं, यह बात निस्संदेह उसके दादा-दादी ने उसे सिखाई होगी।

लेकिन वह इस बात से खुश थी कि उसने उसे पत्र लिखा था। बेचारे लड़के को आशीर्वाद!

कुछ दिनों बाद, सुबह खेतों से लौटते समय रज़िया ने बरामदे में एक मोटरसाइकिल खड़ी देखी। पास आते ही उसने देखा कि उस पर बैठे दो आदमी खड़े हो गए। उसने जलील को पहचान लिया, जो आमिर के सहायकों में से एक था। उसने 'सलाम अलैकुम' कहकर उसका अभिवादन किया और अपने साथी रघु का परिचय कराया, जो छायाकार का दूसरा सहायक था। रज़िया ने दोनों को देखकर मुस्कुराया और जलील द्वारा दिए गए लिफाफे को स्वीकार कर लिया, जिस पर आमिर की लिखावट में उसका नाम लिखा था।

उसने लक्ष्मम्मा को आवाज़ दी, उनसे तीन लोगों के लिए नाश्ता बनाने को कहा और अपने अध्ययन कक्ष में चली गई। उसका दिल मीठी उम्मीदों से धड़क रहा था। आमिर कन्नड़ ठीक से लिख नहीं पाता था, लेकिन पढ़ सकता था। उसने उर्दू में शिक्षा प्राप्त की थी। रज़िया ने भी यह भाषा सीखी थी, लेकिन हस्तलिखित लिपि को पढ़ना उसके लिए अब भी असंभव था। इसलिए वे हमेशा एक-दूसरे को अंग्रेज़ी में पत्र लिखते थे। वह स्वाभाविक रूप से उम्मीद कर सकती थी कि हमेशा रोमांटिक रहने वाला आमिर उसे प्रेम पत्र लिखेगा। दो महीने उसके बिना रहना उसे पागल कर देता। उसने लिफाफा फाड़ा और पढ़ना शुरू किया।

मेरी प्यारी बीबी,

अगर मैं कहूँ कि मैं तुमसे नाराज़ नहीं हूँ, तो मैं झूठ बोल रहा हूँगा। लेकिन मैं इतना व्यस्त हूँ कि नाराज़ होने का समय ही नहीं मिला। सरकार ने मुझे एक नया प्रोजेक्ट दिया है! असल में, दो नए प्रोजेक्ट दिए हैं, और हमें तुरंत काम शुरू करना होगा। इस बार, ये ऐतिहासिक नाटक हैं। इनके शीर्षक तय हो चुके हैं—अकबर महान और टीपू सुल्तान: एक राष्ट्रीय नायक।

इसका दायरा बहुत बड़ा है। लेखन और निर्देशन के अलावा, हमें कर्नाटक के सभी प्रमुख कॉलेजों और विश्वविद्यालयों के प्रोफेसरों और शिक्षकों को यह सिखाना होगा कि वे अपने संस्थानों में इस नाटक का मंचन कैसे करें। लेकिन बात यहीं खत्म नहीं होती! हम्पी नाटक पूरा होने के बाद, हमें गोल गुंबज, सारनाथ, नालंदा और ताजमहल पर वृत्तचित्र बनाने होंगे। लेकिन बीबी, मेरे पास पहले से ही इतने सारे प्रोजेक्ट हैं, इसलिए मैं इन नाटकों का काम नहीं ले सकती। आप कर लेंगी ना?

क्या आपको वो दिन याद हैं जब हम मंच पर अभिनय करते थे? काश, हम उन दिनों में वापस जा पाते। आज भी मुझे रंगमंच प्रेमी मिलते हैं जो मुझसे पूछते हैं कि हम

फिर कब साथ में मंच पर अभिनय करेंगे। जैसा कि मैंने कहा, मैं बहुत व्यस्त हूँ और इन दो नाटकों के लिए समय निकालना मेरे लिए बहुत मुश्किल है, चाहे मैं कितना भी चाहूँ। ये एक बार का काम है—पटकथा लिखना, निर्देशन करना, स्कूलों और कॉलेजों में मंचन करना, फिर दूसरे निर्देशकों को प्रशिक्षण देना। प्लीज़? और पैसे की चिंता मत कीजिए। सरकार का इसमें निजी हित है। लेकिन अब, जितनी जल्दी हो सके बेंगलुरु आइए और प्रोफेसर शास्त्री से मिलिए। वो आपको इसके बारे में सब कुछ बता देंगे।
आपका स्नेहपूर्वक,
अमीर

वह बेहद उत्साहित थी। रंगमंच से लगभग पूरी तरह दूर हुए उसे बहुत समय हो गया था। फिल्म निर्माण ने उसे थका दिया था, रंगमंच से उसका लगभग नाता तोड़ दिया था। वह सोच रही थी कि क्या अब उसमें उन नाटकों को लिखने का धैर्य है भी या नहीं। फिर उसने खुद को याद दिलाया कि यह उसका क्षेत्र है—जैसे तैरना, जिसे सीखा जा सकता है और कभी भूला नहीं जा सकता। स्क्रिप्ट लिखने में कितना समय लगेगा? और ये ऐतिहासिक नाटक हैं, तो इसका मतलब है कि मुझे अपनी इतिहास की पढ़ाई बीच में नहीं रोकनी पड़ेगी। मैं दोनों काम एक साथ कर सकती हूँ। जैसे-जैसे आगे बढ़ूँगी, कोई न कोई तरीका ढूंढ ही लूँगी। देखते हैं प्रोफेसर क्या कहते हैं। इस तरह मुझे आमिर के साथ कुछ समय बिताने का मौका मिल जाएगा।

बैंगलोर लौटने पर जब प्रोफेसर शास्त्री उनसे मिलीं तो बेहद प्रसन्न हुईं। उन्होंने कहा, 'मुझे बहुत खुशी है कि आप इसके लिए राजी हो गईं। दरअसल, यह मेरा ही विचार है, जिसे सरकार ने सहर्ष स्वीकार कर लिया क्योंकि इस सांप्रदायिक कैंसर को रोकना बेहद जरूरी है जो जंगल की आग की तरह फैल रहा है। इसे ठीक करने के लिए केवल कलाकारों और लेखकों के पास ही आवश्यक कौशल हैं। मुख्यमंत्री समेत सभी मंत्रियों ने मेरी बातों में सच्चाई देखी। साथ ही, आपको खूब पैसा भी मिलेगा। इतिहास की सेवा में अपना जीवन समर्पित कर दीजिए।' उन्होंने धीरे से उनकी पीठ थपथपाई।

दूसरी ओर, आमिर गुस्से से उबल रहा था। उसने रजिया से कहा कि रात भर शूटिंग का कार्यक्रम है और उसे जाना होगा।

‘तुम बड़े झूठे हो, आमिर... तुम्हें पता है कि बैंगलोर में कोई भी स्टूडियो डॉक्यूमेंट्री की शूटिंग की इजाज़त नहीं देता। या ये सिर्फ़ अहंकार की बात है? किसी औरत की भावनाओं से ऐसे खेलना ठीक नहीं है, खासकर तब जब वो दो महीने के अलगाव के बाद सिर्फ़ तुम्हारे लिए आई हो। या ये तुम्हारे अंदर का मुस्लिम पति अपनी पत्नी से कह रहा है?’ उसने चिढ़ाते हुए कहा और फिर चुनौती दे दी, जिसे वो जानती थी कि वो स्वीकार करेगा, ‘या फिर गुस्सा तुम्हारी उम्र छुपाने का बहाना है?’ उसने धीरे से कहा और उसके करीब आ गई।

अगले दिन वह नरसपुरा लौट आई और अपने पिता की किताबों के ढेर में टीपू सुल्तान से संबंधित सामग्री खोजने लगी। सौभाग्य से, उसे हाथ से लिखे कुछ कागज़ मिले जो एक साथ स्टेपल किए हुए थे। ये उसके पिता के टीपू पर लिखे नोट्स थे, उन्हीं की लिखावट में। उसने उन्हें जल्दी से पढ़ा और टीपू पर अन्य संदर्भ पुस्तकें खोजना शुरू कर दिया। यह काम पूरा होने के बाद, वह बैंगलोर चली गई और पुस्तकालय में एक दिन अतिरिक्त सामग्री पढ़ने और नोट्स बनाने में बिताया। अमीर शहर में नहीं था और अमीना बानू अपनी बेटी से मिलने रामनगरम गई हुई थी। वह नरसपुरा लौट आई और टीपू सुल्तान के बारे में बनाए गए नोट्स पर विचार करने लगी। टीपू के बारे में उसने जो भी पढ़ा था, वास्तव में उस पर उसका पूरा शोध, उसे ठीक उसी तरह चित्रित करता था जैसा कि पुराने मैसूर क्षेत्र के धर्मनिरपेक्षवादियों और भारतीय मुसलमानों ने उसे चित्रित किया था, उससे बिल्कुल विपरीत। प्रोफेसर शास्त्री मुझे नाटक का मंचन नहीं करने देंगे अगर मैं पढ़ी हुई इतिहास पर आधारित पटकथा लिखूँ। और उन्होंने शीर्षक भी तय कर लिया है—टीपू सुल्तान: एक राष्ट्रीय नायक। मेरी पटकथा में टीपू को एक बेदाग शासक के रूप में दिखाना है, जो विभिन्न धर्मों के प्रति सहिष्णु हो। टीपू और सरकार के बारे में ज़रा सी भी सच्चाई सामने आने पर फंडिंग रुक जाएगी। यह आसान नहीं होगा। उसकी अकल्पनीय क्रूरता और धार्मिक कट्टरता के घिनौने इतिहास को नज़रअंदाज़ करना नामुमकिन है। तकनीकी रूप से नाटक लिखना आसान है। एक कथानक होता है। पात्र गढ़े जाते हैं। उनसे वो संवाद बुलवाए जाते हैं जो आपके प्रचार के लिए उपयुक्त हों। लेकिन टीपू अलग है। उसके चरित्र की जटिलता को, उसकी क्रूरता, उसकी कट्टरता और अन्य धर्मों के प्रति उसकी नफरत को, आकार और रूप देने के लिए एक विशेष तकनीक की आवश्यकता है। मुझे आमिर से बात करनी होगी।

इसलिए उसने आमिर को पत्र लिखा।

प्रिय आमिर,

उम्मीद है आप ठीक होंगे। मुझे बताइए कि आप मुझे याद करते हैं। मैं भी करती हूँ। मैं हर दिन यही उम्मीद करती हूँ कि आपकी बीबी के लिए आपका प्यार आपको यहाँ खींच लाएगा। आप मुझसे मिलने कभी यहाँ नहीं आए। यहाँ के लोग बहुत अच्छे हैं; उन्होंने मुझे अपनी बेटी की तरह अपनाया है। आपको यहाँ अक्सर आना चाहिए। वे सब कुछ भूल जाएंगे और आपको दामाद की तरह मानेंगे। मैं अपने अनुभव से कह रही हूँ—चाहे उनकी जाति और समुदाय में कितना भी भेदभाव हो, हिंदुओं ने इन भेदभावों को भुलाकर एक नया दृष्टिकोण बनाए रखा है। यहाँ आकर खुद अनुभव कीजिए। आपको मेरी बात समझ आ जाएगी।

लेकिन अब आपको लिखने का एक अत्यावश्यक कारण है। मुझे एक रचनात्मक कलाकार के रूप में आपके सुझाव और मार्गदर्शन की आवश्यकता है। आप जानते हैं कि मैं पिछले दो महीनों से प्रोफेसर शास्त्री द्वारा सुझाए गए नाटक के लिए टीपू पर शोध कर रहा हूँ। हर नई सामग्री से मुझे यह एहसास होता है कि उस नाटक का मंचन कितना कठिन है। मैं आपसे इस बारे में चर्चा करने के लिए बेंगलुरु आना चाहता था, लेकिन लेखन से मुझे अपने विचारों को अधिक स्पष्ट रूप से व्यक्त करने में मदद मिलती है।

अमीर, कुछ लेखकों ने, विशेषकर पुराने मैसूर क्षेत्र के कन्नड़ लेखकों के एक बड़े समूह ने, टीपू सुल्तान का महिमामंडन इस हद तक कर दिया है कि यह घृणित लगता है। क्या रचनात्मक स्वतंत्रता की आड़ में सत्य का यह कत्लेआम कभी खत्म नहीं होगा? मेरा हमेशा से मानना रहा है कि लेखकों पर किसी भी प्रकार का कोई प्रतिबंध नहीं होना चाहिए। अब मुझे कुछ शर्मिंदगी के साथ यह स्वीकार करना पड़ रहा है कि एक समय मैं भी इसी समूह का हिस्सा था जो असीमित कलात्मक स्वतंत्रता की वकालत करता था, लेकिन अब मुझे समझ आ रहा है कि वे—मुझ समेत—क्या कर रहे थे। हम कलात्मक स्वतंत्रता के अपने अधिकार का ढोंग करते थे, लेकिन अपने आलोचकों को वही स्वतंत्रता देने से इनकार करते थे। हमने जो किया वह गुंडागर्दी थी—हमने हर चीज को परिभाषित किया। प्रगति की हमारी अवधारणा ही प्रगति थी, द्वंद्वात्मकता का हमारा वर्गीकरण तार्किक तर्क बन गया, अर्थशास्त्र की हमारी परिभाषा ही अर्थशास्त्र थी और इतिहास पर हमारा ही अंतिम अधिकार था, क्योंकि

हम यह सब इतिहास की सेवा में कर रहे थे। टीपू सुल्तान की कहानी के विकृत संस्करण को फैलाना, झूठ को सच के रूप में पेश करने की उनकी बड़ी परियोजना का एक और हिस्सा है, क्योंकि इससे प्रगतिशीलता की राह में मदद मिलती है। और मैंने इसमें खुशी-खुशी अपनी भूमिका निभाई है, कई मौकों पर आगे बढ़कर नेतृत्व किया है।

टीपू को नायक के रूप में स्थापित करने की कहानी हमारे स्वतंत्रता संग्राम के दौरान घुमंतू गायकों द्वारा गाए जाने वाले गीतों से शुरू हुई। ये देहाती, अशिक्षित और अनपढ़ गायक अपनी आजीविका कमाने के लिए गलियों के कोनों पर, दुकानदारों के सामने, गाँव के मेलों में और बाज़ारों में टीपू की प्रशंसा में गीत गाते थे। यह मानना अविश्वसनीय है कि इन लोगों को ऐतिहासिक टीपू का कोई सटीक ज्ञान रहा होगा। धनी मुस्लिम दुकानदार उन्हें दिवंगत सुल्तान की प्रशंसा सुनने के लिए अच्छी खासी रकम देते थे। लेकिन चूंकि यह हमारे स्वतंत्रता संग्राम का समय था, इसलिए अतीत में किसी भी कारण से अंग्रेजों के खिलाफ लड़ने वाले किसी भी व्यक्ति को स्वतः ही स्वतंत्रता सेनानी मान लिया जाता था। इस प्रकार, उस समय टीपू को देशभक्त के रूप में महिमामंडित करने वाले नाटक लिखे गए और दर्शकों ने इन नाटकों पर विश्वास किया। और इस तरह टीपू लोकप्रिय कल्पना में एक महान स्वतंत्रता सेनानी बन गए। यह प्रवृत्ति स्वतंत्रता के बाद भी जारी रही। मिथक बनाना कठिन है, लेकिन उन्हें मिटाना कहीं अधिक कठिन है। हमारे मार्क्सवादी, वोट बैंक के नेता, कलाकार, फिल्म निर्माता... हर कोई इस वीर टीपू का कुछ हिस्सा चाहता था। और इस तरह, सच्चा इतिहास दफन हो गया। किसी ने भी महान टीपू सुल्तान की किंवदंती के आधार को सत्यापित करने की जहमत नहीं उठाई।

देखिए, किस प्रकार तथ्यों को सावधानीपूर्वक छुपाकर एक विचार को कुतर्कपूर्ण ढंग से पुष्ट किया जाता है। ब्रिटिश क्रूरता के उदाहरण के रूप में, हमारे विद्वानों ने टीपू के दो पुत्रों को बंधक बनाए जाने की घटना का बार-बार उल्लेख किया। हालांकि, उन्होंने इस तथ्य को छिपा दिया कि युद्ध में बंधक बनाना मूल रूप से मुस्लिम राजाओं के बीच एक स्वीकृत प्रथा थी। औरंगजेब के अधीन एक सेनापति मीर जुमला ने असम के राजा को पराजित किया और उसके पूरे खजाने को लूट लिया। और वह यहीं नहीं रुका। उसने और अधिक धन की मांग की और राजा के पुत्रों और एक पुत्री को तब तक बंधक बनाकर रखा जब तक कि राजा ने उसे राशि नहीं दे दी। मीर जुमला ने

राजा के सामंतों - बुरहागोहेन, बोरगोहेन, गड गोनिया फुकन और बाद पत्रा फुकन - के पुत्रों को भी युद्धबंदी बना लिया। साकी मुस्तद खान ने इस घटना का वर्णन औरंगजेब के आधिकारिक इतिहास, मसीर-ए-आलमगिरी में किया है, जो 5 हिजरा 1072.5 में लिखा गया था, जो जनवरी 1603 के बराबर है। मैंने इसकी जानकारी जदुनाथ सरकार की पुस्तक 'औरंगजेब का संक्षिप्त इतिहास' (ओरिएंट लॉन्गमैन, 1979, पृष्ठ 108) में देखी। जब खुर्रम का अपने पिता के विरुद्ध विद्रोह विफल हो गया, तो जहांगीर ने अपने पुत्र के पुत्रों—अपने पोते दारा और औरंगजेब—को बंदी बना लिया।

इतना ही नहीं: मुगल शासन के दौरान, प्रत्येक राजपूत बादशाह को सम्मान के प्रतीक के रूप में कम से कम एक पुत्र को बादशाह के दरबार में रखना अनिवार्य था। इस व्यवस्था का अंतर्निहित अर्थ दोनों पक्षों के लिए स्पष्ट था—पुत्र एक प्रकार का सम्मानित बंधक था, जो राजपूत बादशाहों से आज्ञापालन सुनिश्चित करता था। आपको शायद आश्चर्य हो, लेकिन इस प्रथा की शुरुआत अकबर ने की थी। इसने अन्य रूप भी धारण किए—युद्ध में पराजित राजपूत शासक को अपनी पुत्री का विवाह मुगल बादशाह से करना पड़ता था—एक पत्नी, लेकिन वास्तव में एक स्थायी बंधक। अपनी पराजित स्थिति को देखते हुए अधिकांश राजपूत बादशाह इस पर सहमत हो जाते थे। महाराणा प्रताप अपवाद थे। उन्होंने अपने पुत्र को अकबर के दरबार में भेजने से इनकार कर दिया। यह भी एक तथ्य है कि ऐसे प्रत्येक कैदी का जबरन धर्म परिवर्तन कराया जाता था। लेकिन कॉर्नवालिस, जिसने टीपू के पुत्रों को बंधक बनाया था, ने उन पुत्रों के साथ शाही उत्तराधिकारियों के योग्य सम्मान और गरिमापूर्ण व्यवहार किया, ऐसा व्यवहार किसी भी मुस्लिम शासक ने समान परिस्थितियों में नहीं किया। अगर हमारे प्रगतिशील इतिहासकार और लेखक टीपू सुल्तान को सिर्फ इसलिए वीर के रूप में चित्रित करते हैं क्योंकि उन्होंने अंग्रेजों से युद्ध किया, तो वे मराठों के बारे में चुप क्यों रहते हैं, जिन्होंने उन्हीं अंग्रेजों से लड़ाई लड़ी थी? अंग्रेजों ने खुद स्वीकार किया था कि उन्होंने मराठों को अपनी साम्राज्यवादी महत्वाकांक्षाओं के लिए एक बड़ा खतरा माना था। और फिर कन्नड़ भाषा के समर्थकों का एक बड़ा समूह है जो टीपू को 'कर्नाटक का पुत्र' और 'कन्नड़ का सच्चा पुत्र' कहकर उनकी प्रशंसा करता है। कन्नड़ राज्य की आधिकारिक भाषा थी जब वोडेयार वंश मैसूर राज्य पर शासन करता था। मैं उस समय की बात कर रहा हूँ जब टीपू के

पिता, वोडेयारों के एक विश्वसनीय सेनापति, हैदर अली ने मैसूर की गद्दी पर कब्जा नहीं किया था। लेकिन जब टीपू ने सत्ता संभाली, तो उन्होंने प्रशासनिक भाषा को कन्नड़ से फारसी में बदल दिया। यह आज भी देखा जा सकता है। कर्नाटक के भूमि और राजस्व अभिलेखों में आज भी फारसी शब्दावली का प्रयोग होता है - 'वेंकट गौड़ा के पुत्र नरसिम्हे गौड़ा' को 'नरसिम्हे गौड़ा बिन वेंकट गौड़ा' लिखा जाता है। इसी तरह, हमने अभी भी 'खाता', 'खिरदी', 'पहानी', 'खानेसुवारी', 'गुदास्ता' और 'बारानमूना' को बरकरार रखा है, जो टीपू के समय से सीधे तौर पर सौंपे गए थे। इतना ही नहीं - टीपू ने पूरे शहरों और कस्बों के नाम बदल दिए: ब्रह्मपुरी बन गया सुल्तानपेट, कल्लिकोट बन गया फारूकाबाद, चित्रदुर्ग बन गया फारूक याब हिसार, कूर्ग बन गया जफराबाद, देवनहल्ली बन गया युसुफाबाद, डिनिगुल बन गया खलीलाबाद, गुट्टी बन गया फैज हिसार, कृष्णागिरि बन गया फल्क-इल-आजम, मैसूर बन गया नजराबाद, पेनुकोंडा बन गया फकराबाद, संकरीदुर्ग बन गया मुजफ्फराबाद, सिरा बन गया रुस्तमाबाद, और सकलेशपुर मंजराबाद बन गया - क्या ये टीपू के राष्ट्रवाद और धार्मिक सहिष्णुता के नमूने हैं?

लेकिन टीपू ने केवल अधिकांश मुस्लिम शासकों द्वारा स्थापित एक पुरानी परंपरा का अनुसरण किया: शहरों के मूल हिंदू नामों को इस्लामी नामों में परिवर्तित करना। औरंगजेब ने चटगांव का नाम बदलकर इस्लामाबाद कर दिया। मथुरा में केशवा मंदिर को ध्वस्त करने के बाद, उसने उसका नाम भी इस्लामाबाद रख दिया। उसके समय में, वाराणसी या काशी मोहम्मदबाद बन गया। अन्य मुस्लिम शासकों ने भी ऐसा ही किया: दिल्ली शाहजहानाबाद बन गया, आगरा अकबरबाद, गोलकोंडा हैदराबाद, बीदर जफरबाद, कडप्पा नेक्नामाबाद, कालपी मोहम्मदबाद, खंडौठ भी मोहम्मदबाद, प्रयाग इलाहाबाद और आज के अलीगढ़ को कोल कहा जाता था।

यह सूची महज एक अंश है—मेरे पिता के शोध से आठ पन्ने मिले, जिनमें उन शहरों, कस्बों और गांवों के नाम शामिल हैं जिनका नाम बदला गया था। मैं इस विषय पर उनकी टिप्पणी यहाँ प्रस्तुत कर रहा हूँ: 'यह सूची अधूरी है। आदर्श तरीका यह है कि भारत के हर कोने का भ्रमण किया जाए, विद्वानों और स्थानीय लोगों से बात की जाए और फिर मुस्लिम शासन के दौरान नाम बदले गए स्थानों की एक व्यापक सूची संकलित की जाए। अगर वे एक नया शहर बसाकर उसे इस्लामी नाम दे दें तो मुझे

कोई आपत्ति नहीं होगी। लेकिन मौजूदा शहरों का नाम बदलना उतना ही जघन्य अपराध है जितना किसी जीवित व्यक्ति को जबरन दूसरे धर्म में परिवर्तित करना।'

अमीर, मेरे पिता के लिखे नोट्स ने एक बिल्कुल नई दुनिया खोल दी है। मैं अब भी यह कल्पना नहीं कर पा रहा हूँ कि उन्होंने इतना सब कुछ कैसे हासिल कर लिया।

लेकिन चलिए वापस टीपू की बात पर आते हैं। मेरे पिता की प्रति पर लिखा है, 'टीपू सुल्तान के सपने'। ये कागजों का एक बंडल है, सब टाइप किए हुए। मूल प्रति स्वयं टीपू ने फारसी में लिखी थी। यह एक अत्यंत गुप्त दस्तावेज था, जिसे उन्होंने लिखा था और वे इसे केवल पूर्ण एकांत में ही पढ़ते थे। कर्नल विलियम किर्कपैट्रिक, ब्रिटिश सेना के अधिकारी जिन्होंने चौथे मैसूर युद्ध में भाग लिया था, जिसमें टीपू शहीद हुए थे, ने श्रीरंगपट्टनम महल में टीपू के शौचालय में ये कागज पाए थे। टीपू के भरोसेमंद सेवक हबीबुल्लाह ने टीपू की लिखावट पहचान ली थी। किर्कपैट्रिक ने स्वयं इनमें से कई का फारसी से अंग्रेजी में अनुवाद किया था। लंदन स्थित इंडिया ऑफिस में अभी भी मूल प्रति और कुछ अनुवाद सुरक्षित हैं।

इन लेखों में स्वयं टीपू की बातें लिखी हैं, जो उनकी कट्टरता का सबसे पुख्ता और प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। वे हमेशा हिंदुओं को काफ़िर और अंग्रेजों को ईसाई कहते हैं। अमीर, तुम्हें टीपू के सपने अवश्य पढ़ने चाहिए: उनके सपनों में अक्सर लंबी दाढ़ी वाला एक मौलवी दिखाई देता है; टीपू मक्का की तीर्थयात्रा पर जाते हैं; पैगंबर मोहम्मद एक लंबी दाढ़ी वाले अरब से कहते हैं, 'टीपू से कह देना कि मैं उसके बिना स्वर्ग में प्रवेश नहीं करूँगा'; इसके बाद टीपू सभी गैर-मुसलमानों को इस्लाम में परिवर्तित करने और सभी गैर-इस्लामी राष्ट्रों का इस्लामीकरण करने के मिशन पर निकल पड़ते हैं।

मैंने पूरी किताब पढ़ ली है। टीपू ने भारत के आधुनिकीकरण की बात कभी नहीं की और इस बात पर अड़े रहे कि ईसाई (अंग्रेज) उनके लिए सबसे बड़ी बाधा हैं जिन्हें उन्हें तुरंत दूर करना होगा। मज़े की बात यह है कि इन्हीं लेखों के आधार पर हमारे प्रगतिवादी उन्हें भारतीय प्रौद्योगिकी का जनक, धर्मनिरपेक्षता का आदर्श और प्रगतिशीलता का प्रवर्तक कहते हैं! इन्हीं लेखों का इस्तेमाल करके वे ठीक इसके विपरीत दावा कैसे कर सकते हैं, यह एक ऐसा सवाल है जिसका जवाब इन बुद्धिजीवियों को देना होगा।

टीपू ने मालाबार और कूर्ग में एक लंबा अभियान चलाया और अपने पीछे जबरन धर्म परिवर्तन का क्रूर सिलसिला छोड़ दिया। लेकिन मैसूर क्षेत्र में उसने ऐसा ही प्रयास करने से परहेज किया क्योंकि वह इतना चतुर था कि जानता था कि यहाँ यह सफल नहीं होगा—विफलता की संभावना बहुत अधिक थी। यहाँ के हिंदुओं को प्रसन्न करने के लिए—दरअसल, 1791 के तीसरे मैसूर युद्ध में अपनी आर्थिक हार के बाद, जब उसे अपने दोनों बेटों को अंग्रेजों के हवाले करना पड़ा था, उसे हिंदुओं के समर्थन की आवश्यकता थी—उसने श्रृंगेरी शंकराचार्य मठ को एक बड़ा दान दिया। हमारे धर्मनिरपेक्ष-प्रगतिवादी इसे टीपू के गैर-सांप्रदायिक नेक गुण के उदाहरण के रूप में प्रस्तुत करते हैं। लेकिन इसके विपरीत भी कई प्रमाण मौजूद हैं: टीपू ने वास्तव में अफ़गान बादशाह ज़मान शाह और तुर्की के खलीफ़ा को भारत पर आक्रमण करने और इस्लाम का शासन स्थापित करने के लिए पत्र लिखे थे। 1796 में मैसूर महल पर अपने कुख्यात हमले के दौरान, उन्होंने अमूल्य प्राचीन हिंदू ताड़ के पत्तों की पांडुलिपियों, शिलालेखों, कागजों और पुस्तकों से भरे पूरे पुस्तकालय को इकट्ठा किया और उन सभी को ईंधन के रूप में जला दिया।

शिक्षा के क्षेत्र में उनका 'सुधार' उनकी तथाकथित प्रगतिशीलता का एक और प्रमाण है। मालाबार के मुसलमान आज भी मलयालम उसी तरह बोलते, पढ़ते और लिखते हैं जैसे तमिलनाडु के तमिल मुसलमान तमिल भाषा में बोलते हैं। टीपू की वजह से कर्नाटक के मुसलमान केवल उर्दू बोलते हैं। यह टीपू के उस ज़िद का सीधा परिणाम है कि फ़ारसी और उर्दू ही शिक्षा के एकमात्र मान्य माध्यम बने रहें।

मुझे पता है कि यह पत्र पहले से ही बहुत लंबा हो गया है, लेकिन मुद्दा यह है कि मैं टीपू को उसके वास्तविक स्वरूप में चित्रित नहीं कर सकता। उसके द्वारा अपने सैन्य अधिकारियों को लिखे गए कई पत्र, जिनमें उसने अपने राज्य में हिंदुओं को पकड़ने और धर्म परिवर्तन कराने का आदेश दिया था, आज भी उपलब्ध हैं। ये सभी पत्र टीपू की क्रूरता, कट्टरता और मैसूर के मूल शासकों के प्रति उसकी घोर उपेक्षा के पर्याप्त प्रमाण प्रस्तुत करते हैं। इस प्रकार के प्रमाणों को अनदेखा करना असंभव है और जितना अधिक मैं शोध करता हूँ, उतना ही मुझे उसके क्रूर पक्ष के नए प्रमाण मिलते हैं। मैं उन सभी को यहाँ सूचीबद्ध नहीं करना चाहता, लेकिन मुझे विश्वास है कि आप मेरी कठिनाई को समझ रहे हैं। यदि मैं इस नाटक में टीपू को राष्ट्रीय नायक के रूप में चित्रित करता हूँ, तो मैं पूरी दुनिया और खुद से झूठ बोल रहा हूँगा।

मुझे तुम्हारी मदद चाहिए, आमिर।
ढेर सारा प्यार,
बीबी

वह एक महीने से ज़्यादा इंतज़ार करती रही। उसने कोई जवाब नहीं दिया। जब उसने पत्र लिखा था, तब उसे पता था कि इससे वह नाराज़ होगा। लेकिन उसके लिए, यह अपनी कला के प्रति ईमानदार रहने का सवाल था। और उसने उससे शादी इसलिए की थी क्योंकि वह भी कला के प्रति उतना ही जुनूनी था, उसने अपने धर्म और अपने पिता को त्याग दिया था। अब अट्ठाईस साल साथ रहने के बाद, उसके पास कोई नहीं था जिससे वह अपने संकट को बाँट सके, सब कुछ बता सके, कुछ भी न छिपा सके... और अचानक, बिना किसी कारण के, उसे अपने पिता की याद आ गई, जो उसके लिए माँ और पिता दोनों थे। आमिर क्या सोच रहा था? अगर उसे यहाँ आने में असहजता महसूस हो रही थी, तो वह मुझे बैंगलोर आकर मेरे पत्र पर चर्चा करने के लिए एक लाइन लिख सकता था। लेकिन कुछ नहीं। 'आपका पत्र मिल गया' जैसा जवाब भी नहीं। खामोशी से उपेक्षा। वह अपना तिरस्कार दिखा रहा है। उपेक्षा।

वह बेहद गुस्से में थी। दो दिन बाद उसने बैंगलोर जाने का फैसला किया।

वह घर पर था। उसने दरवाजा खोला और उसे अंदर आने दिया। उसने उसके बढ़े हुए वजन पर मजाक करके चुप्पी तोड़ी और फिर जिस कुर्सी पर वह बैठा था, उसके पीछे से उसे गर्मजोशी से गले लगा लिया। उसने बस हल्की सी आह भरी। उसका सब्र टूट गया। उसने उसके सामने एक कुर्सी खींच ली, उसकी आँखों में सीधे देखा और जो कुछ उसने लिखा था, वह सब दोबारा सुना दिया।

उन्होंने संक्षिप्त लहजे में कहा, 'हम इतिहास पर बहस नहीं कर रहे हैं। हम एक नाटक कर रहे हैं।'

'लेकिन इस नाटक में ऐतिहासिक पात्र शामिल हैं,' उसने अनजाने में लगभग चिल्लाते हुए कहा।

'यही तो एक कलाकार की स्वतंत्रता है!' उसने भी उसी स्वर में जवाब दिया।

'ओह, मैं कलात्मक स्वतंत्रता का पूरा समर्थन करता हूँ, लेकिन वह स्वतंत्रता तभी सार्थक है जब कृति कलाकार की मौलिक रचना हो। जिस क्षण आप इसका उपयोग अपनी विचारधारा का प्रचार करने के लिए करते हैं, आप कलाकार नहीं रह जाते।'

और हाल ही में इस्लाम के प्रति आपकी नफरत और बढ़ गई है!

‘आप कितने तर्कहीन हो सकते हैं? आपको याद क्यों नहीं आता कि हमने कितनी बार इस बारे में बात की है कि कलाकार धर्म से परे होते हैं? मेरा मानना है कि सत्य कला से बड़ा है, और एक कलाकार की रचना सत्य की अभिव्यक्ति होनी चाहिए। मेरा मानना है—मैं पूरी तरह आश्वस्त हूँ कि कला का किसी अन्य उद्देश्य के लिए उपयोग करना कला के साथ विश्वासघात है।’

वह अपने ही शब्दों की तीव्रता से हैरान थी। उसे विश्वास नहीं हो रहा था कि उसने ये सब कह दिया। अचानक उसे एक अजीब सी खुशी का एहसास हुआ, जो उसे अच्छा लगा। आमिर अब भी परेशान था। वह बालकनी में गया और सिगरेट जलाई। उसे क्या हो गया है? वह उस बेवकूफ़ गाँव में अपने पिता की किताबें पढ़ती अटकी हुई है। क्यों? वह अपने पत्नी के कर्तव्यों की उपेक्षा कर रही है। मैं यहाँ क्या करूँ? और उसे याद आया। वह चाहती है कि मैं उसके साथ उस गाँव में जाऊँ! वह उस नरक में एक रात भी बिताने का सपना नहीं देख सकता था। और उसने कहा कि वह वहाँ एक हिंदू की तरह रहती है, बिंदी लगाती है, ठीक वैसे ही जैसे...जैसे हिंदू लगाते हैं। ओह! और उसके लिए मुझे अपने पिता के घर में अपने साथ रहने के लिए कहना कितना आसान था। आमिर, एक हिंदू महिला का पति...धिक्कार है! वह कैसे समझ सकती है कि इससे मुझे कितना शर्मिंदगी...अधूरापन महसूस होगा। अब वह गुस्से से उबल रहा था।

'खाना मेज पर लगा है, साहब,' अमीना बानू की आवाज ने उन्हें होश में लाया।

‘ठीक है। अब घर जाओ,’ उसने कहा और फिर बालकनी में कुर्सी पर बैठ गया।

काफी समय बाद रजिया उसके पास आई। 'चलो खाना खाते हैं।'

'कृपया चले जाओ। मैं अकेला रहना चाहता हूं,' उसने उसकी ओर देखे बिना कहा।

वह करीब आई और बोली, 'मैं इतनी दूर से आई हूँ और इतना लंबा समय हो गया है...'

‘मुझे अकेले रहने की आदत है और...अब मुझे यह अच्छा लगता है। कृपया मुझे परेशान न करें,’ उसने जानबूझकर अपना सिर उससे दूर घुमाते हुए कहा।

उसे अपमानित महसूस हुआ और वह चली गई। उसे मनाने का कोई फायदा नहीं था। पिछली मुलाकात ने उसे दिखा दिया था कि यह काम कितना मुश्किल है। उसे

बहुत भूख लगी थी और वह मेज पर बैठ गई, लेकिन अकेले खाना नहीं खा सकी। वह खाने को खाली निगाहों से देखती रही और चार महीने पहले घटी एक घटना को याद करने लगी। यह नरसपुरा और बाद में संगम में अपने पिता की अस्थियों को विसर्जित करने के बाद बैंगलोर की उसकी पहली यात्रा थी। वह और आमिर रात का खाना शुरू ही करने वाले थे कि उसने करी परोसने के लिए बर्तन का ढक्कन खोला, लेकिन बीच में ही रुक गई—देखकर वह यह नहीं बता पा रही थी कि करी गोमांस की है या नहीं। अमीना ने मांस को बड़े करीने से काटा था और उसे बहुत ही नरम होने तक पकाया था। पता लगाने का एकमात्र तरीका था उसे चखना।

‘अमीर, क्या तुम इसे थोड़ा चखकर बता सकते हो कि यह गोमांस है या नहीं?’

'क्यों?'

मैं अब गोमांस नहीं खाता।

वह काफी देर तक उसे घूरता रहा, मानो खुद से ही बातें कर रहा हो। फिर उसने ताना मारते हुए कहा, 'क्या मैं आपसे पूछ सकता हूँ कि आपने यह प्रतिगामी कदम क्यों उठाया है?'

उसने ताने को अनसुना कर दिया था। 'मैं अपने पिता की इकलौती बेटी हूँ। उनके अंतिम संस्कार के समय मैं वहाँ मौजूद नहीं थी और मैं बस इतना ही कर सकी कि उनकी अस्थियों को नदी में विसर्जित कर दिया। ऐसा करने के लिए मुझे गोमांस खाने के पाप का प्रायश्चित करना पड़ा। प्रायश्चित की रस्मों में से एक यह शपथ लेना था कि मैं फिर कभी गोमांस नहीं खाऊँगी।'

वह बस उसे घूरता रहा। उसे वो तनावपूर्ण दिनों की याद आ गई जब वे उसके माता-पिता के घर में रह रहे थे। हर बार जब वह उसे गोमांस खाने के लिए ज़ोर देता, तो वह पलटकर कहती, 'आप सूअर का मांस क्यों नहीं खाते?' और फिर उसे आभास हो जाता कि वह वही पुराना तर्क फिर से दोहराएगा। कुछ देर बाद उसने कहा, 'ठीक है! लेकिन उस स्थिति में, तुम्हें मांस खाना पूरी तरह छोड़ना होगा। गायों को विशेष दर्जा देने की बात करना पाखंडी लगने से बच नहीं सकता।'

यह बात समझ में आ गई थी। फिर उन्हें याद आया कि उनके गांधीवादी पिता पक्के शाकाहारी थे। उनके जीवित रहने तक और अब उनके चले जाने के बाद भी, लक्ष्मम्मा और केंचप्पा उनके सख्त शाकाहारी जीवनशैली का सम्मान करते रहे। वे घर में मांस नहीं पकाते थे।

‘अमीर, तुम सही कह रहे हो। जब से मैं नरसपुरा में हूँ, मैंने मांस को हाथ नहीं लगाया है। और हाँ, खाना व्यक्तिगत पसंद का मामला है। लेकिन जानवरों के प्रति दया दिखाना—उनके जीने के अधिकार का सम्मान करना—भी एक महत्वपूर्ण बात है। अगर इस नज़रिए से देखा जाए, तो शाकाहार एक उच्च स्तर पर है। इसीलिए मैंने मांस खाना छोड़ने का फैसला किया है। यहाँ आने पर भी,’ उसने दृढ़ता से जवाब दिया।

'अरे? अगर हम खाने जैसी बुनियादी चीज़ में इतने अलग हैं, तो आप इस शादी को मज़बूत बनाने वाले मुख्य बंधनों में से एक को कैसे बनाए रखते हैं?'

‘आप शाकाहारी बन जाइए।’

लेकिन भगवान ने जानवरों को इसलिए बनाया है ताकि मनुष्य उन्हें खा सके। है ना?

‘इस तरह की तर्क-वितर्क की जड़ें गहरी जड़ें जमाए हुए अहंकार में निहित हैं। और कोई भी धर्म जो इसे बढ़ावा देता है, वह भी उसी हद तक अहंकारी है।’

बातचीत वहीं खत्म हो गई। उसने करी नहीं खाई थी। उस रात उसका खाना सिर्फ दही में डूबी रोटियाँ थीं। हमारी पिछली बहस का असर उस रात बिस्तर पर दिखा—हम बस एक-दूसरे के बगल में लेटे रहे। मुझे लगा कि खाने में आए इस नए अंतर ने हमारे बीच के जुड़ाव को कम कर दिया था।

और अब वह डाइनिंग टेबल को घूरती रही। किसी ने अमीना को उसके लिए अलग से शाकाहारी खाना बनाने के लिए नहीं कहा था। और लक्ष्मी को यह भी नहीं पता था कि उसने क्या पकाया है। उसके बिना अकेले खाना खाने की उसकी हिम्मत नहीं हो रही थी। वह अब भी रूठकर बालकनी में बैठा सिगरेट पी रहा था। वह बेडरूम में गई, बिस्तर पर लेट गई और कई मिनटों तक उसका इंतज़ार करती रही। वह नहीं आया। उसने उसे न बुलाने का फैसला किया। उसने आह भरी और आँखें बंद कर लीं। सिर्फ़ उसका नया शाकाहार ही उसे इतना परेशान नहीं कर रहा था। हम्पी... टूटी हुई विरुपाक्ष की मूर्ति, तबाह मंदिर और अब, टीपू के अत्याचारों का ब्यौरा देने वाला उसका पत्र... वह ज़रूर गुस्से से आग बबूला होगा। लेकिन वह यह दिखावा नहीं कर सकती थी कि यह सब सच नहीं है। वह इतना कठोर क्यों है? क्या वह सच्चाई को देख नहीं सकता?

जब उसने आँखें खोलीं, तो उसे अर्धपारदर्शी खिड़की के पर्दों के पीछे से कमरे में हल्की धूप की रोशनी दिखाई दी। उसे याद नहीं था कि वह कब सो गई थी। वह बिस्तर पर अकेली थी। उसे रोने का मन कर रहा था। तो वह जानबूझकर उससे दूरी बना रहा था। वह उठी और कुछ मिनट बाद लिविंग रूम में गई और डाइनिंग टेबल की ओर बढ़ी। आमिर पहले ही खाना खा चुका था और उसने उसे खाने के लिए नहीं बुलाया था। वह नाज़िर के कमरे की ओर जाने वाली सीढ़ियों पर चढ़ी। दरवाज़ा आधा बंद था। उसने उसे धक्का देकर खोला। आमिर पीठ के बल लेटा हुआ सिगरेट पी रहा था।

'तुम यहाँ क्यों सोए?'

उसने उसकी तरफ नहीं देखा। 'माफ़ करना, मैं अमीना को बताना भूल गया था कि जब भी तुम यहाँ आओ तो तुम्हारे लिए शाकाहारी खाना बनाए।'

कोई बात नहीं। मैं उसे खुद बता दूंगी। मेरे लिए तुम्हें शाकाहारी बनने की ज़रूरत नहीं है। लेकिन तुमने मेरे सवाल का जवाब नहीं दिया: तुम यहाँ क्यों सोईं?

अब उसने अपना चेहरा उससे जानबूझकर फेर लिया। 'मुझे एहसास हुआ कि एक शाकाहारी महिला मुझे कुछ भी नहीं दे सकती।'

'अमीर! ये तो बहुत ही घटिया बात है! क्या तुम मुझे इतने सालों से इसी नजरिए से देखते आए हो? मैं तुम्हारी पत्नी हूँ।' उसकी आवाज तीखी थी, गुस्से से कांप रही थी।

'मुझे माफ़ करना। मेरा इरादा अभद्र भाषा का प्रयोग करने का नहीं था।' वह रुका, उसकी ओर देखा और बोला, 'बात ये है: केवल एक शाकाहारी महिला ही महीनों तक अपने पति से अलग रह सकती है।' उसके लहजे में छिपी विजय की भावना ने उसे झकझोर दिया। उसने पलटवार करने की इच्छा से उसे घूरा, लेकिन फिर मुड़कर कमरे से बाहर चली गई।

सुबह करीब दस बजे, केंचप्पा रजिया के अध्ययन कक्ष में दाखिल हुआ और उसे एक लिफाफा दिया। रजिया यह जानकर आश्चर्यचकित रह गई कि उसके गाँव में वास्तव में एक डाकघर है।

'यहाँ डाकघर कब से है?'

'सात-आठ साल हो गए हैं, अम्मा।'

अच्छा है। उसने लिफाफे पर नजर डाली। उस पर कन्नड़ भाषा में उसका पता लिखा था। वह लिखावट पहचान नहीं पाई और उस पर कोई प्रेषक पता भी नहीं था। उसने लिफाफा फाड़कर खोला और उसमें से अंग्रेजी में लिखा पत्र निकाला। प्रोफेसर शास्त्री। उसे खुशी हुई।

मेरी प्यारी लक्ष्मी,

मैं तुम्हें अपने जीवन में पहली बार पत्र लिख रही हूँ। सोचो ज़रा। इतने वर्षों तक तुम्हें पत्र लिखने का न तो कोई कारण था और न ही कोई अवसर। मैं तुम्हें किस नाम से पुकारूँ? क्या मैं तुम्हें लक्ष्मी कहूँ या रज़िया? मेरे लिए, दोनों ही नाम सुंदर हैं।

मैं विदेश में था और दो हफ्ते पहले लौटा। पिछले शनिवार को मेरी मुलाकात आमिर से हुई। उसने मुझे विस्तार से बताया कि तुममें कितना बदलाव आया है। लेकिन मैं समझ सकता हूँ कि तुम किस दौर से गुज़र रहे हो। जब से तुमने हम्पी के खंडहर देखे हैं, तुम भावुक हो गए हो और सांप्रदायिक इतिहासकारों द्वारा लिखे गए झूठ को बिना सोचे-समझे स्वीकार कर लिया है। यही भावुकता तुम्हें पटकथा पर आगे बढ़ने से रोक रही है। तुम दोनों एक आदर्श जोड़ी थे—ऐसा कोई फिल्म नहीं थी जो तुमने साथ में न की हो। और अब ये सब? आमिर को हम्पी की पटकथा लिखने के लिए किसी और को नियुक्त करना पड़ा? मैं निराश हूँ...नहीं! मैं दुखी हूँ। बहुत आहत हूँ।

हम्पी का सच्चा इतिहास—संपूर्ण विजयनगर साम्राज्य का—इन 'इतिहासकारों' द्वारा सुनाई जाने वाली काल्पनिक कहानियों से कहीं अधिक जटिल है। विजयनगर साम्राज्य ने स्वयं अपने विनाश को आमंत्रित किया; मुसलमानों ने कुछ नहीं किया। मैं मानता हूँ कि कुछ मुस्लिम राजाओं ने हिंदू मंदिरों और मूर्तियों को नष्ट किया, लेकिन वे अपवाद थे, प्रतिशोध की भावना से किए गए कृत्य थे। हिंदू राजा भी उतने सहिष्णु नहीं थे जितना कि अधिकांश लोग मानते हैं। मुझे नहीं पता कि आप हाल के ऐतिहासिक शोधों से अवगत हैं या नहीं। आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि

विजयनगर साम्राज्य ने शैव और वैष्णव संप्रदायों के बीच कुछ सबसे बर्बर संघर्ष देखे। परिणामस्वरूप रक्त की नदियाँ बहीं। वे सभी विकृत मूर्तियाँ और खंडहर मंदिर जिन्होंने आपको इतना दुख पहुँचाया—वे सभी विष्णु को समर्पित थे। दूसरे शब्दों में, उनका निर्माण वैष्णव संप्रदाय के अनुयायियों द्वारा किया गया था। लक्ष्मी नरसिम्हा और विजया विट्ठल मंदिर ध्वस्त किए गए सैकड़ों विष्णु मंदिरों में से केवल दो प्रमुख उदाहरण हैं जो आज भी मौजूद हैं। लेकिन क्या आपने कभी सोचा है कि विरुपाक्ष मंदिर आज भी बिना किसी खरोंच के कैसे खड़ा है? विरुपाक्ष शिव हैं, जो शैव संप्रदाय के देवता हैं। इससे क्या तात्पर्य निकलता है? वैष्णव अनुयायियों को तिरुपति के शक्तिशाली नेताओं का भरपूर समर्थन प्राप्त था, और इसी कारण वे शैवों पर अत्याचार करने में सफल रहे। मुझे आपको यह बताने की आवश्यकता नहीं है कि तिरुपति आंध्र प्रदेश में है, लेकिन मैं फिर भी कह रहा हूँ क्योंकि अगर आप गौर करें तो क्या इसका यह अर्थ नहीं है कि आंध्र प्रदेश के लोगों ने विजयनगर साम्राज्य में इन शैवों पर अत्याचार किया था? और लक्ष्मी, यह अत्याचार कुछ वर्षों तक नहीं चला। यह सौ वर्षों से भी अधिक समय तक जारी रहा। बेचारे शैव इसे कब तक सहन कर सकते थे? जब उन्होंने यह तय किया कि अब बहुत हो गया, तो उन्होंने पड़ोसी मुस्लिम राजाओं को आमंत्रित किया और उन्हें विजयनगर में वे सभी कमजोर बिंदु दिखाए जिन पर वे हमला कर सकते थे। इन मुस्लिम राजाओं ने सहमति दे दी क्योंकि विजयनगर की अपार संपत्ति पर कब्जा करने का लालच अनियंत्रित था। और इसलिए, जब युद्ध छिड़ा, तो लंबे समय से पीड़ित शैवों के लिए विष्णु मंदिरों और मूर्तियों को जितना हो सके नष्ट करने का यह बिल्कुल सही समय था। लेकिन हमारे सांप्रदायिक 'इतिहासकार' इसे कैसे बयान करते हैं? वे इस मंदिर-मूर्ति विनाश का सारा दोष मुस्लिम राजाओं पर मढ़ देते हैं।

इतिहास के अध्ययन में आपकी नई रुचि देखकर मुझे गर्व है। मैं आपको कुछ प्रखर प्रगतिशील इतिहासकारों से मिलवाऊँगा। वे सहर्ष आपका मार्गदर्शन करेंगे। और आप जानते हैं कि मैं हमेशा आपके साथ हूँ। वास्तव में, अब जब मैं यह कह रहा हूँ, तो मुझे लगता है कि आपमें न केवल विजयनगर बल्कि पूरे भारत के इतिहास का अध्ययन करने का अनुशासन और प्रतिबद्धता है। लेकिन यह कभी मत भूलना कि इतिहास का उद्देश्य मानवता को प्रगतिशीलता की ओर अग्रसर करना है।

आपका स्नेहपूर्वक,

उसने पत्र को मोड़कर बिस्तर पर रख दिया और कुछ मिनटों तक सोचती रही। यह प्रोफ़ेसर शास्त्री की खास शैली थी। उसने माना कि इसमें कुछ ऐसे बिंदु थे जिन पर गहन ध्यान देने की आवश्यकता थी। लेकिन तब तक वह प्रगतिशील इतिहास के विचार को लगभग छोड़ चुकी थी। उसने गहराई से सोचा। दरअसल, प्रगतिशील इतिहास जैसी कोई चीज नहीं होती, उसने निष्कर्ष निकाला, अचानक उसे टीपू सुल्तान पर किए गए अपने शोध और अपने पिता के विस्तृत नोट्स याद आ गए। तो फिर इतिहास क्या है? उसने पत्र को वापस लिफाफे में डाला और लापरवाही से अध्ययन मेज पर फेंक दिया। उसने अगले दिन इसे फिर से पढ़ा और अचानक उसे अपने पिता द्वारा लिखा गया एक नोट याद आ गया। इतिहास सत्य की खोज है। ये शब्द उसके मन में गूंज उठे। वह हम्पी या विजयनगर साम्राज्य के इतिहास के बारे में लगभग कुछ नहीं जानती थी और प्रोफ़ेसर शास्त्री का साम्राज्य का इतिहास उसे विश्वसनीय नहीं लग रहा था। उसने विजयनगर का गहन अध्ययन करने का निर्णय लिया और फिर प्रोफ़ेसर से अपने प्रगतिशील इतिहासकारों से परिचय कराने और उनकी बातें सुनने का अनुरोध किया।

वह अपने पिता के संग्रह में छानबीन करने लगी। उसे यकीन था कि विजयनगर साम्राज्य पर कम से कम कुछ प्रामाणिक इतिहास की किताबें तो होंगी ही। सेवेल की 'ए फॉरगॉटन एम्पायर' तीसरी शेल्फ के सबसे ऊपरी रैक पर रखी थी। उसने उसे बाहर निकाला। मैंने यह किताब पहले कहाँ देखी है? आह! हम्पी में। लेकिन कहाँ? और धीरे-धीरे उसे याद आया। यह विरुपाक्षा मंदिर के ठीक सामने वाली संकरी गली में एक स्थानीय किताबों की दुकान में थी। लेकिन उसने इसे खरीदा नहीं था क्योंकि एक डॉक्यूमेंट्री की डेडलाइन के चलते उसके पास ऐसी किताब पढ़ने का समय और धैर्य नहीं था। नहीं। उस समय मुझे अपने पिता की स्व-अर्जित विद्वत्ता का अंदाजा नहीं था। उसने 'ए फॉरगॉटन एम्पायर' का कवर पेज खोला तो अंदर कागजों का एक मोटा बंडल मुड़ा हुआ मिला। पिता के नोट्स। इनसे उसके पिता के अध्ययन के तरीके पर और प्रकाश पड़ा। उसे याद आया कि उसने पढ़ी हुई अधिकांश अन्य किताबों में भी इसी तरह मुड़े हुए, हस्तलिखित कागज देखे थे। बिना खोले ही उसे पता था कि उनमें क्या है—आठ-दस पन्नों के नोट्स जिनमें पूरी किताब का सारांश था। उसने उसी

पंक्ति में रखी आस-पास की किताबों पर नज़र डाली। श्रीनिवासा रित्ती और बी. गोपाल की 'कर्नाटक का इतिहास'; एन. वेंकटरामनय्या की 'दिल्ली सल्तनत'; सूर्यनाथ कामथ की 'कर्नाटक का संक्षिप्त इतिहास'; पी.बी. देसाई की 'कर्नाटक युगों के माध्यम से'। उसे अचानक अपनी हीनता और शर्मिंदगी का एहसास हुआ। मैंने इनमें से कोई भी किताब पढ़े बिना उस डॉक्यूमेंट्री के लिए कैसे हाँ कर दी? और मैंने आमिर को कैसे यह मानने दिया कि दो पर्यटक पुस्तिकाओं में हम्पी के बारे में जानने के लिए सब कुछ है? उसने फैसला किया कि वह अपने पिता के नोट्स के साथ-साथ इन सभी किताबों को शुरू से पढ़ेगी।

अपनी डेस्क पर वापस आकर, उसने अपने पिता द्वारा लिखित 'ए फॉरगॉटन एंपायर' पर लिखे नोट्स पढ़ना शुरू कर दिया।

इतिहास का कोई लक्ष्य होता है या नहीं, यह प्रश्न दर्शनशास्त्र के क्षेत्र में आता है और तर्क पर आधारित है। परन्तु इतिहास के अध्ययन का एक निश्चित लक्ष्य है: सत्य की खोज। प्राथमिक स्रोतों और अभिलेखों की गहन छानबीन करना, उनका वर्गीकरण और श्रेणीकरण करना तथा फिर उन्हें तथ्यों के अनुरूप और तार्किक रूप से सुसंगत स्वरूप देना एक श्रमसाध्य कार्य है। यद्यपि आधुनिक काल में, विशेषकर स्वतंत्रता के बाद, इतिहासकारों ने भारतीय इतिहास की नवीन व्याख्याएँ प्रस्तुत की हैं, जिन्हें अब प्रामाणिक इतिहास माना जाता है। ऐसी व्याख्याओं को चुनौती देना कठिन है। यह बात हम्पी के 'इतिहास' पर भी समान रूप से लागू होती है। यह इतिहास हमें बताता है कि हम्पी के भव्य मंदिर और वहाँ की मूर्तियाँ वैष्णव और शैव संप्रदायों के बीच हुए हिंसक संघर्ष के कारण नष्ट कर दी गईं और पड़ोसी मुस्लिम राज्यों का इससे कोई संबंध नहीं था। प्रमाण के रूप में, ये इतिहास हमें बताते हैं कि सभी नष्ट की गई मूर्तियाँ और मंदिर वैष्णवों के थे। वे यह भी दावा करते हैं कि आंध्र प्रदेश में स्थित शक्तिशाली ताकतों ने, तिरुपति के शक्तिशाली वैष्णवों के समर्थन से, कर्नाटक के शैवों पर वर्षों तक अत्याचार किया। अंततः शैवों ने विद्रोह किया और मुस्लिम राजाओं से सहायता मांगी, जिसके परिणामस्वरूप एक भीषण युद्ध हुआ जिसमें उन्होंने वैष्णवों के मंदिरों को नष्ट कर दिया। यह 'इतिहास' मुस्लिम राजाओं की धार्मिक कट्टरता को छिपाने का एक हथकंडा है। लेकिन इस 'इतिहास' के लेखकों को यह समझ नहीं है कि उनकी अपनी व्याख्या कर्नाटक के लोगों को किस प्रकार गलत तरीके से प्रस्तुत करती है—

इसका तात्पर्य यह है कि कर्नाटक के लोग और विशेष रूप से शैव, इस तरह के जघन्य विध्वंस में लिप्त थे। किसी भी स्थिति में, यह इतिहास असत्य है।

अपने दो सौ से अधिक वर्षों के इतिहास में, विजयनगर साम्राज्य ने वैष्णव और शिव दोनों संप्रदायों के शासकों को देखा। एक शासक दूसरे संप्रदाय के लोगों के साथ कैसा व्यवहार करता था? क्या किसी वैष्णव शासक ने अपने शैव नागरिकों पर अत्याचार किया? मैंने इससे संबंधित लगभग सब कुछ पढ़ा है और मैंने हम्पी में कई सप्ताह बिताए और विजयनगर साम्राज्य के स्थल के आसपास के क्षेत्र का पैदल भ्रमण किया। मेरे प्रत्यक्ष अवलोकन जॉर्ज माइकल और फिलिप वैगनर की प्रामाणिक पुस्तक "विजयनगर: पवित्र तीर्थस्थल की स्थापत्य सूची" से बहुत सटीक रूप से मेल खाते हैं। इस पुस्तक के तीसरे खंड में हम्पी में नष्ट हुए शिव और विष्णु मंदिरों की तस्वीरें हैं। विकृत शिव मंदिरों की एक संक्षिप्त सूची संदर्भ के लिए नीचे दी गई है:

- चंद्रमौलेश्वर मंदिर—पट्टी 20, 21—विकृत।
- सौम्य सोमेश्वर मंदिर—प्लेट 67, 68, 69—विकृत।
- लिंग-शिव मंदिर—प्लेट 329—विकृत।
- चंडीकेश्वर मंदिर—प्लेट 352, 353—विकृत।
- वीरभद्र मंदिर परिसर-प्लेट्स 390, 391, 392-क्षत-विक्षत।
- हेमकुटा पहाड़ी की चोटी पर स्थित विरुपाक्षा मंदिर (कथित तौर पर, 'मूल' विरुपाक्षा) - प्लेट 520 - विकृत।
- मंदिरों के अलावा, शैव संत-कवि चामरस की गुफा और चटाई को भी बुरी तरह से विकृत कर दिया गया है।
- होस्पेट-हम्पी मार्ग पर स्थित विष्णु को समर्पित अनंतशयन मंदिर और शिव मंदिर - मल्लप्पना गुड़ी - क्षतिग्रस्त अवस्था में हैं।
- होस्पेट-अनेगोंडी राजमार्ग से हटकर सोमेश्वर पहाड़ी पर स्थित, शिव के लिए निर्मित सोमेश्वर गुफा मंदिर को नष्ट कर दिया गया है।
- विरुपाक्षा मंदिर परिसर के पीछे स्थित 'राजाओं की गुफा' के अंदर स्थित शिव मंदिर हमें क्षति की सीमा को दर्शाता है - शिवलिंग और नंदी की मूर्ति, जो शिव का वाहन है, को सहारा देने वाला मचान लावारिस खड़ा है।

यह महज एक आंशिक सूची है, लेकिन इससे शैव-वैष्णव संघर्ष के सिद्धांतों की खामियों को दर्शाने के लिए पर्याप्त है। लेकिन इतिहास का नवाचार यहीं नहीं रुकता। यह शिव मंदिर के विध्वंस को शैव-वैष्णव संघर्ष की बर्बर प्रकृति के एक और प्रमाण के रूप में प्रस्तुत करता है! इसलिए, विजयनगर राजाओं के दृष्टिकोण और व्यवहार का प्रत्यक्ष अध्ययन करना महत्वपूर्ण है।

1. विरुपाक्षा मंदिर का शिखर एक धर्मनिष्ठ वैष्णव कृष्णदेवराय द्वारा बनवाया गया था।
2. विष्णु को समर्पित भव्य विजया विट्ठल मंदिर एक शैव देवराय द्वितीय द्वारा बनवाया गया था।
3. रामचंद्र मंदिर, जिसका उपयोग शाही परिवार द्वारा निजी मंदिर के रूप में भी किया जाता था, शैव संप्रदाय के देवराया प्रथम द्वारा बनवाया और पूरा किया गया था। विजयनगर स्थित रामचंद्र मंदिर पर अन्ना एल. डल्लापिकोला और जॉन एम. फ्रिट्ज द्वारा सह-लिखित पुस्तक इस मंदिर का विस्तृत अध्ययन प्रस्तुत करती है।

विरुपाक्षा मंदिर आज भी कार्यरत है और काफी हद तक अक्षुण्ण बना हुआ है। मेरे अध्ययन के आधार पर, मैं यह निष्कर्ष निकालने के लिए उचित हूँ कि यह विजयनगर साम्राज्य के संस्थापक देवता को संरक्षित करने के लिए मुसलमानों से लड़ने वाले आम लोगों के संगठित प्रयास के कारण संभव हुआ।

~

बस इतना ही काफी था। लक्ष्मी ने अपने पिता के पुस्तकालय में विजयनगर साम्राज्य के इतिहास से संबंधित हर उपलब्ध सामग्री को पढ़ना शुरू कर दिया। उसने सावधानीपूर्वक नोट्स बनाए और अपने पिता के नोट्स में अपनी खुद की खोजों को भी जोड़ा। वह बैंगलोर गई और अपने पिता द्वारा अपनी ग्रंथसूची और 'अतिरिक्त पठन' के अंतर्गत सूचीबद्ध पुस्तकों को पढ़ा। बैंगलोर में अपना काम पूरा करने के बाद, उसने होस्पेट के लिए ट्रेन ली और फिर हम्पी के लिए रवाना हुई। उसने अपने पिता की तरह ही, ज्यादातर पैदल चलकर पूरे क्षेत्र का भ्रमण किया। दो सप्ताह के अंत में, उसे विश्वास होने लगा कि उसने विजयनगर साम्राज्य के इतिहास पर पूरी पकड़ बना ली है। क्या मुझे इस गौरवशाली सभ्यता के हृदयविदारक विनाश की

कहानी पर एक स्वतंत्र फिल्म बनानी चाहिए? उसने पूरा दिन इसी स्वप्निल विचार में बिताया।

अगले दिन जब वह बैंगलोर लौटी तो उसने प्रोफेसर शास्त्री को फोन किया।

महोदय, मुझे आपका पत्र चार महीने पहले मिला था। क्षमा करें, मैं पहले उत्तर नहीं दे सका। मैं विजयनगर साम्राज्य के इतिहास पर शोध करने में व्यस्त था, जिसका आपने अपने पत्र में उल्लेख किया था... शैव-वैष्णव संघर्ष के बारे में, जिसने साम्राज्य का नाश कर दिया था। और अब मैं आपको यह बताने के लिए फोन कर रहा हूँ कि यह व्याख्या सही नहीं है। मेरे शोध से पता चलता है कि पड़ोसी मुस्लिम राजाओं ने ही उन सभी मंदिरों और मूर्तियों को नष्ट किया था। और अब मैं इस विषय पर उन प्रगतिशील इतिहासकारों से बहस करने के लिए तैयार हूँ जिनका आपने उल्लेख किया था। क्या आप मुझे उनसे मिलवा सकते हैं?

बोलने से पहले उन्होंने काफी देर तक चुप्पी साधे रखी। उनकी आवाज में हैरानी साफ झलक रही थी। 'आप...आप किन इतिहासकारों की बात कर रहे हैं?'

‘आपके पत्र में...याद है, महोदय? आपने मुझसे कहा था कि मैं सांप्रदायिक इतिहासकारों की भावुक कहानियों पर भरोसा न करूं...’

‘ओह! लक्ष्मी, लक्ष्मी! तो बात ये है। तुम एक कलाकार हो। तुमने ऐसा कैसे कर दिया? सोचो अगर सारे कलाकार शोध और ऐसी ही चीज़ों में डूब जाएं तो क्या होगा? कला मुरझा जाएगी और सूख जाएगी। और तुम तो बहुत प्रतिभाशाली कलाकार हो। ये जानकर अच्छा लगा कि तुमने शोध में मेहनत की, लेकिन क्या तुम्हें एहसास है कि इन चार महीनों में तुम्हारी रचनात्मकता मुरझा गई है? ये बहुत दुखद है, व्यक्तिगत रूप से... मेरा मतलब है, मेरी सबसे प्यारी छात्रा अपनी रचनात्मकता को अपने ही हाथों से मार रही है! देखो, मुझे माफ़ करना, लेकिन मुझे शाम को बर्लिन के लिए उड़ान भरनी है... कोई सम्मेलन है। और मुझे देखो! मैंने अभी तक पैकिंग भी शुरू नहीं की है। वापस आने पर हम विस्तार से बात करेंगे। अपना ख्याल रखना, ठीक है? अलविदा!’ उसने उसके जवाब का इंतज़ार किए बिना ही फ़ोन काट दिया।

~

वह सीधे नरसपुरा चली गई। उसे कुछ समय अकेले बिताने और सोचने की ज़रूरत थी।

पिताजी के नोट्स अब समझ में आते हैं, क्योंकि मैंने उनके संग्रह की अधिकांश पुस्तकें पढ़ ली हैं। मुझे लगता है कि मुझे उनकी पढ़ाई के दायरे को पूरी तरह समझने के लिए, उनके सवालों और शंकाओं को उसी अर्थ में समझने के लिए इस तैयारी की ज़रूरत थी। उन्होंने क्या हासिल किया है और मैंने क्या? उन्होंने अपनी अंग्रेज़ी सुधारने के लिए कड़ी मेहनत की। और उन्होंने एक भी अंग्रेज़ी शब्द का गलत इस्तेमाल नहीं किया—सटीक, सटीक, अर्थ और प्रयोग में एकदम सही, जैसे कोई शब्दकोश हो। उनकी कन्नड़, उनकी सोच, वाणी और लेखन की भाषा, त्रुटिहीन है... उसे शर्मिंदगी का एक झटका लगा। रज़िया कुरैशी। नारीवादी। प्रगतिशील। समतावादी। साहस, तर्कशक्ति, वैज्ञानिक सोच और बाकी सब का शक्तिशाली मिश्रण। ये सभी लेबल। उन लोगों द्वारा दिए गए जिन्होंने इन्हें खुद को दिया और अपने अनुयायियों और साथियों को बाँट दिया। जैसे मुझे। कितनी रैलियाँ, प्रदर्शन, मार्च और नारे? हर एक पिछले वाले से ज़्यादा तीखा... दिखावटी... इतिहास की कुंजी और भविष्य की दिशा बदलने का रहस्य सिर्फ़ हमारे पास था। मदहोश कर देने वाला... खोखला। इन सबके बावजूद, मैं इतिहास का अध्ययन इस तरह क्यों नहीं कर पाई? और अचानक मुझे यह बात समझ में आई। इतिहास नारों, आदर्शों और सुधार आंदोलनों से बंधा नहीं है। इसका अर्थ है सिद्धांतों और आंदोलनों की धारणाओं से खुद को मुक्त करना और अतीत की घटनाओं को वैसे ही देखना जैसे वे वास्तव में घटी थीं। और यह तब तक संभव नहीं है जब तक हम अपने मन को वर्तमान द्वारा निर्मित भ्रमों से मुक्त नहीं कर देते। अतीत अपना सच्चा स्वरूप हमें पुस्तकों, संकेतों, प्रतीकों और क्षतिग्रस्त अवशेषों के माध्यम से प्रकट करता है, फिर भी हम उसका विकृत रूप ही देखना चाहते हैं, क्योंकि हमारी आंखें वर्तमान से धुंधली हो चुकी हैं। विशेष रूप से वर्तमान समय में, जब एक इतिहासकार को अपने ही मत के अनुयायियों से लड़ना पड़ता है, बजाय इसके कि वह अपने शोध के वास्तविक विषय पर ध्यान केंद्रित करे। 'इतिहास का लक्ष्य' जैसी बातें अहंकार से उपजी हैं और जो लोग इस प्रश्न का उत्तर देने का दावा करते हैं वे दुगने अहंकारी हैं। विज्ञान और प्रौद्योगिकी में हुई विशाल और तीव्र प्रगति ने दुनिया भर के समाजों को नया रूप दिया है, जो हर दिन छोटे और संकरे होते जा रहे हैं। नैतिकता, विचार, व्यवहार और आचरण के आधारों की पुनर्व्याख्या हो रही है। कई देश परमाणु बमों से लैस हैं, लोग

दूसरे ग्रहों पर बसने की संभावना तलाश रहे हैं... और हमारे प्रोफेसर शास्त्री अभी भी इतिहास के लक्ष्य के बारे में बात करते हैं।

आखिरी विचार पर वह हंस पड़ी।

मैं वह किताब नहीं लिख सकती जो पिताजी ने लिखने की योजना बनाई थी। यह एक अलग किताब होगी; यह मेरी किताब होगी। मैं उनकी बेटी हूँ, लेकिन फिर भी यह वही किताब नहीं होगी। विवरणों का चयन, व्याख्या, तर्क, भावनाएँ, अभिव्यक्ति —सब कुछ अनूठा होगा क्योंकि हम उन्हें अपने ज्ञान के अनुसार आकार देते हैं। इसके अलावा, हम दोनों में एक मूलभूत अंतर है। मुझमें उनके जैसी लगन नहीं है कि मैं निरंतर, विद्वतापूर्ण कार्य करूँ। उनका दिमाग व्यवस्थित था। वे घटनाओं, तथ्यों और लोगों का सावधानीपूर्वक विश्लेषण करते थे। जहाँ उनमें कल्पनाशीलता और रचनात्मकता की कमी थी, वहाँ मैं कहानियाँ गढ़ती हूँ... मैं कल्पना की उड़ान भर सकती हूँ और छवियों और रूपकों के माध्यम से प्रतीत होने वाले अर्थहीन प्रतीकों में भावनाएँ भर सकती हूँ। यही कारण है कि मैं एक कलाकार बनी और मैंने जीवन भर यही किया है और मुझे इसके अलावा कोई दूसरा तरीका नहीं पता... मेरी दुनिया भावनाओं की दुनिया है। और मैंने अपना जीवन इस प्रतिभा को एक ऐसे सामाजिक सुधार आंदोलन की सेवा में गिरवी रखकर बर्बाद कर दिया है जिसका अब मुझे कोई अर्थ नहीं रह गया है।

मैं संदर्भों और फुटनोटों से भरपूर इतिहास की कोई विद्वतापूर्ण रचना नहीं लिख सकता। ज़्यादा से ज़्यादा, मैं कथा साहित्य लिख सकता हूँ। या अगर मेरे पास पैसे हों, तो ऐसी कोई फ़िल्म बना सकता हूँ। लेकिन मुझे और तैयारी करनी होगी। मुझे और पढ़ना होगा, भारत के हर कोने की यात्रा करनी होगी, तस्वीरें खींचनी होंगी और सिर्फ़ इसी उद्देश्य से फील्डवर्क करना होगा।

और मैंने ताबड़तोड़ लिखना शुरू कर दिया...

मेरे भीतर क्रोध की आग भयंकर रूप से जल रही है। अगर यह शांत न हो तो मुझे चैन नहीं मिलता। जागते समय भी यह जलता रहता है और सोते समय भयानक सपनों का रूप ले लेता है। अगर सपना अचानक टूट जाए तो मैं जाग जाता हूँ और फिर सो नहीं पाता। मुझे क्या हो गया है? क्या मेरा मन बीमार है? मुझे सर्वज्ञानी हाजी हमदुल्लाह साहब से पूछना चाहिए। उन्हें प्राचीन काल से लेकर आज तक का संपूर्ण विश्व इतिहास ज़बान पर है। वे सब कुछ याद करके सुनाते हैं... अरब, मिस्र, सीरिया, इराक, तुर्की, फिलिस्तीन, खुरासान, ईरान, तुरान, अफगानिस्तान... अनगिनत देशों के किस्से, जिनके बारे में जानना मेरे लिए असंभव है। उनके जैसा कोई दूसरा विद्वान नहीं है। बादशाह औरंगजेब ने हमदुल्लाह साहब के महत्व को पहचाना और उन्हें अभिलेखागार का संरक्षक नियुक्त किया, जो एक कड़ी सुरक्षा वाले किले में सुरक्षित रखे गए हैं। लेकिन हमदुल्लाह साहब ने अपने आधिकारिक कर्तव्यों से परे जाकर भी कार्य किया। सूबेदार और जासूस हिंदुस्तान में फैले मुगल साम्राज्य के हर कोने से हर तरह की गुप्त जानकारी लाते थे। बादशाह हर रिपोर्ट की बारीकी से जांच करते थे, केवल वही जानकारी अलग रखते थे जिससे उनके साम्राज्य को कोई खतरा न हो और फिर उन्हें हमदुल्लाह साहब के पास भेजते थे, जो बदले में उन सभी को पढ़ते थे और विषयवार वर्गीकृत करते थे। हमदुल्लाह साहब मुझसे विशेष स्नेह रखते हैं। उनकी दया असीम है—मैं जब चाहूँ उनके कमरे में जा सकता हूँ और कोई पहरेदार मुझे रोकने की हिम्मत नहीं करता। हर बार जब मैं उनसे मिलता हूँ, तो देखता हूँ कि मुझे देखते ही उनकी आँखें कैसे चमक उठती हैं। लेकिन जलन कम नहीं होती। मुझे उनकी वे बातें याद हैं जो उन्होंने पिछली बार मुझसे मिलने पर कही थीं, 'जलन का मतलब आग है। आग का मतलब नरक है। इसलिए वास्तव में नरक का भय ही है जो तुम्हें तुम्हारी तीनों अवस्थाओं में सताता है—जब तुम जाग रहे हो, जब तुम सो रहे हो और जब तुम सपने देख रहे हो। और अगर नरक का भय तुम्हें सताता है, तो इसका मतलब है कि पैगंबर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की भरपूर कृपा अभी तक तुम पर पूरी तरह से नहीं हुई है। अपनी नमाज़ और अधिक भक्ति से अदा करो।' कुरान को और अधिक श्रद्धा से पढ़ें और इसे बार-बार पढ़ें। क्या आप अरबी पढ़ सकते हैं? अरे नहीं, मुझे पता है कि आप नहीं पढ़ सकते। और इसीलिए मुझे लगता है कि आप कुरान को पूरी तरह से समझ नहीं पा रहे हैं। जो कोई अरबी नहीं जानता, वह कुरान को पूरी तरह से समझने का दावा नहीं कर सकता... केवल उसका अर्थ समझना ही

नहीं... कुरान को पूरी तरह से समझने का अर्थ है उसके सार, उसकी भावना को समझना। देखिए, फारसी भले ही शाही भाषा हो, लेकिन अरबी अल्लाह की भाषा है, पैगंबर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की भाषा है। लेकिन मुझे लगता है कि आपकी समस्या कहीं अधिक मूलभूत है। आपके भीतर अभी भी आपकी मूल अज्ञानता, आपके हिंदू विश्वासों की कुछ जड़ें बची हुई हैं और जब तक आप उन्हें पूरी तरह से जलाकर राख नहीं कर देते, नरक की आग का डर आपको सताता रहेगा।

मैंने उनकी बात ध्यान से सुनी, उनके चेहरे को गौर से देखा, और उनके द्वारा बोले गए हर शब्द के साथ उनके प्रति मेरा सम्मान बढ़ता गया।

'हाजी साहब, मुझे पूरा विश्वास है कि आपकी बात बिल्कुल सही है। मैं आपको वे दृश्य बताऊंगा जो क्रोध से भर जाने पर मेरे मन में आते हैं। मुझे मंदिर, मंदिर की मीनारें, देवी-देवताओं की मूर्तियाँ, पुरोहितों द्वारा किए जाने वाले अनुष्ठान दिखाई देते हैं, प्रार्थनाओं की आवाज़ें सुनाई देती हैं और मेरे पुराने धर्म से जुड़ी कई अन्य बातें भी।'

'आप इसे अपना पूर्व धर्म क्यों कहते हैं? यदि आप इसे धर्म कहते हैं, तो इसका अर्थ है कि आप इसकी तुलना इस्लाम से कर रहे हैं, और इसका अर्थ है कि आप एकमात्र सच्चे धर्म, इस्लाम का अपमान कर रहे हैं! इन्हें अज्ञानतापूर्ण प्रथाएँ और अंधकारमय मान्यताएँ कहना ही उचित है।'

वह बिल्कुल सही थे। यही मेरे क्रोध का असली कारण है। मैं एक गुलाम हूँ। मुझे युद्ध में बंदी बना लिया गया था और मैंने अपनी जान बचाने के लिए इस्लाम धर्म अपना लिया था। धर्म परिवर्तन के बावजूद, मैं गुलाम बन गया और आज भी गुलाम ही हूँ, और सिर्फ़ गुलाम ही नहीं... मैं... मैं... गुलाम से भी बदतर हूँ... और मुझे यह स्वीकार करने में शर्म आती है कि मैं वास्तव में क्या हूँ। और मेरा पिछला धर्म ही मेरी वर्तमान स्थिति के लिए ज़िम्मेदार है। हमदुल्लाह साहब सही कहते हैं। यह एक कमज़ोर धर्म है। अगर यह शक्तिशाली होता, तो क्या यह इतनी आसानी से पराजित हो जाता? हमदुल्लाह साहब बहुत दयालु और धैर्यवान हैं। धर्म के बारे में बात करते समय वे कभी अपना आपा नहीं खोते। उन्होंने एक अन्य अवसर पर कितनी व्यवस्थित ढंग से समझाया: 'ख्वाजा जहाँ, यह सच है कि इस्लाम हिंदुस्तान में बाहर से आया। हज्जाज, ग़ज़नी, गोरी, मामुलक, खिलजी, तुगलक, सैयद, लोदी, मुगल... सूची बहुत लंबी है... जब इन सभी राजाओं ने हिंदुस्तान पर आक्रमण किया, तो आपके हिंदुओं ने क्या

किया?' वे मक्खियों की तरह मर गए... खैर, मैंने "आपके हिंदू" कहा था, लेकिन मैं गलत था—मेरा मतलब "हिंदू" कहना था क्योंकि अब आप हमारे अपने हैं। यह सच है कि वे सभी बाहर से आए और एक विशाल देश में, जहाँ जनशक्ति, सेना, संसाधन और धन प्रचुर मात्रा में थे, युद्ध छेड़ दिया। हिंदुओं ने सैकड़ों युद्धों में अपनी पूरी ताकत से उन्हें चुनौती दी, लेकिन वे एक-एक करके पराजित और बंदी बना लिए गए, लाखों हिंदुओं का नरसंहार हुआ और उनके राजाओं को इस्लाम के अधीन कर दिया गया। पूरे हिंदुस्तान में ऊँचे खड़े उनके विशाल पत्थर के मंदिर और उनकी सभी देवी-देवताओं की मूर्तियाँ मिट्टी में मिला दी गईं। क्यों? क्योंकि अज्ञानता की नींव पर टिका धर्म सच्चा धर्म नहीं होता। जैसे सूर्य उदय होते ही अंधकार को दूर कर देता है, वैसे ही उनकी सारी शक्ति, उनके देवता और उनके मंदिर इस्लाम की चमक के आगे जलकर राख हो गए। उनके उलेमा—वे लोग जो सिर मुंडवाकर घूमते हैं, बस बीच में कुछ बाल छोड़ देते हैं और माथे पर सिंदूर और केसरिया रंग की पतली पट्टियाँ बाँधते हैं—कहते हैं—"अंत में सत्य की ही जीत होती है..." उनकी भाषा में इसका क्या अर्थ है?

मेरे मुँह से अनायास ही संस्कृत का श्लोक निकल पड़ा, 'सत्यमेव जयते नानृतम्'।

'काफ़िर! काफ़िर! यह काफ़िरों की ज़बान है और इसे केवल काफ़िर ही बोल सकते हैं!' कुछ देर रुकने के बाद उन्होंने आगे कहा, 'खैर, वे काफ़िर उलेमा सही हैं। सत्य की ही जीत होती है। क्योंकि इस्लाम सत्य है, इसलिए यह विशाल हिंदुस्तान को जीत सकता है और यहाँ अपना शासन स्थापित कर सकता है। अब समझे?' उन्होंने मुस्कुराते हुए धीरे-धीरे अपनी चांदी जैसी दाढ़ी पर हाथ फेरा।

मुझे केवल हाजी हमदुल्लाह के इस्लाम के इतिहास के वर्णन से ही विश्वास नहीं हुआ था—बल्कि मेरे अपने अनुभव की सच्चाई की ठोस अभिव्यक्ति से भी। अपने राज्य को बचाने के लिए, आमेर के शक्तिशाली राजा ने अपनी बेटी का विवाह अकबर बादशाह से कर दिया और अकबर बादशाह के एक तरह से सेनापति बनने के लिए सहमत हो गए। फिर बादशाह ने इस पराक्रमी मानसिंह को वीर महाराणा प्रताप पर आक्रमण करने के लिए भेजा, जिन्होंने अपने राज्य उदयपुर को मुगल साम्राज्य का जागीरदार बनाने के इसी तरह के प्रस्ताव को ठुकरा दिया। मानसिंह ने स्वयं महाराणा प्रताप से मुलाकात की और उन्हें समझाने का प्रयास किया: अकबर अजेय था। उसने एक भी युद्ध नहीं हारा था और उसे हराने वाला शत्रु अभी पैदा नहीं हुआ था और न ही

कभी पैदा होगा। महाराणा प्रताप ने उनकी सलाह सुनी, उनका बहुत सम्मान किया, लेकिन अकबर के अधीन एक साधारण सेवक बनने से इनकार कर दिया। हल्दीघाटी के युद्ध में, महाराणा प्रताप बुरी तरह हार गए और वे आसपास के जंगलों में भाग गए, जहाँ वे आदिवासियों के साथ लगभग उन्हीं में से एक बनकर रहने लगे।

अकबर बादशाह का शासन हर जगह था... सिंध, मालवा और गुजरात का पूरा इलाका बहुत पहले से ही मुस्लिम राजाओं के अधीन था। इसके बावजूद, अरावली पर्वतमाला में छिपा छोटा सा देवगढ़ अब तक मुस्लिम राजाओं और सेनापतियों की नजरों से अछूता रहा था। घने जंगलों से ढकी पर्वत श्रृंखलाओं ने इसे छिपा रखा था। यह किसी राजमार्ग के पास नहीं था और न ही किसी अन्य किले की रक्षा के लिए रणनीतिक रूप से महत्वपूर्ण था। शायद यही कारण था कि मुस्लिम राजाओं और सेनापतियों को इसके अस्तित्व की जानकारी नहीं थी। जब तक कि औरंगजेब बादशाह ने मेरे परम आदरणीय पिता महाराजा जगवीर सिंह को हुकुम नहीं भेजा। यह देवगढ़ को आत्मसमर्पण करने और इस्लाम को एकमात्र सच्चा धर्म स्वीकार करने का 'निमंत्रण' था। जो अनकहा रह गया था, वह हमारे किले के बाहर घट रहा था। युद्ध में प्रशिक्षित विशालकाय घोड़ों पर सवार सैनिकों की भीड़ बार-बार प्रवेश द्वार पर प्रहार कर रही थी और तोपें चारों दिशाओं से हमारे किले की दीवारों पर गोले बरसा रही थीं। मेरे आदरणीय पिता एक कुशल कूटनीतिज्ञ थे, जो औरंगजेब बादशाह जैसे शासक को सूक्ष्मता से जवाब देना जानते थे। वे कहते थे कि वे बादशाह की कृपा के पात्र एक तुच्छ चींटी मात्र हैं। लेकिन एक सच्चे राजपूत योद्धा होने के बावजूद, उनके लिए भी सूक्ष्मता से जवाब देने के बारे में सोचना असंभव था, जब यह स्पष्ट था कि बादशाह उनसे अपने किले के द्वार खोलकर बिना किसी विरोध के आत्मसमर्पण करने को कह रहा था। मैंने बड़े आश्चर्य से देखा कि बादशाह की सेना, जो अब देवगढ़ के किले को चारों ओर से घेर रही थी, में अधिकतर हिंदू थे—हमारे अपने राजपूत किसान, जाट और मालवा। मुझे उनकी अज्ञानता पर आश्चर्य हुआ—वे मुस्लिम सेना को अपने ही एक साथी को हराने में मदद कर रहे थे। बादशाह के तलवारबाज घुड़सवार राजपूत थे। उनके सेनापति राजपूत थे। बाकी—कम से कम आधी सेना—अफगान मुस्लिम थे। मुझे बाद में पता चला कि इन अफगान योद्धाओं को यह सुनिश्चित करने के लिए भेजा गया था कि हिंदू घुड़सवार सेना की वफादारी वास्तव में बादशाह के प्रति ही रहे। पैदल सैनिकों को वास्तव में पता नहीं था कि वे यह लड़ाई

क्यों लड़ रहे हैं, लेकिन वे बेबस थे क्योंकि बादशाह के आदमियों ने उन्हें मवेशियों की तरह जबरदस्ती इकट्ठा कर लिया था और लड़ने के लिए विवश कर दिया था। हम बादशाह की विशाल और अंतहीन प्रतीत होने वाली सेना के सामने ज्यादा देर तक टिक नहीं सके। आखिर वह पूरे हिंदुस्तान का बादशाह था।

मेरे परम आदरणीय पिता ने अपने मंत्रियों, सेनापतियों और प्रमुख नागरिकों की तत्काल सभा बुलाई। उन्होंने दृढ़ और निर्णायक स्वर में कहा: "किले की पश्चिमी दीवार में दरार आ गई है। शाम तक यह पूरी तरह टूट जाएगी और उनके सैनिक अंदर घुस आएंगे। हमारे पास तीन विकल्प हैं। पहला यह कि हम दरवाजा खोल दें, अपनी सेना के साथ अंदर घुसें और उनमें से जितने हो सकें उतने को मार डालें और फिर उस निश्चित योद्धा मृत्यु को प्राप्त करें जो हमारा भाग्य होगा। दूसरा यह कि हम उनके अंदर आने तक प्रतीक्षा करें और फिर गौरवशाली मृत्यु को गले लगाने से पहले उन्हें अब तक की सबसे भयंकर लड़ाई दें। तीसरा यह कि हम दरवाजा खोल दें, घुटने टेक दें, आत्मसमर्पण कर दें और उनके धर्म को अपना लें और उस धर्म को धोखा देकर अपने जीवन को बचा लें जिसने हमें प्राचीन काल से सहारा दिया है। आप अपनी इच्छानुसार कोई भी विकल्प चुनने के लिए स्वतंत्र हैं, लेकिन निर्णय ऐसा होना चाहिए जिसका हम सभी पालन करें। हर कोई अपना रास्ता न चुने। इससे भ्रम और अनावश्यक मौतें होंगी। हम या तो साथ लड़ेंगे और मरेंगे या साथ जिएंगे या साथ आत्मसमर्पण करेंगे। हमारे पास विस्तृत चर्चा के लिए समय नहीं है। आइए जल्दी से निर्णय लें।"

सेनापति विजयेंद्र सिंह खड़े हुए और गरजते हुए बोले, 'महामहिम द्वारा बुलाए जाने पर ही हम इस बैठक का उद्देश्य समझ गए थे। हमने आपस में एक निर्णय ले लिया है। यदि महामहिम अनुमति दें तो...'

मेरे परम आदरणीय पिता ने उन्हें आगे बोलने का इशारा किया।

"...महिलाएं जलती हुई चिताओं में कूदकर सामूहिक जौहर करेंगी। पुरुष नंगी तलवारें लिए मुख्य द्वार खोल देंगे और "हर हर महादेव" के गर्जनापूर्ण युद्धघोष के साथ, वीरों के योग्य मृत्यु को गले लगाने से पहले, शत्रुओं के जितने संभव हो उतने सिर काट डालेंगे!"

क्या सभी महिलाएं जौहर करने के लिए सहमत हो गई हैं?

महारानी जी ने अपनी सहमति दे दी है। हम जानते हैं कि शत्रु युद्ध में पकड़ी गई महिलाओं के साथ क्या करेगा। वे अपने पद के अनुसार महिलाओं का इस्तेमाल करेंगे—उनके उच्च पदस्थ सेनापति और कमांडर हमारी राजसी महिलाओं का इस्तेमाल करेंगे और उनके सैनिक हमारी साधारण महिलाओं को ले जाएंगे। अंततः हमारी सभी महिलाएं उनकी दासी, नौकरानी और वेश्या बन जाएंगी। हमारी महिलाएं अपमानित होने के बजाय मृत्यु को गले लगाने को तैयार हैं। हमारे पुरुष, चाहे वे आत्मसमर्पण करें या पकड़े जाएं, उनका भी यही हाल होगा—उन्हें शत्रु के धर्म में परिवर्तित कर दिया जाएगा और वे अपना शेष जीवन या तो दास के रूप में या सैनिकों के रूप में व्यतीत करेंगे। कई लोगों को मवेशियों की तरह नीलाम करने के लिए ले जाया जाएगा। वहां से वे खरीदने वाले के पीछे-पीछे जाएंगे और जीवन भर के लिए उसके गुलाम बन जाएंगे। मैंने सुना है कि वे दूर-दराज के स्थानों की यात्रा करते हैं और कुछ तो हिंदू कुश पर्वतमाला को पार करके और भी दूर देशों में चले जाते हैं। कभी-कभी उन्हें उन देशों के दास बाजारों में फिर से बेच दिया जाता है। महारानी जी, हमारे लिए युद्ध करना और मरना कहीं अधिक बेहतर है। इस बात से सभी सहमत हैं।

अंततः एक निर्णय लिया गया: हम आक्रमण नहीं करेंगे। हम किले के मुख्य द्वार खोल देंगे ताकि लोग अंदर आ सकें और रणनीतिक स्थानों से उनके सिर काट देंगे। प्रत्येक रणनीतिक स्थान पर एक स्वतंत्र कमांडर अपने विशेष दल के साथ तैनात होगा, जो अपने निर्णय लेने के लिए स्वतंत्र होगा। हम जानते थे कि इससे हमें जीत तो नहीं मिलेगी, लेकिन हमारे पास यथासंभव अधिक से अधिक लोगों को मारने का अच्छा मौका होगा। हम महिलाओं के जौहर करने के बाद मुख्य द्वार खोलेंगे। मेरी पूज्य माता, मेरी बड़ी बहन, मेरी पत्नी, राजपरिवार की सभी महिलाएं—किले की सभी महिलाएं जौहर के लिए तैयार हो रही थीं। किले के अंदर पर्याप्त मात्रा में सूखी लकड़ी का भंडार था।

फिर युद्धकालीन जिम्मेदारियाँ प्रत्येक को सौंपी गईं। मुझे हमारे राज्य के प्रमुख देवता, भगवान विष्णु के मंदिर की रक्षा का जिम्मा सौंपा गया। मेरे आदरणीय पिता महल की रक्षा करते थे। लेकिन मेरी माता, बहन और मेरी नवविवाहित दुल्हन राजकुमारी श्यामला देवी को चिता में कूदते हुए देखकर मेरा रक्त खौल उठा... मेरी श्यामला देवी, जो पंद्रह वर्ष की एक युवती की मासूमियत से भरी थीं। मुझे इन सभी

महिलाओं का संरक्षक होना था। एक राजकुमार राजा का प्रतिनिधि होता है, एक पिता तुल्य व्यक्ति जो सबकी जान की रक्षा के लिए जिम्मेदार होता है। मेरा क्रोध पीड़ा में बदल गया जब मुझे एहसास हुआ कि मैं वास्तव में उनकी रक्षा नहीं कर रहा था, बल्कि केवल राजा के आदेश का पालन कर रहा था और उन महिलाओं को स्वेच्छा से स्वयं को आग में जलाते हुए देख रहा था। यह सब देखने के बाद, मुझे आगे बढ़कर युद्ध करना पड़ा और अंततः शत्रु के हाथों मरकर उन महिलाओं के साथ शामिल होना पड़ा। इससे मुझे एक हिजड़े जैसा महसूस हुआ।

यह शत्रु दृढ़ निश्चयी और असीम शक्तिशाली था—वह हमें अपनी मर्ज़ी से अपने वश में कर लेता, या तो हमें आत्मसमर्पण करने के लिए मजबूर करके या हमारा पूर्ण विनाश सुनिश्चित करके। हमारा कोई सहयोगी नहीं था। कोई हमारी सहायता के लिए नहीं आता। और फिर मुझे याद आया कि हमने पिछले तीन महीनों में क्या किया था: हम बैठे रहे और मानो उनके आने की प्रतीक्षा कर रहे थे। यह निष्क्रियता अब एक प्रकार के नपुंसक व्यवहार के समान प्रतीत हो रही थी। लेकिन फिर, मैंने यह भी सुना था कि हमारे जैसे हर किले और छोटे राज्य ने ऐसी ही परिस्थितियों में कैसी प्रतिक्रिया दी थी। वही निष्क्रियता। मृत्यु की वही असहाय आशंका, जैसे बलि के फंदे पर खड़ी बकरियाँ।

मैंने महिलाओं के कमरे में आखिरी बार जाने के विचार पर मंथन किया। अपनी दिव्य माँ के चरणों में अंतिम बार प्रणाम करने के लिए, अपनी बड़ी बहन को अंतिम प्रणाम करने के लिए, अपनी दादी से अंतिम आशीर्वाद लेने के लिए... अपनी प्यारी दुल्हन को अंतिम बार गले लगाने के लिए, एक बार फिर उसकी मिठास का अनुभव करने के लिए... लेकिन यह विचार इतना हास्यास्पद और बेतुका लगा कि मुझे एक उत्तराधिकारी के लिए अनुचित भावुकता से अभिभूत होने पर थोड़ी शर्म महसूस हुई। इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि मैं सिर्फ सत्रह साल का था। मुझे अपने बचपन से मिले सैन्य प्रशिक्षण पर गर्व था। क्या अभिमन्यु सोलह साल का नहीं था जब उसने अनुभवी योद्धाओं से युद्ध किया और एक वीर की मृत्यु प्राप्त की? यदि मैं इस युद्ध में मरता, तो मैं अभिमन्यु की मृत्यु मरना चाहता था।

मैंने विष्णु मंदिर का एक चक्कर लगाया और एक ठोस रक्षा योजना बनाई। तीन सौ पैदल सैनिक मंदिर को चारों ओर से घेर लेंगे। तलवारें ताने और तैयार खड़े सौ घुड़सवार मंदिर परिसर के अंदर और बाहर रणनीतिक स्थानों पर छुपकर प्रतीक्षा

करेंगे। मंदिर परिसर के अंदर, सौ और पैदल सैनिक विशाल स्तंभों और विभिन्न दरवाजों के पीछे छिपकर तैनात रहेंगे। शेष सेना गर्भगृह के अंदर प्रतीक्षा करेगी। मंदिर का हर इंच सुरक्षित था। हमलावर पहले पैदल सैनिकों पर हमला करेंगे, लेकिन मेरे घुड़सवार योद्धा पीछे से उन पर बेरहमी से घात लगाकर हमला करेंगे।

कुछ ही मिनटों बाद, मैंने महल की दिशा से हल्के भूरे धुएँ की लकीरें उठती देखीं —जौहर शुरू हो चुका था। लकीरें धीरे-धीरे घनी और गहरी होती गईं और मुझे छिटपुट चिंगारियाँ उठती हुई दिखाई देने लगीं, साथ ही 'हर हर महादेव' की तीखी आवाज़ें भी गूँज उठीं, जो पूरे आकाश को चीरती हुई वीरता और पीड़ा की चीखों की एक निरंतर धारा में बदल गईं, इतनी तीव्र कि दर्द और बलिदान के बीच अंतर करना असंभव हो गया।

मेरे मन में क्रम पहले से ही तय था। सबसे पहले चिता में प्रवेश करने वाली रानी, मेरी प्रिय माता, थीं, उनके बाद शाही परिवार की अन्य महिलाएं। इसके बाद किले में मौजूद बाकी महिलाएं भी उन्हीं के पीछे-पीछे चलीं। मैं आकाश से अपनी निगाहें नहीं हटा पा रही थी, जो अब एक घने, काले धुएं के गुबार में तब्दील हो चुका था, और जो ऊपर की ओर घूमते हुए मेरी दिव्य माता, मेरी प्यारी युवा पत्नी, मेरी बहन और मेरी दादी को अपने साथ ले जा रहा था। मेरा पेट दुखने लगा। और इसके साथ ही मुझे यह एहसास हुआ कि अब पीछे मुड़ने का कोई रास्ता नहीं था। हमारी अधिकांश महिलाएं या तो मर चुकी थीं या मरणासन्न थीं। भले ही हम जीत जाएं, जीवन जीने का कोई अर्थ नहीं रह गया था। विजय भी मृत्यु थी। अजीब बात है, इस आखिरी विचार ने मुझे अंदर तक झकझोर दिया। सबको मार डालो!

अचानक मुख्य द्वार की ओर से 'हर हर महादेव' की गूँज सुनाई देने लगी। आह! उन्होंने द्वार खोल दिए! उतनी ही अचानक सन्नाटा छा गया। और फिर युद्ध की गूँज से मैं लगभग काँप उठा। दुश्मन अंदर आ गया था! मैंने अपनी मुट्ठी हथेली पर पटकी। हालाँकि मेरी सहज प्रवृत्ति उन गंदे कुत्तों पर अपनी शक्ति का प्रदर्शन करने के लिए बेताब थी, मैं अपनी जगह पर स्थिर रहा। मैंने मन ही मन हिसाब लगाना शुरू किया। उनका पहला निशाना निश्चित रूप से मुख्य महल था और फिर यह मंदिर। मैं अपने भरोसेमंद घोड़े, विजया पर सवार हुआ, जिसका नाम विजय का पर्याय था। मैंने अपनी तलवार म्यान से निकाली, उसके सोने से जड़े हैंडल को कसकर पकड़ा और उसकी घातक, चमकती लंबाई का निरीक्षण किया। रुको। वे बहुत आसानी से अपनी सेना

को विभाजित कर हमारे किले के अलग-अलग हिस्सों पर कब्ज़ा करने के लिए टुकड़ियाँ भेज सकते हैं। मैं घंटों तक इंतज़ार करता रहा, इस बात पर गर्व महसूस कर रहा था कि महल की ओर से लगातार चीखें आने के बावजूद इतनी देर तक तलवार पकड़े रहने से मेरे हाथों में दर्द नहीं हुआ। युद्ध पूरे ज़ोरों पर था। मुझे फिर से गर्व महसूस हुआ। मेरे वीर पिता, एक असाधारण योद्धा, इतनी आसानी से हार नहीं मानेंगे। मैंने उन्हें अभ्यास सत्रों में देखा था। उनकी हीरे जड़ी तलवार का एक ही वार प्रतिद्वंद्वी को हार मानने पर मजबूर कर देता था।

मुझे बाईं ओर घोड़ों के खुरों की आहट सुनाई दी और मैंने मुड़कर देखा तो हमारे एक दूत ने अपना घोड़ा मेरे पास रोककर यह खबर दी। 'राजकुमार की जय हो! मैं शुभ समाचार लेकर आया हूँ। परम आदरणीय महाराजा जगवीर सिंह ने शत्रु को करारा युद्ध दिया और वीरों का स्वर्ग प्राप्त किया। शत्रु ने महल पर कब्जा कर लिया है। जौहर संपन्न हुआ। सभी स्त्रियाँ स्वर्ग प्राप्त कर चुकी हैं।'

मैं मन ही मन कांप उठा और देखा कि उसने मेरे कांपते होंठों को देख लिया है। अब मैं क्या करूँ? मैं धीरे से मुड़ा और उस विष्णु मंदिर की ओर देखा जिसकी रक्षा करने की मैंने प्राणदान करने की शपथ ली थी। सब कुछ निराशाजनक था। भगवान विष्णु, ब्रह्मांड के रक्षक और पालनहार, ने हमें त्याग दिया था। मैं भगवान विष्णु की मूर्ति को पूरी तरह देख सकता था। वे बिल्कुल भी नहीं बदले थे। गर्भगृह से वे अभी भी उसी शांत मुस्कान के साथ मेरा अभिवादन कर रहे थे। चार भुजाएँ—प्रत्येक हाथ में एक शंख, चक्र, गदा और कमल। अपनी शांत मुस्कान के साथ भगवान विष्णु अपने दो अन्य समकक्षों, ब्रह्मांड के निर्माता ब्रह्मा और संहारक शिव से बिल्कुल भिन्न थे।

फिर मंदिर के पीछे से घोड़ों के खुरों की तेज़ आवाज़ मेरे कानों में गूंज उठी। मैं तेज़ी से घूमा और मेरे मुँह से एक विस्मय निकल गया जब मैंने पहले उन विशालकाय अरबी घोड़ों को देखा, फिर उन खूंखार दिखने वाले अफ़गान योद्धाओं को देखा जो उन विशाल घोड़ों पर सवार होकर मुझे घूर रहे थे। इन युद्ध के जानवरों से अदम्य शक्ति टपक रही थी। मैं एक पल के लिए झिझका, फिर 'हर हर महादेव' की गर्जना करते हुए आगे बढ़ा। हमने भयंकर लड़ाई लड़ी, लेकिन वे विजयी हुए क्योंकि उनकी युद्ध तकनीक कहीं बेहतर थी, उनकी रणनीति सटीक थी और संख्या में अधिक होने का स्पष्ट लाभ उनके पास था।

उनकी ओर से, पैदल सैनिकों के बजाय उनके घुड़सवारों ने हम पर पहले हमला किया, जिससे उन्हें सोची-समझी रणनीति के तहत शुरुआती बढ़त मिल गई। मुझे नहीं पता कि युवराज को ज़िंदा पकड़ने की यह कोई सोची-समझी योजना थी या यह एक दुर्घटना थी, लेकिन मैं अपने साथियों से पूरी तरह अलग-थलग पड़ गया था। मेरी निजी लड़ाई शुरू होने से पहले ही खत्म हो गई थी—किसी ने मेरे भरोसेमंद विजया का अगला पैर काट दिया, जिससे मैं ज़मीन पर गिर पड़ा। मैं तेज़ी से उठा, म्यान से अपनी कटार निकाली, लेकिन इससे पहले कि मैं उसे अपने पेट में घोंप पाता, मैंने महसूस किया कि कई हाथों ने मुझे पीछे से ज़ोर से पकड़ लिया और मेरी कटार छीन ली। उन्होंने मेरी सोने की मूठ वाली तलवार, मेरा हार और सिर का मुकुट देख लिया —जो मुझे राजकुमार के रूप में पहचानने के लिए काफी था—और मुझे मारने के बजाय बंदी बना लिया। प्रतिरोध करना व्यर्थ था। जब उन्हें इसका एहसास हुआ तो उन्होंने मुझे छोड़ दिया और एक तगड़े, भालू जैसे आदमी ने मेरी पूरी तलाशी ली और मेरी तलवार निकाल ली। मैं पूरी तरह निहत्था हो गया था।

अचानक दाईं ओर से कान फाड़ देने वाली आवाज़ आई और मैं उस तरफ मुड़ा। वे गर्भगृह में प्रवेश कर चुके थे। मैं अंदर हो रहे अंधाधुंध नरसंहार की कल्पना कर सकता था। मुझे यकीन था कि हमारे आदमियों ने उनके कुछ सैनिकों को मार गिराया होगा, लेकिन... मुझे समय का एहसास नहीं रहा। मैं जड़वत खड़ा रहा, उन चीखों को सुनता रहा जो कभी रुकती नहीं लग रही थीं। मुझे नहीं पता कितना समय बीत गया, जब मैंने लाशों और खून से लथपथ शरीरों को घसीटकर मंदिर के सामने ढेर होते देखा। कुछ अभी भी जीवित थे, जो अपने ऊपर पड़े अन्य शरीरों के भार के नीचे छटपटा रहे थे। हमारे सभी सैनिक मारे जा चुके थे। लेकिन वे अपने दुश्मनों के लगभग तीस सैनिकों को पकड़ने में कामयाब रहे थे।

अचानक एक भयानक आवाज़ आई। करीब सात-आठ दुश्मन योद्धा एक विशाल पत्थर को बड़ी तेज़ी से मेरी ओर घसीट रहे थे। वे लगभग एक जैसे दिखते थे—एक जैसी मज़बूत कद-काठी, घनी दाढ़ी, ताकतवर सीना और एक जैसी पैंट। उन्होंने उसे मेरे मृत सैनिकों के ढेर के पास लगभग खड़ी स्थिति में रख दिया। अचानक, डर के मारे मुझे एहसास हुआ कि वह क्या था—देवगढ़ राज्य के देवता और रक्षक भगवान विष्णु की मूर्ति। विष्णु, वह देवता जिन्होंने पूरे विश्व में स्थिरता और समृद्धि सुनिश्चित की। मुझे उल्टी आने लगी। अचानक मुझे अपने बाएं कंधे पर एक हाथ महसूस हुआ,

जिसने मुझे ज़ोर से धक्का दिया। वह एजाज़ अहमद खान था—तब मैं उसका नाम नहीं जानता था—उस टुकड़ी का नेता जिसने मुझे बंदी बनाया था। वह एक मनसबदार था, हज़ार सैनिकों की एक टुकड़ी का कमांडर, यह बात भी मुझे बाद में पता चली। वह एक हट्टा-कट्टा, गठीला आदमी था, जिसका सीना बहुत चौड़ा था, उसकी क्रूर आँखों में नफ़रत और खून की प्यास भरी थी और उसकी भौहें बहुत घनी थीं। जैसे ही उसने मुझे धक्का दिया, मैंने उसके खाली हाथ में पकड़ी विशाल तलवार देखी। वह इतनी शक्तिशाली थी कि एक ही वार में जंगली भैंसे का सिर काट सकती थी। मैं केवल सत्रह वर्ष का था, लेकिन मुझमें इतनी ताकत थी कि मैं इस चालीस वर्षीय अनुभवी योद्धा की पकड़ से खुद को छुड़ा सकूं। लेकिन यह जानकर कि मैं पहले से ही चार सशस्त्र सैनिकों से घिरा एक कैदी था, मेरा साहस पस्त हो गया। उसने मुझे मूर्ति के पास घसीटा, मेरा दाहिना हाथ कसकर पकड़ रखा था। मूर्ति के सामने खड़े होकर, वह ज़ोर से हँसा, तभी उसके एक साथी ने उसे एक विशाल लोहे की छड़ थमा दी। उसने मुझे अर्थपूर्ण दृष्टि से देखा, लोहे की छड़ को हवा में ऊँचा उठाया और हमारे देवता पर ज़ोरदार प्रहार किया। मूर्ति की नाक तुरंत चकनाचूर हो गई और मैं इस अपवित्रता को देखकर कांप उठा। फिर उसने अपना ध्यान विशाल भुजाओं की ओर मोड़ा और उन्हें तब तक पीटता रहा जब तक कि वे शरीर से टूटकर अलग नहीं हो गईं। जैसे कोई पागल हो गया हो, उसने विशाल पत्थर के सीने पर कई बार पैर पटके और फिर उस पर विजयी मुद्रा में खड़ा हो गया, जबकि उसके साथी नरक जैसी खुशी से जयकार कर रहे थे।

उस ऊँचाई से मुझे नीचे देखते हुए, उसने मुगल सेना में हर किसी द्वारा इस्तेमाल की जाने वाली उस अजीब हिंदुस्तानी भाषा में बात की। उसने ताना मारते हुए कहा, 'तुमने खुद ही यह मुसीबत मोल ली है, जब हमने तुम्हारे मूर्ख पिता को इस्लाम का निमंत्रण भेजा था, तब तुमने इस्लाम स्वीकार नहीं किया! अगर तुमने युद्ध शुरू होने से पहले दयालु इस्लाम स्वीकार कर लिया होता, तो तुम्हारे लोग नहीं मरते। तुम अब भी जीवित और स्वतंत्र होते। क्या तुम्हें अब अपना अंजाम पता है? तुम एक कैदी हो! अगर तुम इस्लाम स्वीकार कर लेते हो, तो तुम जीवित रहोगे, और तुम न केवल मुसलमान बनोगे, बल्कि गुलाम भी बनोगे! गुलाम, मूर्ख! लेकिन अगर तुमने इनकार किया... लो!' उसने अपनी तलवार की ओर इशारा करते हुए दहाड़ा, 'एक वार!' और वार करने के लिए तैयार होकर उसे एक ही झटके में हवा में ऊँचा उठा लिया।

उस समय मुझे पता नहीं था कि वह इशारा महज़ एक धमकी थी। मेरा पालन-पोषण क्षत्रिय परंपरा में हुआ था—एक गौरवशाली योद्धा राजकुमार जिसे मृत्यु से कभी न डरना सिखाया गया था, बल्कि युद्ध में मृत्यु का स्वागत करना सिखाया गया था। मैं युद्ध में इस्तेमाल होने वाले लगभग हर तरह के हथियार—तलवार, कृपाण, भाला, चाकू—को कुशलता से चला सकता था और उन्हें रणनीतिक और क्रूर तरीके से इस्तेमाल कर सकता था। मेरे हर शिक्षक ने मुझे यही सिखाया था: हमेशा याद रखो कि तुम्हारा अगला कदम मृत्यु हो सकता है। मैं निडर और गौरवान्वित था। लेकिन मुझे आज भी नहीं पता कि वे शब्द अचानक मेरे होंठों से कैसे निकल गए, 'मैं इस्लाम स्वीकार करता हूँ!'

आज तक मैं सोचता रहा हूँ कि किस अवचेतन प्रेरणा ने मुझे ऐसा कहने पर मजबूर किया। और एक विचार बार-बार मुझे परेशान करता है। जब जगत के रक्षक और संरक्षक, शांत मुख वाले भगवान विष्णु... ओह, हीरे जड़े आभूषणों और सुंदर नक्काशीदार पीले रेशमी वस्त्रों में वे कितने भव्य लग रहे थे... जगत के इस रक्षक, जिनकी हर कोई पूजा करता है, को उनके अपने मंदिर के गर्भगृह से बेरहमी से उखाड़कर, घसीटकर खून से लथपथ लाशों के ढेर के पास फेंक दिया गया, उनका शरीर विकृत कर दिया गया। चप्पलों से उनकी छाती पर रौंदा गया—फिर भी कुछ नहीं हुआ! वे बस असहाय होकर उनके सामने पड़े रहे, अपमान सहते रहे? और मैं तो बस एक नश्वर मनुष्य था। उनके लिए अपना प्राण त्यागने का क्या अर्थ था?

क्या यह तर्क मेरे अवचेतन मन की गहरी, अंधेरी परतों में काम कर गया? या क्या मैंने, क्षत्रिय धर्म में सख्ती से प्रशिक्षित राजकुमार ने, निश्चित मृत्यु की वास्तविकता का सामना करते हुए, केवल इसलिए जीवन चुना क्योंकि मैंने उस क्षण अपनी जीवित रहने की प्रवृत्ति का पालन किया? या क्या मैं मूल रूप से एक कायर था, क्षत्रिय जन्म लेने के योग्य नहीं था? जो भी हो, उस निर्णायक क्षण में मैंने ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर, सृष्टि, पालन और संहार के देवताओं के धर्म को त्याग दिया और अपने पूर्वजों को अस्वीकार कर दिया। तलवार का सामना करते हुए केवल एक ही बात स्पष्ट थी—मुझे सहज रूप से पता था कि इस्लाम एक अत्यंत शक्तिशाली धर्म है। और तब से, मैं आश्वस्त हूँ कि शक्ति ही धर्म है और जो मजबूत नहीं है उसे धर्म नहीं कहा जा सकता।

शाम तक, किले में बचे हुए कुछ लोग इस्लाम में परिवर्तित हो चुके थे। हमारे विजेताओं ने पुरुषों और बच्चों को अलग-अलग इकट्ठा किया, और जौहर न करने

वाली महिलाओं को उनसे दूर कर दिया। मुझे बाद में पता चला कि इन महिलाओं को दिल्ली जैसी दूर-दराज की जगहों पर ले जाया गया और वहाँ से अन्य स्थानों पर। लेकिन मुझे पुरुषों और बच्चों के साथ नहीं ले जाया गया। मुझे किले से लगभग तीन से चार मील दूर स्थित एजाज अहमद खान के शिविर, मनसबदार में ले जाया गया। आश्चर्य की बात यह थी कि मुझे घोड़े पर बिठाकर ले जाया गया... शायद इसलिए कि मैं राजकुमार था? या यह रियायत इसलिए थी क्योंकि राजकुमार होने के नाते मैंने उठी हुई तलवार को देखते ही तुरंत इस्लाम स्वीकार कर लिया था? फिर मुझे भव्य स्नान कराया गया, जिसके बाद मुझे उत्तम इत्र लगाया गया। इसके बाद एक भव्य भोज परोसा गया। मैं खाने के लिए तैयार नहीं था। मैंने मना कर दिया। भला कौन अपने पूरे संसार को कत्ल होते देखने के बाद खाने के लिए तैयार हो सकता है?

'मनसबदार का आदेश है! आपको खाना खाना होगा। वह थोड़ी देर में आ जाएँगे,' मेरे पूरे लाड़-प्यार की रस्म की देखरेख करने वाले सिपाही ने कहा। उसकी मुस्कान में मुझे शरारत की झलक दिखी, पर मैं उसका मतलब नहीं समझ पाई। मैंने जैसे-तैसे खाना खाया। कुछ देर बाद मुझे नींद आने लगी। मैं बिस्तर पर बैठ गई और सो गई।

मेरे पूरे शरीर में हल्की हलचल से मैं जाग उठी। ये मनसबदार के हाथ थे। मैंने चारों ओर देखा। तंबू में तेल के दीयों की हल्की रोशनी के अलावा अंधेरा था। मनसबदार मेरे बहुत करीब बैठा था, उसकी जांघें मेरी जांघों से छू रही थीं। चौंककर मैं खड़ी हुई और फिर धीरे से बैठ गई, डर से कांप रही थी। मेरी स्थिति की भयावहता मेरे सामने प्रकट हो गई।

'डरो मत,' उसने धीरे से मेरे बालों में उंगलियाँ फेरते हुए कहा। 'तुमने इस्लाम कबूल करके अपनी जान बचाई। यह सही काम था और मुझे यह अच्छा लगा। लेकिन मैं तुम्हें एक राज़ बताता हूँ। हर कोई जो इस्लाम कबूल करके अपनी जान बचाता है, उसे मनसबदार के तकिये पर सोने का सौभाग्य नहीं मिलता, उसका शरीर तुम्हारे शरीर से स्पर्श करता हुआ। काश, मुझे फ़ारसी में कविताएँ लिखने की क्षमता होती...' उसने आह भरी, 'मैं तुम्हारी कोमल सुंदरता पर प्रेम गीत रचता। तुम कितनी सुंदर हो! और क्या जवानी है! खिलने की कगार पर खड़ी कली जैसी! सोलह? सत्रह? तुम्हारी उम्र कितनी है? ओह! लेकिन मैं सबसे भाग्यशाली हूँ, क्योंकि मुझे तुम्हारे सुंदर चेहरे का आनंद लेने का सौभाग्य मिला है! क्या तुमने देखा है कि यह पतले बालों से कैसे सजा है?' उसने अपने हाथ मेरे हाथों में दबाए और फुसफुसाते हुए कहा, 'तुम मेरी हो,

तुम हमेशा मेरी रहोगी! मैं तुम्हें कभी नहीं छोड़ूंगा।' मैं कसम खाता हूँ!' और फिर उसने मेरे गले में एक भारी सोने का हार पहना दिया और फुसफुसाते हुए फिर कहा, 'यह तुम्हारा है। अब आओ। मैंने बहुत इंतज़ार किया है,' और खुद को मुझ पर थोप दिया। मैं अपने अंदर उमड़ रही घृणा और भय को छिपा नहीं सकी। वह बस मुस्कुराया। मैंने खुद को उसकी बाहों से छुड़ा लिया। इससे उसे बहुत मज़ा आया। मैं चिल्लाई, मुक्के मारे, लात मारी और उस अपरिहार्य चीज़ को रोकने की कोशिश की, जैसे कोई लड़की अपनी पवित्रता की रक्षा के लिए लड़ती है, लेकिन उसे मेरे हिंसक विरोध में आनंद आता हुआ प्रतीत हुआ। वह कभी क्रोधित नहीं होता था—एक कुशल कलाकार जो जानता था कि क्रोध प्रेम के खेल की लय को बिगाड़ देता है। उसके लिए, मेरा विरोध एक परिपक्व युवती के समान था जो वासना से ग्रस्त है लेकिन इनकार के बहाने उसे छुपाती है। मेरा मन अतीत में चला गया और मैंने अपनी प्यारी श्यामला के साथ बिताए कोमल पलों को फिर से महसूस किया। जब उसने मुझसे शादी की तब वह चौदह साल की थी और मैं सोलह साल का था। श्यामला... उसका शरीर और मन दोनों कोमल, सुंदर और भावनाओं से भरे हुए थे। उसके साथ बिताया पूरा साल स्वर्ग जैसा था। शादी की रात ही उसने बड़ी आसानी से मुझे अपने वश में कर लिया, बस इन शब्दों से: 'जब हम अकेले हों तो मुझे देवी मत कहना। मुझे श्यामला कहो। मैं हमेशा तुम्हारी हूँ।' वह बहुत शर्मीली थी और कामुकता में उतनी माहिर नहीं थी। लेकिन उसने मेरे सामने अपने सारे भाव खोल दिए।

लेकिन मनसबदार के साथ मेरा यह अनुभव विकृत और बिल्कुल नया था। उसके साथ... वह... वह वैसी स्त्री थी जैसी प्रकृति ने उसे बनाया था। लेकिन अब मैं मनसबदार की स्त्री कैसे बनूँ? एक साल से ज़्यादा समय से मैंने स्त्री शरीर के कोमल उतार-चढ़ाव और आनंद की उन ऊँचाइयों का अनुभव किया था जो केवल एक स्त्री का शरीर ही दे सकता है... क्या यह घिनौना नहीं है कि एक पुरुष स्त्री बनकर इस घिनौने कृत्य में शामिल हो? मुझे ऐसा लगा जैसे मेरा घोर अपमान हुआ हो।

लेकिन वासना में डूबा हुआ आदमी कब से दूसरों की भावनाओं के बारे में सोचने लगा है? मुझे उल्टी आने जैसा महसूस हुआ।

~

एजाज अहमद सुबह बहुत जल्दी अपने शिविर से निकल जाते थे। वे किले में जाकर देवगढ़ के राजनीतिक और प्रशासनिक मामलों पर नियंत्रण स्थापित करने के कठिन

काम की व्यक्तिगत रूप से निगरानी करते थे। उनका अनुमान था कि इस कार्य को पूरा करने में दो और सप्ताह लगेंगे। यह काम नीरस था, लेकिन बेहद संतोषजनक भी। उन्हें पूर्व राजपरिवार, प्रमुख दरबारी और धनी व्यापारियों से संबंधित सोना, हीरे और चांदी जब्त करने थे, साथ ही राजसी मुहरों और दस्तावेजों का निरीक्षण करना था। प्रतिदिन वे अपने आदमियों को धनी नागरिकों के घरों पर छापा मारकर उनकी संपत्ति लूटने के लिए भेजते थे। साथ ही, आदमियों की एक छोटी सी टुकड़ी हर घंटे आने वाली इस संपत्ति की गिनती में लगी रहती थी। आदमियों का एक और समूह पहले से ही हिसाब किए गए लूटे गए माल को बड़े-बड़े लकड़ी के बक्सों में भरता था। वे देर शाम लौटते थे। भोजन के बाद, वे मेरे तंबू में आते और मेरी कठिन परीक्षा शुरू हो जाती। काम खत्म होने के बाद, वे लेट जाते और लगभग तुरंत ही खर्राटे लेने लगते।

उनके साथ आए मुल्ला साहब ने कहा कि दो सप्ताह का समय उस अधूरे काम को पूरा करने के लिए पर्याप्त है—वह रस्म जिससे मेरा इस्लाम में धर्मांतरण पूरा हो जाएगा। मैं जानता था कि वह क्या है और हर बार जब मैं मुल्ला साहब को मनसबदार को इसे पूरा करने की तात्कालिकता याद दिलाते सुनता, तो मेरा डर फिर से बढ़ जाता। लेकिन बाद में मुझे एहसास हुआ कि मेरा डर निराधार था—दर्द मेरे लिए कोई नई बात नहीं थी, मैं युद्ध में प्रशिक्षित था और जानता था कि सबसे तीव्र दर्द को कैसे सहन किया जाए। यह रस्म तुलनात्मक रूप से दर्द रहित थी, लेकिन डर मुझे सताता रहा।

'डरो मत। दुनिया भर के सभी मुस्लिम पुरुषों का यह खतना होता है। यह बहुत अच्छा है। और तुम्हारे लिए यह और भी बेहतर होगा क्योंकि यह इस बात का अंतिम, अमिट प्रमाण है कि तुम हममें से एक हो! सोचो, अगर तुम इस रस्म से नहीं गुज़रे तो तुम्हें कितनी तकलीफ़ होगी। हर कदम पर तुम्हारी जाँच की जाएगी। इसलिए... हिम्मत रखो,' मनसबदार ने मुझे समझाया। और इस तरह, उस शुक्रवार को ज़ुहर की नमाज़ के बाद, मेरा खतना हुआ। खतने से मुझे थोड़ा दर्द हुआ, लेकिन मनसबदार ने मुझे अफ़ीम दी और दर्द कम करने के लिए कुछ दिनों तक रोज़ चबाने को कहा। मैंने वैसा ही किया। कुछ ही दिनों में, मुझे दूसरे मुस्लिम पुरुषों के साथ एक अजीब सा अपनापन महसूस होने लगा। मैं उन्हें भाई मानने लगा। हम सब एक ही निशान साझा करते थे। हम एक ही दीन के थे, हम एक ही जीवनशैली का अक्षरशः पालन करते थे। हम धरती पर सबसे ताकतवर नस्ल के थे। हम सब पवित्र इस्लाम को दुनिया के

कोने-कोने तक फैलाने के एक ही नेक मकसद में भागीदार थे। मुझे यह जानकर बहुत खुशी हुई कि दूर-दराज में रहने वाले हर मुसलमान के मन में यही विचार हैं। वह मेरे साथ एक था और मैं उसके साथ एक। मेरे खतना करने वाले नाई ने मुझे इन शब्दों से आश्वस्त किया: 'डरो मत। मैं तुम्हें खतने का एक ऐसा लाभ बताऊंगा जो शायद मनसबदार साहब ने भी तुम्हें नहीं बताया होगा। तुम्हारी मर्दानगी बढ़ जाएगी। तुम एक ही बार में चालीस महिलाओं को थका सकते हो! मैं झूठ नहीं बोल रहा। तुम्हें क्या लगता है कि पैगंबर इब्राहिम ने इस रस्म को सभी मुसलमानों के लिए अनिवार्य क्यों बनाया? दरअसल, इस पवित्र रस्म का पूरा नाम सुन्नत-ए-इब्राहिम है, जिसका नाम पैगंबर इब्राहिम के नाम पर रखा गया है।'

देवगढ़ में अपना काम पूरा करने के बाद, मनसबदार मुझे दिल्ली ले गया। शुरू में, मेरे शरीर के उस हिस्से में दर्द होता था क्योंकि मैं लगभग पूरे दिन लगातार घोड़े पर सवार रहता था और मेरा घाव अभी भर रहा था। कुछ ही दिनों में वह पूरी तरह ठीक हो गया और दर्द गायब हो गया। पूरी यात्रा के दौरान, मुल्ला साहब बार-बार कहते रहे कि उन्हें कितनी खुशी है कि मैंने सुन्नत रस्म अदा की है। उन्होंने मुझे बार-बार आश्वस्त किया कि मैं अपने परिवार की मृत्यु पर शोक न करूं क्योंकि वे सभी मेरे जीवन के एक ऐसे दौर से संबंधित थे, एक ऐसा दौर जो मैंने अज्ञानता में बिताया था। धीरे-धीरे, किला, मेरे पिता और माता और बाकी सब मेरी याददाश्त से धुंधले पड़ने लगे। रात में मुझे भव्य और विस्तृत सपने आते थे कि मैं अपनी नई शक्ति से कई खूबसूरत महिलाओं को मोहित कर लूंगा। कभी-कभी, यह सपना अलग रूप धारण कर लेता था—दिल्ली पहुँचकर, मैं बादशाह से दया की गुहार लगाता और उनसे विनती करता कि मैं पहले एक राजकुमार था। फिर वह मुझे सरदार का पद प्रदान करेगा। मैं कम से कम चार स्त्रियाँ रखूँगा और भरपूर सुख-सुविधाओं का जीवन व्यतीत करूँगा। दिल्ली की संस्कृति में ज़नाना जीवन का असीमित आनंद लिया जाता था—दिन-रात एक विशाल हरम में सुंदरियों के साथ समय बिताने का सुख। बादशाह की सेवा में लगा एक साधारण दरबारी भी जागीरों—उसके नियंत्रण में विशाल भूभागों—के माध्यम से अच्छा खासा धन कमाता था। प्रत्येक दरबारी ने अपने लिए एक विशाल महल बनवाया था जिसमें ज़नाना के लिए अलग कमरे थे। शरिया कानून के अनुसार एक पुरुष केवल चार पत्नियाँ रख सकता था। लेकिन यदि कोई विवाहित पुरुष किसी अन्य सुंदर युवती से विवाह करना चाहता था, तो वह अपनी चारों पत्नियों

में से किसी को भी तलाक देकर उससे विवाह कर सकता था। बात इससे भी आगे बढ़ गई। दिल्ली की संस्कृति में एक पुरुष को अपनी पदवी, प्रतिष्ठा और धन के अनुसार जितनी चाहे उतनी रखैलें रखने की अनुमति थी। प्रत्येक दरबारी का ज़नाना दर्जनों स्त्रियों से भरा रहता था। इनमें से अधिकांश स्त्रियाँ युद्ध में जीती गई होती थीं। फिर कुछ और औरतें थीं, जो गरीब किसान परिवारों से थीं और ज़मीन का कर चुकाने में असमर्थ थीं। कर वसूलने वाले इन किसानों की कुंवारी लड़कियों और जवान पत्नियों को ले जाकर ज़नाना में रख देते थे। ये औरतें ज़नाना के मालिक दरबारी की पत्नियों की नौकरानियाँ बन जाती थीं और वह जब चाहे उन्हें अपने बिस्तर पर बुला सकता था। लेकिन कोई भी अमीर, जागीरदार या मनसबदार, चाहे वह कितना भी शक्तिशाली और धनी हो और उसका महल कितना भी बड़ा हो, वह हमेशा जानता था कि उसकी मृत्यु के बाद क्या होगा। उसकी सारी संपत्ति, उसका सारा सोना-हीरा और उसका पूरा ज़नाना सरकार, यानी बादशाह की संपत्ति बन जाता था। उसकी मृत्यु के ठीक बाद बादशाह के आदमी उसके घर पहुँचते और उसके गहने, कपड़े, हाथी, घोड़े और हथियार, यहाँ तक कि आखिरी बर्तन तक ज़ब्त कर लेते। उसकी पत्नियों और बच्चों को कुछ नहीं मिलता था, जब तक कि बादशाह उन पर थोड़ी दया न दिखाए और उन्हें कुछ थोड़ा-बहुत मुहैया न करा दे। अगर वह ऐसा नहीं करता, तो वे तुरंत सड़क पर आ जाते थे। अमीर और जागीरदार इस क्रूर अंतिम परिणाम से भलीभांति परिचित थे। यही कारण था कि वे एक के बाद एक आलीशान महल बनवाते, महिलाओं और धन का संचय करते और जीवन भर हर प्रकार के कामुक सुख में लिप्त रहते। उम्र बढ़ने के साथ-साथ वे कम उम्र की कुंवारी लड़कियों की तलाश करते, ताकि वे पहले की तरह ही कामुकता से भर सकें। कामोत्तेजक औषधियाँ बनाने और वितरित करने वाले चिकित्सकों की खूब मांग थी और उन्हें भरपूर वेतन मिलता था। इनमें से कई रईस मुझ जैसे लड़कों के साथ-साथ युवा लड़कियों को भी चाहते थे, और ऐसे रईसों को उनके साथियों द्वारा विशेष स्थान दिया जाता था—मैंने देखा था कि भव्य पार्टियों में, एक शरारती आँख मारना या मुस्कुराना, सुख के प्रति इस दोहरे झुकाव के लिए हार्दिक स्वीकृति का संकेत होता था। इस चौंकाने वाली विकृति को घृणा नहीं, बल्कि प्रशंसा मिलती थी।

देवगढ़ के बाहर स्थित एजाज़ अहमद के शिविर में रहने के दौरान, मैंने उसके द्वारा हर रात मेरे शरीर पर किए जाने वाले अत्याचार के पीछे के असली कारण को

समझने की बहुत कोशिश की थी। युद्ध में व्यस्त होने का मतलब था या तो महिलाओं की भारी कमी या उनकी अनुपलब्धता। एजाज़ अहमद ने मुझे स्त्री के विकल्प के रूप में इस्तेमाल करके अपनी हवस मिटाई थी। लेकिन दिल्ली में उसके विशाल महल में जो कुछ मेरे साथ हुआ, उसके लिए मैं बिल्कुल भी तैयार नहीं थी। वहाँ, उसकी दोहरी सुख-सुविधा की प्रवृत्ति एक पुख्ता तथ्य बन गई। वास्तव में, दिल्ली ही वह जगह थी जहाँ मुझे पहली बार पता चला कि ऐसे पुरुष भी होते हैं जो पुरुषों और महिलाओं दोनों में सुख की तलाश करते हैं और पाते हैं। उस महल में रहते हुए मुझे अचानक उन लोगों की याद आ गई जो मेरे लिए जान से भी प्यारे थे और जो अब परलोक में थे, जबकि मैं, एक कायर, इस धरती पर घृणित गुलामी में जी रही थी। बादशाह की दया की भीख माँगकर एक सम्मानजनक पद प्राप्त करने का मेरा सपना, भले ही वह एक मामूली सिपाही का ही क्यों न हो, बेरहमी से चकनाचूर हो गया। मैं इस नियति को स्वीकार करने के बजाय एक योद्धा के रूप में हथियार लेकर मरना पसंद करती थी। कई दिनों बाद मुझे एहसास हुआ कि यह सोचना भी असंभव था कि मुझ जैसे गुलाम को हवेली से बाहर कदम रखने का अवसर मिलेगा।

लेकिन मेरी असली बेइज्जती तो अभी शुरू ही हुई थी। एक और घटना घटी जिसने मेरी घृणा को हज़ार गुना बढ़ा दिया। मनसबदार एजाज़ अहमद मुझे अपने महल में आने वाले दोस्तों के सामने बड़े गर्व से पेश करता था। मुझे देखते ही उनकी आँखों में वासना झलकने लगती थी। देखते ही देखते वे एजाज़ अहमद से फ़ारसी, अरबी या तुर्की में बातें करने लगते। तब तक मैं इन भाषाओं को इतना सीख चुका था कि उनकी बातें समझ सकूँ। इसके बाद एजाज़ अहमद मुझे अपने दोस्त के साथ एक कमरे में जाने का हुक्म देता था। एक गुलाम होने के नाते मुझे अपने मालिक के हुक्म पर सवाल उठाने की कोई आज़ादी नहीं थी। उस कमरे में मेरा काम अपने मालिक के दोस्त के निर्देशों का पालन करना था और मैं पूरी निष्ठा से ऐसा करता था। वह मुझसे ऐसे काम करवाता था जिनसे वह बेकाबू हो जाता था। मैं हमेशा सोचता रहा हूँ कि जब दो लोग एक-दूसरे से सुख पाने के लिए मिलते हैं, तो वे स्वाभाविक रूप से उत्तेजित हो जाते हैं और ज़बरदस्ती उत्तेजना की ज़रूरत नहीं होती, लेकिन... लेकिन... यह अपवित्र था, प्रकृति के विरुद्ध था। और यह एजाज़ अहमद का स्वभाव नहीं था। एजाज अहमद के हर दोस्त की यही इच्छा थी कि मैं उन्हें उनके मनचाहे तरीके से उत्तेजित करूँ—उत्तेजना के जितने विकृत लोग होते हैं, उतने ही विकृत तरीके भी

होते हैं। समय के साथ, मुझे इसकी आदत हो गई और मेरी घृणा दूर हो गई, मैं एक ऐसे डॉक्टर की तरह अपना कर्तव्य निभाती रही जो सबसे गंभीर बीमारियों का भी इलाज करता है। कोई दूसरा विकल्प नहीं था। भागने का तो सवाल ही नहीं था।

जब मुझे शहर में लाया गया, तो जनगणना अधिकारी ने रजिस्टर में मेरा नाम मनसबदार एजाज अहमद के गुलाम के रूप में दर्ज किया। शहर में आने-जाने के नियम बहुत सख्त थे। हर किसी को परमिट लेना पड़ता था। अगर कोई बिना परमिट के बाहर निकल जाता, तो दिल्ली के आसपास के सभी शहरों, कस्बों और गांवों में स्थित हर जनगणना कार्यालय को बिजली की गति से सूचना भेज दी जाती। घुड़सवार तुरंत उस आदमी का पीछा करते और पकड़े जाने पर किसी भी अदालत में सुनवाई नहीं होती। उस आदमी के पैर काट दिए जाते।

मैं अक्सर सोचती थी कि इजाज़ अहमद के दोस्तों को मुझमें इतनी दिलचस्पी क्यों थी। क्या यह मेरी उम्र की वजह थी? मैंने पता लगाने का फैसला किया। तब तक, मुझे इजाज़ अहमद और उनके दोस्तों जैसे लोगों के बारे में काफी कुछ समझ आ चुका था। अपने मेजबान की इच्छा पूरी करने के बाद जो लंबा जागरण होता था, वही सवाल पूछने का सबसे अच्छा समय होता था—ऐसे सवाल जो आम दिनों में उन्हें गुस्सा दिला देते। वह जागरण ही वह समय था जब मेरा प्रेमी अत्यंत सौम्य स्वभाव का होता था। साथ ही, मैंने एक संवेदनशील सवाल पूछने की कला भी सीख ली थी, जिसका सकारात्मक अर्थ निकाला जाता था। लेकिन एक सवाल ऐसा था जिसे पूछना व्यर्थ था: इजाज़ अहमद का कोई भी दोस्त मुझसे कितना भी खुश क्यों न हो, वह मुझे गुलामी से मुक्त करने के लिए कभी राजी नहीं होगा। और इसलिए, एक बार मैंने एक अमीर अब्दुल कादर से बहुत ही कोमल स्वर में पूछा, 'क्या आपका मेरे लिए प्यार वाकई इतना गहरा है? सचमुच? मैं...मैं...मैं आज इसे महसूस कर सकती थी।'

मेरे शब्द सुनकर उनके चेहरे पर तुरंत आनंद के भाव झलक उठे। उन्होंने उत्तर दिया, “तुम्हें क्या लगता है कि ऐसा क्यों नहीं है? तुम्हें क्या लगता है कि मैं यहाँ तीन बार क्यों आया? तुम्हारे लिए...सिर्फ तुम्हारे लिए! तुम्हारे कोमल चेहरे की झलक ही मुझे प्रेम से पागल कर देती है। तुम्हारे लिए। आज मैं एक महत्वपूर्ण काम में व्यस्त था और अचानक तुम मेरे विचारों में आ गईं और देखो! मैं उसी क्षण अपने घोड़े पर सवार होकर यहाँ आ गया। क्या तुम जानती हो कि तुम्हारे स्वामी के प्रति ऋणी होना मेरे

लिए कितना कठिन है जब मैं उनसे तुम्हारी सुखद संगति में रहने का अनुरोध करता हूँ? लेकिन मुझे परवाह नहीं है।"

लेकिन क्यों? मैं...मुझे समझ नहीं आ रहा...मेरा मतलब है, मैं भी एक लड़का हूँ और मुझमें भी तुम्हारी तरह मर्दानगी है।'

अब मुझे उस बात की याद मत दिलाओ। हर लड़के में तुम्हारे जैसी कोमल भावनाएँ नहीं होतीं जो मुझमें ऐसा प्यार जगा सकें। तुम खास हो। तुम्हारी खूबसूरती हज़ारों में एक है... तुम... तुम... तुम एक स्त्री की नाज़ुक सुंदरता और एक पुरुष की मज़बूती का उत्तम संगम हो। तुम्हारे बढ़ते बाल जब घनी मूंछों में बदल जाएँगे, तब भी तुम उतने ही खूबसूरत रहोगे।

मैं आईने के सामने खड़ा होकर काफी देर तक खुद को देखता रहा। सच था, मैं सुंदर था। बचपन से ही मेरी खूबसूरती की बहुत तारीफ होती थी। मेरी प्यारी श्यामला ने शादी की रात मुझसे कहा था कि उसकी सहेलियाँ और यहाँ तक कि बड़ी उम्र की औरतें भी उससे कहती थीं कि मेरे जैसे सुंदर लड़के से शादी करके वह कितनी खुशनसीब है। लेकिन... पर वे औरतें थीं, और उनके लिए मुझे आकर्षक समझना स्वाभाविक था, जैसे एक औरत किसी मर्द को पसंद करती है। मर्द मुझे उसी तरह आकर्षक कैसे समझ सकते हैं? इसी के साथ, इन लोगों की संस्कृति और पसंद के प्रति मेरी घृणा अब उलझन में बदल गई थी।

~

एक दिन, मोइनुद्दीन तुरानी नाम का एक शक्तिशाली सरदार एजाज अहमद के घर आया। उसकी उम्र लगभग पैंतालीस वर्ष थी। उसकी नाक नुकीली थी। उसके गोरे रंग पर उसकी सफेद-काली दाढ़ी उभरी हुई थी। उसने एजाज अहमद से कुछ देर बात की और फिर मुझे बुलाया गया। मैंने आदरपूर्वक सलाम अलैकुम किया। उसने इसे स्वीकार किया और मेरी ओर देखा। मैंने पजामा पहना हुआ था और कढ़ाई वाली कमीज के ऊपर सुनहरे रंग का आधा कोट पहना हुआ था। मेरे सिर पर एक काली टोपी थी। लगभग दो मिनट बाद, एजाज अहमद ने आदेश दिया, 'अपने कमरे में वापस जाओ।'

कुछ समय बाद, उन्होंने मुझे फिर बुलवाया। मोइनुद्दीन तुरानी की ओर देखते हुए उन्होंने कहा, "ये दस हज़ार में सबसे आदरणीय मनसबदार हैं, मोइनुद्दीन तुरानी। मुजरा कीजिए और दिखाइए कि आप उनका आदर करते हैं। मैंने आपको एक हज़ार

रुपये में उन्हें बेच दिया है। आज से आप उनके गुलाम हैं। यद्यपि आपको कीमत जानने की स्वतंत्रता नहीं है, मैंने आप पर बड़ी दया दिखाई है और आपको आपकी कीमत बता दी है ताकि आप गुलामों के बीच अपनी हैसियत जान सकें। आपकी उम्र के पुरुष गुलाम बाज़ार में पंद्रह से बीस रुपये के बीच बिकते हैं। तो देखिए! मनसबदार जितने उदार हैं उतने ही दयालु भी हैं।"

यह उनका आदेश था और बस यही बात थी। मेरे पास कोई चारा नहीं था... विरोध करना तो दूर की बात, मैं एजाज अहमद को यह कहने की हिम्मत भी नहीं कर सकती थी कि मुझे उनका घर पसंद है। पिछले एक साल ने मुझे बहुत कुछ सिखाया था, लेकिन एक बुनियादी सबक जो मेरी आत्मा में बस गया था—मुझे गायों, बकरियों और घोड़ों की तरह खरीदा और बेचा जा सकता है और मुझे भी उनके जैसी ही आज़ादी है। मुझे मोइनुद्दीन तुरानी साहब के साथ जाना था और वही कर्तव्य निभाते रहना था। मैं उनके दोस्तों को खुश रखूंगी और मेरी रहने की स्थिति पंद्रह-बीस रुपये के गुलामों से बेहतर होगी। तभी मुझे एक और बात समझ में आई—ये गुलाम यातनापूर्ण काम करते हैं, दिन भर चिलचिलाती धूप में मेहनत करते हैं जब तक कि उनकी त्वचा हमेशा के लिए काली न हो जाए। लेकिन मुझे ऐसी कोई यातना नहीं सहनी पड़ेगी। वह मुझे घर के अंदर ही रखेंगे। मैंने दोनों आदमियों को देखा और फिर अपने अब तक के मालिक, एजाज अहमद को प्रणाम किए बिना अपने कमरे में वापस चली गई।

~

मुझे मोइनुद्दीन के अस्तबल में ले जाया गया, जहाँ दो सौ से अधिक घोड़े थे। वहाँ मुझे अस्तबल के रखवाले के कमरे में ले जाया गया और एक शानदार भोजन कराया गया। भोजन के कई मिनट बाद मुझे एक गोल गोली दी गई।

'इसे निगल जाओ,' दोनों विशालकाय आदमियों ने कर्कश स्वर में कहा।

मुझे पता था कि यह अफीम है।

'लेकिन क्यों?' मैंने धीरे से पूछा।

'जैसा कहा जाए वैसा करो! सरदार का आदेश है!'

मैं कुछ देर तक सोचता रहा, हिचकिचाता रहा। मेरे लिए सब कुछ नया था। मैं इन लोगों के बारे में कुछ नहीं जानता था। यह सब कुछ बेचैन करने वाला था। मैंने आज्ञा

मानने का फैसला किया। मैंने गोलियां निगल लीं और उन्होंने जो पूरा गिलास पानी दिया, वह पी लिया।

'हमारे पर का पालन करें।'

मैं उनके पीछे-पीछे गया। वे मुझे पूरे अस्तबल का एक चक्कर लगवाकर वापस चौकीदार के कमरे में ले आए। अब उन्होंने मुझे चौकीदार की जगह सोने को कहा। जैसे ही मैं लेटा, मेरी नज़र धुंधली होने लगी। अफ़ीम का असर होने लगा था। आज तक मुझे ठीक से याद नहीं कि आगे क्या हुआ। सब कुछ धीमा हो गया था। उनमें से एक आदमी के हाथ में एक हाथ लंबा लकड़ी का चिमटा था। वह उसके हाथ में खिलौने जैसा लग रहा था। अचानक कहीं से दो हट्टे-कट्टे आदमी आ गए... अब वे मुझे अपने पैरों से ज़मीन पर और पीछे धकेल रहे थे। मैं ऊपर देख रहा था, यह समझने की कोशिश कर रहा था कि वे मेरे साथ क्या करने वाले हैं। अगले ही पल, मैंने दो भारी, ताकतवर पैर महसूस किए, एक-एक कंधे पर, मुझे ज़मीन से चिपका रहे थे। वे बहुत भारी थे, लोहे जैसे, लेकिन मुझे कोई दर्द नहीं हुआ। और अब मुझे महसूस हुआ कि कोई मेरा पजामा उतार रहा है और फिर आसपास से हवा का एक झोंका आया। मुझे धुंधला सा एहसास हुआ कि मैं कमर से नीचे नंगा था। और फिर मुझे कुछ और महसूस हुआ। लकड़ी के मजबूत चिमटे लिए वह आदमी उन्हें मेरे अंडकोषों की ओर बढ़ा रहा था और इससे पहले कि मैं समझ पाता कि वह क्या करने वाला है, मैंने महसूस किया कि मेरे अंडकोष उन चिमटों की जकड़ में जकड़े हुए हैं। घोर भय ने मुझे होश में ला दिया। मैंने एक चीख निकाली, अपने अंदर के डर को छिपाए बिना, और बार-बार उनसे रुकने की विनती की, अब मैं एक बच्चे की तरह रो रहा था। मैंने अपने अंडकोषों पर चिमटे की पकड़ ढीली करने के लिए छटपटाने की कोशिश की, लेकिन ऐसा लगा जैसे मेरा पूरा शरीर जमीन पर धंस गया हो। मेरे रोमछिद्रों से पसीना लगातार बह रहा था, मानो मेरी ही दयनीय आवाज की कराह के साथ। 'नहीं, नहीं नहीं नहीं नहीं...कृपया...कृपया...कृपया, नहीं नहीं...कृपया कृपया...कृपया, नहीं!' चिमटे की घातक पकड़ अब और भी सटीक हो गई थी और मेरे सुन्न हो चुके होंठों से निकलने वाली हर कराह के साथ वह और भी कसती जा रही थी। फिर पलक झपकते ही सब कुछ हो गया, दिमाग हिला देने वाला। फट! फुर्र ...

आगे क्या हुआ, मुझे लगभग कुछ भी याद नहीं है। मुझे याद नहीं कि मैंने कितने दिन या हफ़्ते तक पीड़ा झेली। या मैं कितने समय तक अर्ध-चेतना की अवस्था में

रहा। या मेरे अंडकोष कितने समय तक सूजे रहे। या सूजन कम होने में कितना समय लगा। जब मैं उस अवस्था में पहुँचा जहाँ मैं लोगों की बातें समझ सकता था, तो मैं एक बूढ़े व्यक्ति के साथ था जिसने बहुत ढीला सफेद पजामा और उतनी ही ढीली सफेद कमीज़ पहनी हुई थी। उसकी बहुत लंबी और सफेद दाढ़ी थी जिसे वह बोलते समय बार-बार सहला रहा था। 'अब आप ऐसी अवस्था में हैं जहाँ आपका दर्द सहने योग्य स्तर पर पहुँच गया है। यह मैं आपके चेहरे से देख सकता हूँ। आप बहुत, बहुत भाग्यशाली हैं कि आप जीवित हैं। मैं दिन-रात आपके पास बैठा रहा और आपका इलाज किया और यह सुनिश्चित किया कि आप मर न जाएँ। लेकिन आपको यह जानना चाहिए कि इस उपचार से गुजरने वाले चार में से तीन लोग मर जाते हैं।'

मैंने पूछा, 'लेकिन मुझे किस बीमारी का इलाज किया गया था?'

‘अरे! तो, तुम्हें अभी तक समझ नहीं आया कि यह सब क्या था! मैंने तुम्हारी मर्दानगी पूरी तरह से छीनकर तुम्हें हिजड़ा बना दिया है। पूरी तरह ठीक होने के बाद, तुम्हें एक ज़नाना की सेवा में लगा दिया जाएगा। तुम्हें ज़नाना की सबसे खूबसूरत महिला के साथ खुलकर मिलने-जुलने की इजाज़त होगी। मैं तुम्हें एक राज़ बताता हूँ: अगर तुम ज़नाना की महिलाओं का भरोसा और स्नेह जीत लेते हो, तो तुम्हें उन महिलाओं की तरह ही समृद्ध जीवन जीने में कोई परेशानी नहीं होगी। तुम बेहतरीन खाना खा सकते हो और सबसे आलीशान कमरों में रह सकते हो।’

तब मुझे समझ आया। अफीम के नशे में धुंधलेपन के कारण मैंने जो लकड़ी के चिमटे देखे थे, वे उस समय मेरी समझ से परे थे। देवगढ़ में किसान और ग्वाले बैलों के पैर बांधकर उन्हें बधिया करने के लिए ऐसे ही लकड़ी के चिमटों का इस्तेमाल करते थे। मैं तब एक छोटा बच्चा था और यह सुनकर शर्म से लाल हो गया था कि बधिया किए गए बैलों में गायों पर कूदने की कोई इच्छा नहीं रहती, या अगर उन्हें जबरदस्ती गाय पर चढ़ाया भी जाए, तो वे कुछ नहीं कर पाते।

फिर मुझे एजाज अहमद के महल में सुनी एक और बात याद आई। ये लोग ज्यादातर स्वस्थ और ताकतवर नौजवानों को ढूंढकर उनका बधियाकरण करते थे, सिर्फ इसलिए कि वे उन्हें ज़नाना में सेवा दें, क्योंकि जन्मजात हिजड़े बहुत कम मिलते थे। मुझे बिल्कुल भी अंदाजा नहीं था कि वे वास्तव में बधियाकरण कैसे करते होंगे। इसके अलावा, मुझे जरा भी अंदाजा नहीं था कि मेरे साथ भी ऐसा होगा। एजाज अहमद का गुलाम बनने के बाद, कई बार मुझे किसी स्त्री की चाह होती थी, लेकिन

ऐसी इच्छा कितनी बार उठी, यह मैं उंगलियों पर गिन सकता हूँ—एजाज अहमद और बाद में उसके दोस्तों ने मेरे शरीर का विकृत, पशुवत आनंद लेकर मेरी उस इच्छा को लगभग पूरी तरह से खत्म कर दिया था। अब जब मेरा पुरुषत्व छिन चुका था, तो मुझे एहसास हुआ कि शायद वे अब भी मेरा आनंद ले सकते हैं।

उस बूढ़े व्यक्ति—जो एक डॉक्टर थे—ने कहा, 'मनसबदार तुरानी साहब ने आपके मामले में बड़ी मेहरबानी की है। उन्होंने आपको हिजड़ा बनाने से पहले एक हजार रुपये दिए थे।'

'क्या फर्क पड़ता है?'

मैंने आपको पहले भी बताया था कि इस उपचार से गुजरने वाले चार में से तीन पुरुषों की मृत्यु हो जाती है। यदि आपकी मृत्यु हो जाती, तो उनका पैसा व्यर्थ हो जाता। लेकिन फिर भी यह हानि उचित है क्योंकि मनसबदार ने यह निर्णय लिया था कि आप उनके ज़नाना में सेवा करने के लिए सबसे योग्य हैं। यह अपने आप में एक दुर्लभ सम्मान है, और यह आपके प्रति उनके विशेष स्नेह को दर्शाता है। क्या यह दर्शाता है या नहीं?

मैंने हल्के से सिर हिलाया। तब तक मैं आधी नींद में था और गहरी नींद में सो गया, यह समझे बिना कि उसका असल मतलब क्या था। धीरे-धीरे उन्होंने मुझे दी जाने वाली अफीम की मात्रा कम कर दी। मैं अब भी दिन भर बेहोशी की हालत में रहता था, लेकिन जब कभी पूरी तरह समझ आता था, तो मैं सोचता था कि क्या एक आदमी का दूसरे आदमी को गुलाम बनाना जायज़ है? ऐसा काम देखकर कौन सा भगवान प्रसन्न होगा? कभी-कभी मैं सोचता था कि क्या गुलामी की कोई सीमा होती है? किस तरह का भगवान किसी विजेता को किसी पुरुष की मर्दानगी को नष्ट करने की इजाज़त देता है, और अगर वह औरत हो, तो उसके शरीर को अपनी मर्ज़ी से नोंचने और कितनी भी औरतों के साथ संबंध बनाने की?

~

कुछ दिनों बाद, डॉक्टर ने मेरे गुप्तांगों की बारीकी से जाँच की कि वे पूरी तरह से ठीक हो गए हैं या नहीं और पुष्टि की कि मैं वास्तव में एक हिजड़ा हूँ। मुझे मोइनुद्दीन के ज़नाना में गुलाम के रूप में नियुक्त किया गया। मोइनुद्दीन का महल एजाज़ के महल से लगभग आठ गुना बड़ा था। इतना बड़ा कि देवगढ़ का महल भी उसके सामने बौना लगता था!

मुझे एहसास हुआ कि देवगढ़ में हम राजत्व की एक अलग अवधारणा का पालन करते थे। यहाँ की तरह, वहाँ राज्य में सब कुछ राजा की इच्छाओं के अधीन नहीं था। यह सनातन या राजत्व के शाश्वत सिद्धांतों के पूर्णतया अनुरूप था। राजा अपने मंत्रिपरिषद और राज्य के कुलीन एवं प्रतिष्ठित नागरिकों के निर्णयों से बाध्य होता था। प्रत्येक निर्णय—यहाँ तक कि राजस्व, व्यय और करों से संबंधित सबसे बुनियादी मामलों में भी—इन लोगों की स्वीकृति अनिवार्य थी। चाहे वह पुरुष हो, स्त्री हो, बच्चा हो, लड़की हो, लड़का हो, अपंग हो या अंधा हो, राजा को उनकी देखभाल ऐसे करनी पड़ती थी मानो वह उनका पिता हो। इसका अर्थ यह था कि महल में अनुमत विलासिता पर एक सीमा और नियंत्रण था।

लेकिन यह मोइनुद्दीन दस हज़ार सैनिकों का मनसबदार था। मुझे पता चला कि इसका मतलब यह नहीं था कि उसके पास हमेशा दस हज़ार प्रशिक्षित सैनिकों की टुकड़ी रहती थी। इसका सीधा सा मतलब था कि जब भी बादशाह आदेश देता, इतनी संख्या में सैनिकों को जुटाना उसकी ज़िम्मेदारी थी। मनसबदार को बादशाह द्वारा आवंटित भूमि जागीर से प्राप्त राजस्व से इतने लोगों का भरण-पोषण करना पड़ता था। साथ ही, उसे अपने पद के अनुरूप जीवनशैली भी बनाए रखनी पड़ती थी। इसलिए जब मनसबदार को पैसों की सख्त ज़रूरत होती, तो वह कर बढ़ा देता और कभी-कभी इसके साथ ही नए और अनसुने कर भी लगा देता। जो किसान ये नए कर नहीं चुका पाते थे, उन्हें पकड़कर गुलाम बाज़ार में नीलाम कर दिया जाता था। इस तरह, मनसबदार एक सामंती सरदार होता था। उसकी दरबार में सीधी पहुँच होती थी, और मनसबदार का पद उसके नाम के आगे लगी संख्या से निर्धारित होता था।

मोइनुद्दीन के आलीशान घर के सामने एक विशाल बगीचा था। इसमें दो ऊँचे भवन थे जो दिल्ली में प्रचलित फ़ारसी वास्तुकला शैली के अनुसार बने थे। मुख्य द्वार से प्रवेश करने और दो विशाल बरामदों को पार करने के बाद बीच में ज़नाना स्थित था। तब तक मैंने कभी ज़नाना नहीं देखा था—यहाँ तक कि एजाज़ अहमद के आलीशान घर में भी नहीं, जहाँ मेरे साथ एक औरत जैसा बर्ताव किया जाता था।

जब से मुझे पकड़ा गया और बंदी बनाया गया, तब से मैंने केवल एक खास तरह की महिलाओं को देखा था—गरीब किसानों की पत्नियाँ या सड़कों पर या खेतों में मज़दूरी करने वाली औरतें। उनके कपड़े फटे-पुराने थे और उन्होंने कोई गहने नहीं पहने थे। उनके रूखे, बिना तेल वाले और बिना कंघी किए बालों में फूल नहीं थे।

दिल्ली की चिलचिलाती धूप से अपने पैरों को बचाने के लिए उन्होंने कुछ भी नहीं पहना था, और उसी धूप ने उनकी त्वचा को झुलसा दिया था। वे गुलाम थीं और वे सभी गुलामों जैसी दिखती थीं—यह बताना मुश्किल था कि वे पुरुष हैं या महिला। जब भी मैं इन उदास लोगों को देखता, मेरा दिल टूट जाता था। उन्हें औरत समझकर मेरे मन में कोई इच्छा जाग ही नहीं सकती थी।

लेकिन मोइनुद्दीन के ज़नाना की औरतें! वे बेहद खूबसूरत थीं, हर एक अपने-अपने तरीके से। वे हमेशा सजी-धजी रहती थीं, सबसे मुलायम रेशम के कपड़े और चमकदार सोने, हीरे, मोतियों और माणिक से बने बारीक कारीगरी वाले आभूषणों से लदी रहती थीं। दिल्ली की तेज़ धूप भी उनकी बेदाग त्वचा और घने बालों को छू नहीं पाती थी, जिनकी देखभाल नौकरों की एक पूरी फौज बड़ी सावधानी से करती थी।

मोइनुद्दीन की चार पत्नियाँ थीं, जिनसे उनकी शादी पारंपरिक तरीके से हुई थी। प्रत्येक पत्नी के पास लगभग आठ से बारह नौकरानियाँ थीं। ये नौकरानियाँ भी युवा, सुंदर और अपने रुतबे के अनुसार सजी-धजी रहती थीं। उनका काम एक तय दिनचर्या के अनुसार चलता था। उन्हें मालकिन के लिए शानदार भोजन का प्रबंध करना, उनके आलीशान बिस्तर को सजाना और उनकी त्वचा को मुलायम और मांसपेशियों को लचीला बनाने के लिए विशेष तेलों से उनकी मालिश करनी होती थी। जब मालकिन तेल से नहा रही होती थीं, तब वे पानी को उचित तापमान तक गर्म करके उनके लिए स्नान तैयार करती थीं। पानी तैयार होने पर, वे उन्हें आराम से स्नान कराती थीं, धीरे-धीरे तेल मलती थीं, फिर पूरे शरीर पर इत्र लगाती थीं, उसके बाद गीले बालों पर सुगंधित भाप लगाती थीं और अंत में उन्हें ऐसे वस्त्र और आभूषण पहनाती थीं जो उनकी जवानी को बेहद मोहक ढंग से दर्शाते थे। अगर वह ऊब जाती थीं, तो उन्हें उनके पसंदीदा गाने गाकर या उनके लिए नृत्य करके उनका मनोरंजन करना पड़ता था। लेकिन वैसे भी, वह हमेशा ऊबती ही रहती थीं, क्योंकि उनके पति लगभग कभी उनके साथ नहीं होते थे। ज्यादातर, ऐसा इसलिए होता था क्योंकि वह इस बात से नाराज होती थीं कि उनके पति किसी दूसरी महिला के साथ ज्यादा समय बिता रहे हैं। और अपनी पीड़ा बताने के लिए वह इन्हीं नौकरानियों के पास जाती थी। नौकरानियां सहानुभूतिपूर्वक सुनतीं और कुछ सांत्वना भरे शब्द कहतीं।

एक दिन मोइनुद्दीन बेगम जमीला बानू से मिलने गए। बेगम की उम्र शायद तीस वर्ष थी। वे अत्यंत प्रसन्न थीं। इस मुलाकात से उन्हें अल्लाह की कृपा का अहसास

हुआ। उन्होंने मोइनुद्दीन को बड़े झूले पर बिठाया, उनके बगल में बैठीं और कोमल हाथों से उनके हाथों, पैरों और टांगों को सहलाने लगीं। उन्होंने अपने नौकरों को मोइनुद्दीन का मनोरंजन करने का आदेश दिया। उनके चार नौकरों के एक दल ने इत्र लगाया, जबकि दूसरे दल ने पीछे से उन्हें पंखा किया। जब मोइनुद्दीन ने सहजता से आराम महसूस किया, तो पहले दल ने गाना शुरू किया, जबकि चार अन्य दल ने संगीत पर नृत्य करना शुरू कर दिया। मोइनुद्दीन इस प्रदर्शन का भरपूर आनंद ले रहे थे। काफी देर बाद, उनकी आँखों में इच्छा की धुंधली झलक दिखाई दी। यह देखकर बेगम समझ गईं कि उनका मोक्ष का क्षण आ गया है। उन्होंने धीरे-धीरे, सधी हुई गति से अपनी उंगलियाँ मोइनुद्दीन की हथेलियों पर फिराईं। मोइनुद्दीन को इसका एहसास भी नहीं हुआ। उनकी निगाहें ज़नाना की सबसे मनमोहक नर्तकियों में से एक केशरा बाई पर टिकी थीं, यह सम्मान स्वयं जमीला बेगम ने उन्हें दिया था। काफी देर बाद वे उठे। सोने के कमरे में जाने का समय हो गया था। बेगम ने भी इसे एक अनकहा संकेत समझते हुए तुरंत उठ खड़ी हुईं। उन्होंने दो बड़े कदम बढ़ाए, केशरा बाई का हाथ पकड़ा और उन्हें खींचकर सोने के कमरे में ले गईं।

बेगम की आँखें अब सौ चाकुओं जैसी हो गईं। लेकिन वह जानती थी कि मनसबदार के व्यवहार पर ज़रा सा भी सवाल उठाना घातक होगा। अगर उसे किसी और से पता चल जाता, तो वह उसे कोड़े मारने का आदेश दे देता या इससे भी बुरा, तलाक़ दे देता। बड़ी मुश्किल से उसने खुद को संभाला और मंडली को संगीत और नृत्य जारी रखने का आदेश दिया। केशरा बाई को माफ़ करना उसके लिए नामुमकिन और अस्वाभाविक था। लेकिन उसे उस नर्तकी से सावधान रहना था जो अचानक मनसबदार की पसंदीदा बन गई थी। अगर उसने शिकायत की, तो वह निश्चित रूप से तलाक़ देकर उससे शादी कर लेगा। या फिर दासी को उसकी मौजूदगी में ही शयनकक्ष में ले जाकर उसे चिढ़ाएगा। घटना के तीन दिन बाद, उसने अपनी भरोसेमंद नौकरानी नाहेद कंचिनी से कई घंटों तक रोते हुए अपने सारे दुख को साझा किया।

नाहेद ने खुद मुझे ये बात बताई थी जब हम अच्छे दोस्त बन गए थे और उसे यकीन हो गया था कि वो मुझ पर भरोसा कर सकती है। वैसे तो नाहेद केशरा बाई से नफरत करती थी... नहीं, असल में वो केशरा बाई से जलती थी, क्योंकि नाहेद के मुताबिक केशरा बाई ने उसे मनसबदार की सेवा करने के सुख से वंचित कर दिया

था। उसे इस बात की खुशी भी थी कि बेगम नाराज़ थी। उसने कहा कि बेगम इसके लायक थी, जीवन भर नौकरों पर अत्याचार करने की यही उचित सज़ा थी। 'उसे हर दिन सबसे बढ़िया, सबसे स्वादिष्ट खाना चाहिए। दो-तीन-चार तरह का मांस, सब्ज़ी, करी और मिठाई, और हम उसकी त्वचा को चमकदार और मांसपेशियों को लचीला बनाए रखते हैं। उसके मोटे होने से बचने का कोई तरीका नहीं है। लेकिन हमें देखो। हम सारा दिन काम करते हैं। हम इधर-उधर भागते हैं। हम नाचते हैं। हम संयम से खाते हैं। हमारा शरीर हमेशा जवान और धनुष की तरह लचीला रहता है। क्या ये स्वाभाविक नहीं है कि मालकिन हमें चाहेगी? इसीलिए वो हमारी रक्षा ऐसे करती है जैसे कोई सांप खजाने की रक्षा करता है। और वो सांप की तरह ज़हर भी उगलती है। ईर्ष्या।' लेकिन वह जानती है कि हमारे बिना ज़नाना संभव नहीं है।

मैंने इस बारे में सोचा और जल्दी से हिसाब लगाया। कुल मिलाकर चार बेगम और बावन नौकरानियाँ थीं। इनके अलावा सोलह कंचिनियाँ थीं। इन्हें कैदी भी कहा जाता था। शास्त्रों के अनुसार पुरुष को चार से अधिक स्त्रियों से विवाह करने की मनाही थी, लेकिन वह कितनी भी कैदी रख सकता था। ये आम तौर पर विजयी अभियानों में पकड़ी गई स्त्रियाँ होती थीं। या फिर उन्हें दास नीलामी में खरीदा जाता था। या फिर किसी मित्र द्वारा उपहार में दी जाती थीं। हालाँकि वे कानूनी रूप से विवाहित पत्नियाँ नहीं थीं, फिर भी उनकी स्थिति नौकरानियों से थोड़ी बेहतर थी। और उनके पास बेगमों की तरह नौकरानियाँ नहीं होती थीं। ज़्यादा से ज़्यादा उनके पास दो-तीन सहायक होते थे। वे अपना दिन संगीत का अभ्यास करने और नृत्य कौशल निखारने में बिताती थीं और जब स्वामी को उनकी आवश्यकता होती थी, तो वे इसे अपना सौभाग्य समझती थीं। खाना एक ही रसोई में पकाया जाता था, लेकिन व्यंजनों को अलग-अलग आकार के बर्तनों में सावधानीपूर्वक रखा जाता था और जिस बेगम ने उसे बनाने का आदेश दिया होता था, उसे उचित व्यंजन भेजा जाता था। कुशल रसोइये मसालों की एक विशाल श्रृंखला से सर्वश्रेष्ठ सामग्री का उपयोग करके अन्य व्यंजनों के साथ-साथ स्वादिष्ट करी भी तैयार करते थे। दालचीनी, अदरक, इलायची, बादाम, सौंफ, धनिया, मिर्च, जीरा, काजू, मेथी, खोपरा और सरसों की खुशबू किसी भी भरे पेट वाले व्यक्ति को फिर से भूखा करने के लिए काफी थी। रसोइयों को बहुत अधिक वेतन मिलता था। यहाँ तक कि वेतन में भी विभिन्न स्तर थे—हर तरह की मिठाइयाँ बनाने में माहिर रसोइयों का वेतन और भी अधिक होता था। मनसबदार

हमेशा ज़नाना में ही भोजन करते थे, बारी-बारी से एक बेगम के साथ और अगले दिन दूसरी बेगम के साथ। बेगमों का भोजन समाप्त होने के बाद कंचिनियाँ भोजन करती थीं और कंचिनियों के बाद मेरे जैसे नौकरों और हिजड़ों की बारी आती थी। हमारा भोजन उनके भोजन के मुकाबले कहीं भी नहीं था, लेकिन फिर भी बहुत अच्छा था और निश्चित रूप से घुड़सवारों, महावतों और पैदल सैनिकों के भोजन से कहीं बेहतर था। ये लोग अपनी सामर्थ्य के अनुसार अपना भोजन स्वयं पकाते थे। हमें ज्यादातर मालिक और बेगमों द्वारा छोड़ा गया अतिरिक्त भोजन ही दिया जाता था। एक बार जब स्वाद की आदत पड़ जाती थी, तो ज़नाना में सबसे निचले दर्जे के नौकर को भी सबसे बड़ा डर अपनी सेवाओं की समाप्ति का होता था।

ज़नाना में मेरे समेत चौदह हिजड़े थे। उनमें से एक अबीसीनिया नामक देश से था। वह काले रंग का, बहुत लंबा और प्रभावशाली कद-काठी का था। उसके घुंघराले बाल थे और उसकी उम्र लगभग पचास वर्ष थी। उसने मुझे बताया कि वह जन्म से ही हिजड़ा है। उसे नज़र कहा जाता था, जिसका अर्थ था कि वह मुख्य हिजड़ा था। वह हम सभी को काम सौंपता था, हमारे कार्यों की निगरानी करता था और हमारी गतिविधियों पर कड़ी नज़र रखता था। यदि हममें से कोई गलती करता तो उसे सीधे मनसबदार को रिपोर्ट करने का अधिकार था। वह ज़नाना की महिला नौकरानियों की भी रिपोर्ट कर सकता था और उसका निर्णय अंतिम होता था। मनसबदार उस पर आँख बंद करके विश्वास करता था और बुरी रिपोर्ट का मतलब कड़ी सज़ा होता था। बेगमों समेत पूरी ज़नाना उससे डरती थी।

पांच साल पहले, एक नौकरानी और एक हिजड़ा बाथरूम में प्रेम करते पकड़े गए। दोनों जानते थे कि हिजड़ा कुछ नहीं कर सकता, पर कामुकता इतनी प्रबल थी कि वह कुछ कर नहीं सकता था। नज़र को लंबे समय से उन दोनों के बीच इस तरह के गुप्त संबंध का संदेह था। इसलिए उसने इंतज़ार किया और उन्हें रंगे हाथों पकड़ लिया। ऐसा लगता है कि उस खूंखार नज़र को देखते ही वे दोनों वहीं बेहोश हो गए। व्यभिचार की सज़ा मृत्युदंड थी। लेकिन मनसबदार दक्कन में एक अभियान पर दिल्ली से बाहर थे। मामला मनसबदार की पहली पत्नी बेगम सुल्ताना बानू के पास ले जाया गया। वह एक अत्यंत धर्मपरायण महिला थीं, जो निर्धारित समय के अनुसार दिन में पांच बार नमाज़ अदा करती थीं। वह हमेशा रोज़े में रहती थीं और कुरान की पवित्र आयतें पढ़ती थीं। कई मायनों में, ज़नाना की देखरेख पर उनका ही मुख्य

नियंत्रण था, उसके बाद मनसबदार का। वह थोड़ी मोटी और हठीली थीं, लेकिन अपने शरीर पर अड़ी रहती थीं। उम्र का असर उन पर साफ दिखाई देता था। लेकिन, मनसबदार ने तलाक दिए बिना भी उसे अपनी पत्नी बनाए रखा, यह इस बात का प्रमाण था कि वह उससे कितना प्यार और सम्मान करता था। उसने एक धर्मपरायण और दयालु महिला के रूप में ख्याति अर्जित की थी। जब आरोपी उसके सामने पेश हुआ, तो उसने धैर्यपूर्वक मामला सुना और अपना फैसला सुनाया। दोनों को अपनी जीवन भर की बचत सौंपनी पड़ी। हिजड़े को अस्तबल में भेज दिया गया। नौकरानी को गुलाम बाजार भेज दिया गया, जहाँ उसे बीस रुपये में खरीद लिया गया। अंत में, वे बस इस बात के लिए आभारी थे कि उनकी जान बच गई।

शेष बारह हिजड़े मेरी ही तरह थे—युद्धबंदी जिनके अंडकोष तोड़ दिए गए थे और फिर उन्हें ज़नाना में सेवा करने के लिए नियुक्त किया गया था। दो मालवा से थे। चार बुंदेलखंड से थे। इन छहों को बहुत कम उम्र में ही पकड़ लिया गया था। उन्हें उस यातना का कोई स्मरण नहीं था और न ही उन्होंने कोई कड़वाहट दिखाई। वे मनसबदार के प्रति वफादार थे और बिना किसी विरोध के हवेली के अधिकार को स्वीकार करते थे। उनकी आयु लगभग तीस से चालीस वर्ष थी। अन्य छह गौड़ा देश से थे। उन्होंने मुझे बताया कि उस देश में माता-पिता अपने ही चार साल के बेटों के अंडकोष तोड़ देते हैं और फिर उन्हें गुलाम बाजार में बेच देते हैं क्योंकि वे कर नहीं चुका सकते। बार-बार बेचे जाने और कई बिचौलियों के हाथों से गुजरने के बाद, वे यहाँ पहुँच गए। उनकी वफादारी केवल उस मालिक के प्रति थी जिसने उन्हें भोजन और आश्रय दिया था। उनके मन में ज़नाना में उनके साथ किए गए व्यवहार की न्यायसंगतता पर सवाल उठाने का विचार भी नहीं आता था। उनके जीवन की स्वाभाविक स्थिति भोजन, काम और नींद थी।

पिताजी का हिजड़ों पर किया गया शोध बत्तीस पन्नों का हस्तलिखित था। इसमें मुग़ल काल में भारत की यात्रा करने वाले प्रमुख यूरोपीय यात्रियों जैसे मानुकी और बर्नियर के यात्रा वृत्तांत शामिल थे—ये पुस्तकें अब छपाई में नहीं हैं और लंबे समय से अनुपलब्ध हैं। इसका मतलब है कि उन्हें पुस्तकालय में कई दिन बैठकर नोट्स बनाने पड़े। इसका मतलब है कि वे बैंगलोर में थे। और उन्हें पता था कि मैं बैंगलोर में

रहती हूँ। फिर भी, वे मुझसे मिलने एक बार भी नहीं आए... क्या उन्होंने कभी मेरे बारे में सोचा भी? इन बत्तीस पन्नों में मेरे बारे में एक शब्द भी नहीं है।
पिता के पत्र में लिखा था:
अपने बचपन में, मुगल राजकुमारों को रूस, इथियोपिया, काकेशस और गुरजिस्तान (आज का जॉर्जिया) जैसे देशों से दास व्यापार बाजार के माध्यम से लाई गई महिलाओं और हिजराओं की देखरेख में ज़नाना में प्रशिक्षित किया जाता था। इनमें से अधिकांश हिजरा अपनी उम्र, पृष्ठभूमि और संस्कृति के अनुपात में भ्रष्ट थे। वे राजकुमारों को उच्च अधिकारियों के जूते चाटने और अपने से नीचे वालों को लात मारने की कला सिखाते थे। (बर्नियर. मुगल साम्राज्य में यात्राएँ 1656-1668. ए.वी. स्मिथ द्वारा संशोधित, ऑक्सफोर्ड, 1934, पृष्ठ 144-45।)
पिताजी का संदेश फिर से:
हिजड़ों के मुख्य कर्तव्यों में महिलाओं की सेवा करना, उनकी गतिविधियों पर नज़र रखना और संदिग्ध व्यवहार की सूचना नज़र को देना शामिल था। इस व्यवस्था के कारण महिलाओं को अपने गुप्त संबंधों को पूरा करने के लिए हिजड़ों के साथ अच्छा व्यवहार करना पड़ता था। इन संबंधों में शराब और अफीम प्राप्त करना शामिल था, और सबसे जोखिम भरे मामले में, अपने प्रेमियों को ज़नाना में छिपाकर लाना भी शामिल था। हालांकि, कुछ मामलों में, इन हिजड़ों को स्वयं इन महिलाओं की कामुक आवश्यकताओं को यथासंभव पूरा करने के लिए बुलाया जाता था। ऐसे हिजड़ों का इन महिलाओं पर विशेष अधिकार होता था। (पेल्सर्ट, फ्रांसिस्को। जहांगीर का भारत, डब्ल्यू.एच. मोरलैंड और पी. गेल द्वारा अनुवादित, कैम्ब्रिज 1925, पृष्ठ 99।)

हिजड़े उन राजकुमारों को भी स्त्रियाँ मुहैया कराते थे जो अभी-अभी यौवन प्राप्त कर चुके थे।—एक अन्य टिप्पणी (के.एस. लाल: मुगल हरम, पृष्ठ 158–59, 184–85, 187–88)।

औरंगज़ेब ने आगरा जेल में अपने पिता को कैद करके एक हिजड़े को मुख्य जेलर नियुक्त किया था। अकबर के पुत्र जहांगीर ने अपनी पुस्तक 'तुज़ुक-ए-जहाँगीरी' में लिखा है: 'हिंदुस्तान में, विशेषकर बंगाल के अधीन सिलहट प्रांत में, यह प्रथा थी कि लोग अपने कुछ बेटों को नपुंसक बनाकर उन्हें राजस्व के बदले राज्यपाल को सौंप देते थे (माल-वाजिबी)। यह प्रथा अन्य प्रांतों में भी अलग-अलग स्तर पर प्रचलित थी, और इस प्रकार हर साल कुछ बच्चे बर्बाद हो जाते थे और संतानोत्पत्ति से

वंचित हो जाते थे।' उस समय का बंगाल बहुत विशाल क्षेत्र में फैला हुआ था, जिसमें उत्तर की पर्वत श्रृंखलाएँ, उड़ीसा का सरकार क्षेत्र और बिहार के कुछ भाग शामिल थे। यह प्रथा शीघ्र ही पूरे मुगल साम्राज्य में फैल गई। जहांगीर ने इस प्रथा के साथ-साथ नपुंसकों की तस्करी पर भी रोक लगाने का आदेश जारी किया। हालांकि, इस आदेश को अपेक्षित सफलता नहीं मिली, क्योंकि गवर्नरों ने उस कानूनी प्रावधान का फायदा उठाया जिसके तहत वे पैसे के बदले हिजड़ों को ले सकते थे। जहांगीर आगे बताते हैं कि सैयद खान चुगताई के पास बारह सौ हिजड़े सेवा में थे। इसके अलावा, हिजड़ों की तस्करी बहुत लाभदायक थी क्योंकि हिजड़ों की कीमत एक साधारण गुलाम से तीन गुना अधिक थी। भारतीय हिजड़ों की मांग न केवल दिल्ली में बल्कि इस्फ़हान और समरकंद में भी बहुत थी। हालांकि औरंगजेब ने धार्मिक कारणों से लड़कों को नपुंसक बनाने की प्रथा पर प्रतिबंध लगा दिया था, लेकिन उसने वयस्क पुरुषों को नपुंसक बनाने की प्रथा पर रोक नहीं लगाई। उसके शासनकाल में, 1659 में गोलकोंडा शहर (आज का हैदराबाद) में लगभग 22,000 लोगों को नपुंसक बनाया गया था। हालांकि, जहांगीर ने कहीं अधिक दूरदर्शिता दिखाई: वह कर के बदले बिना नपुंसक बनाए हुए लड़के चाहता था। वह पहले उनका धर्म परिवर्तन करवाता था, जिससे यह सुनिश्चित हो सके कि इन लड़कों से उत्पन्न होने वाली आने वाली पीढ़ियां मुसलमान हों।

मैं अपने उपन्यास में शोध के इन बत्तीस पन्नों को शामिल करना चाहता हूँ, लेकिन इससे उपन्यास की लय बिगड़ जाएगी। पिताजी के शोध और आगे पढ़ने के लिए दिए गए सुझावों ने यह सुनिश्चित किया कि सामग्री प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हो। हालाँकि, सामग्री की प्रचुर उपलब्धता का अर्थ यह नहीं है कि ऐतिहासिक उपन्यास गुणवत्तापूर्ण होगा। रचना में उस सारे शोध का सार झलकना चाहिए। मैं इतिहास पर कोई अकादमिक कृति नहीं लिख रहा था। पिताजी ने ऐसा करने की योजना बनाई थी।
मैं मंत्रमुग्ध होकर उनके नोट्स पढ़ता रहा:
कई हिजड़े आगे चलकर शक्तिशाली सेनापति बने। सुल्तान बलबन के वज़ीर, मंत्री इमामुद्दीन रेहान; अल्लाह-उद-दीन खिलजी के सेनापति, कुफ्फर हज्जार दिनारी; और कुतुब-उद-दीन मुबारक खिलजी के विश्वासपात्र, खदौशा, ऐसे उल्लेखनीय हिजड़े थे जो सत्ता के उच्च पदों तक पहुंचे। 1394 में, सुल्तान महमूद ने अपने मंत्री,

ख्वाजा जहान मलिक सरवर नामक एक काले हिजड़े को मलिक-उस-शिर्क की उपाधि देकर सम्मानित किया और उन्हें जौनपुर का सूबेदार बनाया। जौनपुर पर नियंत्रण करने के कुछ ही दिनों बाद, मलिक सरवर ने एक भीषण अभियान चलाया जिसके परिणामस्वरूप उन्होंने पश्चिम में कोल (आज का अलीगढ़) से लेकर पूर्व में बिहार के तिरहाट तक के पूरे क्षेत्र पर कब्जा कर लिया। इस अभियान के कारण उन्हें सुल्तान-उस-शिर्क की उपाधि प्राप्त हुई। मुगल शासन के दौरान, नाज़िर और ख्वाजा सरों जैसे निचले दर्जे के हिजड़े धीरे-धीरे मनसबदार और सूबेदार के पद तक पहुँच गए। हालाँकि, ये निचले पद पूरी तरह से अपमानजनक नहीं थे। उन्हें ऐतमाद खान या ऐतबार खान (विश्वसनीय दरबारी) माना जाता था। बाबर और हुमायूँ दोनों की सेवा करने वाले एक ऐतबार खान को अकबर ने उनकी वफादारी के सम्मान में दिल्ली का सूबेदार बनाया था। अकबर ने एक अन्य ऐतबार खान को हजार मनसबदार नियुक्त किया और उन्हें अर्थव्यवस्था को मजबूत करने का जिम्मा सौंपा, और एक अन्य को चार हजार मनसबदार नियुक्त करके गुजरात भेजा गया। औरंगजेब ने हिजड़ों के मुख्य पर्यवेक्षक बख्तावर खान को हजार मनसबदार के पद पर पदोन्नत किया। मानुकी ने औरंगजेब की सेवा में चालीस नाज़िरों की एक सूची दी है, जिसमें प्रत्येक नाज़िर की उपाधि और पद का विवरण है। ये हिजड़े अपनी खोई हुई मर्दानगी की भरपाई के लिए भयंकर वीरता का प्रदर्शन करके ऊंचे ओहदे पर पहुंच गए होंगे। हालांकि, ये अपवाद मात्र थे। हर हिजड़ा सम्राट का ध्यान आकर्षित करने का सपना नहीं देख सकता था।

मैंने अपने उपन्यास के नायक के भाग्य को इस तरह मोड़ने पर विचार किया कि वह बादशाह का ध्यान आकर्षित करे, लेकिन तुरंत ही उस विचार को त्याग दिया क्योंकि अगर मैंने ऐसा किया तो यह न केवल पिता द्वारा अपने अथक शोध से प्राप्त अंतर्दृष्टियों के विपरीत होगा बल्कि यह इतिहास को ही तोड़-मरोड़ कर पेश करना होगा: इसका मतलब अंडकोष फोड़ने की संस्कृति को उचित ठहराना होगा।

~

मुझे ज़नाना में रखे जाने के लगभग दो महीने बाद, सुल्ताना बानू बेगम ने मुझे बुलवाया। किसी भी नौकर को किसी भी बेगम से बात करने की आज़ादी नहीं थी। इसे अवज्ञा और बदतमीज़ी माना जाता था। बेगम सुल्ताना ज़नाना में आने वाले हर

नए दास या वहाँ से जाने वाले हर दास पर नज़र रखती थीं। नज़र ने मुझे बहुत पहले ही बता दिया था कि वह एक प्रशासनिक प्रमुख के समान थीं, जब उन्होंने मुझे ज़नाना के अंदर मेरे व्यवहार और आचरण की हर बारीकी के बारे में सिखाया था। वास्तव में, मुझे औपचारिक रूप से ज़नाना में तभी शामिल किया गया जब उन्हें पूरा यकीन हो गया कि मैं वहाँ रहने के योग्य हूँ। जब मैं वहाँ पहुँचा, तो बेगम साहिबा अपने झूले पर एक मुलायम तकिए के सहारे आराम कर रही थीं, जो बहुत धीरे-धीरे आगे-पीछे हिल रहा था। थोड़ी दूरी पर खड़ी एक नौकरानी छत से लटकते हुए तीन गज लंबे और एक गज चौड़े खसखस के पंखे से जुड़े जूट के तारों को लयबद्ध तरीके से हवा कर रही थी। उनके हाथ में एक अगरबत्ती थी और जब उन्होंने मुझे देखा, तो उन्होंने उंगली से इशारा किया। मैं थोड़ा और करीब गया लेकिन सम्मानजनक दूरी पर रुक गया, फिर सलाम अलैकुम कहा, फिर झुककर मुजरा किया।

'क्या आप जन्म से ही नपुंसक हैं या आपने इलाज करवाया है?' बेगम ने दृढ़ लेकिन गरिमापूर्ण स्वर में पूछा।

मैंने अत्यंत विनम्रता से कहा, 'मेरा इलाज हुआ। मनसबदार साहब ने मुझे खरीदा और फिर दयालु साहिबा की सेवा में सौंपने से पहले मेरा इलाज करवाया।'

'क्या तुम्हें युद्ध में बंदी नहीं बनाया गया था?'

'हाँ।'

"यदि तुमने युद्ध से पहले झूठे धर्म को त्यागकर एकमात्र सच्चे धर्म को स्वीकार न किया होता, तो युद्ध में पराजित होने पर भी तुम्हें इस नियति का सामना न करना पड़ता। तुमने देरी क्यों की?"

मैंने कोई जवाब नहीं दिया... मेरे पास कोई जवाब नहीं था। मैंने खुद से यह सवाल सौ बार पूछा है। क्यों? पिता ने मौका मिलने पर भी अपना धर्म नहीं छोड़ा। क्यों? अगर हम इस्लाम धर्म अपना लेते, तो बादशाह, आलमगीर, दुनिया का शासक हम पर हमला नहीं करता। हम अब भी अपने राज्य के शासक होते। ज़्यादा से ज़्यादा, हम बादशाह के जागीरदार होते। या मैं बादशाह की किसी भरोसेमंद रियासत का मनसबदार या सूबेदार बन सकता था। हम एक पत्थर के बने शक्तिहीन देवता में विश्वास करने के कारण पूरी तरह बर्बाद हो गए। मेरे पास भी ऐसा ही महल हो सकता था और ऐसी ही ज़नाना हो सकती थी। अब मैं बस एक हिजड़ा और गुलाम था। क्यों? ये विचार हमेशा मेरी अज्ञानता के पुराने विश्वास के खिलाफ हिंसक लेकिन बेबस गुस्से

में बदल जाते थे। बेगम के सवाल ने इस आग को और भड़का दिया और मैं अंदर ही अंदर फिर से भड़क उठा, लेकिन चेहरे पर कुछ नहीं दिखाया।

यह भांपते हुए कि मैं जवाब नहीं दूंगा, उसने आगे पूछा, 'क्या आप दिन में पांच बार नमाज़ पढ़ते हैं?'

मैं करता हूँ, लेकिन नियमित रूप से नहीं।

'ऐसा करो। इससे तुम्हें लाभ होगा। मैंने सुना है कि कई हिजड़े मनसबदार और सूबेदार बन गए हैं। तुम भी कभी राजकुमार थे। तुम्हारा आचरण सुसंस्कृत है और तुम्हारी वाणी परिष्कृत है। इसीलिए मैंने तुम्हें यह सलाह दी है।'

मुझे उसकी सलाह समझदारी भरी लगी और उस दिन से मैंने नियमित रूप से नमाज़ पढ़ना शुरू कर दिया।

चार साल बाद, मोइनुद्दीन साहब के ज़नाना में जीवन दूसरों के जीवन को देखने की एक नीरस गतिविधि बन गया था। मेरा कोई निजी जीवन नहीं था। सब कुछ वैसा ही था—नई कंचिनियों और कैदियों को अनिश्चित अंतराल पर भर्ती किया जाता था और जिन महिलाओं की जवानी, सुंदरता और आकर्षण फीका पड़ने लगा था, उन्हें निचले दर्जे के मनसबदारों या अन्य दरबारियों को बेच दिया जाता था। कुछ वृद्ध महिलाओं को रखा जाता था, लेकिन ऐसी महिलाओं ने अपने निर्दोष आचरण और बेदाग आज्ञाकारिता के बल पर मनसबदार और उनकी बेगमों का दिल जीत लिया होता था। उन्हें भोजन और वस्त्र दिए जाते थे और वे किसी तरह अपना जीवन चलाती रहती थीं। हालांकि, सभी महिलाएं इस तरह का निर्दोष आचरण दिखाने के लिए खुद को मजबूर नहीं कर पाती थीं, क्योंकि वे हर पल जानती थीं कि जवानी ढलते ही उनका भाग्य और भी बुरा हो जाएगा। वे ज़नाना के नियमों का पालन करती थीं क्योंकि उनके पास कोई और विकल्प नहीं था, लेकिन उनके अंदर निराशा और क्रोध उबलता रहता था। जिन महिलाओं को यहाँ से बाहर भेज दिया जाता था, उन्हें आमतौर पर शैतानपुरा में घर मिल जाता था, जो वेश्यावृत्ति के लिए कुख्यात था। ऐसा कहा जाता है कि अकबर बादशाह के समय से ही शैतानपुरा पर राजमहल की सीधी निगरानी थी। अकबर ने एक विशेष अभिलेखपाल नियुक्त किया था जो वहाँ आने-जाने वाले लोगों का रिकॉर्ड रखता था। हालांकि, अमीर, सूबेदार, मनसबदार और अन्य रईस अपने मित्रों को वहाँ मनोरंजन के लिए ले जाते थे और अभिलेखपाल को रिश्वत देकर अपने नाम रजिस्टर में दर्ज नहीं करवाते थे।

बेगम सुल्ताना बानू लगभग हर चार महीने में एक बार बादशाह के ज़नाना में जाया करती थीं। उनकी हर यात्रा उस ज़नाना के निमंत्रण पर ही होती थी, जो उनके लिए अत्यंत गर्व की बात होने के साथ-साथ रुतबे का एक सशक्त प्रतीक भी था। बेगम की पालकी पूरी तरह रेशमी कपड़े से ढकी होती थी, जिसके दोनों ओर छोटी-छोटी खिड़कियाँ होती थीं। प्रत्येक खिड़की पर पर्दे लगे होते थे, जिन्हें उठाकर वह बाहर झाँक सकती थीं, लेकिन बाहर की दुनिया अंदर क्या है, यह नहीं देख सकती थी। आठ हट्टे-कट्टे हिजड़े, चार आगे और चार पीछे, पालकी को अपने कंधों पर उठाते थे। तलवारों और धनुष-बाण से लैस सैनिकों का एक अतिरिक्त पहरा पालकी के पीछे चलता था। लगभग दस महिला नौकरानियाँ, जो सिर से पैर तक काले, बेढंगे वस्त्रों में ढकी होती थीं, पहरेदार दल के पीछे चलती थीं।

एक दिन बेगम साहिबा ने मुझे बादशाह के ज़नाना में दर्शन के लिए अपने साथ चलने का आदेश दिया। किले के मुख्य द्वार पर पहुँचते ही, वहाँ मौजूद पहरेदारों ने हमारे दल की पूरी तरह से जाँच की। उन्होंने बिना किसी संदेह के पुष्टि कर ली कि मैं वास्तव में एक हिजड़ा हूँ। महिला पहरेदारों ने महिला नौकरानियों की जाँच की। पालकी उठाने वाले हिजड़ों और पहरेदारों को किले में प्रवेश करने की अनुमति नहीं दी गई। इस जाँच से गुज़रने के बाद, हम किले में दाखिल हुए और कुछ दूर जाकर बाईं ओर मुड़कर ज़नाना के मुख्य द्वार के बाहर खड़े हो गए। अब सबसे पहले बेगम साहिबा की महिला पहरेदारों ने जाँच की और उन्हें अंदर जाने दिया। उनके नौकर उनके पीछे गए, जबकि एक हट्टे-कट्टे हिजड़े ने मेरी जाँच की और मुझे ज़नाना में प्रवेश करने योग्य घोषित किया। मोइनुद्दीन का ज़नाना इस विशाल दुनिया के सामने एक छोटी सी झोपड़ी जैसा था। अनगिनत महल पूरी तरह से संगमरमर से बने थे, जिनमें से प्रत्येक अपने आप में एक महल था, और प्रत्येक महल किसी न किसी बेगम का था। हर हवेली में अलग-अलग आकार के बगीचे और चारों ओर छोटी-छोटी नहरें थीं। मोइनुद्दीन की बेगम के नौकरों की गिनती उंगलियों पर की जा सकती थी, लेकिन यहाँ हर बेगम के पास नौकरों की पूरी फौज होती थी, जो लाल, हरे और नारंगी रंग के चमकदार कपड़े पहनती थीं। उनके सोने के हार और चूड़ियाँ धूप में चमकती थीं और ऐसा लगता था मानो वे राजकुमारियाँ हों। लेकिन मेरी ज़नाना में रहने की आदत ने तुरंत ही उनकी असली पदवी और रुतबा पहचान लिया—दरअसल, यह मुश्किल

नहीं था। ज़नाना में चार साल बिताने से मुझे किसी व्यक्ति का चेहरा देखकर ही उसकी पदवी पहचानने की कला आ गई थी।

सुल्ताना बेगम, औरंगज़ेब बादशाह की तीसरी बेगम, रानी उदयपुरी महल की निजी मित्र थीं। हालाँकि, यह मित्रता रानी साहिबा की शर्तों पर आधारित थी। मुझे बहुत बाद में पता चला कि रानी उदयपुरी महल मूल रूप से गुरजिस्तान की एक दासी थीं। औरंगज़ेब बादशाह के बड़े भाई दारा शिकोह उन्हें अपने ज़नाना में लाए थे। इसके बाद, दोनों भाइयों के बीच मुगल सिंहासन के लिए एक भयंकर सत्ता संघर्ष छिड़ा। इसका अंत औरंगज़ेब बादशाह के हाथों बड़े भाई की हार और मृत्यु के साथ हुआ। रानी उदयपुरी महल की अतुलनीय सुंदरता ने औरंगज़ेब बादशाह का दिल जीत लिया। उन्होंने चतुराई से बदलते भाग्य को भांप लिया और अपना प्रेम नए बादशाह की ओर मोड़ लिया। उनका बादशाह के जीवन में एक विशेष स्थान था और कहा जाता है कि बादशाह उन्हें किसी अन्य बेगम की तरह लाड़-प्यार करते थे। रानी उदयपुरी महल को अत्यधिक शराब पीने की आदत थी और उनका नशे में किया गया व्यवहार इतना अप्रिय था कि बादशाह और वहाँ मौजूद सभी लोगों को बहुत शर्मिंदगी उठानी पड़ती थी। मैंने अपनी आँखों से देखा है कि स्वयं शराब से पूरी तरह परहेज करने वाले बादशाह ने उनकी नशे में की गई हरकतों को कैसे अनदेखा किया। मैं कल्पना भी नहीं कर सकता कि उनकी जगह किसी और की क्या हालत होती।

यह आम रिवाज था कि जब निचले दर्जे के लोग किसी उच्च पदस्थ व्यक्ति से मिलने जाते थे, तो वे उनके दर्जे के अनुरूप उपहार लाते थे। यह एक बहुत पुरानी परंपरा थी जिसे मुगलों ने कायम रखा। बदले में, उच्च पदस्थ व्यक्ति भी आगंतुक को इसी तरह की बख्शीश (उपहार) देता था। सुल्ताना बेगम रानी उदयपुरी महल को अक्सर एक महंगा हार, चूड़ी या माणिक और मोती देती थीं। फिर भी, यह औरंगजेब बादशाह की प्रिय रानी के लिए पर्याप्त उपहार नहीं था। दरअसल, वह उनकी कानूनी पत्नी नहीं थीं, लेकिन उनका दर्जा उनकी कानूनी रूप से विवाहित पत्नियों से कहीं अधिक था। और अब, बादशाह के ज़नाना के भीतरी कमरों में से एक में खड़े होकर, मैंने सुल्ताना बेगम की आवाज़ सुनी जो मुझे बुला रही थी। मैंने महसूस किया कि महल साहिबा की निगाहें मेरे पूरे शरीर पर टिकी हुई हैं, जैसे वह मुझे परख रही हों। सुल्ताना बेगम मेरी ओर मुड़ीं और बोलीं, 'मैंने परम आदरणीय महल साहिबा को आपके बारे में बहुत सी अच्छी बातें बताई हैं। वह आपसे बहुत प्रसन्न हैं। आपका

जीवन अब सचमुच सुखमय हो गया है!' मैंने तुम्हें उसे उपहार में दिया है। उसे भी वही वफादारी, आज्ञाकारिता, समर्पण और अच्छा व्यवहार दिखाओ जो तुमने मुझे इन सभी वर्षों में दिखाया है। उसके हाथों से जहर को अमृत समझकर पी लो।

रानी उदयपुरी महल प्रसन्न हुईं। उन्होंने हल्के से सिर हिलाकर अपनी सहमति व्यक्त की। मैंने एक पल के लिए उनकी ओर देखा। उनका शरीर लगभग चमकदार आभूषणों से ढका हुआ था।

मुझे बहुत खास महसूस हुआ... मेरा मतलब है, बादशाह के ज़नाना में सेवा करना मेरे लिए वाकई खास था! मैंने इस नए उत्साह में पूरे दो दिन बिताए। मोइनुद्दीन साहब के ज़नाना की जानलेवा एकरसता से यह एक राहत भरी मुक्ति थी। दूसरी ओर, मैं वहाँ सबको जानती थी और मैंने कई अच्छे दोस्त बना लिए थे। मैं कई कंचिनियों, नौकरानियों और अन्य हिजड़ों की विश्वासपात्र थी। मुझे अच्छा लगता था कि वे अपनी निजी समस्याओं को मेरे साथ साझा करते थे और मुझ पर भरोसा इसलिए करते थे क्योंकि मैं असीम धैर्य से उनकी बातें सुनती थी और राज़ रखती थी। लेकिन अंत में, उनकी समस्याएँ एक जैसी ही थीं। छोटी-छोटी बातों पर झगड़ा। ईर्ष्या। चुगली। चिंता।

लेकिन यह ज़नाना अलग था। यह एक पूरी दुनिया थी, जिसे आप कभी पूरी तरह से जान नहीं सकते थे, जहाँ दिशाहीन भूलभुलैया में खो जाना आसान था। लेकिन यह एक रोमांचक... एक खास दुनिया थी। इस दुनिया ने पूरे हिंदुस्तान का भविष्य तय किया। यह वह सागर था जिसमें राजनीतिक गपशप की अनगिनत नदियाँ आकर मिल जाती थीं। राजनीतिक और सैन्य निर्णय हमेशा दीवान-ए-आम या दीवान-ए-खास—बादशाह के निषिद्ध गुप्त कक्षों—में अत्यंत गोपनीयता से लिए जाते थे। फिर भी, खबरें ज़नाना तक पहुँच ही जाती थीं। चुनिंदा समूह सख्त पाबंदियों के बावजूद एक-दूसरे के कानों में राजनीतिक बातें फुसफुसाते थे। यह आम बात थी कि एक ही हिजड़ा कई समूहों की फुसफुसाहटों में शामिल होता था। इस तरह, हर कोई सब कुछ जान जाता था।

7

मुझे लगता है कि ये मेरी ही गलती है। एक आदर्श पत्नी को अपने पति के कपड़े धोने चाहिए, उन्हें इस्त्री करना चाहिए, उसका मनपसंद खाना बनाना चाहिए और उसे बिस्तर पर सुख देना चाहिए। या तो उसे ये सब खुद करना चाहिए या किसी नौकरानी से करवाना चाहिए... सिवाय सुख देने वाले हिस्से के। लेकिन आज के ज़माने में, जब औरतें भी मर्दों की तरह घर से बाहर काम करती हैं— दफ्तरों में, निर्माण स्थलों पर, बसों में और अस्पतालों में—तो एक पत्नी को आदर्श पत्नी होने की क्या ज़रूरत है? मैं ऐसी औरतों को जानती हूँ जो अपने पति से घर के कामों में हाथ बँटाने की माँग करती हैं: खाना बनाना, कपड़े धोना, सफाई करना वगैरह। मैं कभी इतनी माँग करने वाली नहीं रही, लेकिन जिस तरह वो मुझसे वहाँ जाकर उसकी ज़रूरतें पूरी करने की उम्मीद करता है, वैसे ही आमिर को ये ख्याल क्यों नहीं आया कि वो एक बार नरसपुरा आकर मेरी ज़रूरतें भी पूरी कर सकता है? बस दो घंटे की ड्राइव है। उसका ये बहाना कि वो मुसलमान है और यहाँ के गाँव वाले उसे पसंद नहीं करेंगे, बिल्कुल भी भरोसेमंद नहीं है। आमिर की ज़िद के पीछे कोई और ही वजह होगी, लेकिन... सिर्फ़ उसकी ज़रूरत पूरी करने के लिए बैंगलोर जाना, क्योंकि ये मेरा फर्ज़ माना जाता है, मुझे घिनौना लगता है। पिछली बार जब मैं वहां गई थी तब जो कुछ हुआ था, उसने उसके साथ प्रेम करने की मेरी सारी इच्छा को खत्म कर दिया है।

मुझे लगता है कि उनके यहाँ आने से इनकार करने का असली कारण यह है कि मैंने हम्पी वृत्तचित्र की पटकथा नहीं लिखी थी। और शायद मैंने उनकी पहले से ही आहत स्वाभिमान पर नमक छिड़का जब उन्होंने पटकथा पर मेरी राय पूछी, जिसे उनके सहायक राममूर्ति ने लिखा था।

आपकी डॉक्यूमेंट्री उन स्वघोषित बुद्धिजीवियों की रचनाओं से अलग नहीं है। यह उसी घिनौनी रणनीति का अनुसरण करती है—सच्चाई को दबाना और झूठे सुझाव देना—और उसी धोखे से भरी है। सच कहूँ तो, यह एक घटिया रचना है। हम्पी में मंदिरों और मूर्तियों को नष्ट करने वाली ताकतों का अफगानिस्तान, इराक, ईरान, अरब, तुर्की और मिस्र में इसी तरह की तबाही मचाने का लंबा इतिहास रहा है। उन्होंने बस इस परंपरा को जारी रखा है, एक ऐसा तथ्य जिसे आपने अपने राजनीतिक संरक्षकों को खुश करने के लिए बेशर्मी से नजरअंदाज कर दिया है। और

आपके निर्देशों के अनुसार पटकथा लिखने से इनकार करना मेरा सही निर्णय था: मैं सच्चाई का अपमान नहीं कर सकता। मुझे इस बात से कोई आपत्ति नहीं है कि आपने इसे राममूर्ति से बनवाया। मुझे उम्मीद है कि आपके संरक्षक खुश होंगे, और उन्होंने आपको और भी काम और खूब सारा पैसा दिया होगा।

क्या मेरे पत्र का लहजा सामान्य से अधिक तीखा था? जब आपने सच को सीधे-सीधे बताने का फैसला कर लिया हो, तो लहजे और शिष्टाचार का कोई महत्व नहीं रह जाता।

~

पिछले एक साल से जब से मैंने नरसपुरा को अपना घर बनाया है, मैंने अखबार पढ़ना छोड़ दिया था। इसका कारण व्यावहारिक था—यहाँ कोई अखबार बेचने वाला नहीं था। मैं अखबारों के बारे में भूल ही गया था, लेकिन हाल ही में बैंगलोर की यात्रा के दौरान जब मैंने कुछ पुराने अंक पढ़े, तो मुझे एहसास हुआ कि मैं केवल अतीत के इतिहास में डूबा हुआ था और वर्तमान में क्या हो रहा है, उससे बेखबर था। लौटते समय, मैं कुनिगल में रुका, बस स्टॉप पर बने अखबार स्टैंड पर गया और वहाँ के एजेंट से बात की। वह ब्रह्मरम्भा बस सेवा के माध्यम से मुझे तीन कन्नड़ और एक अंग्रेजी अखबार भेजने के लिए सहमत हो गया। मुझे राजन्ना के होटल से अखबार लेने थे। मैंने अखबार बेचने वाले को कुछ अग्रिम राशि दी और सौदा पक्का कर लिया।

मैंने पहले की तरह अखबारों को शुरू से अंत तक पढ़ना शुरू कर दिया। देश में क्या हो रहा था, इसका आकलन करने में मुझे ज्यादा समय नहीं लगा: राम जन्मभूमि पर बनी मस्जिद को गिराए जाने के तीन साल बाद भी, मुसलमानों से भी ज्यादा राजनीतिक दल इस घटना को जिंदा रखने के लिए आपस में होड़ कर रहे थे। खैर... सिर्फ राजनीतिक दल ही नहीं, बल्कि बुद्धिजीवी, लेखक, साहित्यकार और कलाकार भी। मैं लगभग उनकी यही बात सुन सकता था: इतिहास में यही वह समय है, यही वह समय है, जो हर भारतीय को यह साबित करने के लिए प्रेरित करता है कि वह प्रगतिशील है या नहीं! ज्यादातर अखबार लंबे लेखों, संपादकीय लेखों और विचारों से भरे हुए थे, जिनमें लगातार यही बात दोहराई जा रही थी। प्रगतिशीलता की कसौटी काफी हद तक अनुमानित थी: क्या आप उसी स्थान पर मस्जिद के पुनर्निर्माण के

प्रयास का समर्थन करते हैं या नहीं। साथ ही, वे तीखे लेख भी लिख रहे थे जिनमें मंदिर के पुनर्निर्माण का समर्थन करने वालों को व्यंग्यपूर्वक 'राम भक्त' कहा जा रहा था।

कर्नाटक साहित्यकार एवं कलाकार संघ ने कन्नड़ के सभी प्रमुख समाचार पत्रों में एक विज्ञापन प्रकाशित किया। इसमें काफी खर्च आया होगा क्योंकि यह पहले पृष्ठ का आधा हिस्सा और मध्य पृष्ठ का भी हिस्सा कवर करता था। कलाकार संघ ने मस्जिद विध्वंस के दोषियों को तीन साल बाद भी पकड़ने में हुई घोर धीमी प्रगति के खिलाफ कड़ा विरोध जताया। अपराधी अभी भी बेखौफ घूम रहे थे क्योंकि उन्होंने देश की जांच और न्यायिक प्रक्रियाओं की खामियों का सफलतापूर्वक फायदा उठाया था। इसलिए, कलाकार संघ का यह नैतिक कर्तव्य था कि वह 6 दिसंबर को बेंगलुरु के एक खुले रंगमंच में 'ईंट' नामक नाटक का मंचन करके इस स्थिति का सार्वजनिक रूप से विरोध करे। मैंने क्रेडिट पढ़े। इस नाटक की अवधारणा और पटकथा 'प्रसिद्ध प्रगतिशील बुद्धिजीवी और शिक्षाविद' प्रोफेसर राममूर्ति द्वारा लिखी गई थी, निर्देशन 'उतने ही प्रसिद्ध' कांतराज हेम्मादी ने किया था, प्रकाश व्यवस्था 'प्रसिद्ध' रंगमंच कलाकार तेजनाथ ने की थी, और कलाकारों में 'लोकप्रिय और सामाजिक रूप से जागरूक' अभिनेताओं की प्रभावशाली टोली शामिल थी - अनुराधा, मीना, वेंकट और अन्य। इसके बाद एक विस्तृत अनुच्छेद था जिसमें प्रोफेसर शास्त्री द्वारा हाल ही में संपन्न प्रेस कॉन्फ्रेंस में कलाकारों की प्रकृति, उनके संबंधों और उनकी सामाजिक, नैतिक और राजनीतिक जिम्मेदारी पर दिए गए उद्धरणों का भरपूर उपयोग किया गया था।

मैंने इसे देखने का फैसला किया। मैं कभी उसी समूह का हिस्सा था जिसमें ‘प्रगतिशील’ प्रोफेसर राममूर्ति, कांतराज हेम्मादी और बाकी लोग शामिल थे। नहीं, यह पूरी तरह सही नहीं है, वे कभी मेरे अनुयायी हुआ करते थे। और मैं अच्छी तरह जानता था कि वे यह नाटक क्यों मंचित कर रहे थे। किसी नेक इरादे से दूर, वे विध्वंस की स्मृति को कायम रखना चाहते थे—खैर, हिंदू इसे रामजन्मभूमि कहते थे, राम की जन्मभूमि, जबकि मुसलमान और बुद्धिजीवियों का पूरा समूह इसे बाबरी मस्जिद कहता था—विनाश की याद को, विवाद को हवा देने के लिए। मैं उन स्थितियों को अच्छी तरह जानता था जो नाटक पैदा करेगा और उन तकनीकों को भी जानता था जिनका उपयोग वे अपने पहले से तय निष्कर्ष को पुख्ता करने के लिए करेंगे... मैंने अतीत में ऐसे कई नाटक लिखे हैं। लेकिन अब, जब मैं इसके बारे में सोचता हूँ, तो

नाटक देखना एक और महत्वपूर्ण उद्देश्य पूरा करेगा। मैं मंच पर होने वाले उनके दिखावे की असलियत को प्रत्यक्ष रूप से जान सकता था और साहित्य और सक्रियता, कला और प्रतिबद्धता के बीच संबंधों पर अपने विचारों की तुलना और समीक्षा कर सकता था, और देख सकता था कि मेरा उपन्यास (जैसा कि अभी है, यह शायद एक लंबी लघु कहानी ही बनकर रह जाएगा) इन मापदंडों पर खरा उतरता है या नहीं। यह एक तरह से आत्मनिरीक्षण का अवसर था—क्या मेरा काम ऐतिहासिक सच्चाइयों के प्रति वफादार था? मुझे विश्वास था कि नाटक से मुझे इसका पता चल जाएगा। इसके अलावा, आमिर से मिले हुए तीन महीने से ज़्यादा हो गए थे। मुझे अपराधबोध हो रहा था। उसे पूरी तरह से नज़रअंदाज़ करना ठीक नहीं था।

बैंगलोर पहुँचते ही मैं सीधे घर चली गई। अमीना बानू ने बताया कि साहब नाटक देखने गए हैं। मैंने जल्दी से उनका बनाया हुआ टोस्ट खाया, चाय पी और जाने से पहले उनसे कहा कि आज रात मेरे लिए खाना बनाएँ। मैंने एक ऑटो रिक्शा लिया और खुले थिएटर पहुँच गई। वह आधा ही भरा था। ज़्यादातर दर्शक जाने-पहचाने चेहरे थे। मैं सीढ़ियों पर अकेली बैठ गई और धीरे-धीरे थिएटर के चारों ओर नज़र घुमाई। अचानक मुझे अपने कंधे पर एक हाथ महसूस हुआ और मैंने पीछे मुड़कर देखा, लेकिन इससे पहले कि मैं कुछ बोल पाती:

‘रज़िया? अरे! मुझे तो पहले से ही शक था! तुम्हें देखो! तुम्हें क्या हो गया?’

रत्नमाला। लगभग मेरी ही उम्र की। बीईएस कॉलेज में अंग्रेजी की लेक्चरर। शिक्षाविद। रंगमंच में नियमित रूप से सक्रिय।

'मुझे क्या हुआ है?'

मैंने तुम्हारे बारे में खबर सुनी है। तुम हमेशा के लिए किसी गाँव में बस गए हो। मुझे अपने दादाजी के गाँव की याद आ गई। मैं बहुत पहले वहाँ गया था। वो जगहें कितनी पिछड़ी हुई हैं! गंदी, दलदली और वो घटिया शौचालय! छी! तुम्हें पता है, मुझे वहाँ दो दिन बहुत तकलीफदेह गुज़रे और मैंने पेट में ही शौच रोके रखने का फैसला किया, बजाय इसके कि... तुम्हें पता ही है, कैसा होता है? मतलब, वहाँ कैसे रह सकते हो?

'बिल्कुल वैसे ही जैसे वहां रहने वाले बाकी लोग।'

ठीक है, मेरा मतलब है, यह सिर्फ स्वच्छता का मामला नहीं है, ठीक है? अपने बालों को देखो। तुमने उन्हें न तो काटा है और न ही रंगा है। और तुम्हारे चेहरे पर

झुर्रियां दिख रही हैं। तुम वहां क्यों गए थे?

वह मेरी प्रतिक्रिया का इंतजार किए बिना बोलती रही। मैंने उसे बोलने दिया और जब मुझे थोड़ी झुंझलाहट होने लगी, तो मैंने उसे बीच वाक्य में ही रोककर पूछा, 'लेकिन नाटक में तुम्हारा कोई रोल क्यों नहीं है?'

'अरे! आपको राममूर्ति के गुट के बारे में नहीं पता? ये तानाशाह तो हर किसी को निकाल देता है जो उसकी चापलूसी नहीं करता... मतलब, वो बच्चों को भी धमका सकता है। मैं तो वहाँ से चली गई। और ये तब जब वो... अरे! और मुझे यकीन है कि आपको ये पता ही होगा। आपके पति असल में निर्देशक हैं, लेकिन आप जानती ही हैं कि ये सब कैसे होता है। अगर "उन्हें" पता चल गया कि एक मुस्लिम ने इसका निर्देशन किया है, तो वे इसके खिलाफ दुष्प्रचार शुरू कर देंगे। कांतराज हेम्मादी सिर्फ कागजों पर निर्देशक हैं।'

मैंने फुसफुसाते हुए उससे पूछा, 'इसका वित्तपोषण किसने किया?' मैं उसके करीब झुक गई।

'वह पूछती है कि आंतरिक मंडल में कौन शामिल है!'

मैंने बनावटी मजाक में कहा, 'खैर, तुमने खुद ही मुझे बताया था कि मैं एक दूरदराज के गांव में फंसा हुआ हूं।'

'क्या इसका मतलब यह है कि आप आमिर से अलग हो गई हैं?'

'नहीं! इसका सीधा सा मतलब है कि मैं अब उनके खास समूह में नहीं हूँ। ठीक है, बस मुझे बताओ कि तुम्हें क्या पता है।' मैंने अपनी हथेली उसकी हथेली में रखी और उसे प्यार से दबाया, मानो यह एक गोपनीयता की शपथ हो।

'सच कहूं तो, फंडिंग के बारे में सिर्फ प्रोफेसर शास्त्री को ही पता है। वो बस एक कार्यक्रम के बारे में सोचते हैं, और पैसा अपने आप आ जाता है।'

फिर हमें ढोल की थाप सुनाई दी जिससे संकेत मिला कि नाटक शुरू होने वाला है। उसी समय, दर्शकों के बैठने की जगह की बत्तियाँ मंद पड़ने लगीं जबकि मंच पूरी तरह से जगमगा उठा।

कुछ ही मिनटों में, मुझे उनकी चुनी हुई तकनीक समझ आ गई—न्यायालय शैली की जिरह। यह तकनीक अभी नई थी, लगभग प्रायोगिक चरण में। राममूर्ति नाटककार नहीं थे। वे रचनात्मक व्यक्ति भी नहीं थे। वे बस जोड़-तोड़ कर काम चला सकते थे: उन्हें एक तैयार स्क्रिप्ट दे दीजिए और तकनीक बता दीजिए, वे बड़ी

कुशलता से दोनों को जोड़ देते। जब विषय पहले से लिखा हो और नाटक की तकनीक पूर्वनिर्धारित हो, तो यह कोई कठिन काम नहीं है; इन्हें जोड़ने के लिए किसी प्रतिभा की आवश्यकता नहीं होती।

नाटक की शुरुआत पांच पात्रों के एक-एक करके मंच पर धीरे-धीरे प्रवेश करने से हुई: एक इतिहासकार, महात्मा गांधी, एक हिंदू धर्मगुरु, एक अधेड़ उम्र की महिला और एक दलित। ये पांचों अभियोक्ता आकर एक छोर पर खड़े हो गए। फिर, ठीक अदालत की तरह, उद्घोषक ने न्यायाधीश के आगमन की ज़ोरदार घोषणा की। कुछ देर बाद, न्यायाधीश आए, अपनी सीट पर बैठे और फिर बोले,

'आरोपी को इस न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया जाए!'

दक्षिणपंथी राजनीतिक दल और दक्षिणपंथी संगठनों के और भी लोग पुलिसकर्मियों की सुरक्षा में मंच पर आए और उन्हें सीधे न्यायाधीश के सामने पेश किया गया। न्यायाधीश ने अपने सामने रखी एक पर्ची से पहला आरोप पढ़कर सुनाया।

मुख्य आरोपी पर आरोप है कि उसने जुलूस निकालकर और लोगों को ईंटें उठाने के लिए उकसाकर देश की सांप्रदायिक सद्भाव को भंग किया, ताकि वह राजनीतिक लोकप्रियता हासिल कर सके। इसके परिणामस्वरूप, उसने आम नागरिकों की भावनाओं को भड़काया, जिसके कारण मुगल सम्राट बाबर द्वारा निर्मित मस्जिद ध्वस्त हो गई। क्या आप इस न्यायालय को समझा सकते हैं कि क्या इतिहास की नींव को नष्ट करके नया इतिहास रचा जा सकता है?

जैसे ही न्यायाधीश का भाषण समाप्त हुआ, लगभग पंद्रह से बीस लोग चुपचाप मंच पर इकट्ठा हो गए और न्यायाधीश की कुर्सी के पीछे खड़े हो गए। ये आम नागरिक थे। उसी समय, बंदरों की वेशभूषा में सजे आठ कलाकार आरोपी के पीछे खड़े हो गए। उनकी पूंछें अकड़ी हुई और ऊपर की ओर उठी हुई थीं, जो लंकादहन नाटक में हनुमान (पवित्र हिंदू महाकाव्य रामायण में राम के विश्वसनीय सहायक और मित्र) की तरह दिखती थीं।

अब अभियोक्ता—हिंदू धर्मगुरु—की बोलने की बारी थी।

'हिंदू धर्म का सार सहिष्णुता है। लेकिन तुम,' उन्होंने बारी-बारी से आरोपी की ओर इशारा करते हुए आगे कहा, 'भगवान राम के नाम पर द्वेष के बीज बोकर इस पवित्र धर्म को कलंकित कर रहे हो। तुम सच्चे हिंदू नहीं हो। इतना ही नहीं: तुमने

भगवान राम, जो हम सब में निवास करने वाली दिव्य आत्मा हैं, को मात्र एक ईंट के समान बनाकर अधार्मिक कृत्य किया है!'

फिर महात्मा गांधी का वेश धारण किए अभियोजक ने कहा, 'भगवान राम, जिनका नाम मैंने नाथूराम गोडसे द्वारा मुझे गोली मारे जाने पर लिया था, वही भगवान मेरे हृदय में निवास करते थे। और आप, मेरे भाइयों, उनके लिए मंदिर बनाकर उस भगवान को कैद करना चाहते हैं? नाथूराम के प्रति मेरे मन में कोई द्वेष नहीं था और न ही आपके प्रति, मेरे भाइयों, लेकिन मैं आपके हृदय में छिपी बुराई की शक्ति से लड़ूंगा और उसे उखाड़ फेंकूँगा। वही बुरी शक्ति जिसने नाथूराम को प्रेरित किया, अब आपके रूप में आ गई है। इसने आपको अपने धर्म के भाइयों के पूजा स्थल को ध्वस्त करने के लिए प्रेरित किया है। आत्मनिरीक्षण करो, मेरे बच्चों। इस बुराई को अपने हृदयों से जड़ से उखाड़ फेंको। क्षमा ही एकमात्र दंड है जिसके आप पात्र हैं। यदि माननीय न्यायाधीश कठोर फैसला सुनाते हैं, तो मैं उनसे अपील करूँगा और यदि आवश्यक हुआ तो उन्हें आपसे क्षमा मांगने के लिए विवश करूँगा।'

और फिर महिला अभियोक्ता ने कहा, 'हम, शिक्षित, प्रबुद्ध और प्रगतिशील महिलाएं, हिंदू धर्म को पुनर्जीवित करने के लिए राम का उपयोग करने के आपके एजेंडे के पीछे के कुटिल इरादे को जानती हैं! आप किसी अन्य देवता का उपयोग कर सकते थे, लेकिन नहीं! राम द्वारा सीता के विरुद्ध किए गए अन्याय को पवित्रता के आवरण में महिमामंडित किया जाता है और जब तक रामायण अस्तित्व में रहेगी, यह इस संस्कृति में जारी रहेगा! आप इतिहास के नाम पर उसी संस्कृति को पुनर्जीवित करने की योजना बना रहे हैं, जबकि देश की आधी आबादी पहले ही इस सच्चाई से अवगत हो चुकी है कि जब तक राम की संस्कृति नष्ट नहीं हो जाती, एक महिला कभी स्वतंत्र नहीं होगी! मैं यहां घोषणा करती हूं कि कोई अन्य धर्म महिलाओं के साथ उतना बुरा व्यवहार नहीं करता जितना हिंदू धर्म करता है! इस अदालत को जवाब दें!'

जज की कुर्सी के पीछे खड़े आम नागरिकों के समूह ने अब चिल्लाकर कहा, 'वाह! वाह!'

जज ने मेज पर मुक्का मारते हुए चिल्लाकर कहा, 'चुप रहो! यह अदालत है!'

अब दलित—हिंदू समाज का सबसे शोषित वर्ग—बोलने लगा। 'राम किस बात का प्रतीक हैं? उन्होंने तपस्या करने के "पाप" के लिए एक निम्न जाति के व्यक्ति की हत्या कर दी! क्यों? ताकि राम समाज पर उच्च जातियों की पकड़ बनाए रख सकें।

और आप ऐसे पिछड़े चरित्र के लिए मंदिर बनाना चाहते हैं, जिसकी आप भगवान के रूप में पूजा करते हैं। इससे यह निर्विवाद रूप से सिद्ध होता है कि आप भारत के मूल निवासियों, हम पर, जो बाहर से आक्रमण करने वाले आर्यों द्वारा गुलामों की तरह सताए गए थे, उसी सदियों पुराने षड्यंत्र को फिर से जीवित करना चाहते हैं! इस न्यायालय को सिद्ध कीजिए कि ऐसा नहीं है।'

स्क्रिप्ट इस तरह बुनी गई थी कि आरोपियों का बचाव बेहद कमजोर लगे। हर मोड़ पर आरोपी हकलाते और उनके चेहरे पर बेबसी झलकती थी। अभियोजकों को इस तरह तैयार किया गया था कि वे नियमित अंतराल पर बचाव पक्ष की दलीलों को बाधित करें, उनकी कमजोर गवाही का मज़ाक उड़ाएँ और आम नागरिकों की भूमिका निभाने वाले लगभग पंद्रह कलाकार व्यंग्यात्मक हंसी के साथ बीच में आ जाएँ। उमा भारती की भूमिका निभाने वाली अभिनेत्री के संवाद अपेक्षाकृत जोशीले थे। उनकी गुस्से भरी दलील को महिला अभियोजक ने चतुराई से रोकते हुए बड़े ही आत्मसंतुष्ट लहजे में कहा, 'अरे? हमें आश्चर्य है कि आप, एक महिला होकर, राम का बचाव कैसे कर सकती हैं, यह देखते हुए कि उन्होंने सीता के साथ क्या किया...' इस पर आम नागरिकों ने एक बार फिर उपहास भरी हंसी गूँज उठाई।

मुझे उल्टी आने लगी। बेशर्मी हद से ज़्यादा थी...लेकिन...खैर, तीन साल पहले, मैं न सिर्फ़ इसकी तारीफ़ करता, बल्कि शायद इसे लिखता और इसमें अभिनय भी करता। लेकिन तकनीक के इस अनाड़ी प्रदर्शन को तो मैं ज़रूर खारिज कर देता। अब मेरा मन कर रहा था कि मैं उठकर चला जाऊँ, लेकिन मैं वहीं बैठा रहा, इस तमाशे को इसके अंत तक देखने का निश्चय कर लिया था। मैंने दर्शकों पर नज़र डाली कि कहीं कोई जाना-पहचाना चेहरा तो नहीं है...शायद प्रोफ़ेसर शास्त्री? नहीं। वो ऐसे छोटे-मोटे नाटकों में खुद तो नहीं आते, हालाँकि वो इस और ऐसे ही दूसरे आयोजनों के पीछे मुख्य सूत्रधार थे, और वैसे भी...अरे, ये रहा! आमिर चार पंक्तियाँ नीचे, एकदम दाहिनी ओर बैठा था। मुझे शक था कि उसे पता भी होगा कि मैं यहाँ हूँ और अगर वो मेरी तरफ़ देखता भी, तो इस रोशनी में मुझे पहचान नहीं पाता। मैंने नाटक के बाद उसके साथ घर जाने का फ़ैसला किया। इससे मुझे ऑटो रिक्शा ढूँढ़ने की झंझट से भी छुटकारा मिल जाएगा।

नाटक का समापन इस दृश्य के साथ हुआ कि 'आरोपी' अपना अपराध स्वीकार कर रहे थे, अपना माथा ज़मीन पर रगड़ रहे थे और प्रायश्चित करने की प्रतिज्ञा कर रहे

थे। वे मानो स्टालिन के दरबार में थे। भीड़ खड़ी हो गई और ज़ोरदार तालियाँ बजाने लगी। मैं धीरे-धीरे उस भीड़ के बीच से रास्ता बनाते हुए आगे बढ़ा जो अब आमिर को घेरे हुए थी। उसने मुझे तुरंत नहीं पहचाना, लेकिन जब मैंने कहा, 'चलो आमिर, साथ घर चलते हैं,' तो उसने मुझे पहचान लिया। इससे भीड़ का ध्यान मेरी ओर आकर्षित हुआ। 'आजकल तुम कहीं दिखते क्यों नहीं?'; 'क्या सच में तुम बैंगलोर में नहीं हो?'; 'कहाँ थे?'; 'तुम बिल्कुल अलग दिखते हो!'

कार में आमिर ने एक शब्द भी नहीं कहा। मैंने भी नहीं। घर आकर जब मैं तौलिए से अपना चेहरा सुखा रही थी, तो मैंने ध्यान से आईने में देखा और अपने बालों में उंगलियां फेरने लगी। रत्नामला सही कह रही थी। मेरे बाल नारियल के रेशे जैसे लग रहे थे... सफेद रेशे जैसे। चेहरे की त्वचा की खुरदरीपन साफ बता रही थी कि महीनों से इसकी देखभाल नहीं की गई थी। नरसपुरा में अपने बालों और त्वचा की देखभाल का रूटीन न अपनाने का कोई कारण नहीं था। आखिर मेरी रुचि क्यों खत्म हो गई? क्या इतिहास के अध्ययन और सुंदर दिखने की इच्छा में कमी के बीच कोई संबंध है? मैं यह जानने के लिए उत्सुक थी कि क्या ऐसा कोई संबंध है।

हम खाने की मेज पर आमने-सामने बैठे थे। उनके लिए मटन करी, मेरे लिए दाल। मुझे पता था कि वह अपनी चुप्पी नहीं तोड़ना चाहते थे। मैंने उनकी चुप्पी तोड़ी।

‘आप इतनी घिनौनी पटकथा का निर्देशन करने के लिए कैसे सहमत हो गए?’

उसने मेरी तरफ घूरकर देखा लेकिन कुछ नहीं कहा और खाना जारी रखा।

‘मैं तुमसे बात कर रही हूँ आमिर।’ मैंने उसे घूरकर जवाब दिया।

‘आपने यह कैसे तय किया कि यह एक “घिनौनी” पटकथा है?’

इसमें रचनात्मकता का कोई नामोनिशान नहीं है, इसकी लेखन शैली घटिया है और इसका विषय सत्य का विकृत रूप है। यह दावा कि बाबर की मस्जिद नष्ट कर दी गई थी, वास्तव में सत्य का 0.00001 प्रतिशत है। यह इस तथ्य को छुपाता है कि बाबर ने उसी स्थान पर स्थित एक हिंदू मंदिर को नष्ट कर दिया था और उसी मंदिर के स्तंभों और पत्थरों का उपयोग करके अपनी मस्जिद का निर्माण किया था।

‘सचमुच? तो फिर यह बात अजीब है कि आप इस तथ्य को कैसे छिपा रहे हैं कि हिंदुओं ने उसी स्थान पर एक बौद्ध मंदिर को नष्ट कर दिया और राम को समर्पित यह मंदिर बनाया?’ उसने क्रोधित होकर उत्तर दिया।

“यही वो “इतिहास” है...यही वो बेतुका तर्क है जिसे जेएनयू के आपके साथी “इतिहासकार” लगातार फैलाते रहते हैं। क्या यह महज़ संयोग है कि यही इतिहास कॉमरेड राममूर्ति ने अभियोक्ता-इतिहासकार की भूमिका निभाने वाले पात्र के मुँह से कहलवाया था? मैं शर्त लगा सकता हूँ कि राममूर्ति ने अपने पूरे जीवन में इतिहास नहीं पढ़ा है...राममूर्ति और उनके जैसे कार्यकर्ता-कलाकार...मैं पिछले दो वर्षों से न केवल इतिहास की कृतियों का अध्ययन कर रहा हूँ, बल्कि प्राथमिक स्रोतों का भी। मैंने अपने पिता द्वारा बनाए गए अधिकांश विस्तृत नोट्स पढ़े हैं और, मेरा विश्वास कीजिए, मैं प्रतिदिन बारह घंटे से अधिक समय केवल इसी काम में लगाता हूँ।”

क्या उन साथियों को यह भी पता है कि मुस्लिम सेनाओं ने जैन और बौद्ध मठों, विश्राम गृहों और पूरे मंदिर परिसरों को ध्वस्त कर दिया था जो कभी हिंदुस्तान, खोरासान और सिंकियांग के हर कोने में फैले हुए थे? आप बुखारा, समरखंड, खोतान, बल्ख, बामियान, काबुल, गजनी, कंधार, बेग्राम, जलालाबाद, पेशावर, चरसद्ध, ओ हिंद, तक्षशिला, मुल्तान, मीर पुखास, नगर पारकर, सियालकोट, श्रीनगर, कनौज, श्रावस्ती, अयोध्या, वाराणसी, सारनाथ, नालंदा, विक्रमशिला, वैशाली, राजगीर, जैसे दूर-दराज और भौगोलिक रूप से फैले स्थानों में इन संरचनाओं के विनाश की व्याख्या कैसे करते हैं? ओदंतपुरी, चुरहुट, चंपा, पहाड़पुर, जगदल, जाजनगर, नागार्जुन कोंडा, अमरावती, कांची, द्वारसमुद्र, देवगिरि, भरौच, वल्लभी, गिमर, खंभात, पाटन, जालौर, चंद्रावती, भीनमाल, डीडवान, नागोर, ओसियां, अजमेर, बैराट, ग्वालियर, चंदेरी, मांडू, धार... क्या मुस्लिम सेनाओं ने उन्हें नष्ट नहीं किया? क्या आप वाकई जेएनयू के उन महाइतिहासकारों की बात पर विश्वास करते हैं जब वे कहते हैं कि इन्हें शिव संप्रदाय से संबंधित कुछ अज्ञात राजाओं ने नष्ट कर दिया था?

उन्होंने कोई जवाब नहीं दिया। उनके पास कहने के लिए कुछ था ही नहीं, लेकिन मेरी वाक्पटुता ने मुझे आश्चर्यचकित कर दिया। मैं जानता था कि न तो उन्हें इतिहास का गहरा ज्ञान था और न ही अपनी बात को सही साबित करने की समझदारी। कुछ देर बाद मुझे एहसास हुआ कि मैंने सीताराम गोयल की पुस्तक 'हिंदू मंदिर: उनका क्या हुआ' के दूसरे खंड के एक पृष्ठ से लगभग शब्दशः उद्धृत कर दिया था, जिसे मैंने पिछले महीने ही पढ़ा था। हमने चुपचाप अपना भोजन समाप्त किया।

बर्तनों को उनकी जगह पर रखने के बाद, मैंने अपने दांत साफ किए, चेहरा एक बार फिर धोया और फिर बिस्तर पर बैठ गई। और इंतज़ार करने लगी। आमिर

बेडरूम में नहीं आया। तभी मुझे याद आया कि यह पहली बार नहीं था जब हम अलग-अलग बिस्तरों...कमरों में सोए थे। हाल ही में उसका हठ बेवजह बढ़ गया था। पहले, जब उसे लगता था कि मैंने उसकी इज़्ज़त को अच्छी तरह से सहलाया है, तो वह अक्सर नरम पड़ जाता था, लेकिन अब...क्या बात थी? मैं अब एक और अपमान सहने के लिए तैयार नहीं थी, लेकिन मैंने आत्मसम्मान की सीमाओं को पार करने का फैसला कर लिया था... खैर, दोबारा कोशिश करने में कोई हर्ज नहीं था। मैं बिस्तर से उठी और स्टडी रूम में गई। खाली। मैं गेस्ट रूम की तरफ गई। दरवाजा बंद था और अंदर से लॉक नहीं था। लाइटें बंद थीं, लेकिन वह वहीं था। मैंने दस्तक देने का फैसला किया...क्या मुझे धीरे से दरवाजा खोलकर अंदर जाना चाहिए और अपनी उंगलियों से उसे हल्के से छूना चाहिए...कई विकल्प मेरे दिमाग में कौंध गए...क्या मुझे यह दिखावा करना चाहिए कि मुझे इंतजार कराने के लिए वह यहाँ सो रहा था या मुझे उससे पूछना चाहिए? अचानक मुझे निराशा हुई। अपमानित महसूस हुआ। इन सभी विकल्पों का एक ही मतलब था। इस बंद दरवाजे ने मुझे वह सब कुछ बता दिया जो मुझे जानना था...'मैंने तुम्हें ठुकरा दिया है रज़िया'। यह तथ्य कि मैं उसके अहंकार को शांत करने के लिए अतिथि कक्ष तक आई थी, पहले ही मामला सुलझा चुका था: मैंने अपना आत्मसम्मान त्याग दिया था और अगर मैं उसे यह दिखाती, तो इसका मतलब था दस कदम और नीचे गिरना। दरवाजा धकेलने का कोई फायदा नहीं था। मैं दबे पांव वापस अपने बिस्तर पर गई और एक कोने में दुबक गई। फिर मुझे रत्नामाला की मेरे रूप-रंग पर की गई टिप्पणी याद आई। क्या सच में यही वजह थी कि वह जानबूझकर मुझे नजरअंदाज कर रहा था? मैं जानती थी कि चालीस के बाद, कुछ महिलाएं अचानक बदल जाती हैं और अपनी तेजी से गायब होती जवानी को किसी तरह बचाए रखने के लिए हद से ज्यादा कोशिशें करती हैं। और मैं शो बिजनेस में थी...मैं एक अभिनेत्री थी, जिसने अचानक अच्छा दिखने में दिलचस्पी लेना छोड़ दिया था...नहीं, नहीं, नहीं, मैंने तो अपनी सबसे बुनियादी देखभाल करना भी पूरी तरह से छोड़ दिया था। क्या यही बात थी? खैर! वह भी इसी बिजनेस में था और अपनी पूरी जिंदगी में मैंने उसे कभी खुद को संवारने में एक पल भी खर्च करते नहीं देखा था... लेकिन मुझे लगता है कि उसका वह 'बिना बनावट वाला' रूप ही उसकी खासियत थी...मेरा मतलब है, हर बार मिलने पर प्यार करना जरूरी नहीं था, लेकिन एक तसल्ली भरा स्पर्श या बस एक-दूसरे की बाहों में लेटने की गर्माहट...वह मुझे वह भी

नहीं दे रहा? पति-पत्नी के बीच यह सख्त चुप्पी? यह बर्दाश्त से बाहर था। मैं फिर से उसके कमरे के बाहर खड़ी हुई और इस बार धीरे से दरवाजा खोला। जैसा मैंने सोचा था, वह सही था, दरवाजा खुला था। वह गुस्से में है। मुझे थोड़ा शांत होना पड़ेगा और उसे मनाना पड़ेगा। आमिर कई मायनों में बच्चों जैसा है। मैं दबे पांव धीरे से अंदर गई और रात की धुंधली रोशनी में मैंने उसे पीठ के बल सोते हुए देखा। मैं चुपचाप बिस्तर पर बैठ गई और अपना हाथ उसकी छाती पर रखकर फुसफुसाया,

'तुम यहाँ क्यों सो रहे हो?'

कोई जवाब नहीं मिला।

'मुझे जवाब दो, आमिर! तुम्हें जवाब देना ही होगा, मेरे नाराज़ आमिर! मुझे पता है तुम परेशान हो क्योंकि तुम्हारी बीबी तुमसे उतनी बार नहीं मिलती जितनी बार उसे मिलना चाहिए। लेकिन तुम मुझे जानते हो ना? बात एक किताब से शुरू हुई, फिर दूसरी, फिर तीसरी, और मुझे पता भी नहीं चला कि मैं पूरी तरह से उसमें डूब गई। क्या तुम्हें पता नहीं कि मैं तुम्हें कितना याद करती हूँ? मुझे थोड़ा समय दो... मैं अभी एक उपन्यास लिख रही हूँ और इसे पूरा करने में मुझे लगभग एक साल लगेगा। तब तक इस जुदाई को सह लो... प्लीज़? और जैसा कि मैंने तुम्हें कितनी बार कहा है, जब भी तुम्हारा मन करे, तुम मुझसे मिलने आ सकते हो।'

कोई जवाब नहीं मिला।

अरे, ऐसा मत करो! इस उम्र में रूठना ठीक नहीं है...' मैंने झुककर उसके होंठों पर ज़ोर से चुंबन किया। उसने चुंबन स्वीकार किया, लेकिन कोई प्रतिक्रिया नहीं दी। मैं पीछे हट गई और फिर काफी देर तक उसके चेहरे को देखती रही, उसके बाद मैंने उससे पूछा,

'कम से कम मुझे यह तो बताइए कि आपको इतना बुरा क्या लगा? अगर मैंने कुछ किया है, तो मैं उसे सुधारने के लिए तैयार हूं।'

'हाल ही में तुम इस्लाम से नफरत क्यों करने लगे हो?'

'क्या? मैं इस्लाम से नफरत करता हूँ? व्यक्तिगत नापसंदगी और लगाव से रंगी हुई सच्चाई की कोई भी ईमानदार खोज अर्थहीन है। मैं कसम खाता हूँ, मुझे इस्लाम से कोई नफरत नहीं है।'

'तो फिर आप बार-बार भारत और अन्य जगहों पर मुसलमानों द्वारा नष्ट किए गए मंदिरों के बारे में क्यों बात करते हैं?'

‘खैर, अगर कोई मुझे इसके विपरीत सबूत दिखाए तो मैं चुप हो जाऊँगा। अतीत के हर मुस्लिम इतिहासकार ने सटीक आंकड़े और नाम देकर इस विनाश का महिमामंडन किया है, और ये आंकड़े बचे हुए सबूतों से बिल्कुल मेल खाते हैं। इसके बावजूद, मार्क्सवादी इतिहासकारों का गिरोह “हिंदू राजाओं के आंतरिक संघर्ष”, शैवों और वैष्णवों और इसी तरह की बेतुकी कहानियाँ गढ़ता रहता है। अगर आपको मेरी बात पर यकीन नहीं है, तो मैं आपको वे किताबें भेज दूँगा जो मैंने पढ़ी हैं। अगर आपके पास उन्हें पूरा पढ़ने का समय नहीं है, तो आप मेरे द्वारा चिह्नित प्रासंगिक अंश पढ़ सकते हैं और खुद पता लगा सकते हैं।’

‘नहीं। तुम मुस्लिम-विरोधी खेमे में शामिल हो गए हो और तुम्हारा दिमाग़ धो दिया गया है। बस इतना कह दो कि तुम उनके चंगुल से बाहर नहीं निकलना चाहते।’ उसने मेरी तरफ पीठ फेर ली।

‘अमीर, काश तुम नफ़रत और सच्चाई की ईमानदार खोज के बीच का असली अंतर समझ पाते।’ मैंने दोहराया। उन्होंने कोई जवाब नहीं दिया। मैं अपनी जगह से हिला तक नहीं। कुछ मिनट बाद, उन्होंने अपनी जगह से हिले बिना कहा, ‘मुझे नींद आ रही है। तुम भी जाकर सो जाओ।’

कोई फायदा नहीं था। मैं उसे और मनाना नहीं चाहती थी। मैं उसके कमरे से निकल गई और कुछ मिनट बाद अपने वैवाहिक डबल बेड पर लेट गई। मेरा दिमाग अब आमिर के व्यवहार का विश्लेषण करने की कोशिश नहीं कर रहा था। इसके बजाय, यह सत्य के प्रति निष्ठा के स्वरूप पर विचार करने लगा, जो एक ऐतिहासिक उपन्यासकार के लिए आवश्यक है। अचानक, मुझे टीपू सुल्तान को देशभक्त के रूप में महिमामंडित करने के ढोंग और आज सुबह खुले रंगमंच पर देखे गए नाटक में समानता दिखाई दी। एक ही सूत्र दोनों को जोड़ता था। तकनीक में काफी समानता थी, लेकिन वे केवल राजनीतिक प्रचार के साधन थे। किसी साहित्यिक कृति का विषय ऐतिहासिक हो या समकालीन, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। महत्वपूर्ण यह था कि लेखक सबसे पहले सत्य के प्रति निष्ठावान हो। आज के नाटक ने मेरे इस विश्वास को पुष्ट किया कि पिताजी सही थे: अंत में, केवल सत्य ही मायने रखता है।

मैं सुबह जल्दी उठ गई और आमिर को जगाने या अलविदा कहने का मन नहीं हुआ। मैंने चेहरा अच्छे से धोया, अपना बैग उठाया, दरवाजा बंद किया, सीढ़ियों से नीचे उतरी, मुख्य सड़क पर पहुँचकर एक ऑटो रिक्शा रोका और आधे घंटे बाद

कुनिगल जाने वाली बस में बैठ गई।

8

अब पीछे मुड़कर देखता हूँ तो लगता है कि मेरी मर्दानगी का छिन जाना एक तरह से मेरा सौभाग्य ही था। मेरा बधियाकरण होने और मोइनुद्दीन के ज़नाना में भेजे जाने के बाद किसी ने भी मेरा उस घिनौने तरीके से इस्तेमाल नहीं किया, जैसा उस मनसबदार ने किया था। लंबे समय तक मुझे यही लगता रहा कि हिजड़ों का इस्तेमाल सुख के लिए करना नामुमकिन है, लेकिन फिर मुझे किसी से पता चला कि मोइनुद्दीन को लड़कों में कोई दिलचस्पी नहीं थी। इसके अलावा, वह एक छोटा सा ज़नाना था—बेगमों, कंचिनियों, नौकरों और हिजड़ों समेत सौ से भी कम लोग रहते थे। वहाँ कोई भी हिजड़ों का इस्तेमाल सुख के लिए नहीं करता था। बादशाह के ज़नाना में भर्ती होने के कुछ ही समय बाद मैंने उदयपुरी महल का दिल जीत लिया। वह बहुत दयालु थीं और उन्होंने खुलेआम मेरे प्रति अपना स्नेह दिखाया।

बादशाह के करीबी लोगों में फ़ारसी सबसे पसंदीदा भाषा थी। वज़ीर, सेनापति, कमांडर, कोतवाल, लगभग हर उच्च पदस्थ अधिकारी फ़ारसी का इस्तेमाल करते थे। हालाँकि तुर्की भाषा का भी प्रयोग होता था, लेकिन बादशाह को फ़ारसी से विशेष लगाव था। इससे उनकी बातचीत में गरिमा आती थी। बादशाह हिंदुस्तानी भाषा बहुत धाराप्रवाह बोलते थे, लेकिन वे इसका प्रयोग केवल सेना और निचले तबके के लोगों, जैसे महावत और घुड़सवारों, जिनसे उनका व्यक्तिगत संबंध था, के साथ बातचीत में ही करते थे। तुर्की और अरबी भाषाएँ आम थीं, लेकिन फ़ारसी सम्राट की भाषा थी। मैंने अपनी फ़ारसी सुधारने के लिए बहुत अभ्यास किया, लेकिन इतने वर्षों बाद भी मुहावरे और व्याकरण की कुछ बारीकियाँ मुझे याद नहीं रहतीं। लोग तुरंत समझ जाते थे कि मैं प्रशासनिक मंडल का हिस्सा नहीं हूँ, जिसका अर्थ था कि मैं दो में से एक हो सकता हूँ—एक नव-धर्म परिवर्तित हिंदू या एक हिंदुस्तानी मुसलमान। लेकिन उन्हें मेरी फ़ारसी से यह बताने की ज़रूरत नहीं थी कि मैं कौन हूँ—मेरी त्वचा का रंग

और चेहरे की बनावट ही काफ़ी थी। अरब, तुर्की और फारस के मूल मुसलमानों ने हिंदुस्तानी मुसलमानों के प्रति खुलेआम तिरस्कार का भाव रखा। फारसी भाषा पर अच्छी पकड़ होने से उनका सम्मान थोड़ा-बहुत बढ़ गया। खैर, वे इस बात से सहमत थे कि मैं सुंदर था। अंततः, मैं फिर भी एक घटिया किस्म का हिजड़ा ही था।

'फ़ारसी और तुर्की भाषा को सुधारने के लिए और अधिक लगन दिखाओ। इसे व्यवस्थित रूप से सीखने का प्रयास करो,' उदयपुरी महल ने मुझे बार-बार सलाह दी। अपनी असीम दयालुता से उन्होंने ज़नाना के नज़र को मेरे लिए एक फ़ारसी शिक्षक नियुक्त करने का आदेश दिया।

हमदुल्लाह कुफी साहब अभिलेखागार के संरक्षक थे। बादशाह के भरोसेमंद मंत्रियों, वज़ीरों का एक काम था, समाचार और खुफिया जानकारी इकट्ठा करना, जिसे जासूस साम्राज्य के विभिन्न हिस्सों से दिल्ली भेजते थे। वे खुफिया जानकारी को अलग-अलग श्रेणियों में वर्गीकृत करते थे और हर खबर को बिना चूके बादशाह को सूचित करते थे। बादशाह केवल सबसे गोपनीय खुफिया जानकारी ही अपने पास रखते थे और उसे अपने करीबी लोगों से बाहर नहीं निकलने देते थे। बाकी जानकारी वे अभिलेखागार में भेज देते थे, जहाँ संरक्षक उसे और परिष्कृत और वर्गीकृत करते थे। मुगल सिंहासन पर शासन करने वाले अपने पूर्ववर्तियों की तरह, इस जानकारी का उपयोग बादशाह के व्यक्तिगत इतिहास को लिखने के लिए किया गया था, जिसमें उनकी सभी उपलब्धियाँ और उनके समग्र शासन का एक प्रकार का मूल्यांकन शामिल था। यही कारण है कि वहाँ काम करने वाले लोगों को फ़ारसी, अरबी और तुर्की में पारंगत होना और इतिहास का विशेषज्ञ ज्ञान होना आवश्यक था। अभिलेखागार की कड़ी सुरक्षा की जाती थी। वहाँ काम करने वालों के अलावा किसी को भी इस कार्यालय में प्रवेश की अनुमति नहीं थी।

दरअसल, मुझे फ़ारसी पढ़ाने के लिए हमदुल्लाह कूफ़ी साहब जैसे प्रतिष्ठित व्यक्ति की ज़रूरत नहीं थी। लेकिन वे केवल इसलिए राज़ी हुए क्योंकि बादशाह की प्रिय प्रेमिका उदयपुरी महल ने यह अनुरोध भेजा था। हालांकि, समय बीतने के साथ-साथ हमदुल्लाह साहब का मेरे प्रति स्नेह और दया भाव विकसित हो गया। मुझे अपनी पढ़ाई के लिए जामा मस्जिद के पीछे स्थित उनके घर जाना पड़ता था, क्योंकि जिस किले में अभिलेखागार स्थित थे, वहाँ मेरा जाना वर्जित था। उनका घर भी एक छोटा सा किला था। दो लंबे आदमियों की ऊँचाई जितनी अभेद्य दीवारें। एक विशाल मुख्य

द्वार था जिसमें एक छोटा सा छेद था, जिसके माध्यम से एक हिजड़ा पहले आगंतुक को देखता था और ज़रूरत पड़ने पर उसे अंदर आने देता था। परिसर में एक छोटा सा बगीचा था। मुख्य द्वार पुरुषों के कमरे, यानी मर्दाना की ओर खुलता था, जबकि ज़नाना अंदर स्थित था। ज़नाना में किसी को भी पता नहीं चलता था कि मर्दाना में कौन आता है और कौन जाता है। मेरा शिक्षण कक्ष मर्दाना के दाईं ओर स्थित था।

हमदुल्लाह साहब की साठ वर्षीय आँखों में मुझे पहली बार देखते ही आकर्षण की चमक आ गई। मेरे पेट में घृणा से मरोड़ उठ रही थी, लेकिन मैंने इसे अपने चेहरे पर ज़ाहिर नहीं होने दिया। उन्होंने मुझसे मेरे बारे में पूछा। मैंने उन्हें सब कुछ बता दिया। उनकी सलाह भी बाकी लोगों जैसी ही थी: 'तुम्हें युद्ध से पहले स्वयं ही प्रकाश का धर्म स्वीकार कर लेना चाहिए था, तब तुम्हें इस दयनीय स्थिति का सामना नहीं करना पड़ता, लेकिन अभी भी देर नहीं हुई है; अगर बादशाह तुम पर दया करें, तो शायद वे तुम्हें गुलामी से मुक्त भी कर दें।' मेरी आशाएँ बढ़ीं, लेकिन तुरंत ही निराशा ने भी साथ दे दी: आज़ाद होने के बाद मैं क्या करूँगी? कहाँ जाऊँगी? मेरे पास कोई जवाब नहीं था।

हमदुल्लाह साहब हर कक्षा शुरू होने से पहले मुझे फल, शरबत और मिठाई देते थे। पाँचवें दिन, पाठ शुरू होने से पहले, उन्होंने धीरे-धीरे मेरे सिर और पीठ पर हाथ फेरना शुरू किया। मैंने उनके चेहरे की ओर देखा। उनका चेहरा अत्यंत दयालुता से भरा था और उनकी चमकती आँखों में प्रेम झलक रहा था। इतने सजीव दिखने वाले विद्वान, इस उम्र में, मुझसे इस तरह की चाहत रखते हैं? मुझे उल्टी आने जैसा महसूस हुआ। मैं उनके चेहरे को देखती रही, जिसका उन्हें पता नहीं चला। कुछ देर बाद, मैंने उनकी धुंधली आँखों में एक अलग ही भाव देखा। मैं असमंजस में उनके चेहरे को देखती रही। उन्होंने हाथ फेरना और थपथपाना बंद कर दिया और पूछा, 'क्या तुमने मुझे अपने जन्म, अपने माता-पिता...सब कुछ के बारे में सच बताया है?'

मैं उसे घूरता रहा और अपना सिर हिलाकर यह जताने की कोशिश करता रहा कि मुझे उसका सवाल पूरी तरह समझ नहीं आया।

‘मेरा मतलब है, क्या आप सचमुच अपने माता-पिता से पैदा हुए थे? या आपको बचपन में त्याग दिया गया था और फिर उन लोगों ने गोद लिया जिन्हें आप अपने माता-पिता कहते हैं, जो निःसंतान थे? या आपको गोद लिया ही नहीं गया था? मुझे पता है कि हिंदुओं में दूसरे माता-पिता के बच्चों को गोद लेने की प्रथा है।’

‘यह संदेह क्यों है, आदरणीय शिक्षक?’

'मुझे सच बताओ। पवित्र कुरान की कसम खाकर मुझे सच बताओ।'

मैं पवित्र कुरान की कसम खाकर कहता हूँ कि मैंने जो कुछ पहले बताया है, वह सच है। मैं सचमुच उन्हीं लोगों से पैदा हुआ हूँ जिन्हें मैं अपने माता-पिता कहता हूँ। मेरे पिछले धर्म की प्रथा के अनुसार, अगर मेरे माता-पिता को गोद लेना होता, तो वे मेरे पिता के भाई या मेरी बहन के बच्चे को गोद लेते। इसके अलावा, अगर मैं सचमुच उनका बेटा नहीं होता, तो मुझे बहुत पहले किसी से पता चल जाता। कृपया कोई संदेह न करें।

उन्होंने एक गहरी आह भरी और कहा, 'ठीक है। चलिए आज की पढ़ाई शुरू करते हैं।'

मैंने उससे उसके प्रश्न का कारण दोबारा नहीं पूछा। यह पूछना मेरा काम नहीं था।

हालांकि, एक महीने बाद उन्होंने खुद मुझे इसका कारण बताया। हमदुल्लाह साहब की पहली पत्नी से एक बेटा था। जब वह छह साल का था, तो नमाज़ के बाद जामा मस्जिद में भीड़ में भटक गया और हमेशा के लिए खो गया। उसे ढूंढने के सभी प्रयास विफल रहे। हमदुल्लाह साहब आज तक इस दुख से उबर नहीं पाए थे। उनकी पहली पत्नी का निधन इसी शोक से हुआ था। ऐसा लगता है कि कुछ दिनों वे नींद में अपने बेटे और पहली पत्नी के बारे में बातें करते थे। उनकी दूसरी पत्नी, अगर जाग रही होतीं, तो यह सुनकर उन्हें ताना मारतीं—यह बात हमदुल्लाह साहब ने खुद मुझे बताई।

जब मैंने तुम्हें पहली बार देखा, तो मुझे लगा जैसे मेरा बेटा लौट आया हो। तुम्हारा चेहरा बिल्कुल वैसा ही मासूम है... अगर वह हमारे साथ होता तो तुम्हारी तरह ही एक नेक नौजवान होता... लेकिन सावधान! मेरी दूसरी पत्नी को मेरे खोए हुए बच्चे के बारे में बात करना बिल्कुल पसंद नहीं है। अगर मैं नींद में भी उसका नाम लेता हूँ, तो वह मुझे बहुत कड़वी बातें कहकर चिढ़ाती है! अगर मैंने उसे कभी बता दिया कि तुम उससे मिलते-जुलते हो, तो वह तुम्हें ज़हर दे देगी। इस बात को हमेशा याद रखना और किसी को मत बताना।

~

औरंगज़ेब बादशाह के पिता शाहजहाँ बादशाह की आगरा किले में मृत्यु की खबर पूरे जनाना में दबी आवाज़ में फैल गई। इस खबर के गंभीर राजनीतिक परिणाम हुए,

क्योंकि इससे पूरे हिंदुस्तान के राजनीतिक भविष्य का निर्णायक मोड़ आने वाला था। अतीत में, औरंगज़ेब बादशाह ने अपने ही पिता के विरुद्ध विद्रोह किया था और परिणामस्वरूप हुए युद्ध में उन्हें बुरी तरह हराया था। शाहजहाँ बादशाह को उनकी सत्ता के केंद्र आगरा किले में ही बंदी बना लिया गया था। इसके बाद औरंगज़ेब बादशाह ने अपने भाइयों के विरुद्ध मोर्चा खोल दिया। उसने अपने दो बड़े भाइयों और एक छोटे भाई को छलपूर्ण युद्ध में पराजित किया और उन्हें बंदी बनाकर उनकी हत्या करवा दी। ये हत्याएँ सुनियोजित और अलग-अलग तरीकों से की गईं। औरंगज़ेब बादशाह ने पहले अपने एक भाई का विश्वास जीता और फिर उसे अफ़ीम खिलाई। इसके बाद उसे पकड़ना और जेल में डालना आसान हो गया। धीरे-धीरे उसे ज़हर दिया गया, जिससे अंततः उसकी मृत्यु हो गई। एक अन्य भाई युद्ध में बुरी तरह हारने के बाद देश छोड़कर भाग गया। हालांकि, उसका पीछा तब तक किया गया जब तक उसके सैनिक और ऊर्जा खत्म नहीं हो गए और उसे आत्मसमर्पण करना पड़ा। कुछ ही समय बाद उसकी हत्या कर दी गई। लेकिन किसी कारणवश उसने अपने पिता की हत्या नहीं करवाई। शाहजहाँ बादशाह को आठ साल तक बंदी बनाकर रखा गया, जिसके बाद वृद्धावस्था के कारण उसकी मृत्यु हो गई। ये सारी घटनाएँ मुझे टुकड़ों-टुकड़ों में पता चलीं और मैं भय और जिज्ञासा दोनों से भर गया।

मैंने हमदुल्लाह साहब से पूछने का जोखिम उठाने का फैसला किया। मैंने वह दिन चुना जब मरदाना में कोई नहीं था।

‘क्या यह सच है, आदरणीय स्वामी, मैंने सुना है कि शाहजहाँ बादशाह आगरा किले में ईश्वर के चरणों में पहुँच गए हैं।’

उसने हाथ के इशारे से मुझे रोक दिया।

'आपको हमेशा राजा का नाम उनकी उपाधि से ही लेना चाहिए—बादशाह शाहजहाँ... खैर, उनके मामले में यह ठीक है क्योंकि मुझे यकीन नहीं है कि उन्हें यह उपाधि प्रदान की जाएगी।'

मुझे समझ नहीं आया। क्या आप कृपया समझा सकते हैं?

देखिए, बादशाह के स्वर्गवास के बाद, अगला बादशाह आमतौर पर उन्हें एक सम्मानजनक उपाधि प्रदान करता है। यह उपाधि साम्राज्य के सभी आधिकारिक अभिलेखों में उनके नाम के साथ अंकित की जाएगी। एक बार यह उपाधि प्रदान कर दी जाए, तो सभी को उन्हें केवल इसी उपाधि से संबोधित करना चाहिए, न कि उनके

वास्तविक नाम से। ऐसा न करने पर सम्राट का अनादर करने के लिए निर्धारित दंड भुगतना पड़ेगा।

यही वह वेंट था जिसकी मुझे और गहराई से जांच करनी थी।

‘कृपया मुझे हिंदुस्तान के पूर्व बादशाहों की उपाधियाँ बताइए।’

‘हिंदुस्तान में मुगल साम्राज्य की स्थापना करने वाले सम्राट ज़ाहिरुद्दीन बाबर बादशाह को फ़िरदौस मकानी की उपाधि से सम्मानित किया गया था। उनके पुत्र हुमायूँ को जन्नत अश्यानी, उनके पुत्र जलालुद्दीन अकबर को अर्श अश्यानी और अकबर के पुत्र सुल्तान नूरुद्दीन जहांगीर को जन्नत मकानी की उपाधि से सम्मानित किया गया। शाहजहाँ को अभी तक कोई उपाधि नहीं दी गई है और हमें यह देखने के लिए इंतजार करना होगा कि क्या उन्हें वास्तव में कोई उपाधि प्रदान की जाती है।’

मैंने धीमी, आत्मीय आवाज़ में पूछा, 'तुम्हें शक क्यों है?'

उन्होंने कोई जवाब नहीं दिया। मैंने दोबारा पूछने का फैसला किया।

'जब तक मैं जीवित हूं, यह बात इस कमरे से बाहर नहीं जाएगी। मैं पवित्र कुरान की कसम खाता हूं।'

उन्होंने मेरी तरफ एक संक्षिप्त नजर डाली और मुझे खुशी हुई कि उन्होंने मेरी बात पर विश्वास करने का फैसला किया।

दो मिनट तक वह चुप रहे, फिर धीरे-धीरे अपनी लहराती हुई सफेद दाढ़ी सहलाने लगे। उनकी चमकीली आँखों में अब एक उदासी छा गई, मानो वे सुदूर अतीत के सत्य को निहार रही हों। फिर उन्होंने धीरे से बोलना शुरू किया।

मुझे यह मानना कठिन लगता है कि आपको कुछ भी पता नहीं है। मुझे पूरा यकीन है कि बादशाह के दुश्मनों द्वारा फैलाए गए झूठ और दारा के समूह द्वारा फैलाई गई घिनौनी अफवाहें आप तक पहुँच चुकी हैं। इन झूठों और इन्हें फैलाने वालों के बारे में हर कोई जानता है... हर कोई, यहाँ तक कि बादशाह भी। इसी तरह, हर सच्चा मुसलमान जानता है कि पहले आलमगीर, मुहीउद्दीन मोहम्मद औरंगजेब, जो कुछ भी करते हैं, वह इस्लाम की विजय के लिए करते हैं। सभी उलेमाओं ने शुरू से ही उनका साथ दिया है और उन्हें आज भी उनका पूरा समर्थन प्राप्त है। अगर आलमगीर सिंहासन की लड़ाई हार जाते, तो इस्लाम की पवित्रता हमेशा के लिए दूषित हो जाती! लेकिन क्या आप जानते हैं कि असली खतरा क्या होता? काफिर, धर्मत्यागी, अपवित्र, ज़िम्मी और ऐसे सभी दुष्ट प्राणी हावी हो जाते और यह सुनिश्चित

करते कि इस्लाम यहाँ से पूरी तरह मिट जाए। लेकिन इस्लाम मिटाया जाने वाला धर्म नहीं है। और न ही यह कभी अदृश्य होगा। इसीलिए मुहीउद्दीन मोहम्मद औरंगजेब आलमगीर ने संघर्ष जीता और सिंहासन पर आसीन हुए।

'आपको और अधिक दया दिखानी चाहिए और आलमगीर के संघर्ष को और अधिक विस्तार से समझाना चाहिए।'

'अरे! मैं यही समझाने आया था, लेकिन...ठीक है, सुनो। शाहजहाँ बादशाह के चार पुत्र थे: दारा, शुजा, आलमगीर और मुराद बख्श। शाहजहाँ बादशाह अपने सबसे बड़े पुत्र दारा के प्रति प्रेम से अंधा था। उसने बहुत पहले ही उसे अपना उत्तराधिकारी बनाने का निश्चय कर लिया था। वह इतना आसक्त था कि छोटी उम्र से ही उसने दारा को अपने दरबार में रखा और उसे राज-प्रशासन सिखाया। उसने यह सुनिश्चित किया कि दारा वज़ीरों, मनसबदारों, कोतवालों और अन्य सभी के बीच लोकप्रिय, प्रभावशाली, भयभीत और सम्मानित रहे। दूसरी ओर, उसने अपने अन्य पुत्रों को दिल्ली से दूर रखा और उन्हें सूबेदार बनाकर दूर-दराज की रियासतों में भेज दिया ताकि वे दारा के लिए खतरा न बनें। उसने शुजा को बंगाल, मुराद को गुजरात भेजा और...क्या आप जानते हैं कि उसने औरंगजेब बादशाह को कहाँ भेजा? दक्कन!' शाहजहाँ बादशाह जानता था कि जब दारा जैसे मंदबुद्धि योद्धा, कुशल राजनीतिज्ञ और रणनीतिज्ञ, जो शत्रु सेना को आपस में भिड़ाने की कला में माहिर थे, उससे घिर जाएगा, तो उसकी चमक फीकी पड़ जाएगी। इसके अलावा, औरंगज़ेब बादशाह हमेशा से एक सच्चा मुसलमान था। भयंकर युद्ध में भी, जब वह चारों ओर से शत्रु से घिरा होता था, तब भी वह अपने घोड़े या हाथी से उतरकर किबला की दिशा में मुँह करके नमाज़ पढ़ता था! यह दृश्य उसके मुस्लिम सैनिकों के मनोबल को सौ गुना बढ़ा देता था। पैगंबर मोहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) भी युद्ध के मैदान में इसी तरह नमाज़ पढ़ते थे। उनके बाद किसी सम्राट, सेनापति या सैनिक ने इस रिवाज का पालन नहीं किया... किसी ने भी नहीं... केवल औरंगज़ेब बादशाह! आप बताइए, क्या आप किसी ऐसे सम्राट या मुस्लिम योद्धा को जानते हैं जिसने ऐसा किया हो!' उसने मेरी ओर देखते हुए कहा।

मुझे समझ नहीं आया कि क्या कहूँ और मैं उसे खाली निगाहों से देखती रही। उसने मुझसे दोबारा पूछा।

‘मैं...उम्म...मैं...मुझे इतिहास नहीं आता। कृपया मुझ पर दया करें और मुझे बता दें।’

वो प्रसन्न हुआ।

हम्म। मैं करूँगा। किसी और दिन। लेकिन क्या आपको आश्चर्य नहीं होता कि दारा किस तरह के व्यक्ति थे? वे अपने परदादा अर्श अश्यानी जलालुद्दीन अकबर का अनुकरण करते थे। आपको नहीं पता, लेकिन मुगल साम्राज्य में एक ऐसा गुट है जो अकबर की महिमा करता है। अरे, आपने उन्हें आदर्श मुगल बादशाह के रूप में उनकी महानता का बखान करते हुए देखा होगा! वे उनके तथाकथित आदर्श का अनुकरण करते हैं, जिसमें सभी धर्मों को जोड़ने वाले सूत्र की खोज करना और फिर सभी को उसी सूत्र का पालन करने के लिए प्रेरित करना शामिल है। वे विदेशियों के साथ बाइबिल, फारसियों के साथ ज़ेंड अवेस्ता, यहूदियों के साथ तालमुद और हिंदुओं के साथ वेदांत पर चर्चा करते थे। वे हिंदुओं के साथ गहन विचार-विमर्श करते थे ताकि यह पता चल सके कि उनके वेदों और वेदांत की कौन सी शिक्षाएँ इस्लाम की शिक्षाओं से मेल खाती हैं—क्या फर्क पड़ता है अगर उनका वेदों का धर्म बहुसंख्यक था? इस्लाम तो शासकों का धर्म था! उन्होंने एक धर्म के लोगों को दूसरे धर्म के लोगों को परिवर्तित करने से मना किया था। उन्होंने कहा था कि धर्मांतरित लोग चाहें तो अपने मूल धर्म में वापस लौट सकते हैं। उसने जजिया हटा दिया और हिंदुओं द्वारा अदा किया जाने वाला तीर्थयात्रा कर समाप्त कर दिया। उसने हिंदुओं को अपने खर्च पर नए मंदिर बनाने और पुराने व क्षतिग्रस्त मंदिरों का जीर्णोद्धार करने की अनुमति दी... उसने वह सब कुछ किया जिससे इस्लाम की शक्ति और पवित्रता को ठेस पहुंची और वह कमजोर हो गया। अकबर! वह एक धर्मभ्रष्ट व्यक्ति था! मानो इतना ही काफी नहीं था, उसने राजमहल के अंदर ही इस्लाम को दूषित कर दिया! आप पूछेंगे कैसे? उसने अपनी हिंदू बेगमों को अपने देवी-देवताओं के पूजा कक्ष रखने की अनुमति दी और उन्हें अग्नि पूजा करने की भी इजाजत दी। इन बेगमों ने अपने घर हिंदू वास्तुकला के अनुसार बनवाए। अब आप ही बताइए, अगर बादशाह ने खुद अपने घर में ही इस्लाम को इस हद तक दूषित कर दिया, तो आप राज्य में इसकी पवित्रता की उम्मीद कैसे कर सकते हैं? याद रखिए: अकबर एकमात्र सच्चे धर्म के गद्दार का दूसरा नाम है!

और उनके परपोते, आलमगीर के भाई दारा को भी यही गुण विरासत में मिला। मुझे पता है कि वे कैसे हर धर्म के विद्वानों और धर्मगुरुओं को आमंत्रित करते थे और उनसे बाइबिल, सूफी दर्शन, तालमुद, वेदांत आदि की शिक्षा लेते थे... अरे रुकिए! वे अक्सर एक हिंदू योगी, लाल दास से मिलने जाते थे। साथ ही सरमद, एक मुस्लिम फकीर से भी। और वे जिहाद पर विस्तार से उपदेश देते थे—कि इसका मतलब यह नहीं है कि हमें दूसरे धर्मों के लोगों के खिलाफ जिहाद करना है, कि दूसरों को जबरदस्ती इस्लाम में परिवर्तित करना गलत है, और जजिया गलत है। अब उलेमा स्वाभाविक रूप से चिंतित थे। अगर यह आदमी कल बादशाह बन गया, तो इस्लाम को घोर खतरा होगा। और वे सही थे, है ना? नहीं, नहीं, नहीं... आप ही बताइए कि वे सही थे या नहीं!' वे रुके और मेरी ओर स्पष्ट दृष्टि से देखा।

मैंने सिर हिलाया, यह जानते हुए कि यही एकमात्र प्रतिक्रिया थी जिससे वह बोलना जारी रखेगा।

लेकिन शाहजहाँ बादशाह को लगा कि उसने अपने दूसरे बेटों पर विजय प्राप्त कर ली है। वह इस तथ्य को पूरी तरह से नहीं समझ पाया था कि दिल्ली में मुगल दरबार पर मजबूत पकड़ होना ही काफी नहीं है। सच्चा शक्तिशाली बादशाह वह होता है जिसकी शक्ति उसके साम्राज्य के सुदूरतम कोने तक भी उतनी ही महसूस होती है जितनी उसके दरबारियों तक। इसलिए, आठ साल पहले जब शाहजहाँ बादशाह गंभीर रूप से बीमार पड़े, तो उन्हें एहसास हुआ कि वे ज्यादा दिन जीवित नहीं रहेंगे। उन्होंने अपने शेष दिन अपनी प्रिय पत्नी मुमताज के साथ बिताने का फैसला किया, जिनकी समाधि आगरा में बनवाई गई थी। जैसे ही यह खबर साम्राज्य के हर कोने तक पहुँची, बंगाल में शुजा और गुजरात में मुराद ने खुद को मुगल साम्राज्य का बादशाह घोषित कर दिया। औरंगजेब ने ऐसी कोई मूर्खता नहीं की। उसे इस बात का यकीन नहीं था कि किस खबर पर भरोसा किया जाए और उसे अपने पिता के स्वास्थ्य की वास्तविक स्थिति का भी पता नहीं था, इसलिए उसने खुद पता लगाने का फैसला किया। उसने एक विशाल सेना ली और दिल्ली के लिए निकल पड़ा। रास्ते में, उन्होंने गुजरात में कुछ समय के लिए डेरा डाला और मुराद के साथ एक समझौता किया—वे मुगल साम्राज्य को आपस में बाँट लेंगे। मुराद पंजाब, अफगानिस्तान, कश्मीर और सिंध के स्वतंत्र बादशाह बनेंगे, जबकि औरंगजेब शेष क्षेत्रों पर शासन करेंगे। मुराद को खजाने का एक तिहाई हिस्सा मिलेगा और

औरंगजेब शेष हिस्सा अपने पास रखेंगे। उन्होंने पवित्र कुरान पर शपथ लेकर इस समझौते को पक्का किया। वे इतने चतुर थे, प्रतिकूल समय में भी झुकने को तैयार रहते थे, और जब परिस्थितियाँ बदलती थीं, तो वे किसी भी समझौते को तोड़ देते थे, वे वाकई एक अद्भुत राजनेता थे!

इसी बीच, दारा को किसी तरह इसकी भनक लग गई और वह उसे रोकने के लिए स्वयं आया। लेकिन वह आलमगीर का मुकाबला नहीं कर सका, जिसने उसे पल भर में परास्त कर दिया और उसे दिल्ली भागने पर मजबूर कर दिया। अब तक शाहजहाँ बादशाह समझ चुका था कि उसने क्या मुसीबत मोल ले ली है और उसने अपने सभी बेटों को व्यक्तिगत निमंत्रण भेजकर एक सौहार्दपूर्ण संधि पर बातचीत करने का प्रस्ताव रखा। औरंगज़ेब बादशाह सतर्क था, वह आगरा नहीं गया। उसे यकीन था कि अगर उसने अपने पिता पर भरोसा किया, तो आगरा में कदम रखते ही घातक तातार योद्धाओं का एक दल उसका कत्लेआम करने के लिए तैयार बैठा होगा। जब शाहजहाँ बादशाह को एहसास हुआ कि वह नहीं आएगा, तो उसने किले को अंदर से सील कर दिया। उस किले को तोड़ने में महीनों लग जाते और औरंगज़ेब के पास समय नहीं था क्योंकि दूसरी तरफ, पराजित दारा अब एक विशाल सेना इकट्ठा कर रहा था।

औरंगज़ेब आगरा पहुँचा और किले की पानी की आपूर्ति काट दी। शाहजहाँ बादशाह को आत्मसमर्पण करना पड़ा। औरंगज़ेब ने अपने पिता को नज़रबंद कर दिया और अपने भरोसेमंद आदमियों को किले की सुरक्षा के लिए नियुक्त किया, और तभी दारा का सामना करने की तैयारी की। दारा पर आक्रमण शुरू करने की तैयारी में मुराद की पूरी सेना उसके साथ थी। मुराद, दारा के विरुद्ध अपनी पहली शानदार जीत के नशे में चूर था। औरंगज़ेब ने इस मौके का फायदा उठाते हुए एक भव्य भोज का आयोजन किया और उसमें मुराद को अत्यधिक शराब पिलाई, जिसमें उसने मुराद के भरोसेमंद साथियों की मदद ली, जिन्हें उसने पहले ही रिश्वत दे दी थी। लगभग बेहोश पड़े मुराद को आसानी से उसके हथियार छीन लिए गए और उसे पकड़कर ग्वालियर की बड़ी जेल में भेज दिया गया। वहाँ पहुँचकर मुराद पर एक काज़ी (औरंगज़ेब का पक्षधर न्यायाधीश) द्वारा मुकदमा चलाया गया। स्वाभाविक रूप से मुराद को दोषी पाया गया और उसे मृत्युदंड दिया गया।

अपनी तेजी से बढ़ती शक्ति के साथ, औरंगजेब ने दारा का पीछा किया और राजपुताना, सिंध, कच्छ और सिमिस्तान में उसका लगातार शिकार किया, उसे धीरे-धीरे कमजोर करते हुए अंततः उसके पास आत्मसमर्पण करने के अलावा कोई विकल्प नहीं बचा। अंत में, दारा को दिल्ली लाया गया और सड़कों पर बड़े ही दयनीय ढंग से घुमाया गया। उलेमाओं ने उस पर मुकदमा चलाया और उसे इस्लाम के विरुद्ध और वर्जित मान्यताओं का प्रचार करने का दोषी पाया। उसे मृत्युदंड दिया गया।

दरअसल, मैंने सुना है कि औरंगजेब बादशाह ने खुद मौत की सजा की सिफारिश की थी। दारा के टुकड़े-टुकड़े कर दिए गए और उन टुकड़ों को एक हाथी पर लादकर दिल्ली की हर गली-गली में घुमाया गया—यह एक चेतावनी थी कि जो कोई भी सच्चे धर्म के सिद्धांतों से भटकेगा, उसका क्या हश्र होगा। इस तरह अकबर की घृणित विरासत का आखिरी फल भी कुचल दिया गया और इसके साथ ही हमारे धर्म की नींव मजबूत हुई। शुजा जंगल में भाग गया और वहां के कबायली लोगों ने उसे मार डाला।

लेकिन क्या दारा के समर्थकों और शाहजहाँ बादशाह के वफादारों ने औरंगजेब का विरोध नहीं किया था?

'अरे? वे ऐसा सपना देखने की हिम्मत कैसे कर सकते थे? वे अब तक समझ चुके थे कि युद्ध, चालाकी, साहस और क्रूरता में दारा, औरंगजेब बादशाह के सामने कमजोर था। शाहजहाँ बादशाह के समर्थकों को पता था कि बूढ़ा बादशाह किसी भी दिन मर सकता है—वह न केवल बूढ़ा था, बल्कि एक ऐसी बीमारी से भी पीड़ित था जिसका कोई इलाज नहीं था। कारण चाहे जो भी हो, हमेशा याद रखें कि दरबारी जीतने वाले पक्ष को पहचानने में माहिर होते हैं और वे उसी के अनुसार अपनी वफादारी बदल लेते हैं।'

समय बीतने के साथ, मुझे कई अन्य बातें पता चलीं। अपने पिता के आगरा किले में सुरक्षित कैद होने के बाद, मुहीउद्दीन मोहम्मद औरंगजेब दिल्ली के सिंहासन पर बैठा और उसने बड़ी जल्दबाजी में खुद को मुगल सम्राट घोषित कर आलमगीर गाजी की उपाधि धारण की। यह जल्दबाजी इसलिए आवश्यक थी ताकि वह निर्णायक संदेश दे सके: अब वह हिंदुस्तान में पूरे मुगल साम्राज्य का निरंकुश शासक था। इसके अलावा, उसकी अन्य चिंताएँ भी थीं: मुराद की मृत्यु हो चुकी थी, फिर भी उसे दारा को ढूँढ़ना था और शुजा का खात्मा करना था। खुद को मुगल सम्राट घोषित

करने से उसे इन अभियानों को अंजाम देने की वैधता, अधिकार और स्वीकृति मिल जाती।

औरंगजेब बादशाह ने दिल्ली में अपना राज्याभिषेक किया था, जबकि आगरा साम्राज्य की राजधानी थी। आगरा की समृद्धि, वैभव और शान के सामने दिल्ली फीकी पड़ जाती थी। इसलिए उन्हें राज्याभिषेक समारोह आगरा में ही आयोजित करना पड़ा और वहीं सिंहासन पर बैठना पड़ा—यही वह अंतिम चिह्न था जिसने उन्हें वास्तव में हिंदुस्तान के मुगल साम्राज्य का बादशाह घोषित किया।

लेकिन दिल्ली में जल्दबाजी में ताजपोशी करने के पीछे एक और भी महत्वपूर्ण कारण था। उन्हें अपने शक्तिशाली दरबारियों पर अपना प्रभाव खोने का डर था। अगर उन्होंने आगरा में ताजपोशी की होती, तो वे तुरंत अपने दरबारियों, मनसबदारों, सूबेदारों और अन्य मुस्लिम देशों के शक्तिशाली राजनयिकों और प्रतिनिधियों के उपहास का निशाना बन जाते। दिल्ली में ताजपोशी करने से यह सुनिश्चित हो गया कि वे खुलेआम दुनिया को यह बता रहे हैं कि उन्होंने अपने पिता को गद्दी से हटा दिया था, उन्हें बादशाह रहते हुए ही बंदी बना लिया था, और उन्हें इस बात का कोई पछतावा नहीं था—राजनयिक यह संदेश अपने-अपने राजाओं तक पहुंचा देंगे।

लेकिन औरंगज़ेब बादशाह ने अपने पिता को ज़िंदा क्यों रखा, जबकि वह उन्हें धीरे-धीरे, कई महीनों तक खाने में थोड़ी-थोड़ी मात्रा में ज़हर मिलाकर मार सकता था? हत्या का शक तो किसी को नहीं होता। अगर वह अपने भाइयों को छोड़ देता, तो वे भविष्य में किसी दिन उसके खिलाफ़ साज़िश रच ही देते, एक ऐसा जोखिम जिसे टाला जा सकता था और जिसे वह लेना नहीं चाहता था। लेकिन शाहजहाँ बादशाह? वह अपने ही घर में कैद था और खुद को बचाने के लिए कुछ नहीं कर सकता था।

औरंगज़ेब बादशाह के मन में क्या चल रहा था, यह कोई नहीं जानता था। जनता को ऐसा कोई उदाहरण याद नहीं था जब औरंगज़ेब बादशाह ने कुरान पर शपथ लेकर ली गई अपनी किसी कसम को तोड़ा हो। लेकिन वह ठीक इसके विपरीत करता था, बड़ी चालाकी से साजिश रचकर ऐसा दिखाता था मानो वह अपनी शपथ का पालन कर रहा हो।

शाहजहाँ बादशाह ने सर्दियों में अंतिम साँस ली, हिंदुओं के मकर संक्रांति त्योहार के एक सप्ताह बाद। हिंदुओं के त्योहारों के आयोजन को लेकर कई सख्त पाबंदियाँ थीं। इसके बावजूद, मैंने देखा कि बड़ी संख्या में हिंदू दिल्ली से यमुना के सबसे निचले

हिस्से तक लंबी दूरी पैदल चलकर आए थे और वहाँ उन्होंने अपने पूर्वजों की आत्माओं को श्रद्धांजलि अर्पित की। औरंगज़ेब बादशाह, जिसने कभी आगरा में कदम नहीं रखा था, ने घोषणा की कि वह उस वर्ष आगरा में अपना जन्मदिन मनाएगा —यानी दिल्ली में बादशाह घोषित किए जाने के आठ साल बाद। मुझे पता था कि यह एक बेहद भव्य आयोजन होगा। लेकिन यह सबसे भव्य होगा, क्योंकि यह उसका पचासवाँ जन्मदिन था। भारी मात्रा में सोना, हीरे, मोती, माणिक, चाँदी, रेशम, हाथी, घोड़े... आठ वर्षों में एकत्रित साम्राज्य की अकल्पनीय संपत्ति दिल्ली में थी, जबकि भव्य महल, आलीशान किले, विशाल महल और विस्मयकारी इमारतें आगरा में थीं। इसके अलावा, आगरा हमेशा से मुगलों की राजधानी रहा था।

बादशाह ने उस सारी दौलत को आगरा ले जाने और पूरी राजधानी को उससे चकाचौंध करने का निश्चय किया, और यह सुनिश्चित किया कि इस असाधारण वैभव की खबर हिंदुस्तान के दूर-दूर तक और विदेशों में भी फैल जाए। यह प्रदर्शन उसकी प्रजा, दरबारियों, रईसों, करदाताओं और विदेशी राजाओं एवं सम्राटों का भय और वफादारी हासिल करने के लिए आवश्यक अगला कदम था। और इस प्रकार, राज्य के कुछ सर्वश्रेष्ठ सैनिकों की निर्मम निगरानी में 1,400 दो बैलगाड़ियाँ दिल्ली से रवाना हुईं। लेकिन बात यहीं खत्म नहीं हुई। हमारे पूरे ज़नाना को—उसके आभूषणों, वस्त्रों और गहनों सहित—आग लाने का आदेश दिया गया। आखिरकार, ज़नाना का आकार भी बादशाह की शक्ति के विस्तार का एक सूचक था।

इतने बड़े पैमाने पर किसी आंदोलन की योजना बनाने, प्रबंधन करने, परिवहन करने और निगरानी करने का अथक परिश्रम मेरी कल्पना से परे था—यह एक चलती-फिरती राजधानी थी। मुझे बस इतना पता चला कि दो समूह नियुक्त किए गए थे। एक समूह एक तरह से अग्रिम दल था। यह समूह बड़े-बड़े शिविर लगाने के लिए सर्वोत्तम स्थानों की पहचान करता था। जैसे ही जनाना शिविर में पहुँचता, दूसरा समूह पहले शिविर स्थल से निकलकर आगरा की ओर जाने वाली सड़क पर आगे इसी तरह के शिविर स्थलों की खोज में निकल चुका होता। देरी और भ्रम से बचने के लिए दोनों समूहों को पूर्ण समन्वय में काम करना आवश्यक था।

हमदुल्लाह साहब ने मुझे अर्श अस्यानी जलालुद्दीन अकबर बादशाह के ज़नानाओं के परिवहन में शामिल तैयारियों के बारे में बताया—केवल इसी उद्देश्य के लिए सौ हाथी, पाँच सौ ऊँट, चार सौ बैलगाड़ियाँ और सौ पालकी उठाने वाले लगाए

गए थे। इस काफिले की सुरक्षा के लिए पाँच सौ सशस्त्र सैनिक तैनात किए गए थे और ज़नाना के सदस्यों की साफ-सफाई और देखभाल के लिए सौ सफाईकर्मी रखे गए थे। सड़क की सफाई और उसे समतल करने के लिए पाँच सौ नौकरों को भी काम पर रखा गया था। इसके अलावा सौ पानी ढोने वाले, पचास बढ़ई और शिविर में छोटे-मोटे कामों के लिए कई तरह के नौकर भी थे। और फिर वे लोग भी थे जो रात में मशाल थामे रहते थे। पचास चमड़े का काम करने वाले और लगभग 150 सफाईकर्मी भी इस काफिले का हिस्सा थे।

इस विशाल जनसमूह में जानवरों और इंसानों की सही-सही गिनती करना नामुमकिन था, लेकिन मैं एक अंदाज़े के तौर पर कम से कम दो हज़ार हाथी, तीन-चार हज़ार ऊँट और हज़ारों नौकरों का अनुमान लगा सकता था। हमदुल्लाह साहब ने मुझे बताया कि उन्हें सही गिनती बहुत बाद में मिली। दरअसल, ज़्यादा मज़दूरों की ज़रूरत नहीं थी, क्योंकि दिल्ली और आगरा के बीच एक अच्छी तरह से बना हुआ राजमार्ग पहले से ही मौजूद था। बस सबसे सुविधाजनक जगहों पर तंबू लगाने और ज़नाना के सदस्यों को रसद पहुँचाने का काम था। शिविरों में हमेशा की तरह सख्त वर्गीकरण प्रणाली का पालन किया गया: दीवान-ए-खास और दीवान-ए-आम, जो बादशाह और उनके करीबी लोगों के लिए आरक्षित थे, अलग-अलग रखे गए थे। बादशाह की पसंदीदा महिलाओं के तंबू भी इसी तरह बनाए गए थे। इन खास महिलाओं के तंबू दस गज लंबे और छह गज चौड़े थे। भीतरी दीवारें सुंदर चित्रों से सजी थीं और उन पर चांदी और सोने के पतले धागों से कढ़ाई की गई थी। इसी तरह सजाए गए एक मोटे कपड़े से एक बेगम का कमरा दूसरे से अलग किया गया था। जमीन पर तीन इंच मोटी एक आलीशान कालीन बिछी हुई थी।

वही सख्त नियम लागू था—किसी भी पुरुष की नज़र ज़नाना की महिलाओं पर नहीं पड़नी चाहिए थी। पहरेदारों, पालकी उठाने वालों और हर पुरुष को हर समय सड़क पर नज़र रखनी पड़ती थी। ज़रा सी भी नज़र कहीं और पड़ जाए तो नज़र के हाथों नरक को दावत देना पड़ता था, जिसके हिजड़े सैनिकों का दल इन महिलाओं की रक्षा की पहली पंक्ति बनाता था। ये हिजड़े उस दोषी पुरुष को तब तक कोड़े मारते थे जब तक उसकी चमड़ी न फट जाए। इसके बाद उचित पूछताछ होती थी, जिसके परिणामस्वरूप अंधा कर देना या हाथ-पैर काट देना जैसी उचित सज़ा दी जाती थी।

हमें आगरा पहुंचने में दो सप्ताह लग गए। आकार जितना बड़ा, गति उतनी ही धीमी।

आगरा आने के बाद भी मेरा हमदुल्लाह साहब से पहले की तरह ही नियमित संपर्क बना रहा। अभिलेखागार भी आगरा स्थानांतरित कर दिए गए और कुछ ही समय में आगरा किले के ठीक बाहर हमदुल्लाह साहब का एक आलीशान घर बन गया, जो उनकी प्रतिष्ठा के अनुरूप था। मैं उनसे नियमित रूप से मिलने जाता था, मानो यह मेरा कर्तव्य हो, चाहे उस दिन मेरी पढ़ाई हो या न हो। इससे उन्हें अत्यंत प्रसन्नता होती थी। वे हर मुलाकात में मेरे सिर पर हाथ फेरते और स्नेह भरे स्वर में मुझसे बातें करते थे। कुछ ही हफ्तों में मैंने उनका प्रेम और विश्वास इस कदर जीत लिया कि वे मुगल साम्राज्य के भीतरी रहस्यों और अंदरूनी बातों को मेरे कान में फुसफुसाने लगे।

बहुत जल्द ही मुझे साम्राज्य के विभिन्न हिस्सों में भड़क रहे विद्रोहों और बादशाह द्वारा उन्हें दबाने के लिए रची गई योजनाओं की प्रत्यक्ष जानकारी मिल गई—ठीक है, लगभग प्रत्यक्ष जानकारी। मुझे पहले से ही पता था कि युद्ध कहाँ छिड़ेगा। मुझे पदोन्नति के लिए चुने गए जनरलों के नाम पता थे। मैंने कोंकण के बारे में जाना, जो विशाल पर्वतों से घिरा एक स्थान है, और वहाँ रहने वाले मराठों के बारे में भी। शिव नामक एक नवगठित मराठा नेता ने औरंगजेब बादशाह की शक्ति को चुनौती देने का साहस किया था।

हमदुल्लाह साहब ने मुझे बताया कि शिव एक कायर था जिसमें खुले मैदान में बादशाह की सेना से लड़ने का साहस नहीं था। वह एक धूर्त रणनीतिकार था जिसके पास हज़ारों तरह की तरकीबें थीं। वह आमतौर पर रात में या जब मुगल सेना की सुरक्षा थोड़ी कमज़ोर होती थी, तब हमला करता और अंधाधुंध हत्याएं करता। या फिर वह रणनीतिक स्थानों पर घात लगाकर बैठा रहता और जब मुगल सेना वहां से गुज़रती, तो अचानक कहीं से भी हमला करके अफरा-तफरी मचा देता और अंधाधुंध हत्याएं करता। हर हमले में वह और उसका गिरोह मुगल सेना को लूट लेते थे।

‘बहुत कम समय में, शिव के नाम ने न केवल हमारी सेना, बल्कि पूरे कोंकण क्षेत्र के दिलों में भय पैदा कर दिया था। शिव ने घोषणा की थी कि उनके जीवन का उद्देश्य मुस्लिम शासन को पूरी तरह से उखाड़ फेंकना और एक हिंदू साम्राज्य की स्थापना करना है। वे सूरत पहुँच गए थे और वहाँ उन्होंने मुगल साम्राज्य के संरक्षण में समुद्री

व्यापार में लगे विदेशियों के बड़े-बड़े व्यापारिक प्रतिष्ठानों को नष्ट कर दिया और लूट लिया था। अब विदेशी उनका सम्मान करते थे और खुलेआम मुगल सेना का उपहास उड़ाते थे।'

फिर हमदुल्लाह साहब ने मुझे बीजापुर के सुल्तान के खूंखार सेनापति अफजल खान के बारे में बताया। शिव ने अफजल खान के वार्ता प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया और जब उनकी मुलाकात हुई, तो उन्होंने लोहे के पंजे उसके शरीर में घोंपकर उस विशालकाय योद्धा को मार डाला। इसके बाद उन्होंने एक तीव्र आक्रमण किया जिससे अफजल खान की सेना तितर-बितर हो गई और जो कुछ बचा था वह सब दिशाओं में भाग गया।

औरंगजेब बादशाह को जल्द ही एहसास हो गया कि शिवा बहुत जल्दी बहुत शक्तिशाली हो गए हैं। अब शिवा को शिवाजी के नाम से जाना जाने लगा, उनके नाम के आगे 'जी' का प्रयोग सम्मान का प्रतीक था। इसलिए, बादशाह ने इस नवोदित शासक को कुचलने का कार्य अपने सबसे कुशल सेनापतियों में से एक, जय सिंह को सौंपा। जय सिंह एक अनुभवी और कुशल रणनीतिकार थे। वे राजपूताना के एक समय के शक्तिशाली राज्य, आमेर के निवासी थे। उन्होंने महज आठ वर्ष की आयु में अपने पिता को खो दिया था और तुरंत मुगल साम्राज्य में सेनापति नियुक्त हो गए थे। तेरह वर्ष की आयु में वे आमेर के सिंहासन पर आसीन हुए और मुगल बादशाह के प्रति अपनी निष्ठा की शपथ ली। तब से, उन्होंने कई निर्णायक युद्धों में भाग लिया और अपनी निष्ठा को दृढ़ सिद्ध किया। वे मुस्लिम परंपराओं से भली-भांति परिचित थे क्योंकि वे उन्हीं परंपराओं के बीच पले-बढ़े थे और फारसी, तुर्की और अरबी भाषाएँ बोलते थे। वे इस्लामी शासन कला, प्रशासन, कूटनीति और युद्ध की चतुर रणनीतियों के सिद्धांतों में पारंगत थे। जय सिंह औरंगजेब बादशाह से दस साल बड़े थे, लेकिन बादशाह के सेनापतियों में सबसे भरोसेमंद थे। जब बादशाह ने अपने पिता के खिलाफ विद्रोह करके मुगल सिंहासन पर कब्जा किया था, तब जय सिंह उनके साथ खड़े रहे थे। लेकिन किसी को नहीं पता था कि उन्होंने औरंगजेब बादशाह का साथ क्यों दिया था... क्या उन्हें औरंगजेब बादशाह की जीत का पूरा भरोसा था? या फिर यह सिर्फ समझदारी या डर था कि अगर उन्होंने उस समय उनका साथ नहीं दिया होता, तो बादशाह उन्हें धूल में मिला देते? इसका जवाब हमदुल्लाह साहब के लिए भी नामुमकिन था।

दक्षिण में पहुँचते ही जय सिंह ने सबसे पहले वहाँ के सभी राजाओं को शिवाजी के विरुद्ध भड़काया। उन्होंने बीजापुर के सुल्तान आदिल शाह को औरंगजेब बादशाह को दिए जाने वाले वार्षिक कर को कम करने का लालच दिया। उन्होंने गोवा में एक समृद्ध बंदरगाह स्थापित कर चुके पुर्तगालियों के साथ गुप्त वार्ता की और उन्हें शिवाजी के नौसैनिक बेड़े को नष्ट करने में सहयोग देने के बदले मुगल समर्थन का वादा किया। पुर्तगाली इस बात पर सहमत हो गए क्योंकि शिवाजी के नौसैनिक बेड़े के नष्ट होने पर समुद्र पर उनका एकाधिकार हो जाता।

जय सिंह ने सैकड़ों छोटे-छोटे हिंदू राज्यों के प्रमुखों को व्यक्तिगत निमंत्रण भेजे और वास्तविक वार्ता करने के लिए अपने अधीन ब्राह्मण अधिकारियों को भेजा। इन ब्राह्मण अधिकारियों ने एक चतुर संदेश पहुंचाया: 'शक्तिशाली जय सिंह, जो शिवाजी से युद्ध करने आए हैं, एक हिंदू हैं। और हम ब्राह्मण हैं जो उनके लिए काम करने में गर्व महसूस करते हैं। लेकिन शिवाजी कौन हैं? एक मामूली पहाड़ी लुटेरा। आपको उनसे क्या आश्वासन है कि वे आपको नहीं लूटेंगे? यदि आप हमारे साथ जुड़ जाते हैं, तो वे हमारी संयुक्त शक्ति के सामने शक्तिहीन हो जाएंगे और आप उनसे हमले के डर से हमेशा के लिए मुक्त हो जाएंगे।'

जय सिंह ने शिवाजी की घुड़सवार सेना के प्रमुख आत्माजी के साथ एक गुप्त समझौता किया, जिसमें तीन हजार से अधिक घोड़े थे। उन्होंने आत्माजी के दो भाइयों और एक अन्य सेनापति, कहारकोली को भारी धनराशि रिश्वत के रूप में दी। इसके बदले में, उन्हें युद्ध के दौरान जय सिंह का संकेत मिलते ही अपनी सेना की पंक्तियाँ खोलनी थीं। जय सिंह की चाल कारगर साबित हुई। युद्ध पुरंदर नामक किले में समाप्त हुआ, जहाँ हताश होकर घिरे शिवाजी के पास युद्धविराम की घोषणा करने के अलावा कोई विकल्प नहीं बचा था।

जय सिंह के नेतृत्व में लड़ने वाले अधिकांश योद्धा राजपूत थे। शिवाजी ने संधि की शर्तों को तो स्वीकार कर लिया, लेकिन उन्हें मुगलों पर पूरा भरोसा नहीं था। इसकी वजह यह थी कि जय सिंह ने उन्हें आश्वासन दिया था कि यदि वे औरंगजेब बादशाह की अधीनता स्वीकार कर लेंगे, तो वह उन्हें दक्कन का अधिपति बना देगा। जय सिंह ने उन्हें आगरा आकर बादशाह से व्यक्तिगत रूप से मिलने का निमंत्रण दिया। शिवाजी के विश्वसनीय सहयोगियों ने उन्हें इस यात्रा से बचने की चेतावनी दी, क्योंकि

उन्हें पूरा विश्वास था कि बादशाह आगरा में उनकी हत्या करने की योजना बना रहा है। फिर भी शिवाजी चले गए।

वहाँ पहुँचने पर उनके साथ अपमानजनक व्यवहार किया गया, जो जय सिंह के वादे के बिल्कुल विपरीत था। खुले दरबार में उनका अपमान किया गया और शिवाजी ने करारा जवाब दिया। औरंगज़ेब बादशाह क्रोधित हो गया। उनकी हत्या की साज़िश पहले ही रची जा चुकी थी। यह घटना उनके लिए ठीक वैसा ही बहाना साबित हुई जिसकी उन्हें तलाश थी। फिलहाल उन्हें नज़रबंद कर दिया गया है। अब देखना यह है कि उनकी हत्या किस तरह की जाती है।

शिवाजी की गिरफ्तारी की खबर आगरा और दिल्ली की सीमाओं से परे दूर-दूर तक फैल गई। वह पहाड़ी चूहा, जो इतने वर्षों तक शक्तिशाली औरंगजेब बादशाह के हर जाल से बच निकला था और उसकी शक्ति का एकमात्र प्रतिद्वंद्वी बना रहा, आखिरकार जेल में था। बादशाह एक बार फिर सर्वोच्च रणनीतिकार के रूप में उभरा था। दरबारी, मनसबदार, सूबेदार, मंत्री सभी आश्चर्यचकित रह गए। बादशाह अजेय था, उसे हार का कोई ज्ञान नहीं था। 'उसके पिता, शाहजहाँ बादशाह, उसके आसपास भी नहीं आ सके। दारा, मुराद और शुजा की बात करें तो... हा हा! यह तो केवल अल्लाह की कृपा है, जिसने ऐसे शक्तिशाली सम्राट को सिंहासन पर बिठाया है!' आगरा में यही बात गूंज रही थी। नागरिकों ने पहले से कहीं अधिक उत्साह से नमाज़ पढ़ी। बादशाह ने गुप्त रूप से अपने दरबारियों को यह सुनिश्चित करने का निर्देश दिया कि शिवाजी की गिरफ्तारी की खबर सभी तक पहुंचे। धीरे-धीरे, इस निर्देश में बदलाव किया गया। जब भी कोई उनका नाम लेना चाहता था, तो सम्मानसूचक 'जी' प्रत्यय हटा दिया जाता था। अब वे केवल 'शिव' कहलाते थे। दरबार से प्रतिदिन नए निर्देश आते थे। उनकी वीरता, प्रसिद्धि और नाम लगातार धूमिल होते जा रहे थे, फिर भी इससे मराठा को देखने के इच्छुक लोगों की संख्या बढ़ती जा रही थी। जिस समय उन्हें कैद किया गया, उसी दौरान अफ़गानिस्तान में यूसुफ़ज़ई और अफ़रीदियों ने औरंगज़ेब बादशाह के विरुद्ध विद्रोह कर दिया। लेकिन यह अल्लाह द्वारा भेजा गया एक और अवसर था—बादशाह ने उन्हें शांत करने के लिए फुर्तीले पर्वतीय चूहे शिव को भेजने का फैसला किया। पर्वतीय युद्ध में उनकी निर्विवाद महारत बादशाह की सेना के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण थी। काम पूरा होने के बाद, वह शिव की हत्या करवाकर इसका दोष विद्रोहियों पर मढ़ सकता था।

हालांकि, शिव गंभीर रूप से बीमार पड़ गए और यह घोषणा कर दी गई कि वे इसी बीमारी से मर जाएंगे। यह अच्छा हुआ—बादशाह अब शिव के हत्यारे कहलाने के कलंक से बच गया। जब शिव को यह स्पष्ट हो गया कि वे ठीक नहीं हो पाएंगे, तो उन्होंने दरबार से अनुमति लेकर अपने निजी अंगरक्षकों को अपने देश भेज दिया। मरणासन्न व्यक्ति को अंगरक्षकों की कोई आवश्यकता नहीं थी।

उस साल गर्मी बहुत भीषण थी। या आगरा की गर्मी दिल्ली से भी ज़्यादा भयानक थी? हमारी पीठों पर गर्मी से छाले पड़ गए थे, जिससे हमें पेट के बल सोना पड़ता था। महल और झुग्गियों में जीवन तुलनात्मक रूप से सहनीय था। कंचिनियों और अन्य नौकरानियों ने खसखस की घास की बड़ी-बड़ी चटाइयाँ टांगीं और गर्मी कम करने के लिए हर घंटे उन पर पानी छिड़का। खसखस की घास से बना तीन गज लंबा और एक गज चौड़ा पंखा ऊपर एक बीम से रस्सी से लटका हुआ था, जिसे बेगमों को हवा देने के लिए लगातार खींचा जाता था। नौकरानियों को इस तरह जानलेवा गर्मी से राहत मिलती थी, जो राहत किन्नरों को नहीं मिलती थी। हमने खूब पानी पिया। आगरा में पानी की कभी कमी नहीं होती थी।

उस असहनीय गर्मी का फल समय पर मानसून के रूप में मिला। हमेशा की तरह, बारिश की पहली बूँदें कोई भी नहीं छोड़ना चाहता था। बेगमें आँगन में दौड़ पड़ीं और पूरी तरह भीग गईं, जबकि उन्होंने अभी भी अपने बुर्के पहने हुए थे। यमुना आगरा में दिल्ली की तुलना में कहीं अधिक मनमोहक लगती है। यह जल्दी भर गई और लगातार बारिश ने इसे इतना बढ़ा दिया कि यह किले की दीवारों को छूने लगी।

बारिश के साथ एक अचानक, अप्रत्याशित खबर आई, जो देखते ही देखते पूरे शहर में फैल गई: पहाड़ी चूहे ने बादशाह को चकमा दे दिया था। चूहा तो भाग निकला था, लेकिन बादशाह ने तुरंत जवाब देते हुए तेज रफ्तार से पीछा करने के लिए विशेष रूप से प्रशिक्षित घोड़ों पर सवार एक छोटी सेना भेज दी। वे पहाड़ों की ओर दौड़ पड़े। शिव की जेल में गश्त कर रहे पहरेदार लगभग मर चुके थे। नागरिकों के लिए, शिव के भागने की कहानी बादशाह द्वारा उसकी गिरफ्तारी से कहीं अधिक साहसी और रोमांचक थी। निःसंदेह, वह औरंगजेब बादशाह की बाज जैसी पकड़ से बच निकलने के लिए असाधारण साहस का धनी था।

हमदुल्लाह साहब ने कहा, 'बादशाह अब चिंतित हैं। अगर यह नीच पहाड़ी चूहा दक्कन में स्थित अपने बिल तक पहुँचने में कामयाब हो गया, तो आलमगीर का पूरे

दक्षिण को मुगल ताज के अधीन लाने का सपना हमेशा के लिए चकनाचूर हो जाएगा।'

बादशाह ने अपने जन्मदिन के दरबार के उत्सव समाप्त होने के बाद अपना पूरा प्रशासन दिल्ली वापस स्थानांतरित कर दिया। अब तक मैं उदयपुरी महल से धाराप्रवाह फ़ारसी में बात कर सकता था और मुझे यह आभास हो गया था कि उनका मेरे प्रति स्नेह बढ़ गया था। उन्होंने मुझे अपने महल का कनिष्ठ पर्यवेक्षक बना दिया। इसका अर्थ था कि मेरे पास अधिक खाली समय था, जिसका अधिकांश भाग मैं हमदुल्ला साहब के घर पर बिताता था। मुझे अपेक्षाकृत अधिक स्वतंत्रता भी प्राप्त थी। मैं ज़नाना तक ही सीमित नहीं था। मैं समृद्ध इलाकों और गलियों में घूमता था और कभी-कभी पुराने शहर में पूर्व सुल्तानों द्वारा निर्मित सुनसान और जर्जर क्षेत्रों में भी जाता था। मेरी एकांत यात्राओं से मुझे पता चला कि दिल्ली एक शहर नहीं बल्कि कई पुराने शहरों का समूह है, और प्रत्येक शहर का अपना एक इतिहास है। मैंने हमदुल्ला साहब से इन इतिहासों का पता लगाने का निश्चय किया।

आगरा से लौटने के बाद, बादशाह ने प्रशासन को सुदृढ़ करने का एक बड़ा अभियान शुरू किया। एक प्रमुख परिवर्तन इस्लामी प्रशासन और न्यायशास्त्र के उन सभी सिद्धांतों को मजबूत करना था जो अकबर बादशाह के शासनकाल में शिथिल पड़ गए थे। उन्होंने व्यक्तिगत रूप से प्रत्येक कानून की जांच की और इस्लामी सिद्धांतों का उल्लंघन करने वाले किसी भी कानून को निरस्त कर दिया।

जहांगीर बादशाह अपने पिता की तरह धार्मिक रूप से भ्रष्ट नहीं थे, लेकिन इस्लाम के प्रति उनकी निष्ठा भी पूर्ण नहीं थी। उनकी प्रशंसा में यह कहा जा सकता है कि उन्होंने जगह-जगह मंदिरों को तुड़वाया और अपने सैनिकों को मूर्तियों पर पेशाब और मल त्याग करने का आदेश दिया। लेकिन हिंदू मंदिरों को व्यवस्थित रूप से नष्ट करने का आदेश शाहजहाँ बादशाह ने ही दिया था। उन्होंने पूरे मुगल साम्राज्य में नए मंदिरों के निर्माण और मौजूदा मंदिरों के जीर्णोद्धार पर रोक लगा दी और गैर-मुसलमानों को इस्लाम में परिवर्तित करने की नीति अपनाई। उन्होंने अपने हिंदू दरबारियों, अधिकारियों और आम नागरिकों को उच्च वेतन, सोना, सत्ता और धन का लालच देकर इस्लाम की ओर आकर्षित करने का प्रयास किया। जहाँ यह कारगर नहीं हुआ, वहाँ उन्होंने जिद्दी हिंदू अधिकारियों को दूरदराज के प्रांतों में तबादलों की धमकी दी और कुछ मामलों में बर्खास्तगी की भी। उन्होंने तीर्थयात्रा पर जाने वाले हिंदुओं पर भारी तीर्थयात्रा कर लगाया। उन्होंने शमीम लाहौरी और मुहिब अली सिंधी

को ऐसे अधिकारी नियुक्त किया जिनका कार्य इस्लाम धर्म अपनाने के इच्छुक हिंदुओं के लिए उपयुक्त पद सृजित करना था।

दादाजी के प्रयास आधे-अधूरे थे और उनके पिता, उत्साही होते हुए भी, लापरवाह थे। उन्होंने जो कार्य शुरू किया था, उसे औरंगजेब बादशाह ने अपने पूर्ववर्तियों की उदासीनता और आलस्य के बिना पूरा किया। उन्होंने संपूर्ण मुगल साम्राज्य का इस्लामीकरण करने के अपने लक्ष्य को एकाग्रचित्तता और अनुशासन के साथ आगे बढ़ाया—इस्लाम ने ही निर्धारित किया कि क्या जायज़ है और क्या नाजायज़। लिखा गया प्रत्येक कानून और सुनाया गया प्रत्येक आदेश इस्लामी सिद्धांतों के प्रति पूर्णतः निष्ठावान था। कुरान को ज़बान पर रखने वाले बादशाह को कोई भी मूर्ख नहीं बना सकता था। पवित्र ग्रंथ पर उनका अधिकार प्रख्यात विद्वानों और धर्मशास्त्रियों से भी कहीं अधिक था। वे सबसे गूढ़ और कठिन आयतों की भी सटीक व्याख्या कर सकते थे और कुरान में विश्वासियों के लिए निर्धारित उद्देश्यों और लक्ष्यों की उन्हें अचूक समझ थी। अल्लाह ही एकमात्र सच्चा राजा था। इस धरती के विभिन्न हिस्सों पर शासन करने वाले बादशाह केवल अल्लाह के प्रतिनिधि थे। प्रत्येक बादशाह का लक्ष्य और कर्तव्य अपने साम्राज्य के कोने-कोने में अल्लाह का नाम फैलाना था।

किसी भी प्रजा को अल्लाह के सिवा किसी अन्य देवता की पूजा करने की अनुमति नहीं थी, यहाँ तक कि उसका नाम लेने की भी नहीं, क्योंकि अल्लाह के बराबर कोई नहीं था और ऐसा करने वाला गद्दार था। किसी अन्य देवता का नाम लेना किसी नागरिक द्वारा किया जाने वाला सबसे बड़ा अपराध था, जिसकी सज़ा मृत्यु थी। अल्लाह के मार्ग पर चलना प्रत्येक मुसलमान का पवित्र कर्तव्य था और इस पवित्र कर्तव्य को पूरा करने का हर प्रयास जिहाद कहलाता था। जिहाद में काफिर राज्यों (दारुल हर्ब) को मुसलमानों के राज्य (दारुल इस्लाम) में परिवर्तित करने के सभी प्रयास शामिल थे, जिनके लिए उन पर युद्ध छेड़ा जाता था। यदि मुसलमान युद्ध जीत जाते, तो पराजित काफिर स्वतः ही मुसलमानों के गुलाम बन जाते। जिहाद एक निरंतर संघर्ष था क्योंकि दुनिया में हज़ारों काफिर राज्य मौजूद थे और उन सभी को इस्लाम में परिवर्तित करना आवश्यक था, क्योंकि इस्लाम का अंतिम लक्ष्य सभी भिन्न मान्यताओं को मिटाना था जब तक कि एकमात्र सच्चा धर्म इस धरती पर दृढ़ न हो जाए।

औरंगज़ेब बादशाह, जो सबसे पवित्र मुसलमानों में से एक थे, ने इस महान उद्देश्य को पूरा करने में अपना पूरा योगदान दिया। वे एक दयालु बादशाह थे जिन्होंने इस्लाम धर्म अपनाने वालों की जान बख्श दी। वे पवित्र कुरान की बात जानते थे, "जब वर्जित महीने बीत जाएं, तो काफिरों से लड़ो और उन्हें मार डालो, जहाँ कहीं भी पाओ, उन्हें पकड़ो, घेर लो और हर तरह की रणनीति अपनाकर उन पर घात लगाओ; परन्तु यदि वे पश्चाताप करें, नियमित नमाज़ अदा करें और नियमित दान करें, तो उनके लिए रास्ता खोल दो: क्योंकि अल्लाह अत्यंत क्षमाशील और दयालु है।" (कुरान, 9:5:6) और आगे, "काफिरों से कहो, यदि अब वे अविश्वास से विमुख हो जाएं, तो उनके अतीत को क्षमा कर दिया जाएगा; परन्तु यदि वे अडिग रहें, तो उनसे पहले वालों का दंड उनके लिए एक चेतावनी है। और उनसे तब तक लड़ते रहो जब तक कोई उपद्रव या अत्याचार न रह जाए, और हर जगह न्याय और अल्लाह में विश्वास कायम हो जाए।" लेकिन अगर वे रुक जाएं, तो निःसंदेह अल्लाह उनके सभी कामों को देखता है' (कुरान, 8.38–39)।

एक गैर-मुस्लिम को कोई राजनीतिक अधिकार नहीं थे। इतना ही नहीं, उसे किसी भी प्रकार से मुस्लिम राज्य में रहने का कोई अधिकार नहीं था। यदि उसे रहने की अनुमति दी भी जाती, तो वह अस्थायी होती। उसकी स्थिति गुलाम से थोड़ी बेहतर थी और उसे ज़िम्मी की उपाधि से पहचाना जाता था। एक ज़िम्मी को केवल इसलिए रहने की अनुमति थी क्योंकि वह सरकार के साथ एक अनुबंध, ज़िम्मा, करने के लिए सहमत होता था। कानून द्वारा उसे मुस्लिम नागरिक के समान अधिकारों का आनंद लेने से वर्जित किया गया था, और उसे जजिया अदा करना पड़ता था, जो एक कर था जिसके द्वारा गैर-मुस्लिमों को मुस्लिम राज्य में रहने की अनुमति मिलती थी। जजिया अदा करते समय उसे कमर झुकाकर बैठना पड़ता था, जैसा कि पैगंबर मुहम्मद (उन पर शांति हो) ने निर्धारित किया था: 'उन लोगों से लड़ो जो अल्लाह में विश्वास नहीं करते... जब तक कि वे स्वेच्छा से जजिया अदा न कर दें और स्वयं को अधीन महसूस न करें' (कुरान, 9.29)। जजिया वसूलने वाले मुस्लिम को इसे स्वीकार करते समय हमेशा ऊँची कुर्सी पर बैठना होता था।

गैर-मुसलमानों को खराज नामक विशेष भूमि कर भी देना पड़ता था, जिससे मुसलमानों को छूट प्राप्त थी। इसके अलावा, मुगल सेना के रखरखाव के लिए एक और कर लगाया जाता था। किसी गैर-मुसलमान को सेनापति, योद्धा या घुड़सवार के

रूप में भर्ती होने की अनुमति नहीं थी; वह केवल मामूली पद पर ही सेवा कर सकता था। उसे हर समय अपने व्यवहार पर कड़ी निगरानी रखनी पड़ती थी और मुसलमानों से बात करते समय विनम्रता और सम्मान दिखाना होता था। उसे आभूषण पहनने या हथियार रखने की अनुमति नहीं थी। ज़िम्मियों को अपने त्योहार और मेले मनाने से मना किया गया था और उन्हें समूहों में इकट्ठा होने, नए मंदिर बनाने या मौजूदा मंदिरों का जीर्णोद्धार करने से भी प्रतिबंधित किया गया था। कई मामलों में, यदि कोई मुसलमान खांसते समय 'खाख' की आवाज निकालता और फिर थूकता, तो ज़िम्मी को सम्मानपूर्वक अपना मुंह खोलकर मुसलमान को उसमें थूकने देना पड़ता और थूक को निगलना पड़ता, बिना चेहरे पर किसी प्रकार की असुविधा या घृणा का भाव दिखाए।

किसी भी अदालत में किसी मुसलमान की गवाही के मुकाबले उसकी गवाही का कोई महत्व नहीं था। किसी गैर-मुस्लिम की हत्या करने वाले मुसलमान को कोई सज़ा नहीं मिलती थी—कानून के अनुसार किसी ज़िम्मी की हत्या करना अपराध नहीं था। अंततः, इन सभी कठोर उपायों, भारी करों और अपमानों का उद्देश्य ज़िम्मी को अपने अंधकारमय धर्म को त्यागकर इस्लाम स्वीकार करने के लिए प्रेरित करना था।

शाहजहाँ बादशाह के जीवित रहते हुए, औरंगज़ेब बादशाह ने एक फरमान जारी किया था। इस फरमान के अनुसार सभी हिंदू व्यापारियों और व्यवसायियों को 5 प्रतिशत बिक्री कर और सभी मुस्लिम व्यापारियों को 2.5 प्रतिशत बिक्री कर देना अनिवार्य था। हालाँकि, अपने जन्मदिन समारोह के बाद दिल्ली लौटने पर, औरंगज़ेब बादशाह ने इस फरमान में संशोधन किया और मुस्लिम व्यापारियों को बिक्री कर से छूट दे दी। लेकिन हिंदू व्यापारियों को पहले की तरह ही कर देना पड़ता था। यह हिंदुओं को व्यापार से बाहर करने की एक चाल थी। लेकिन बादशाह यहीं नहीं रुका। उसने एक और फरमान जारी किया—मुख्य लेखाकार (पेशकार) और लेखाकार (दीवानियां) के पदों पर आसीन सभी हिंदुओं को तत्काल प्रभाव से सेवा से बर्खास्त कर दिया गया।

मैंने यह सब पूरी एकाग्रता से सुना और अंत में हमदुल्लाह साहब से पूछा, 'बादशाह को गद्दी पर बैठे आठ साल हो गए हैं। उन्होंने इन सभी उपायों को लागू करने में इतना लंबा इंतजार क्यों किया? उन्होंने यह पहले क्यों नहीं किया?'

'उन्होंने यह पहले क्यों नहीं किया? हम्म? क्यों? आप ही क्यों नहीं बताते?' उन्होंने चौड़ी मुस्कान के साथ मुझसे पूछा, मानो उत्तर स्वतः स्पष्ट हो। मैंने उन्हें हमेशा की तरह खाली निगाहों से देखा। उन्होंने विनम्रता से सिर हिलाया और कहा, 'इस प्रश्न का उत्तर जानने के लिए आपको इतिहास का अध्ययन करना होगा। आपको यह समझना होगा कि इतिहास की कुछ परिस्थितियाँ और उनसे मिलने वाली अंतर्दृष्टियाँ आश्चर्यजनक रूप से एक समान रहती हैं। क्या आप जानते हैं कि हमारे ही इतिहासकार ज़ियाउद्दीन बरानी ने क्या लिखा था? नहीं? उन्होंने चार सौ साल पहले लिखा था कि हमारे ही दिल्ली में शासन करने वाले हमारे राजाओं में से एक इल्तुतमुश ने क्या किया था। इल्तुतमुश के समय में हम उतने शक्तिशाली नहीं थे जितने आज हैं। हम हिंदू राजाओं से घिरे हुए थे। चंबल के दक्षिण में शक्तिशाली झांसी थी। ग्वालियर और नवार परिहारों के नियंत्रण में थे। चौहान रणथंबोर में थे और राजपुताना के दक्षिण-पश्चिम में शक्तिशाली जालौर थे।' उत्तर में यादवों का अलवर तक जाने वाले पूरे मार्ग पर पूर्ण नियंत्रण था और उन्होंने बयाना, थांगीर और अजमेर सहित पूरे क्षेत्र पर शासन करना हमारे लिए बेहद मुश्किल बना दिया था। दिल्ली से शासन करने वाले सुल्तान की स्थिति की कल्पना कीजिए!

उलेमाओं ने बार-बार सुल्तान इल्तुतमुश से पूछा: आप काफिर राजाओं के विरुद्ध जिहाद क्यों नहीं छेड़ रहे? आप अपने राज्य में अविश्वासियों पर जजिया क्यों नहीं लगा रहे? आप अपने साम्राज्य को पवित्र इस्लाम के सिद्धांतों के अनुसार क्यों नहीं चला रहे? वे सही थे; आख़िरकार, उनका काम राजा को यह समझाना था कि सच्चे धर्म का प्रसार यथासंभव व्यापक रूप से और शीघ्रता से करना कितना ज़रूरी है। सुल्तान ने उनसे कहा, "आज हिंदुस्तान में मुसलमानों की संख्या नमक की उस चुटकी के समान है जो भोजन की एक बड़ी थाली के कोने में उपेक्षित पड़ी रहती है। हमें कुछ वर्षों तक प्रतीक्षा करनी होगी जब तक हमारी संख्या बढ़ न जाए और फिर हम, जैसा कि आप कहते हैं, हिंदुओं को इस्लाम और मृत्यु के बीच चुनाव का विकल्प दे सकते हैं। तब तक आपको धैर्य रखना होगा।"

'क्या आप जानते हैं मैंने आपको यह क्यों बताया? औरंगजेब बादशाह का साम्राज्य पर पूर्ण नियंत्रण नहीं था, हालांकि उसने आगरा में शाहजहाँ बादशाह के जीवित रहते हुए भी खुद को बादशाह घोषित कर दिया था। अब दक्कन का वह पहाड़ी चूहा एक बार पकड़ा गया था, लेकिन भागने में कामयाब रहा। यह कोई बड़ी

चिंता की बात नहीं है क्योंकि मराठा साम्राज्य हमारे नियंत्रण में है। इसके अलावा, वहाँ तैनात मुगल सेना हमारी ही है।'

'लेकिन आपके पास जय सिंह जैसे राजपूत तो हैं?' मैंने उन्हें बीच में ही रोक दिया।

'ये लोग नाम के राजपूत हैं। जय सिंह जैसे लोगों को बादशाह की कृपा से ही राजसी उपाधियाँ मिलती हैं। जिस दिन बादशाह की कृपा इन पर समाप्त हो जाएगी, उसी दिन ये सुंदर उपाधियाँ भी छिन जाएँगी। आज उन्हें दक्कन भेजा गया है और जैसे ही बादशाह उन्हें उत्तर-पूर्व जाने का आदेश देंगे, उन्हें चुपचाप जाना होगा। जय सिंह और उनके जैसे सभी लोग युद्ध की रणनीति के अलावा कुछ नहीं जानते। उनके पास कोई कौशल नहीं है और उन्होंने कोई ऐसा शिल्प या व्यापार नहीं सीखा है जिससे वे सेना छोड़कर इस दुनिया में अपना जीवन यापन कर सकें। वास्तव में, उनके पास कोई विकल्प नहीं है—या तो वे बादशाह के आदेशों का पालन करें या सेना से निकाल दिए जाएँ। क्या आप इन लोगों से विद्रोह की उम्मीद करते हैं?'

"बादशाह ने पूरे हिंदुस्तान को इस्लाम के अधीन लाने के अपने प्रयास को शुरू करने से पहले इन बातों पर बहुत सोच-विचार किया है। आप स्वयं देखेंगे कि कुछ ही वर्षों में गुजरात से बंगाल तक, थानेसर से गोलकोंडा तक और उससे आगे तक... मुझे उनके सभी नाम नहीं पता... हजारों छोटे-बड़े रियासतों में मस्जिदें और मीनारें आसमान छूती हुई गर्व से खड़ी होंगी। अनेक देवताओं के उपासकों, मुश्रिकों के मंदिर ज़मींदोज़ कर दिए जाएंगे और उनकी मैली मूर्तियों को सीढ़ियों के रूप में इस्तेमाल किया जाएगा, जिन पर चलकर श्रद्धालु मस्जिदों में प्रवेश करेंगे और सर्वशक्तिमान अल्लाह से प्रार्थना करेंगे। मैं जानता हूँ कि आलमगीर बादशाह के लिए स्वर्ग में सर्वोच्च स्थान ही तैयार किया गया है," हमदुल्लाह साहब ने अपने चेहरे पर संतोष की चमक के साथ अपनी बात समाप्त की।

मैं नए फरमानों के वास्तविक परिणामों को देखने में असमर्थ था क्योंकि ज़नाना, वास्तव में, पूरा दिल्ली पूरी तरह से मुस्लिम था।

बादशाह उदयपुरी महल के साथ उतना समय नहीं बिता पाते थे जितना वे चाहते थे। राजकीय मामलों में उनका अधिकांश समय व्यतीत होता था और उन्हें अपनी अन्य बेगमों और स्त्रियों का भी ध्यान रखना पड़ता था। उदयपुरी महल अक्सर इस बात पर उन्हें चिढ़ाती थीं, लेकिन सभी जानते थे—विशेष रूप से वे स्वयं जानती थीं—कि ये प्रेमियों के झगड़े थे। वे लहजे में जरा सा भी बदलाव करने का जोखिम नहीं

उठाती थीं। वे औरंगजेब बादशाह थे। जब वे कई दिनों, कभी-कभी हफ्तों तक घर से बाहर रहते थे, तो ऊब और अकेलापन उन पर हावी होने लगता था। मनोरंजन के साधन तो भरपूर थे, लेकिन उन्हें किसी से बात करने की ज़रूरत होती थी, इसलिए वे अक्सर अमीरों और अन्य अधिकारियों की बेगमों को बुलवाती थीं। बेगम आमतौर पर पूरा दिन इन स्त्रियों के साथ गपशप करने में बिताती थीं। अमीरों की ज़नानाएं बादशाह की ज़नानाओं की तुलना में बाहरी दुनिया की घटनाओं से कहीं अधिक अवगत थीं।

एक बार उदयपुरी महल ने मुझे दिलशाद खान के महल में जल्दी जाने और शबाना बेगम को अगले दिन उनसे मिलने के लिए सूचित करने का आदेश दिया। दिलशाद खान तुगलकाबाद में रहते थे। मैं पहले भी कई बार उनके महल जा चुका था और उनकी बेगम शबाना की कृपा मुझ पर थी। तुगलकाबाद दूर होने के कारण मैंने उदयपुरी महल से एक घोड़े का इंतजाम करने की विनती की ताकि मेरी यात्रा जल्दी हो सके। उन्होंने मेरी प्रार्थना तुरंत स्वीकार कर ली।

दिल्ली पर आक्रमण करने वाले हर छोटे-बड़े मुस्लिम शासक ने अपने जीते हुए शहर में निवास नहीं किया, बल्कि आस-पास के इलाकों में एक नया शहर बसाया। इससे कोई फर्क नहीं पड़ता था कि पराजित राजा स्वयं मुस्लिम था या नहीं। जैसा कि मुझे बाद में पता चला, इसका कारण पूरे शहर को पूरी तरह से लूटने और आग लगाने की प्रथा थी। उनके पास एक अतिरिक्त लाभ था: लगभग अंतहीन उपजाऊ मैदानों के विस्तार से यह सुनिश्चित होता था कि नए-नए शहर बसाने के लिए हमेशा पर्याप्त भूमि उपलब्ध रहे। इसके अलावा, युद्ध में पकड़े गए कैदियों के रूप में उन्हें मुफ्त श्रम शक्ति का लाभ मिलता था, जिन्हें बाद में बिना वेतन के गुलामों के रूप में काम पर लगाया जाता था। इस प्रकार, एक तरह से, दिल्ली कहलाने वाला पूरा क्षेत्र पुराने, खंडहर हो चुके और लगभग निर्जन शहरों का एक समूह था।

इनमें से कुछ शहरों की आबादी बहुत कम थी। युद्ध के दौरान नष्ट हुए अपने घरों का पुनर्निर्माण कराने वाले लोग अब ऐसे शहरों में रहते थे। कुछ अमीर, जो दरबार से सम्मानजनक दूरी बनाए रखना पसंद करते थे, उन्होंने ऐसे शहरों में जर्जर हवेलियों का जीर्णोद्धार कराया और वहीं रहने लगे। इसके अलावा अन्य कारण भी थे—ये अमीर अय्याशी में इतने डूबे रहते थे कि युद्धों में भाग लेने से कतराते थे और बादशाह के युद्ध अभियानों पर भेजे जाने के आह्वान से भयभीत रहते थे। कुछ दरबारी षड्यंत्रों

में घसीटे जाने से डरते थे और ऐसे खतरनाक खेलों से दूर रहना पसंद करते थे। लेकिन मुझे इन पुराने शहरों को करीब से देखने का अवसर नहीं मिला। मेरी यात्राएँ मुगलों के दिल्ली तक ही सीमित थीं, ज़्यादा से ज़्यादा उसके बाहरी इलाकों तक। कुतुब मीनार और कुछ गलियों को छोड़कर इस दिल्ली में वास्तव में कुछ भी उल्लेखनीय नहीं था। मैंने पूरे शहर को कुछ बार देखा था और बहुत जल्द मुझे एहसास हो गया कि इसमें मेरे लिए कुछ भी खास नहीं था।

घुड़सवारी का मौका सचमुच दुर्लभ था और उदयपुरी महल की कृपा के बिना, मुझे यकीन था कि मुझे यह मौका नहीं मिलता। उस दिन मुझे जो घोड़ा दिया गया था, वह निम्न श्रेणी का था, युद्ध के लिए प्रशिक्षित नहीं था। निश्चित रूप से अरबी घोड़ा तो था ही नहीं। मेरा मन अचानक अरबी घोड़ों की ओर आकर्षित हो गया... युद्ध में प्रशिक्षित सुंदर घोड़े, जो अदम्य शक्ति का प्रदर्शन करते थे। केवल असाधारण साहस वाले पुरुष ही उन्हें वश में कर सकते थे, उन पर सवार होने के लिए भी अपार साहस और अभ्यास की आवश्यकता होती थी। मैंने अपने जीवन के कई महीने ऐसे कठोर, संभावित रूप से जानलेवा अभ्यास में बिताए थे, जिसकी अब मुझे धुंधली सी याद है। वर्षों की ज़नाना सेवा ने मुझे ऐसे उत्तम जानवर को छूने का सपना भी नहीं देखने दिया था। मैं घोड़े पर सवार हुआ और उसे चलने का इशारा किया, अपनी कमीज़ ढीली की और अपने बाल खुले छोड़ दिए। जैसे ही घोड़े ने गति पकड़ी, मैंने घुड़सवारी के रोमांचकारी उत्साह को फिर से महसूस किया।

अमीर दिलशाद खान के महल का मुख्य द्वार बंद था। मैंने धीरे से दस्तक दी और पाया कि अंदर से कुंडी नहीं लगी थी। कोई प्रतिक्रिया नहीं हुई। मैंने दो बार और ज़ोर से दस्तक दी। फिर भी कोई प्रतिक्रिया नहीं। मैंने धीरे से उसे धक्का देकर खोला, इस बात का ध्यान रखते हुए कि केवल एक व्यक्ति ही अंदर जा सके। मुझे ऐसा करने की अनुमति थी क्योंकि मैं एक हिजड़ा था और बादशाह के ज़नाना में सेवा करता था। इसके अलावा, मैं बादशाह के ज़नाना से एक आदेश लेकर आया हुआ संदेशवाहक था। लेकिन मेरी सीमा ज़नाना के अंदर मेरे सामने खुले छोटे से बगीचे पर समाप्त होती थी। बगीचे के आगे एक बड़ा लकड़ी का दरवाजा था। मैंने एक युवती को अपनी कमर पर एक बच्चे को बिठाए मुख्य दरवाजे की ओर जल्दी से आते देखा। उसने एक लंबी स्कर्ट और ब्लाउज पहना हुआ था और अपने सीने को नकाब से ढका हुआ था। एक गुलाम। वह निस्संदेह एक मुस्लिम थी, लेकिन वह मूल मुस्लिम वंश की नहीं थी।

अगर वह गुलाम न होती, तो वह मर्दाना पार करके मुख्य दरवाजा खोलने के लिए इतनी दूर तक आने की हिम्मत न करती। जैसे ही वह मेरे पास आई, मेरा ध्यान उसके चेहरे पर केंद्रित हो गया, मेरी निगाहें उस पर टिक गईं। मैंने उसे कहीं देखा है। मैं उसे जानती हूँ। अब वह मेरे सामने थी। मैंने अपनी नज़रें उससे नहीं हटाईं। उसने मेरी निगाहें थाम लीं। आह! उसके चेहरे के भाव बदल गए। मैं समझ गई कि उसने मुझे पहचान लिया है। उसका चेहरा खुशी से खिल उठा, एक चौड़ी, आनंदमयी मुस्कान, फिर शर्म से लाल हो गया, और तुरंत ही उदासी छा गई। उसकी आँखें सूज गईं और आँसुओं से उसकी दृष्टि अवरुद्ध हो गई। वह हल्की सी काँपी और अपने होंठ काट लिए। डर? अचानक वह मुड़ी और डरे हुए हिरण की तरह भाग गई। उसकी कमर पर बैठा बच्चा तेज़ आवाज़ में रोने लगा, जो मुझसे दूर भागते-भागते धीमी होती गई, यहाँ तक कि मुझे बच्चे के रोने की आवाज़ सुनाई देना बंद हो गई।

मैं वहीं धड़ाम से बैठ गया, मेरा शरीर बुरी तरह कांप रहा था। मैं वहां न जाने कितनी देर तक बैठा रहा।

'तुम कौन हो और तुम क्या चाहते हो?'

मैंने ऊपर देखा तो लगभग पचास साल की एक महिला मुझे घूर रही थी। वह भी उस दूसरी महिला की तरह गुलाम थी जो भाग गई थी।

'मैं एक...हिजड़ा हूँ...' मैंने हकलाते हुए कहा।

'तुम्हें देखकर ही मैं यह बता सकती हूँ। कोई भी इस तरह मुख्य द्वार से अंदर आने की हिम्मत नहीं करता! तुम्हें क्या चाहिए?' उसने मुझसे अभद्र लहजे में, एकवचन में बात करते हुए पूछा।

'मैं उदयपुरी महल से शबाना बेगम के लिए एक संदेश लेकर आया हूँ। मुझे यह संदेश उन्हें व्यक्तिगत रूप से देना होगा।'

'कृपया मेरे साथ आइए।' उनका लहजा तुरंत बदल गया। हम मर्दाना और उसके आगे के हॉल को पार कर गए, जो ज़नाना के दरवाजे पर जाकर समाप्त होता था।

उदयपुरी महल से मुलाकात की इच्छा जताए जाने की खबर सुनकर शबाना बेगम की खुशी का कोई ठिकाना नहीं रहा। मैं अचानक उनकी खास मेहमान बन गई। उन्होंने मुझे बहुवचन में संबोधित किया और नौकर से मेरे लिए ठंडा शरबत मंगवाया।

'तुम इतनी दूर अकेले चलकर आई हो। तुम्हें हमारे साथ दोपहर का भोजन करना ही होगा। मैं ज़ोर देती हूँ,' उसने स्नेह से कहा। फिर उसने एक और नौकर को मेरे घोड़े

की देखभाल करने और यह सुनिश्चित करने का आदेश दिया कि उसे भरपेट खाना और आराम मिले। लेकिन मेरा ध्यान कहीं और था। मैं सोच रही थी कि क्या शबाना बेगम से उस महिला को बुलवाना उचित होगा जो सबसे पहले मुख्य द्वार खोलने आई थी। लेकिन अगर वह वह नहीं निकली जो मैं सोच रही थी, तो सब कुछ व्यर्थ हो जाएगा। नहीं! अगर वह सच में कोई और महिला थी जो महज़ उसकी जैसी दिखती थी, तो वह ऐसा व्यवहार क्यों कर रही थी? उसके चेहरे पर दिख रहे इतने सारे भाव... लहरों की तरह उमड़ रहे थे, जब तक कि वह रोने लगी और अंत में भाग गई... या शायद मैं सच में भ्रम में हूँ।

~

उस नाटक के बाद मैं छह महीने तक बैंगलोर नहीं गया। ईंटें, है ना? मेरा उपन्यास ही मेरा सारा समय ले गया। मैंने अपना सारा समय औरंगज़ेब के बारे में जानकारी जुटाने में लगा दिया। कोई भी स्रोत महत्वहीन या तुच्छ नहीं था। इस तरह के काम के बिना, मेरे उपन्यास में वास्तविक ऐतिहासिक सत्य को सामने लाना असंभव था। जैसे-जैसे मैं पढ़ता गया, मेरा उपन्यास अपने आप आगे बढ़ने लगा और मैं अपने मन में आने वाले असंबद्ध अंशों को लिखता चला गया, ताकि बाद में उन्हें एक रूप दे सकूँ।

जब मुझे लगा कि उपन्यास में मैं उस मुकाम पर पहुँच गई हूँ जहाँ मैं लेखन से विराम ले सकती हूँ, तब मैं बैंगलोर के लिए रवाना हुई। पिछली बार जो हुआ था, उसके बाद आमिर का गुस्सा अभी शांत नहीं हुआ होगा। लेकिन मुझे उससे मिलना ही था। बात को ज़्यादा खींचना ठीक नहीं था। मैं उसे मनाने की कोशिश करूँगी...छह...ठीक है, ज़्यादा से ज़्यादा आठ महीने और मैं हमेशा के लिए बैंगलोर लौट आऊँगी। मुझे उसकी बहुत याद आ रही थी। अचानक एक और ख्याल मेरे मन में आया—मुझे यकीन नहीं था कि मैं नरसपुरा से अपने नए सिरे से जुड़े रिश्तों को पूरी तरह तोड़ पाऊँगी। मुझे एहसास हुआ कि इसका मेरे लिए बहुत गहरा महत्व है। मेरा जन्म वहीं हुआ था, मैं वहीं पली-बढ़ी थी और उस दीवाने, जवानी के जुनून के बाद जिसने मुझे उससे अलग कर दिया था...अट्ठाईस साल पहले...समय उन रिश्तों के लिए मायने नहीं रखता जो इंसान को बांधते हैं...और अब पिता के साथ जो बंधन मैं महसूस करती थी...उनके कमरे में उनके बिस्तर पर बैठकर, तीन साल से ज़्यादा समय तक उन्होंने जो कुछ भी पढ़ा था, उसे पढ़ते हुए...मैं जानती थी कि नरसपुरा मुझसे दूर नहीं जाएगा, चाहे मैं चाहूँ भी तो। इसमें मेरे दिल की जड़ें बसी हुई थीं।

मेरे अपार्टमेंट का दरवाजा खोलने वाली नौकरानी फर्श साफ करने में व्यस्त थी। मैंने उससे थोड़ी बातचीत की। क्या आपके परिवार में सब ठीक है? पति? बच्चे? कितने हैं? धीरे-धीरे वह मुझसे घुलमिल गई।

'अमीना बानू कहीं नज़र नहीं आ रही? मुझे बहुत भूख लगी है। क्या आप मेरे लिए कुछ बना सकती हैं? प्लीज़?'

'ओह? मुझे बहुत अफ़सोस है। मैं आपके लिए कुछ बना दूँगी, लेकिन यहाँ कुछ नहीं है। सब्ज़ियाँ, किराने का सामान... सब कुछ शिवाजीनगर वाले घर में है। साहब शिवाजीनगर में रहते हैं। अपने घर में। शिफ्ट होने से पहले उन्होंने अमीना बानू से कहा था कि वह उनके लिए वहाँ खाना बनाती रहें; उन्होंने मना कर दिया क्योंकि वह बहुत दूर और सुनसान है। मैं रोज़ यहाँ आती हूँ और काम खत्म होने के बाद इस फ्लैट की सफाई करके ताला लगा देती हूँ। यहाँ कोई नहीं आता।'

मैंने कुछ नहीं कहा, लेकिन अपनी नज़रें उससे नहीं हटाईं। वह जानती थी कि मैं जानता हूँ और वह मुझसे ज़्यादा जानती है। उसने अपनी नज़रें मुझसे हटा लीं, लेकिन अपनी जगह पर जड़वत खड़ी रही।

'मुझे सब कुछ बताएं।'

'मैं...मैं...इस बारे में बात नहीं करना चाहती,' वह हकलाते हुए बोली।

'मुझे सब कुछ बताएं।'

'मुझे...मुझे...नहीं पता...'

'मुझे सब कुछ बताएं।'

'ठीक है...मैं तुम्हें इस शर्त पर बताऊंगी कि तुम मुझसे वादा करो कि तुम किसी को नहीं बताओगी कि मैंने तुम्हें यह बताया है...मुझे लगा कि तुम्हें पहले से ही पता है...' उसकी निगाहें ज़मीन पर टिकी हुई थीं।

मैं तुम्हारी कसम खाता हूँ कि मैं किसी को नहीं बताऊंगा।

'साहिब ने दूसरी पत्नी से शादी कर ली है। वह लड़की उर्दू स्कूल में शिक्षिका है। उसकी उम्र पच्चीस साल है। उसके पिता शिवाजीनगर बस स्टैंड के सामने सड़क किनारे एक दुकान में फल बेचते हैं। वह और उनका परिवार शिवाजीनगर की एक गली में, साहब के घर के पास रहते हैं।'

इसके बाद मुझे कुछ सुनाई नहीं दिया। मेरे सामने दुबकी हुई खड़ी वह औरत असली नहीं थी। मानो एक खालीपन हो। तो उसने ही यह किया था। उसने शरिया

कानून के तहत हर मुसलमान मर्द को दिए गए सबसे बड़े हथियार का इस्तेमाल किया था। वह हथियार जिसे हर मुसलमान मर्द ऐसे संभाल कर रखता है जैसे उसकी जान खतरे में हो। उसके माता-पिता कुछ साल पहले गुजर गए थे, लेकिन वह यहीं मल्लेश्वरम के इस फ्लैट में रुका रहा, अपने पुश्तैनी घर को किराए पर देना बेहतर समझा। लेकिन अब वह वापस चला गया है... यह बिल्कुल साफ था। हमारे अलावा, अपार्टमेंट कॉम्प्लेक्स में सभी हिंदू रहते थे। आम मध्यमवर्गीय हिंदू। मेहनती। रूढ़िवादी। ज्यादातर महिलाओं के पास कम से कम स्नातक की डिग्री थी। और फिल्म इंडस्ट्री में हमारे काम की वजह से हम यहां लगभग सभी को जानते थे। यह स्वाभाविक था कि आमिर को अपनी दूसरी पत्नी के साथ यहां रहने में बहुत शर्मिंदगी महसूस हुई होगी।

और अब मुझे ऐसा लग रहा था जैसे मुझे त्याग दिया गया हो।

मैं उसके पास से गुजरी और बांस की कुर्सी पर बैठ गई।

मुझे दूसरे घरों में काम करने जाना है...

उसके जाने के बाद मैंने दरवाजा बंद कर दिया। कुछ देर बाद मैंने शिवाजीनगर जाने का फैसला किया, और उसे गर्दन से पकड़कर उससे पूछने का सोचा... क्या? मुझे पहले से ही पता था कि वह क्या कहेगा। और अब मैंने उसका नंबर डायल किया।

‘अमीर...’

'मुझे पता है।'

‘क्या आपने दोबारा शादी कर ली?’

सन्नाटा। मैं महसूस कर सकता था कि वह जवाब देने के लिए संघर्ष कर रहा है।

‘क्या आपने दोबारा शादी कर ली?’

मैंने तुम्हें तलाक नहीं दिया है।

इसका क्या मतलब था? क्या इसका मतलब यह था कि उसने मुझे पूरी तरह से नहीं छोड़ा था? क्या इसका मतलब यह था कि उसे दो और महिलाओं से शादी करने का अधिकार था? क्या इसका मतलब यह था कि उसे दूसरी महिला से शादी करने के लिए मेरी अनुमति की ज़रूरत नहीं थी? क्या इसका मतलब यह था कि वह अपनी मर्ज़ी से मुझे तलाक दे सकता था? क्या इसका मतलब यह था कि उसकी दोबारा

शादी मेरी गलती थी? मैं अपनी आवाज़ निकालने के लिए संघर्ष कर रही थी, तभी दूसरी तरफ से एक क्लिक की आवाज़ सुनाई दी।

~

मैंने शबाना बेगम से उस दासी के बारे में नहीं पूछा। दोपहर का भोजन समाप्त होते ही मैं तुरंत अपने घोड़े पर सवार होकर उदयपुरी महल के ज़नाना के लिए निकल पड़ा। क्या जौहर की आग में कूदने से पहले ही उसे पकड़ लिया गया था? अगर ऐसा था, तो क्या... माँ भी पकड़ी गई थीं? और बहन? दादी? वे अब कहाँ हैं? मैं उनके बारे में सोच भी नहीं सकता था कि वे नौकरानियों और गुलामों की तरह काम कर रही थीं, जानवरों से भी बदतर व्यवहार किया जा रहा था। और इसके साथ ही, उनके सम्मानजनक मृत्यु के विश्वास की ईंटों से मैंने इतने वर्षों में जो आत्म-संतोष का भवन बनाया था, वह चकनाचूर हो गया। अब मुझे पता लगाना था कि उनके साथ क्या हुआ, लेकिन कैसे? मैंने उदयपुरी महल से पूछने का जोखिम उठाने का फैसला किया और अगर उन्होंने दया दिखाई, तो कौन जाने? मैं देवगढ़ जाकर भी पता लगा सकता था। दरअसल, हमदुल्लाह साहब ही वह व्यक्ति थे जिनसे पूछना चाहिए था। आखिर वे शाही अभिलेखागार के संरक्षक थे। ऐसी कोई जानकारी नहीं थी जिसे उनका हमेशा भूखा रहने वाला अभिलेखागार ग्रहण और संग्रहित न करता हो। मुझे यकीन था कि वे मेरी मदद करेंगे। अगर उन्हें अभिलेखों में कुछ नहीं मिलता, तो वे राजपूताना के सूबे को पत्र लिखकर पता लगाते। क्या मैं इतनी भोली थी कि आँख बंद करके मान लूँ कि जौहर करने वाली औरतें सचमुच मर गई थीं? या मैं इस संभावना से डर रही थी कि... कहीं वे पकड़ी न गई हों और... मेरी शांति हमेशा के लिए भंग हो गई थी और मैं जानती थी कि मुझमें इस पीड़ा, इस भयावहता को सहने की शक्ति नहीं बची थी। मैं कम खाती और कम बोलती थी। मेरी नींद उड़ गई थी। मैं यह बात हमदुल्लाह साहब से भी साझा नहीं करना चाहती थी।

शबाना बेगम अगले दिन आईं, एक रात रुकीं और अगले दिन चली गईं। उन्होंने मुझे एक बार देखा और दयालु मुस्कान दी। मैंने उस दास के बारे में उनसे पूछने की अपनी इच्छा को दबा लिया जिसे मैंने देखा था। मैं एक आदर्श दास थी; मैंने स्वेच्छा से दमन करने की कला में महारत हासिल कर ली थी, जो दासता का पहला नियम है।

दो कष्टदायक सप्ताहों के बाद, उदयपुरी महल ने मुझे बुलवाया। 'यह लो।' उन्होंने मेरे हाथ में एक बड़ा सोने का झुमका रख दिया। 'और एक घोड़ा लेकर शबाना बेगम

के पास जल्दी जाओ और इसे बड़ी सावधानी से उन्हें दे दो। यह उनका है। पिछली बार जब वह हमारे यहाँ आई थीं, तब उन्होंने इसे पहना था। नहीं, दरअसल मुझे यह पसंद आया और मैंने उनसे इसे मेरे पास छोड़ने के लिए कहा, ताकि मैं अपने लिए एक बनवा सकूँ। यह बहुत सुंदर है, है ना?' मैंने सिर हिलाया। 'उन्होंने स्वेच्छा से मुझे उपहार में दिया था, लेकिन इसे स्वीकार करना हमारे शान के लायक नहीं है। अब जौहरी ने मेरे लिए एक बना दिया है। याद रखना, जब तुम इसे उन्हें लौटाओगे, तो बस इतना कहना कि ज़नाना जौहरी ने मेरे लिए एक बना दिया है। समझे?' मैंने फिर से सिर हिलाया और एक अजीब सी खुशी महसूस की।

यह पहली बार था जब उदयपुरी महल ने मुझे इतना महत्वपूर्ण कार्य सौंपा था। असल सवाल तो यह था कि मैं उनका भरोसा कितना निभा पाऊँगी। घोड़े पर सवार होते हुए मेरे मन में एक विचार आया। मैं शबाना बेगम के साथ अपने व्यवहार को और निखारूँगी, उनका दिल जीतूँगी और फिर उचित समय आने पर उनसे अकेले में मिलने की अपनी इच्छा प्रकट करूँगी। मुझे पता था कि शायद यही मेरा एकमात्र मौका है।

शबाना बेगम ने मेरा गर्मजोशी और दयालुता से स्वागत किया। उन्होंने पेंडेंट लेते हुए कहा, "अरे, लेकिन आपको इसे लौटाने की क्या ज़रूरत थी? यह उदयपुरी महल साहिबा को मेरा विनम्र उपहार था। लेकिन अब जब उन्होंने इसे लौटाने का फैसला कर लिया है, तो एक दासी के रूप में मेरा कर्तव्य है कि मैं उनकी इच्छा का पालन करूँ। कृपया उन्हें यह बता दीजिए।" उनके लहजे और व्यवहार से स्पष्ट था कि वह मुझे उदयपुरी महल बेगम के खास लोगों में से एक मानती थीं। किसी साधारण व्यक्ति को इतना महंगा पेंडेंट सौंपना संभव नहीं होता। मैंने कुछ कहना शुरू किया, लेकिन उन्होंने मुझे बीच में ही रोकते हुए कहा, "मुझे नहीं पता था कि आपको यह खबर भेजना उचित होगा या नहीं, लेकिन अल्लाह की कृपा से ही आप यहाँ आए हैं! लगता है कि हमारी दासी तबस्सुम आपकी पत्नी थी। जब आप पहली बार यहाँ आए थे, तब मुझे उसके अतीत के बारे में कुछ नहीं पता था। जब खान साहब उसे खरीदकर यहाँ लाए थे, तब वह छह महीने के बच्चे की माँ थी। खान साहब ने हमसे कहा था कि वह यहाँ एक नौकरानी के रूप में रहेगी। दो साल बाद, वह फिर से गर्भवती हो गई।" इस बार उसने एक लड़की को जन्म दिया। अब उसके पास एक लड़का और एक लड़की है। याद है जब तुम परसों यहाँ आए थे, तो वह मुख्य द्वार खोलने आई थी? वह मुख्य

द्वार तक केवल इसलिए आई थी क्योंकि वह एक दासी थी, कोई भी सम्मानित महिला इस तरह बाहर निकलने की हिम्मत नहीं करती। इसीलिए जब उसने तुम्हें देखा, तो वह डर गई और अंदर भाग गई और उदयपुरी महल साहिबा की दयालुता का अनुभव करने के बाद जब मैं यहाँ लौटा, तो मुझे सबसे पहले यही पता चला कि वह डर से बीमार पड़ गई थी। उसकी बीमारी दो दिन तक चली। तुम शायद पूछोगे कि मुझे उसके बारे में यह सब कैसे पता है, खासकर जब यहाँ इतनी सारी दासी महिलाएं हैं - तुम ही बताओ, क्या मेरे लिए उनमें से हर एक के बारे में इतनी जानकारी जुटाना संभव है? खैर, बहुत मनाने के बाद उसने बताया कि वह इस बात से बहुत डरी हुई थी कि उसके पति को उसके किए गए पाप के बारे में पता चल जाएगा। मुझे यह जानकर बहुत दुख हुआ कि चार दिन पहले ही वह पिछवाड़े के कुएँ में कूद गई थी। लेकिन अल्लाह दयालु है। बगीचे में काम कर रहे हमारे एक हिजड़े ने यह देखा, वह कुएँ में कूद गया और उसके बाल पकड़कर उसे डूबने से बचा लिया। वह उस पर चिल्लाई और बोली, “मुझे मरने से रोकने का अधिकार किसी को नहीं है!” लेकिन उसकी पकड़ मज़बूत थी। एक नौकरानी ने शोर मचाया और देखते ही देखते कई लोग वहाँ जमा हो गए। तबस्सुम को बचा लिया गया। सौभाग्य से, उसने ज़्यादा पानी नहीं पिया था। यकीन मानिए, इस दुर्भाग्यपूर्ण घटना के बारे में सुनकर मेरी साँसें थम गईं। बेशक, मुझे इसके बारे में वापस लौटने के बाद ही पता चला।

मैंने काफी देर तक कुछ नहीं कहा, लेकिन मुझे एहसास था कि वह मुझे देख रही है। आखिरकार जब मैंने बोलना शुरू किया, तो मैंने कहा, 'मैं उससे अकेले में कुछ बात करना चाहता हूँ। क्या आप कृपया इसका इंतजाम कर सकती हैं?'

‘मैं इसका इंतज़ाम कर दूंगी। आप यहीं रुकिए,’ उसने कहा और अंदर चली गई। कुछ देर बाद, लगभग पचास साल की एक महिला आई और मुझे अपने पीछे आने को कहा। हम महल के दाहिनी ओर स्थित पशु बाड़े तक पहुँचे और उसने मुझे वहीं रुकने को कहा, साथ ही यह भी बताया कि तबस्सुम थोड़ी देर में मेरे पास आ जाएगी।

मैंने उसे धन्यवाद दिया और यूँ ही बाड़े की ओर देखने लगी। मैंने देखा कि गायों की अंतहीन कतारें दुनिया से बेखबर थीं, ताज़ी हरी घास और अन्य पौष्टिक चारे के ढेरों को चर रही थीं, जो विशेष रूप से उनके लिए वहाँ जमा किया गया था। मुझे यकीन नहीं था कि इन जानवरों को उनके मांस के लिए पाला जा रहा था या उनके दूध के लिए। हैरानी की बात यह थी कि कहीं भी एक भी बछड़ा नज़र नहीं आ रहा था।

मुझे लगा कि उन्हें अलग से बाँधा गया होगा... और तभी मुझे अपनी ओर आते हुए हल्के कदमों की आहट सुनाई दी। मैंने बाईं ओर देखा और पाया कि श्यामला सिर झुकाए धीरे-धीरे मेरी ओर आ रही थी। उसने वही पोशाक पहनी हुई थी जो उसने मुझे पहली बार देखने पर पहनी थी। वह मुझसे कुछ कदम दूर रुक गई, उसकी निगाहें ज़मीन पर टिकी हुई थीं। मैंने उसके भावों को समझने की कोशिश की और अनुमान लगाया कि आत्महत्या के असफल प्रयास के गहरे दुख ने उसे अपनी निगाहें झुकाने पर मजबूर कर दिया था। वह स्पष्ट रूप से दुखी थी। मुझे समझ नहीं आ रहा था कि कैसे शुरू करूँ। मैं उससे कुछ पूछ नहीं सकती थी। मुझे पता था कि हर सवाल दर्दनाक होगा। मैंने इसके बजाय उसे अपनी कहानी सुनाने का फैसला किया।

'उन्होंने विष्णु मंदिर में मेरी सेना की रणनीति को बड़ी आसानी से और तेजी से ध्वस्त कर दिया, और इससे पहले कि मैं खुद को मार पाता, उन्होंने मुझे बंदी बना लिया। फिर वे विष्णु की मूर्ति को घसीटकर बाहर लाए और उसकी भुजाएँ और नाक तोड़ दीं, उसे पैरों से कुचला और उसके ऊपर खड़े हो गए। और युद्ध का नेतृत्व करने वाले मनसबदार ने मेरा इस्तेमाल एक स्त्री की तरह किया। फिर वह मुझे अपने ज़नाना में ले गया और अपने दोस्तों को भी मेरा इस्तेमाल एक स्त्री की तरह करने दिया। कुछ महीनों बाद, उसने मुझे एक हजार रुपये में एक अमीर को बेच दिया, जो मुझे अपने महल में ले गया और मेरे अंडकोष तोड़ दिए, मुझे हिजड़ा बना दिया और अपने ज़नाना में नौकर नियुक्त कर दिया। उसके बाद, उसकी बेगम ने मुझे उदयपुरी महल को उपहार में दे दिया। अब मैं उसका गुलाम हूँ।'

मुझे पता था कि वह मेरी हर बात सुन रही थी, लेकिन उसके चेहरे पर कोई भाव नहीं था। वह पत्थर जैसी थी। भावहीन। बेजान। जैसे ही मैंने अपना आखिरी वाक्य खत्म किया, उसने अचानक अपना सिर उठाया और सीधे मेरी आँखों में देखा, और उसकी आँखों से पहला आँसू बह निकला। मैंने उसके रोते हुए चेहरे को देखा, जिस पर कोई भाव नहीं था। मुझे कुछ भी महसूस नहीं हुआ।

कुछ देर बाद उसने पूछा, 'तुम्हारे पास खंजर था। तुमने उन्हें पकड़ने से पहले उसे अपने पेट में क्यों नहीं घोंप दिया?'

मुझे इस सवाल की उम्मीद नहीं थी। यह एक थप्पड़ जैसा लगा। उसने बिना सोचे-समझे मेरा अपमान किया था। लेकिन मैंने ऐसा क्यों नहीं किया? और फिर मुझे समझ आया कि क्यों। छुरी का इस्तेमाल तभी किया जाना चाहिए जब आप और आपका

विरोधी दोनों ही निहत्थे हों और आमने-सामने की लड़ाई अपरिहार्य हो। क्या मुझे तब यह पता नहीं था कि छुरी का इस्तेमाल अपनी जान लेने के लिए किया जाता है, जो जिंदा पकड़े जाने से कहीं बेहतर है? क्या मुझे तब यह पता नहीं था कि पकड़े जाने पर मेरी यही हालत होगी? मुझे पता था, हाँ। लेकिन मैंने खुद को क्यों पकड़े जाने दिया? तब मेरे मन में यह ख्याल क्यों नहीं आया कि मैं सीधे छुरी को अपने शरीर में घोंपकर मर जाऊं? मौत का डर... या फिर खुद को मारने की हिम्मत की शर्मनाक कमी? अब यह कितना भी घिनौना लगे, क्या यह जीवन के प्रति एक बुनियादी प्रेम था जिसने मुझे आत्मसमर्पण करने पर मजबूर किया? क्या यह मेरे अंदर कहीं छिपी आशा की एक धुंधली सी किरण थी? बेशक, ऐसे सभी विचार केवल बाद में ही आते हैं, उस समय नहीं। अगर मेरे पास इस तरह के आराम से विश्लेषण करने का समय भी होता, तो भी परिणाम किसी भी तरफ जा सकता था।

मुझे लगता है कि वह समझ गई थी कि मैंने जवाब क्यों नहीं दिया। अब वह मेरे ठीक सामने बैठी थी। उसने कहा, 'कोई बात नहीं... मेरा मतलब है... मैं समझती हूँ कि तुमने खुद को चाकू क्यों नहीं मारा। याद है जब तुमने मुझे उस दिन यहाँ देखा था? तुम्हारी आँखों में हैरानी साफ़ दिख रही थी। हर तरफ आग लगी थी... महल के प्रांगण में भयंकर आग। सास, ननद, तुम्हारी दादी, सब 'हर हर महादेव' का जाप करते हुए चिता में कूद पड़ीं। दूसरी औरतें भी आँखें बंद करके कूद पड़ीं, 'हर हर' की ध्वनि उनके भीतर गूँज रही थी, वे भयानक लपटों की तरफ नहीं देख रही थीं। मैं अंत तक उन्हें देखती रही। राजपरिवार की बहू होने के नाते मुझे पहले जाना चाहिए था, अपनी आदरणीय सास के पल्लू को थामते हुए आग की तरफ बढ़ना चाहिए था। लेकिन मैं पीछे रह गई... झिझक... कि कहीं मौत तुरंत न आ जाए या आग असहनीय पीड़ा न दे।' उन सभी साहसी महिलाओं को देखकर मुझे प्रेरणा मिली और अंततः मैं जल्दी से आगे बढ़ी, यह याद दिलाकर कि मैं जौहर करने जा रही हूँ, कि मेरा जीवन भगवान शिव के साथ एक हो जाएगा, मैंने अपने विश्वास को और मजबूत किया। लेकिन जब मैं चिता के पास पहुँची, तो धधकती लपटें उठती हुई मेरे चेहरे और शरीर को झुलसाती हुई प्रतीत हुईं। मैं भयभीत हो गई। पलक झपकते ही मैं पीछे हट गई, जबकि मैंने देखा कि महिलाएं उन्माद में कूद रही थीं। मैं लड़खड़ा गई, वीर मृत्यु की ओर बढ़ते उस सामूहिक जुलूस में फंस गई, लेकिन किसी तरह भीड़ से दूर हटने में कामयाब रही। मेरा मन सुरक्षित विकल्पों के बारे में सोचने लगा। मैं जानती थी कि पराजितों की

स्त्रियों का बलात्कार करना इस शत्रु की प्रथा थी, लेकिन अब मैं अपवादों के बारे में सोचने लगी। आखिर, हर कोई ऐसा नहीं होता... पृथ्वीराज चौहान जैसे लोग भी हो सकते हैं जिन्होंने अपने पराजित प्रतिद्वंद्वी की स्त्रियों का सम्मानपूर्वक व्यवहार किया... वे उन्हें अपनी बहनों, बेटियों और माताओं के समान मानते थे। लेकिन तब भी, और अब भी, मैं जानती थी कि ये सब मेरी कायरता की वास्तविकता का सामना करने से बचने के बहाने थे। उस निर्णायक क्षण में मैं डगमगा गया था... मुझे आँखें बंद करके कूद जाना चाहिए था। मैंने ऐसा नहीं किया। एक बार वो पल, वो पल जो आपको मरने के लिए उकसाता है, बीत जाए तो फिर कभी नहीं आता। तब से मैंने कई बार नरक का अनुभव किया है। ऐसे अनुभव, जिन्होंने मुझे मरने की इच्छा जगाई, लेकिन मैं हर नरक से बच निकला क्योंकि मैं उस अंतिम अवस्था को नहीं जुटा पाया था जिसने मुझे हमारे महल में उस अग्नि-कुंड के किनारे खड़ा कर दिया था। लेकिन वो अवस्था मुझे फिर से आ गई, जिस दिन मैंने तुम्हें यहाँ देखा। उस दुष्ट महेबूब ने मुझे बाहर निकाला और फिर से यहीं डाल दिया ताकि मैं फिर से कष्ट सह सकूँ। मुझे नहीं पता कि मैं कब और कैसे वही साहस जुटा पाऊँगा।

जौहर करने से भागने पर मुझे उससे कोई शिकायत नहीं थी। युद्ध में हारने के बाद सभी पुरुष नहीं मरते थे और न ही सभी महिलाएं जौहर करती थीं। यही कारण था कि हमारे पास इतने सारे गुलाम थे और इस विशाल हिंदुस्तान के दूरदराज के गांवों और कस्बों में लाखों गैर-मुस्लिम किसी न किसी तरह जजिया के कठोर जुए के नीचे जी रहे थे। उसकी तरह, मुझे भी मरने से डर लगता था और मैंने आत्मसमर्पण का रास्ता चुना था। मेरा अनुभव उसके अनुभव से मिलता-जुलता था। उसने खाई से मुंह मोड़ लिया था। मैंने खुद को अपनी कटार से नहीं मारा था। और अब मुझे उसके लिए बहुत दुख हो रहा था।

‘मैं यह नहीं पूछूंगी कि पकड़े जाने के बाद आपके साथ क्या हुआ। मुझे पता है इससे आपका दर्द और बढ़ जाएगा... मुझे पता है कि आपने भी वही दुर्दशा झेली है जो आप जैसी हजारों महिलाओं ने झेली है। मुझे पता है कि वे क्या करती हैं। मुझे पता है कि आपके तीन बच्चे हैं। मैंने उस दिन आपके गर्भ में पल रहे एक बच्चे को देखा था।’

'गर्भवती होने का पता चलना मेरे जैसी महिलाओं के लिए यहाँ सबसे भयानक अनुभव होता है। डर उसी दिन से शुरू हो जाता है जब आपका मालिक आपको

इतना आकर्षक समझने लगता है कि बार-बार आपको अपने कमरे में बुलाने लगता है। लेकिन उस डर का कारण वह नहीं, बल्कि उसकी बेगम है। वह नागिन की तरह ईर्ष्या उगलने लगती है और आप पर तरह-तरह के अत्याचार करने लगती है, और साथ ही यह सुनिश्चित करने के लिए और भी अधिक मेहनत करती है कि वह उसकी नज़रों में अभी भी आकर्षक बनी रहे। ज़रा सोचिए, वह उसकी बेगम है और उसे हर समय खुद को उसके लिए आकर्षक बनाए रखने के लिए एक आम वेश्या की तरह व्यवहार करना पड़ता है। और मैं यहाँ थी। एक राज्य की पूर्व युवराज्ण्ड। मैं कसम खाकर कहती हूँ। मैंने कभी भी इन सभी अन्य महिलाओं की तरह अपनी गरिमा को कम नहीं किया... चाहे उनके कारण कुछ भी रहे हों... घटिया व्यवहार करके। मैं अपने कोने में संतुष्ट थी। जब भी खान साहब मुझे बुलाते, मैं घृणा से कांप उठती और प्रार्थना करती कि वह मुझे कभी न बुलाएँ। जब भी हम साथ होते, वह क्रोधित हो जाते क्योंकि मैं उनकी किसी भी इच्छा को जगाने की कोशिश का जवाब नहीं देती थी। वह मुझे लकड़ी का टुकड़ा कहते थे।' यह दुखद था, लेकिन मुझे कोई आपत्ति नहीं थी।

'मुझे आपको एक और बात बतानी है। मेरे तीन बच्चों में से पहला बच्चा आपका है। मुझे बंदी बनाने वाले मनसबदार ने पहले बच्चे के जन्म के बाद का समय गिना और मुझे बताया कि यह मेरी उस शादी का नतीजा है जब मैं मुश्रिक थी। लेकिन चूंकि मैं बच्चे के गर्भ में रहते हुए ही मुसलमान बन गई थी, इसलिए उसने कहा कि बच्चा अपने आप मुसलमान हो गया और उसने मेरे पहले बच्चे का नाम इब्राहिम रख दिया।'

यह सुनकर मेरे हृदय में अचानक गर्माहट की लहर दौड़ गई। यह एक सुखद हवा के झोंके की तरह था जो मुझे बता रहा था कि सब कुछ खत्म नहीं हुआ है। मोइनुद्दीन के क्रूर चिमटों ने मेरी मर्दानगी को हमेशा के लिए कुचल दिया था और मुझे ज़नाना में धकेल दिया था, लेकिन यहाँ मेरे वंश की निरंतरता का अमिट प्रमाण था। मैं एक हिजड़ा-दास-पिता था, लेकिन फिर भी एक पिता था। वह अब छह साल का था। इस कोमल स्त्री, मेरे पुत्र श्यामला की माँ को देखकर मैं भावुक हो गया। मुझे लगा कि विवाह के बंधन ने हमें अचानक और भी गहरा और अटूट बना दिया है। मैं उठकर उसके पास जाना चाहता था और लंबे समय तक उसके बालों को प्यार से सहलाना चाहता था, लेकिन मेरे मन ने मुझे ऐसा करने के परिणामों से आगाह किया। मुझे पूरा यकीन था कि शबाना बेगम ने कम से कम दो जासूसों को हम पर नज़र रखने के लिए इस गौशाला में भेजा होगा। उसके बालों को छूना ही पचास कोड़े या पत्थरबाजी या

कौन जाने, मौत को भी न्योता देने के लिए काफी था। जब मैंने अंत में बोलना शुरू किया, तो मेरी आवाज सूखी थी।

'मैं...उसे देखना चाहता हूँ। क्या आप उसे मेरे पास ला सकते हैं?'

मैंने अपने बेटे की कल्पना करना शुरू किया। छह साल का। उसकी आँखें, मुँह, नाक और माथा ठीक से बने होंगे। क्या वह मुझसे मिलता-जुलता था? या मेरे आदरणीय पिता से? या मेरे दादाजी से? या क्या वह अपनी सुंदर माँ जैसा दिखता था? या उसकी माँ जैसा? उसने कुछ नहीं कहा, इसलिए मैंने कहा,

मुझे पता है कि आप उसे मेरे पास लाने में हिचकिचा रहे हैं क्योंकि वह अब गुलाम माता-पिता का गुलाम बेटा है, जबकि उसे राजकुमार होना चाहिए था, लेकिन मुझे कोई आपत्ति नहीं है। मैंने अपनी स्थिति को अपना भाग्य मान लिया है। इस दयनीय जीवन को भाग्य के रूप में स्वीकार करना ही इससे शांति पाने का सबसे अच्छा तरीका है। इसके अलावा, वह अभी इतना छोटा है कि भाग्य क्या होता है, यह नहीं जानता और जब तक वह इसका अर्थ समझेगा, तब तक वह गुलामी को अपनी स्वाभाविक स्थिति मान लेगा। लेकिन वह फिर भी मेरा बेटा है।

'आपकी बात सच है और मैंने भी आपकी तरह इसे स्वीकार कर लिया है, लेकिन मेरी उदासी का कारण यह नहीं है। यह स्वाभाविक है कि आप अपने बेटे को देखना चाहती हैं, लेकिन मेरे दो और बच्चे हैं, दोनों मेरी कोख से पैदा हुए हैं। आपने उन्हें देखने की इच्छा नहीं जताई।'

यह बात मुझे चुभ गई। मुझे समझ नहीं आया कि उसने मेरे शब्दों को इस तरह तोड़-मरोड़ कर पेश क्यों किया। ज़नाना में इतने वर्षों की सेवा में मैंने कई तरह की अजीब महिलाओं को देखा था, लेकिन मैंने कभी नहीं सोचा था कि वह ऐसा सोचेगी और मुझे खुद पर भी अफ़सोस हुआ कि मैं यह बात समझ नहीं पाई। उसने आगे कहा, 'मैं इस्लामी कानून को अच्छी तरह जानती हूँ। सभी बच्चों को समान अधिकार हैं, चाहे वे बेगमों के बच्चे हों या दासियों, नौकरानियों या कंचिनियों के। केवल माँ का दर्जा अलग होता है। क्या आप जानते हैं कि ये बेगमें—कानूनी तौर पर विवाहित पत्नियाँ—कैसे लगातार यह सुनिश्चित करने की साजिश रचती हैं कि उनके यहाँ काम करने वाली दासियों के बच्चों को शिक्षा और अन्य लाभ न मिलें? वे ऐसा कर सकती हैं, क्योंकि वे आम तौर पर रईस परिवारों से आती हैं और ये दासियाँ या तो युद्ध में पकड़ी जाती हैं या बेहद गरीब परिवारों से आती हैं। अगर इन दासियों में से किसी का बच्चा

कम उम्र में ही असाधारण बुद्धि दिखाने लगे, तो बेगमें उसे ज़हर देने में ज़रा भी संकोच नहीं करतीं।' मनसबदार या उसी दर्जे के किसी व्यक्ति के पास आमतौर पर अपने सभी बच्चों को समान रूप से प्यार दिखाने का समय या धैर्य नहीं होता, इसलिए समय के साथ स्थिति ऐसी हो गई है कि केवल बेगमों के बच्चों को ही कानूनी संतान माना जाता है। अगर बड़े होने पर बच्चों में कोई प्रतिद्वंद्विता होती है, तो वह चारों बेगमों के बच्चों के बीच होती है—वे चार पत्नियाँ जिनसे एक मुस्लिम पुरुष को कानूनन विवाह करने की अनुमति है। सचमुच, मेरे बच्चों का कोई पिता नहीं है। खान साहब ने मेरी कोख से जन्मे अपने बच्चों की ओर कभी देखा तक नहीं। मुझे लगता है कि वे शबाना बेगम से डरते होंगे। या शायद वे अपनी दूसरी बेगमों से डरते होंगे। या शायद उन सभी से। या हो सकता है कि उन्हें गुलाम बच्चों के लिए कोई भावना ही न हो।

यह मेरे लिए एक चौंकाने वाला खुलासा था। मुझे पता ही नहीं था कि ये बच्चे अपने पिता के साथ उनके घर में रहते हुए भी उनके प्यार और देखभाल से वंचित थे। मैं उससे कहना चाहती थी कि वह अपने बच्चों को अभी ले जाए ताकि मैं उन नन्हे-मुन्नों को वो सब कुछ दे सकूँ जो उन्हें नहीं मिला, लेकिन मैंने कुछ नहीं कहा। अब तक तो उसके प्रति मेरी भावनाएँ स्पष्ट नहीं थीं; तो फिर नाजायज संबंध से पैदा हुए उसके बच्चों के प्रति मेरी भावनाएँ कैसे स्पष्ट हो सकती थीं? मैंने पहले अपनी भावनाओं को सुलझाने का फैसला किया।

उन्होंने कहा, "आप जानते हैं, जब मुझे पता चला कि मेरा पहला बच्चा हमारे वंश की संतान है, तो मैं अत्यंत प्रसन्न हुई। इन लोगों ने उसका नाम इब्राहिम रखा, लेकिन मेरा मन लगातार हमारे वंश के अनुरूप नाम सोच रहा था... विष्णुस्वरूप सिंह, नारायण सिंह, विजयभास्कर सिंह... क्या आप सहमत हैं कि ये नाम उपयुक्त हैं? इन विचारों ने मुझे अपनी दयनीय स्थिति की वास्तविकता को भुलाने में मदद की और मैंने अपना सारा समय अपने बच्चे को दुलारने में बिताया। लेकिन मैं तब हैरान रह गई जब मुझे अपने दो अन्य बच्चों के लिए भी वैसा ही प्रबल प्रेम महसूस हुआ, जो... जबरदस्ती के यौन संबंध से पैदा हुए थे। मुझे नहीं पता इसे कैसे व्यक्त करूं। ऐसा लगा जैसे मेरे बच्चों को दुलारने वाला कोई नहीं था, उनकी पुकार सुनने वाला कोई नहीं था..."

मैंने उसे घूर कर देखा। वह जरा भी नहीं हिली। उसकी आँखों में वह आत्मविश्वास झलक रहा था जो केवल सच बोलने वाले व्यक्ति में होता है।

‘मैंने ये बात अब तक किसी को नहीं बताई। कोई सुनने वाला नहीं था, समझना तो दूर की बात है। इससे भी बुरा ये है कि इस तरह की बातें उनका मज़ाक उड़ाने का मन और बढ़ाती हैं। वैसे भी, एक पत्नी अपने दुखों को पति के अलावा और किसके साथ बाँटेगी?’ उसने मेरी तरफ देखा। मुझे एहसास हुआ कि उसे जो कहना था वो कह चुकी है।

मेरी प्रिय श्यामला, आज मुझे ऐसा लग रहा है जैसे मेरा पुनर्जन्म हुआ हो। मैंने कभी सपने में भी नहीं सोचा था कि मैं तुम्हें फिर से देख पाऊँगा। तुम आज भी मुझे अपना पति कहकर पुकारती हो और उसी आदर और प्रेम से मेरा ख्याल रखती हो। मैं और कुछ नहीं माँगता, बस तुम्हें अपनी सच्चाई बतानी है—उन्होंने मेरे पुरुषत्व को कुचल दिया है। मैं तुम्हारा पति तो हूँ, पर अब पुरुष नहीं रहा। मैं अब महज़ एक गुलाम हूँ और तब तक गुलाम ही रहूँगा जब तक मेरा वर्तमान स्वामी मुझे गुलामी से मुक्त नहीं कर देता या कोई नया स्वामी मुझे खरीदकर आज़ादी नहीं दे देता। मैं मूर्ख नहीं हूँ कि आज़ादी की कल्पना करूँ, जबकि मैं जानता हूँ कि मेरे जैसे लाखों गुलाम हैं और उनमें से कोई भी आज तक आज़ाद नहीं हुआ है। और तुम भी मेरी ही तरह एक गुलाम हो। और तुम्हारे जैसी लाखों औरतें हैं। यह मेरा सौभाग्य था कि आज तुमसे मुलाकात हुई क्योंकि मैं यहाँ एक काम से आया था... मुझे तुम्हारी मालकिन के गहने लौटाने थे। पता नहीं हमें फिर कभी मिलने का मौका मिलेगा या नहीं। मैं आपको ठेस पहुँचाना नहीं चाहती, लेकिन मैं आपको—और खुद को भी—चेतावनी देना चाहती हूँ कि भावनाओं में बह जाना और उनके सहारे झूठी उम्मीदें टिकाना व्यर्थ है। अब, अपने तीनों बच्चों को ले आइए। मैं उन्हें जी भर देख लूँगी और फिर चली जाऊँगी।

इससे पहले कि वह जवाब दे पाती, मैंने एक नौकरानी की आवाज़ सुनी जो उसका नाम पुकार रही थी। वह हाँफते हुए अंदर आई और बोली, 'अमीर साहब आए हैं। वह आपको बुला रहे हैं। अगर उन्हें पता चल गया कि आप यहाँ किसी अजनबी से बात कर रही हैं और इससे भी बुरा, कि यह सब उनकी अपनी बेगम साहिबा ने करवाया है... तो अभी आइए!'

श्यामाला ने घबराकर मेरी तरफ देखा, उसके चेहरे पर डर साफ झलक रहा था, और वह भाग गई। मैं उसे तब तक देखता रहा जब तक वह मेरी नजरों से ओझल नहीं हो गई। अब मेरे लिए यहाँ कुछ करने को नहीं बचा था। मैं धीरे से उठा। अमीर

साहब मुझसे कुछ भी पूछने की हिम्मत नहीं करेंगे, खासकर जैसे ही मैं उन्हें बताऊँगा कि मुझे उदयपुरी महल ने भेजा है, उनके मन में शक पैदा होने लगेगा कि मैं गौशाला में क्या कर रहा हूँ। इसके अलावा, उन्होंने मेरे घोड़े को अपने महल के प्रवेश द्वार पर बंधे हुए देख लिया होगा। अब मैं उसी ओर चल पड़ा।

फिर से घोड़े पर सवार होकर, मेरा दिमाग एक तरह के भ्रम में डूब गया। अमीर दिलशाद खान एक लंबे दौरे से लौट आया था और अब वह अभी भी बहुत जवान श्यामला को चाहता था। वह पहले से ही तीन बच्चों की माँ थी और इस समय स्तनपान करा रही थी, और गुलामों के कपड़ों में भी वह बहुत सुंदर और जवान दिखती थी। उसे करीब से देखने और उसके साथ इतना समय अकेले बिताने के बावजूद, मैं तब तक नहीं बता सका जब तक उसने खुद मुझे नहीं बताया कि उसके तीन बच्चे हैं। सुंदर, सुंदर श्यामला! मुझे सही समय का इंतजार करना चाहिए और जब मुझे यह बदमाश दिलशाद खान अकेला मिलेगा, तो मैं उसे चाकू से गोदकर मार डालूंगा। और फिर मैं उस मोइनुद्दीन तुरानी को ढूंढूंगा और सीधे उसके दिल में चाकू घोंप दूंगा... नहीं, वह इससे भी बदतर सजा का हकदार है। मैं पहले उसका पेट चीर दूंगा और फिर धीरे-धीरे उसकी आंतें काटूंगा... उसने मेरी मर्दानगी को चूर-चूर कर दिया... लेकिन इससे पहले मुझे यह सब करने के लिए एक घोड़ा चाहिए... एक को मारने के बाद, मुझे अपने घोड़े पर सवार होकर दूसरे को उसी खंजर से मारना होगा... मेरे खंजर को इन दोनों दुष्टों का खून पीना होगा... ऐसे सौ दृश्य मेरे दिमाग में उमड़ रहे थे। घोड़ा आराम से लेकिन सहज गति से आगे बढ़ रहा था।

मैंने उस शाम हमदुल्लाह साहब के घर नहीं गया। जब मैं अगली शाम गया, तो वे बहुत खुश थे।

'अरे! आप आ गए! मैं आपको यह खुशखबरी सुनाने का इंतज़ार कर रहा था। बादशाह ने वाराणसी के विश्वनाथ मंदिर को ध्वस्त करने का फरमान जारी कर दिया है!' मैं एक पल के लिए स्तब्ध रह गया। फिर मुझे समझ आया कि बादशाह वही कर रहा था जो हर सच्चे मुस्लिम शासक से अपेक्षित होता है: अन्य मंदिरों का विनाश, विशेष रूप से मूर्तिपूजकों के मंदिरों का। उस समय तक, मुगल साम्राज्य में सूबेदारों, अमीरों और नवाबों द्वारा अपने अधीन क्षेत्रों में मंदिरों को ध्वस्त करने और मूर्तियों और अन्य मंदिर सामग्री का उपयोग उन मस्जिदों की सीढ़ियों के रूप में करने की खबरें आम हो चुकी थीं, जिन्हें उन्होंने ध्वस्त मंदिरों के स्थान पर बनाया था। ऐसी खबरें

मेरे लिए नई नहीं थीं, लेकिन किसी कारणवश इसने मुझे एक लंबे सत्र की याद दिला दी, जहाँ अचानक भावुक हुए हमदुल्लाह साहब ने मुझे कुछ अभिलेख दिखाए और गर्व से कहा कि वे इस्लाम की शक्ति का बखान करते हैं। उन्होंने कहा कि सार यह था कि पवित्र इस्लाम की भयंकर लहर के पूरे देश में फैलने और अब बादशाह औरंगजेब के शासन में सत्ता में आने के बाद से लगभग पंद्रह-बीस हजार मंदिर ध्वस्त किए जा चुके थे। अयोध्या में राम के काफिर मंदिर को ध्वस्त करके, मुगल वंश के संस्थापक फिरदौस मकानी जहीरुद्दीन बाबर ने केवल ग़ज़नवी, घोरी, गुलाम वंश, खिलजी, तुगलक, निज़ामशाही और कुतुबशाही द्वारा स्थापित प्राचीन परंपरा को ही आगे बढ़ाया। केवल उस नीच पापी अकबर—जिसकी आत्मा नरक में जले!—ने इस पवित्र कार्य को रोकने में एक भयानक दुःस्वप्न की तरह भूमिका निभाई। बाकी सभी ने काफिर मुश्रिकों के मंदिरों को नष्ट करके पुण्य अर्जित किया था। लेकिन औरंगज़ेब बादशाह उन सभी से कहीं अधिक पवित्र है! जैसा कि मैंने आपको कई बार बताया है, उसने साम्राज्य पर पूर्ण नियंत्रण प्राप्त होने तक प्रतीक्षा की। और अब उसने काफिरों के मूर्ति-मंदिर को ध्वस्त करने का फरमान जारी किया है और यदि मेरा अनुभव सही है, तो वह मुश्रिकों की प्रतिक्रिया की प्रतीक्षा करेगा और फिर मथुरा के मंदिर को ध्वस्त करने का एक और फरमान जारी करेगा।

उस रात मुझे नींद नहीं आई। सात साल हो गए थे जब मैंने उन देवताओं को पूरी तरह त्याग दिया था जो मेरी और मेरे प्यारे देवगढ़ की रक्षा करने में विफल रहे थे। लेकिन इस नए देवता पर मेरा विश्वास—जिस देवता को वे पूरे हिंदुस्तान में जबरदस्ती थोपना चाहते थे—पक्का नहीं था। यह देवता हर जगह राज कर रहा था और उसका प्रभाव प्रतिदिन बढ़ता जा रहा था। वे हर मंदिर को तोड़कर उसकी जगह मस्जिदें बना रहे थे और मंदिरों की टूटी मूर्तियों और पत्थरों का इस्तेमाल नई मस्जिदें बनाने में कर रहे थे। वे अजेय थे और मुझे पूरा विश्वास था कि बहुत जल्द यह हिंदुस्तान के कोने-कोने में फैल जाएगा। मैं दिल्ली से बाहर नहीं निकला था, लेकिन हमदुल्लाह साहब ने मुझे बताया कि हजारों अंधकार के स्थानों को पहले ही नष्ट किया जा चुका है, लेकिन यह काफी नहीं है। प्रयास निरंतर जारी था और वे इस बात से प्रसन्न थे कि यह हमेशा चलता रहता है। आखिरकार, अंतिम लक्ष्य इस धरती पर प्रकाश के धर्म की स्थापना करना था। और जैसा कि हमदुल्लाह साहब ने कहा, औरंगजेब बादशाह अब पूरी तरह से इस महान कार्य में लीन हो चुका था और उसने अपार पुण्य अर्जित कर

लिया था। और हमदुल्लाह साहब को सब कुछ पता था—वे राजवंशों और राजाओं के नाम, उनकी उपलब्धियाँ, सब कुछ याद करके सुना सकते थे और उन किताबों के नाम भी बता सकते थे जिनमें यह जानकारी दर्ज थी। इसके अलावा, वे मुझे अपने बेटे की तरह प्यार करते थे और मेरे पास उनके सिवा कोई और सहारा नहीं था। मुझे पूरा विश्वास था कि औरंगजेब बादशाह मुगल साम्राज्य का सबसे श्रेष्ठ सम्राट था।

लेकिन जब से मैं तुगलकाबाद से लौटी, जहाँ मेरी मुलाकात श्यामला से हुई, मेरी सारी आशंकाएँ फिर लौट आईं और सब कुछ एक बार फिर डगमगा गया। उस यात्रा ने अचानक मुझे उस जीवन का सामना करवाया जिसे मैंने पूरी तरह से मिटा दिया था। और अब, आलमगीर बादशाह के फरमान के बारे में सुनकर, इस नए शक्तिशाली ईश्वर में मेरा विश्वास बुरी तरह हिल गया। वास्तव में, मैं कहीं नहीं थी। भगवान विष्णु में मेरा विश्वास उसी क्षण चकनाचूर हो गया जब मैंने उनकी मूर्ति को घसीटते, तोड़ते और रौंदते हुए देखा। इस नए ईश्वर में मेरा विश्वास पूर्ण नहीं था क्योंकि जब हमदुल्लाह साहब ने मुझे काशी विश्वनाथ मंदिर को नष्ट करने के फरमान के बारे में बताया तो मुझे गहरा सदमा लगा।

यह बात मुझे पूरी रात और अगली दोपहर तक परेशान करती रही: तभी मैंने इस्लाम में अपने विश्वास की परीक्षा लेने का निश्चय किया। इसके लिए मुझे हमदुल्लाह साहब के साथ काशी जाने और विश्वनाथ मंदिर के विध्वंस को अपनी आँखों से देखने से बेहतर कोई तरीका नहीं सूझा। ज़ाहिर है, मैं विध्वंस में प्रत्यक्ष रूप से भाग तो नहीं ले सकता था, लेकिन उसे देख ज़रूर सकता था। मुझे अपना जवाब मिल गया था, मेरे हृदय ने इस्लाम को पूरी तरह स्वीकार नहीं किया था; भगवान विष्णु में मेरी आस्था के कुछ अंश शेष थे। मुझे आशा थी कि विश्वनाथ मंदिर के विध्वंस को देखकर ये अंश मिट जाएँगे और मैं अंततः हर मायने में एक सच्चा मुसलमान बन जाऊँगा।

बादशाह ने अपने पवित्र मिशन की शुरुआत के लिए काशी को चुना था क्योंकि काशी—उसका दूसरा नाम क्या था? आह! वाराणसी—सबसे पवित्र स्थल था, वह स्थान जिसे हिंदुस्तान के सभी हिंदू सबसे पवित्र मानते थे, अपने धर्म का केंद्र मानते थे। जब हमदुल्लाह साहब ने मुझे बताया कि औरंगजेब बादशाह को कुरान कंठस्थ थी और वह विद्वानों से भी बेहतर उसका अर्थ जानता था, तो उन्होंने कोई अतिशयोक्ति नहीं की थी। विश्वनाथ मंदिर को नष्ट करने का उसका फरमान इस बात का अकाट्य प्रमाण था कि वह काफिरों के प्रति कितने दृढ़ निश्चयी था। इस विनाश को देखना मेरे

लिए पुण्य का स्रोत होगा और मुझे स्वर्ग में स्थान मिलेगा, और मेरा नाम उन वीरों की श्रेणी में शामिल होगा जिन्होंने इस्लाम के महान उद्देश्य की सेवा की।

9

उस दोपहर केंचप्पा खेतों में थे और घर में सन्नाटा पसरा हुआ था, लक्ष्मी अब तक लिखे अपने लेख को दोबारा पढ़ रही थी। नया नौकर गिरियान्ना गौशाला की सफाई कर रहा था। इतिहास का बहुत ज्यादा जिक्र हो गया। वर्णन को और कलात्मक बनाने की जरूरत है, लेकिन इससे उस समय की ऐतिहासिक वास्तविकता कमजोर हो जाएगी। हालांकि, अगर मैं ऐतिहासिक वास्तविकता को और ज्यादा जोड़ती जाऊंगी, तो मुझे कलात्मकता छोड़नी ही पड़ेगी। मुझे जिस संतुलन की तलाश है, वह कहां मिलेगा? व्यर्थ। उसने नोटबुक नीचे रखी और खेत की ओर चल पड़ी। उसकी दिनचर्या तय थी। सुबह सबसे पहले खेत का एक संक्षिप्त सर्वेक्षण, उसके बाद खेतों का एक और सर्वेक्षण। रास्ते में, वह नारियल के पेड़ों को देखती, नारियलों की गिनती करती और उनके पकने की स्थिति का पता लगाती, हालांकि इसकी वास्तव में कोई जरूरत नहीं थी। केंचप्पा भरोसेमंद थे और उन्हें पता था कि क्या करना है, लेकिन वह अपने पिता की तरह होती जा रही थी, निगरानी करती और निर्देश देती। स्नान और नाश्ते के बाद, वह अध्ययन कक्ष में जाती।

एक सुबह जब वह बगीचे में टहल रही थी, तो उसने गिरियान्ना को उसका नाम पुकारते हुए सुना। 'महोदया, आपका बेटा आ गया है! वह बरामदे में बैठा है। लक्ष्मम्मा ने मुझे जल्दी जाकर आपको बुलाने के लिए कहा है।'

यह सुनकर उसके चेहरे पर खुशी साफ झलक रही थी। उसने नाज़िर को आखिरी बार दो साल पहले देखा था। पिछली बार जब वह यहाँ आया था... खैर... आमिर और मेरे बीच तनाव पहले से ही काफी बढ़ चुका था। हालाँकि हम साथ नहीं थे, लेकिन नाज़िर के आसपास होने पर हम अलग नहीं होते थे और आमिर मुझसे तभी बात करता था जब बिलकुल ज़रूरी होता था... पिछली बार जब नाज़िर अपनी

छुट्टियों में यहाँ आया था, तब मैं बैंगलोर गई थी और मैंने उसकी देखभाल की थी। आमिर और मेरे बीच कोई झगड़ा नहीं हुआ था, लेकिन वह नाराज़ था क्योंकि मैं नरसपुरा जाया करती थी और वहाँ कई दिनों तक इतिहास के अध्ययन में डूबी रहती थी।

वह सोचने लगी कि नाज़िर को क्या-क्या पता है और कितना पता है। क्या वह सीधे बैंगलोर हवाई अड्डे से आया था या आने से पहले मल्लेश्वरम वाले फ्लैट में गया था? या वह शिवाजीनगर गया था? क्या उसने अपने पिता को बैंगलोर आने की सूचना दी थी? क्या उसे पता था कि उसके पिता ने अब दूसरी शादी कर ली है? उसने मुझे कुछ नहीं बताया—न फोन किया, न चिट्ठी लिखी।

जब वह घर पहुँची, तो उसकी नज़र तुरंत एक लंबी हरी टोयोटा कार पर पड़ी। कुछ ही सेकंड बाद, एक हट्टा-कट्टा आदमी, जिसकी दाढ़ी अरब जैसी लंबी और काली थी, कार से बाहर निकला और गीले कपड़े से कार को पोंछने लगा। उसने दहलीज पार की और घर में प्रवेश किया। नाज़िर नमाज़ में लीन था और किबला की ओर मुख किए बैठा था, जिस दिशा में मक्का का पवित्र शहर स्थित था। उसने आधी खुली आँखों से उसे देखा और किसी भी चीज़ से विचलित न होने के लिए, उसने अपनी नज़रें किबला की ओर फिर से टिका लीं। उसने उसे देखा। पायजामा, जैसा अरब लोग पहनते हैं। एक लंबी, ढीली, बहने वाली कमीज़ जो घुटने तक आती थी। लगभग डेढ़ इंच की करीने से कटी हुई दाढ़ी। पेंसिल जैसी पतली मूंछें। करीने से कटे हुए बाल जो पीछे की ओर धकेले हुए थे और नमाज़ पढ़ते समय पहनी जाने वाली सफेद टोपी से ढके हुए थे। एक निजी चटाई—उसकी अपनी जनामाज़—जो हर मुसलमान यात्रा करते समय अपने साथ रखता है। वह अपने अध्ययन कक्ष में गई और अपनी 'लिखने वाली' कुर्सी पर बैठ गई।

लगभग पाँच मिनट बाद नाज़िर हाथ में नमाज़ की कुटिया मोड़ते हुए अध्ययन कक्ष में दाखिल हुए। उन्होंने सामने वाली कुर्सी की ओर इशारा करते हुए कहा, ‘अम्माजान, क्या आपने नमाज़ पूरी करने के बाद अपने भीतर भर जाने वाली उस अद्‌भुत शक्ति का अनुभव किया है? वह शक्ति जो इस ज्ञान से आती है कि अल्लाह के सिवा कोई ईश्वर नहीं है, और मुझे इस दुनिया में किसी के सामने सिर झुकाने की ज़रूरत नहीं है! चाहे कोई अन्य धार्मिक अनुष्ठान करे या न करे, व्यक्ति को बस इतना करना है कि वह हर दिन पाँच बार नमाज़ पढ़े। दुनिया की कोई भी शक्ति उसे

पराजित नहीं कर पाएगी। मैं अपने अनुभव से कह रहा हूँ—मैंने एक भी दिन नमाज़ नहीं छोड़ी!' उन्होंने कुर्सी पर बैठते हुए कहा। उन्होंने कोई जवाब नहीं दिया। जहाँ तक उन्हें याद है, वह घर पर धाराप्रवाह कन्नड़ बोलते थे: आख़िरकार, उनके माता-पिता कन्नड़ रंगमंच और फ़िल्म कलाकार थे। वह अपने दोस्तों और सिनेमा और रंगमंच की दुनिया से घर आने वाले लोगों से भी कन्नड़ में बात करते थे। और उन्हें उर्दू का भी कामचलाऊ ज्ञान था। लेकिन अब वह पूरी तरह से अरबी शब्दों से भरी उर्दू में बोलते थे, जिनमें से कई शब्द उन्हें समझ में नहीं आते थे। व्याकरण, उच्चारण और लहजा अलग था। उसने उसकी ओर देखा, और उसके कुछ कहने का इंतज़ार करने लगा।

प्रार्थना से मन को शांति मिलनी चाहिए। इसका उद्देश्य मनुष्य के अहंकार को व्यवस्थित रूप से कम करना है। कोई भी प्रार्थना जो दूसरों से श्रेष्ठता की भावना को बढ़ावा देती है, जो यह कहती है कि आप किसी अन्य ईश्वर के सामने नहीं झुकेंगे, वह एक खतरनाक प्रकार के घमंड को जन्म देती है।

उसका चेहरा गुस्से से भर उठा और उसने उसे घूरते हुए कहा, "अम्माजान, मैं इतनी दूर से आया हूँ! माँ से धार्मिक मामलों पर बहस करना अच्छा नहीं लगता। मैं बहुत नाराज़ हूँ, लेकिन क्योंकि आपने यह मुद्दा उठाया है, तो मैं आपको बता दूँ: आपकी बातों से मुझे साफ पता चल गया है कि आपने कई देवी-देवताओं की पूजा करना नहीं छोड़ा है। लेकिन जो लोग अज्ञानता के बोझ तले दबे रहना चाहते हैं, उनके लिए मैं कुछ नहीं कर सकता!"

वह बिल्कुल उन अति-कट्टरपंथियों की तरह बोलता था जो अल्लाह के सिवा किसी और देवता के अस्तित्व को मानने से इनकार करते थे। यही वह विषय था जिसका वह पिछले चार वर्षों से अध्ययन कर रही थी। वह उसे सैकड़ों उदाहरणों के साथ यह बताना चाहती थी कि इस तरह के कट्टरवाद ने दुनिया पर क्या कहर बरपाया है। लेकिन यह समय नहीं था। वह उससे मिलने के लिए इतनी दूर से आया था। इसलिए उसने कहा, 'बेटा, इस कमरे में रखी किताबों को देखो। तुम्हारे दादाजी ने अपने जीवन के अट्ठाईस वर्ष इनका अध्ययन करने में बिताए और मैं पिछले चार वर्षों से इनका अध्ययन कर रही हूँ। एकेश्वरवाद, बहुदेववाद, संस्कृतियों के बीच अंतर... ये ऐसे विषय हैं जिनका हमें गंभीरता से अध्ययन करना चाहिए यदि हम उन पर बात

करना चाहते हैं। तो चलिए इसे छोड़ देते हैं। तुम बताओ, तुम कैसे हो? सऊदी में जीवन कैसा चल रहा है?'

ऐ अल्लाह! यह पैगंबर मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की जन्मभूमि है और दुनिया के किसी भी देश से कहीं अधिक समृद्ध है। किसी देश की दौलत का अंदाज़ा उसके सोने, हीरे, मोतियों या अंतरिक्ष या रॉकेट विज्ञान में उसकी तरक्की से नहीं लगाया जा सकता... पेट्रोल! पेट्रोल ही असली दौलत है। एक बैरल पेट्रोल की कीमत में सिर्फ पाँच डॉलर की बढ़ोतरी कर दीजिए और देखिए कैसे घमंडी "विकसित" देश तुरंत घुटने टेक देते हैं! और आप जानते हैं, मुझे पूरा यकीन है, कि यह शक्ति सिर्फ मुस्लिम देशों के पास है और उनमें भी, पैगंबर मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की जन्मभूमि सऊदी अरब सबसे शक्तिशाली है। दरअसल, क्यों नहीं? यह सबसे दयालु अल्लाह की कृपा से धन्य भूमि है। अपने भारत को देखिए। जैसे ही आप हवाई जहाज से यहाँ उतरते हैं, आपको क्या दिखाई देता है? गंदगी, बदहाली, बीमारी, भूख और भयानक गरीबी। इस घिनौनी स्थिति को सही ठहराने के लिए आपके पास हज़ारों बहाने हैं, लेकिन आप असली वजह का ज़िक्र करने से बचते हैं: भारत ने कभी भी इस्लाम को उसके शुद्धतम रूप में स्वीकार नहीं किया है। आप इस्लाम का सम्मान करने का बड़ा दिखावा करते हैं, लेकिन आप जानते हैं और मैं भी जानता हूँ कि यह सब एक राजनीतिक नाटक है। आप इस्लाम का सम्मान करने का ढोंग करते हैं, लेकिन गुप्त रूप से झूठे देवताओं की पूजा करते हैं। और फिर भी आप चाहते हैं कि भारत समृद्ध हो? यह कैसे संभव है?

“बच्चे, तुमने एक अमेरिकी विश्वविद्यालय से पेट्रोकेमिकल इंजीनियरिंग में मास्टर्स की डिग्री हासिल की है, इसलिए अगर मैं गलत हूँ तो मुझे सुधार दो। मुझे याद है मैंने कहीं पढ़ा था कि पेट्रोल का निर्माण तब हुआ जब लाखों साल पहले मौजूद विभिन्न प्रजातियों के पौधों और जानवरों के रस जमीन में रिस गए और समय के साथ उनके गुण बदल गए। आज के रेगिस्तानी देश, जिनमें सऊदी अरब भी शामिल है, कभी कई तरह के जीव-जंतुओं का घर थे जो अब विलुप्त हो चुके हैं। लेकिन तुम इस वैज्ञानिक तथ्य को अल्लाह की रहमत का नतीजा मानते हो, बिल्कुल एक ठेठ अरब मुल्ला की तरह।”

नाज़िर अब गुस्से से उबल रहा था। अगर कोई और होता, तो वह जानबूझकर उन्हें नज़रअंदाज़ करके अपनी नाराज़गी ज़ाहिर करता। लेकिन उसकी अपनी माँ

इस्लाम के सबसे पवित्र धर्म का अपमान कर रही थी, और इसी वजह से मामला और भी गंभीर हो गया।

मुझे पेट्रोल के निर्माण के बारे में पाठ पढ़ने की ज़रूरत नहीं है। लेकिन आप मुझे यह क्यों नहीं बतातीं कि पेट्रोल इतनी प्रचुर मात्रा में केवल उसी भूमि में क्यों पाया गया, जो भविष्य में पैगंबर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का जन्मस्थान बनने वाली थी, न कि भारत में, जहाँ अनेक देवताओं की पूजा की जाती है? इस प्रश्न का उत्तर स्वीकार करने के लिए आपको खुले मन से सोचना होगा। लेकिन फिर अल्लाह को स्वयं आप पर अपनी असीम कृपा बरसानी होगी, तभी आप उसकी महिमा को जान पाएंगी। तब तक आप उस चमत्कार को नहीं समझ पाएंगी जो उसने संसार को दिया है। ज्ञान केवल वही प्राप्त करता है जिस पर अल्लाह अपनी दया दृष्टि डालता है। बाकी सब अज्ञानता में जीते हैं और अंततः नरक में जाते हैं। मैं आपसे बहुत प्रेम करती हूँ क्योंकि आप मेरी माँ हैं। लेकिन मुझे आप पर दया भी आती है। मुझे नहीं पता कि मैं आपको कैसे सहारा दे सकती हूँ।

उसे स्पष्ट हो गया था कि खाड़ी देशों में काम करने गए अनगिनत नौजवानों की तरह, वह भी वहाँ देखे गए इस्लाम के अति शुद्धतावादी रूप से मोहित हो गया था। दुकानों, दफ्तरों और कारखानों में, लोग अज़ान की आवाज़ सुनते ही अपना काम छोड़कर नमाज़ के लिए पास की मस्जिद की ओर दौड़ पड़ते थे। कुछ लोग अपने कार्यस्थल पर खड़े होकर नमाज़ पढ़ते थे। बहुत कम लोग ऐसा भी नहीं करते थे। उसने जो सुना था, उसके अनुसार भारत, पाकिस्तान और बांग्लादेश से आए मुस्लिम प्रवासी स्थानीय लोगों को यह साबित करने के लिए उत्सुक थे कि वे भी उतने ही पवित्र हैं। वे हर अज़ान की आवाज़ सुनने और मस्जिद जाने के लिए बहुत मेहनत करते थे। उसने नाज़िर में भी वही जोश देखा और अनुमान लगाया कि स्थानीय सऊदी मुसलमानों के सामने अपनी विश्वसनीयता साबित करने का जो प्रयास शुरू हुआ था, वह धीरे-धीरे एक गहरी, लगभग अंधविश्वास में बदल गया, ऐसा विश्वास जिसने उसे इस तरह बोलने पर मजबूर किया। उसे कम समय में तर्क समझाना और वैज्ञानिक सोच और सहिष्णुता के मूल्यों को मनवाना आसान नहीं था। उसने उस पर दबाव न डालने का फैसला किया। वह उस धर्म में बुरी तरह उलझ गया था जिसके संस्थापक-पैगंबर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने उपदेश दिया था कि धर्म के प्रति निष्ठा

सर्वोपरि है और यदि माता-पिता, भाई-बहन रास्ते में बाधा बनें तो उन्हें त्यागना—यहाँ तक कि बलिदान देना—भी जायज़ है। उसने विषय बदलने का फैसला किया।

आप क्या खाना चाहेंगे? मैं आपके लिए तैयार करवा देता हूँ।

'यहाँ आपको क्या मिलेगा?'

हम आमतौर पर रागी के गोले और थोड़े चावल खाते हैं। अगर आप चपाती खाने पर ज़ोर दें, तो मैं किसी को कुनिगल से आटा लाने भेज सकता हूँ। पिछवाड़े में ढेर सारी सब्ज़ियाँ हैं। आप बताएँ कि आपको क्या पसंद है। और दूध, दही और मक्खन की कोई कमी नहीं है।

'आप वोक्कालिगा जाति से हैं। क्या आप मांस खाते हैं?' उसने जानबूझकर पूछा।

उसकी जाति के बारे में की गई उसकी तीखी टिप्पणी से उसे बहुत दुख हुआ। वह उसे बताना चाहती थी कि वह अब भी मुसलमान है, लेकिन उसने ऐसा न करने का फैसला किया क्योंकि अब उसे इस्लाम में कोई आस्था नहीं बची थी।

'मैं वोक्कालिगा हूँ और हम मांस खाते हैं, लेकिन रोज़ नहीं। हम रसोई में मांस नहीं पकाते। हम इसे या तो बरामदे में या फिर बाथरूम के चूल्हे पर, एक अलग मिट्टी के बर्तन में पकाते हैं जो केवल इसी काम के लिए होता है। हम मांस पकाने के लिए अलग मिट्टी के बर्तन इस्तेमाल करते हैं और इन्हें सामान्य बर्तनों के साथ नहीं मिलाते। केवल पुरुष ही मांस पकाते हैं। हम सामान्य प्लेटों का इस्तेमाल नहीं करते, मांस एक बड़े सूखे पत्ते में परोसा जाता है और खाने के बाद हम उसे फेंक देते हैं और बर्तनों को धोकर बाथरूम की छत पर टांग देते हैं। इसका उद्देश्य मांस खाने को हतोत्साहित करना है, जो पशुओं के प्रति अहिंसा के मूल आदर्श से प्रेरित है। आपके दादाजी महात्मा गांधी से बहुत प्रभावित थे और उन्होंने मांस पूरी तरह से त्याग दिया था। यहाँ आने के बाद मैंने भी मांस खाना छोड़ दिया है। जानवरों को भी इस दुनिया में जीने का उतना ही अधिकार है। मनुष्यों को भोजन के लिए जानवरों को मारने का अधिकार नहीं है। इस भूमि का दर्शन और संस्कृति मानती है कि जानवरों को केवल मनुष्य के सुख के लिए नहीं बनाया गया था।'

उसने कंधे उचका दिए।

'अविश्वसनीय! विज्ञान की जरा सी भी जानकारी रखने वाला कोई भी व्यक्ति जानता है कि यह सरासर बकवास है।'

उसने इसे जाने देने का फैसला किया।

मैं लक्ष्मम्मा से चावल और साग का शोरबा बनाने को कह दूँगी। दही तो भरपूर है। अगर आपको मांस खाने की ज़िद है, तो आपको टैक्सी लेकर कुनिगल जाना होगा और किसी रेस्तरां में खाना होगा। आपकी मर्ज़ी।

उसने कुछ नहीं कहा। वह एक मिनट तक इंतजार करती रही, फिर उठी और अंदर चली गई।

दोपहर का खाना तैयार होने तक वह वहीं अकेले बैठे रहे और लक्ष्मी के बुलावे पर बाहर आए। लक्ष्मी ने उन्हें हाथ धोने के लिए पानी दिया और खाना थाली में परोस दिया। उन्होंने चम्मच माँगा। लक्ष्मी ने थाली में खूब सारा घी डाला, चावल और चटनी को उसमें मिलाया और उंगलियों से तब तक मसलती रहीं जब तक वह लगभग अर्ध-तरल न हो जाए, फिर थाली उन्हें थमा दी। लक्ष्मी उन्हें खाते हुए देखती रहीं और फिर एक और हिस्सा मिलाया। लक्ष्मी ने चिंता जताते हुए शिकायत की कि वह ठीक से नहीं खा रहे हैं। जब उन्होंने वह भी खत्म कर लिया, तो लक्ष्मी ने उनके लिए दही-चावल बनाया और उसमें एक चुटकी नमक डाला। उनके चेहरे के भाव अचानक नरम पड़ गए। लक्ष्मी को यकीन हो गया कि उन्हें भावुकता का संकेत मिला है।

जब वह हाथ धो रहा था, तब उसने अध्ययन कक्ष में बिस्तर तैयार किया और उसे थोड़ी देर सोने के लिए कहा। वह लेट गया। वह बाहर गई और ड्राइवर को दोपहर का भोजन दिया, और जब उसने खाना खा लिया, तब उसने अपना भोजन समाप्त किया।

जब नाज़िर लगभग एक घंटे बाद जागा, तो वह उसके बिस्तर के पास एक कुर्सी पर बैठी थी। उसने पूछा, 'आप बैंगलोर में कहाँ रह रहे हैं?'

‘होटल शरीफ महल।’

'आप अपने अब्बाजान के साथ क्यों नहीं रह रहे हैं?' उसने अपनी हैरानी छिपाने की कोई कोशिश किए बिना पूछा।

मैंने आपको और अब्बाजान को यह बताने के लिए घर फोन किया कि मैं आ रही हूँ। फोन सेवा ने बताया कि नंबर डिस्कनेक्टेड है। आपके पास यहाँ फोन नहीं है और मेरे पास दादाजी का नंबर भी नहीं था। मैंने इम्तियाज़ को फोन किया। पता नहीं आप उसे जानते हैं या नहीं। वह शिवाजीनगर में दादाजी के घर के पास रहता है। उसे आश्चर्य हुआ कि मुझे नहीं पता था कि अब्बाजान ने दोबारा शादी कर ली है और अपनी नई बीबी के साथ बड़े घर में रह रहे हैं। उसने मुझे आधे घंटे बाद वापस फोन करने को कहा ताकि वह मुझे दादाजी का नंबर दे सके। मैंने उससे पूछा कि क्या हो

रहा है। तो उसने मुझे बताया कि आप—मेरी अम्माजान—किसी दूर गाँव में रह रही हैं। वह क्या कर सकता था? उसने मुझे बताया कि अगर गैर-मुस्लिम लड़कियाँ धर्म में आती हैं और धर्म परिवर्तन करती हैं तो ऐसा ही होता है। यह एक सच्ची मुस्लिम लड़की से शादी करने जैसा नहीं है। लगता है हर कोई इसी बारे में बात कर रहा है। मैंने अब्बाजान से बात की। मेरी आवाज़ सुनकर वह बहुत खुश हुआ और कहा कि वह हवाई अड्डे आ रहा है। उन्होंने कहा कि जब तक मैं यहाँ हूँ, वे फ्लैट की सफाई करवा देंगे और खाना बनाने वाले का इंतज़ाम कर देंगे। हालाँकि उनकी दूसरी बीबी मुझसे छोटी थीं, लेकिन उन्हें मेरे सामने आने के लिए पर्दा करने की ज़रूरत नहीं थी, क्योंकि जहाँ तक उनका सवाल है, मैं महरम हूँ। मैं समझ गई। अगर मैं दादाजी के घर रहती, तो आप ज़रूर मुझसे मिलने आते और इससे पिताजी को बहुत शर्मिंदगी होती। जब वे हवाई अड्डे आए, तो मैंने उनसे कहा कि मैं शरीफ महल में रहूँगी। उन्होंने मना तो नहीं किया, लेकिन मुझे घर नहीं ले गए ताकि अपनी नई बीबी से मिलवा सकें। मुझे लगता है कि उन्हें शर्मिंदगी हुई होगी।

वह अपने बेटे के पिता की दूसरी शादी के बारे में बात नहीं करना चाहती थी।

यह सब बताते समय उनका लहजा बेहद विनम्र था। उसने उनकी ओर देखा और उनमें एक ऐसी कोमलता महसूस की जो पहले उनके साथ बहस करते समय गायब थी। वह अब धर्म से प्रेरित नाज़िर नहीं थे। वह जानती थी कि उन्हें यह बात समझ नहीं आ रही थी कि इस अचानक बदलाव का कारण वह भोजन था जो उन्होंने अभी-अभी खाया था, जिसे उनकी माँ ने बड़े प्यार से मिलाकर परोसा था।

'तुम्हारी छुट्टी कब तक है?'

'छह सप्ताह।'

‘तो फिर आप यहीं क्यों नहीं रुक जाते? आप जब चाहें दोस्तों से मिलने के लिए बैंगलोर जा सकते हैं।’

उन्होंने इस पर कोई जवाब नहीं दिया। ‘कुनिगल से बैंगलोर के लिए हर पंद्रह मिनट में बस मिल जाती है। या फिर आप यहाँ जितने दिन रहना चाहें, उतने दिन के लिए कार किराए पर ले सकते हैं।’ अब भी उन्होंने कोई जवाब नहीं दिया। साफ था कि उन्हें कोई दिलचस्पी नहीं थी। ‘क्या आपने शादी के बारे में सोचा है?’ उन्होंने विषय बदलते हुए पूछा।

फिर सन्नाटा छा गया। उसने सवाल दोहराया।

‘अगर मैं सिर्फ इसके बारे में सोचकर ही शादी कर सकता...’ उसने कहा।

वह इस दिनचर्या से वाकिफ थी। नाज़िर जैसे युवा जो विदेश में काम करते थे, अपने माता-पिता से कहते थे कि वे उनके लिए भावी दुल्हनें ढूंढें। जब वे छुट्टियों में भारत आते, तो सात-आठ संभावित दुल्हनों से बात करते, उनमें से एक को चुनते, शादी करते और पत्नी के साथ लौट आते। लेकिन नाज़िर का मामला थोड़ा पेचीदा था। रज़िया लगभग चार साल तक मुस्लिम समुदाय से पूरी तरह कटी हुई थी। और फिर आमिर की दूसरी पत्नी का मामला भी था। अपने बेटे के लिए गैर-मुस्लिम दुल्हन ढूंढना नामुमकिन था। अखबारों में विज्ञापन देना एक अच्छा उपाय होता। अमेरिकी विश्वविद्यालय से मास्टर्स की डिग्री और साथ ही सऊदी अरब में अच्छी तनख्वाह वाली नौकरी का विज्ञापन निश्चित रूप से अच्छी संख्या में आवेदन आकर्षित करता। क्या धर्म की तमाम पाबंदियों से मुक्त लड़की ढूंढना नामुमकिन था? और उसे लगा कि अगर इसका जवाब हां है, तो वह ऐसी किसी से शादी करने के लिए राजी नहीं होगा। उसने कुछ कहने के लिए मुंह खोला, लेकिन वह फिर से सो गया था। उसने उसके चेहरे की ओर देखा। उसका हर रूप अरबी था; पहनावा, दाढ़ी, मूंछें—सब कुछ दुनिया को बता रहा था कि वह मुसलमान है। लेकिन हाल ही में भारतीय मुस्लिम युवाओं में अपनी मुस्लिम पहचान का इस तरह से खुलकर प्रदर्शन करना आम बात हो गई थी। उसके मन में एक और विचार आया। क्या यह महज़ संयोग था कि उसने पेट्रोकेमिकल इंजीनियरिंग में स्नातक की डिग्री हासिल की और सऊदी अरब में अपनी पहली नौकरी की? वह कितना प्यारा बच्चा था! मैं उसे खुले दिमाग से सोचना सिखाना चाहती थी, चीजों को धर्म के पूर्वाग्रह के बिना देखना सिखाना चाहती थी। उसने उदास होकर सिर हिलाया। वह एक अच्छी माँ बनने में नाकाम रही थी। शूटिंग। थिएटर। भाषण। और अब जब वह इस बारे में सोचती है, तो उसे एहसास होता है कि वह अपने रूढ़िवादी दादा-दादी की परवरिश में एक सच्चे मुसलमान के रूप में उसके धीरे-धीरे लेकिन तार्किक विकास को पूरी तरह से नज़रअंदाज़ कर गई थी। उसकी नज़रें सोते हुए उस पर टिकी रहीं। वह नींद में करवट बदला और करवट बदली। वह चौंककर आँखें खोल बैठा। एक घंटा बीत चुका था। उसने अपनी घड़ी देखी और सीधा बैठ गया।

'क्या हुआ?'

‘असर की नमाज़ पढ़ने का समय हो गया है!’ उसने बिस्तर से अपने पैर नीचे लटकाते हुए कहा और फिर लगभग दौड़ते हुए कमरे से बाहर निकल गया।

वह उसके पीछे-पीछे बाथरूम तक गई। उसने बड़े पीतल के बर्तन में मग डुबोया, उसे बाहर निकाला और दुआ पढ़ने लगा। उसने नियत की और बिस्मिल्लाह पढ़ा। फिर उसने दोनों हाथों को कोहनी तक धोया, गरारे किए, नाक में पानी की कुछ बूँदें डालीं और उन्हें धोया। उसने अपनी दाढ़ी में उंगलियाँ फिराईं और जड़ों तक अच्छी तरह धोया। उसने अपनी उंगलियों और पैरों की उंगलियों को ऐसे धोया जैसे मोतियों की माला बना रहा हो, फिर अपनी उंगलियों को कानों पर फिराया और पूरे शरीर पर फिराया, फिर अपना दाहिना हाथ और दाहिना पैर धोया और अंत में, अपना बायाँ हाथ और बायाँ पैर धोया। उसने इस रस्म को तीन बार और दोहराया और साफ अरबी लहजे में दुआ पढ़ने लगा। उसका उच्चारण त्रुटिहीन था।

‘मैं गवाही देता हूँ कि अल्लाह के सिवा कोई ईश्वर नहीं है, और वह अकेला है। उसका कोई साझीदार नहीं है। और मैं गवाही देता हूँ कि मुहम्मद उसके बंदे और रसूल हैं। ऐ अल्लाह! मैं तुझसे दुआ करता हूँ। मैं गवाही देता हूँ कि तेरे सिवा कोई दुआ के लायक नहीं है। मुझे पश्चाताप करने वालों और पाक रहने वालों में शामिल कर।’

वह अध्ययन कक्ष की ओर चलते हुए यह पाठ कर रहा था। उसने अपना जनामा ज़मीन पर फैलाया, टोपी पहनी, बैठ गया और नमाज़ अदा करने लगा। उसे एहसास हुआ कि वह अधिकांश फर्ज़ भूल चुकी है, जो उसने पढ़े थे।

‘...अशदु अल्लाह इलाहा इल्ला अल्लाह व अशदु अन्ना मोहम्मद रसूलु अल्लाह (मैं गवाही देता हूँ कि अल्लाह के सिवा कोई ईश्वर नहीं है, और मोहम्मद [सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम] उसके पैगंबर और रसूल हैं...)’ उन्होंने नमाज़ के दौरान कुछ खास मौकों पर बार-बार इस आयत का पाठ किया। फिर उन्होंने अपनी गर्दन दाहिनी ओर घुमाई और ‘अस्सलाम अलैकुम वरहमतुल्लाह’ का पाठ किया, फिर बाईं ओर घुमाई और दोबारा यही पाठ किया। वह समझ गई कि उनकी नमाज़ पूरी हो गई है।

उसने उसे अपना जनामा मोड़कर कुर्सी पर रखते हुए देखा।

‘क्या मैं चाय मंगवा लूँ?’

उसने सहमति में सिर हिलाया।

वह लक्ष्मम्मा को चाय बनाने के लिए कहने रसोई में दाखिल हुई और वहाँ केंचप्पा को देखा। उनके चेहरे पर स्पष्ट रूप से नाराजगी झलक रही थी, हालाँकि वे अपने मन की बात कहने में हिचकिचा रहे थे।

'अवा, महोदया: मुझे नहीं पता कि यह कैसे कहूँ...पर आप हमारी अपनी हैं। आप हमारे गौड़ा की पुत्री हैं। मुझे पता है कि आपने अतीत में अपनी जाति को कलंकित किया है, पर आप फिर भी हमारी अपनी हैं। हमें कोई आपत्ति नहीं है अगर आप रसोई में जाकर हमारे बर्तनों, स्नानघर और पानी को छूती हैं। लेकिन आपका बेटा जन्म से तुर्क है। मैं आपको इसलिए बता रही हूँ क्योंकि आप ये बातें समझती हैं। वह स्नानघर में गया और पानी को छूकर उसे अपवित्र कर दिया। हमें वह सारा पानी खाली करके इमली से धोकर शुद्ध करना होगा। मुझे कुएँ से छह बाल्टी से अधिक पानी निकालना होगा। लक्ष्मम्मा क्रोधित हैं।'

लक्ष्मी को अचानक पूरे शरीर पर पसीना आ गया। यह मुझसे कैसे छूट गया? लेकिन अभी उससे बहस करने का समय नहीं है और सच में, उसे समझाने की कोशिश करने का कोई फायदा नहीं है। कितनी भी शांत बातचीत से न तो वह बदलेगा और न ही लक्ष्मीम्मा। वह वर्षों से अपनी आदतों में अड़ा हुआ है और अगर वह समझ भी जाए, तो भी वह पूरे गाँव और अपनी जाति के लोगों को नाराज़ नहीं करेगा। दबाव काम नहीं करेगा। वह शायद पलटकर मुझ पर ही दोष लगाएगा कि मैं उसकी जाति को अपवित्र करने की कोशिश कर रही हूँ क्योंकि वह मेरा नौकर है। यह तो आत्मघाती होगा। वह पिता के प्रति कृतज्ञता के धागे से मुझसे जुड़ा हुआ है। मैं इसे टूटने नहीं दे सकती।

'आप सही कह रहे हैं, केंचप्पा, यह मेरी गलती थी। आप ऐसा कीजिए: गौशाला में एक प्लास्टिक की बाल्टी और मग रखिए। मैं अपने बेटे को यही इस्तेमाल करने के लिए कहूंगा। हम उस बाल्टी में उसके नहाने के लिए गर्म पानी भर सकते हैं। क्योंकि यह प्लास्टिक की है, इसलिए प्रदूषण का कोई खतरा नहीं है।'

इससे केंचप्पा को कुछ राहत मिली। उसने सिर हिलाया।

ड्राइवर को चाय देने के बाद वह स्टडी रूम में लौटी। उसे उसका कप देते हुए उसने नाज़िर से पूछा, 'मुझे जिज्ञासा है। क्या तुम्हें सऊदी अरब में कोई उपयुक्त साथी नहीं मिला? मेरा मतलब है, तुम्हारे सहकर्मी, दोस्त तो जानते ही होंगे कि तुम एक योग्य कुंवारे हो। क्या उन्होंने तुम्हारे लिए कोई रिश्ता तय नहीं किया?'

‘अरे, लेकिन मैं सऊदी नहीं हूँ!’ उसने तुरंत जवाब दिया।

लेकिन आप मुसलमान हैं।

लेकिन आप समझते नहीं! सऊदी खुद को सबसे श्रेष्ठ समझते हैं। वे अपनी बेटियों की शादी गैर-सऊदी पुरुषों से नहीं करते और अगर कोई लड़की गैर-सऊदी पुरुष से शादी करने की इच्छा जताती है, तो वे उसका गला काट देते हैं। और वे दूल्हे से दहेज की बेतहाशा रकम मांगते हैं। मैंने देखा है कि मध्यम वर्ग के सऊदी लोग, जो इतना दहेज नहीं दे सकते, अपने बेटों की शादी सीरिया और मिस्र की लड़कियों से करवा देते हैं। लेकिन सबसे बुरा हाल भारत, बांग्लादेश और पाकिस्तान की महिलाओं का है। ये बेचारी महिलाएं आम तौर पर नौकरानी का काम करती हैं। घर का मुखिया जबरदस्ती उनसे तीसरी या चौथी पत्नी के रूप में शादी कर लेता है।

लेकिन क्या इस्लाम यह उपदेश नहीं देता कि दुनिया भर के मुसलमान समान हैं?

लेकिन हर देश के लोग खुद को दूसरों से श्रेष्ठ समझते हैं। सऊदी अरब में कई जनजातियाँ हैं और हर जनजाति खुद को दूसरी जनजाति से श्रेष्ठ समझती है। कुछ जनजातियाँ अपनी जनजाति के बाहर शादी नहीं करतीं।

‘बच्चे, क्या सऊदी अरब में काम करने का कोई ठोस कारण है?’

नहीं, ऐसा नहीं है। लेकिन कोई और देश मेरे काम के लिए इतना भुगतान नहीं करेगा। इसके अलावा, दूसरे देश मेरी तनख्वाह का एक तिहाई या आधा हिस्सा टैक्स के रूप में ले लेते हैं। सऊदी अरब में आयकर नहीं है। यहाँ तक कि यूरोपीय और अमेरिकी भी मौका मिलने पर सऊदी अरब में काम करने आते हैं।

10

प्रोफेसर एन.एस.एन. शास्त्री ने अपने करियर के शुरुआती दौर में ही कर्नाटक के अग्रणी बुद्धिजीवियों में से एक के रूप में अपनी पहचान बनाई, इससे पहले कि उन्हें राष्ट्रीय स्तर पर ख्याति प्राप्त होती। वे जन्मजात प्रतिभाशाली वक्ता थे, भाषा पर उनकी पूर्ण पकड़ थी, वे भावनाओं को व्यक्त करने में सक्षम थे और किसी भी मुद्दे का

दार्शनिक आधार पर विश्लेषण करने की विद्वता रखते थे। उन्होंने निडर होकर अपने क्रांतिकारी विचारों का प्रचार किया और ऐसे जोशीले भाषण दिए जिनसे युवाओं को क्रांतिकारी विचारकों के समूह में शामिल होने की प्रेरणा मिली, जिनका लक्ष्य इतिहास की दिशा बदलना था। प्रोफेसर शास्त्री हर युवा के आदर्श थे। वे विश्व की अर्थव्यवस्था की स्थिति और भारत के पांच हजार साल पुराने सांस्कृतिक इतिहास पर घंटों तक समान सहजता से बोल सकते थे। उन्होंने दहेज और अस्पृश्यता जैसी सामाजिक बुराइयों की निंदा की और तत्काल, व्यापक सुधारों का आह्वान किया। इससे वे शीघ्र ही मीडिया के चहेते बन गए। अचानक वे हर जगह छा गए। वे हर सेमिनार के सितारे बन गए। वे प्रगतिशील रैलियों के स्तंभ और हर उद्घाटन समारोह के सम्मानित अतिथि थे। प्रोफेसर शास्त्री को एक प्रकार का समाज सुधारक माना जाने लगा। उन्हें बहुत कम उम्र में ही प्रोफेसर का पद मिल गया, जिसके बाद उन्हें पद्मश्री, पद्मभूषण और पद्मविभूषण जैसे राष्ट्रीय सम्मानों से नवाजा गया। हालांकि, ये सम्मान उनके छात्रों, प्रशंसकों और अनुयायियों के लिए पर्याप्त नहीं थे।

आप सर्वोच्च नागरिक सम्मान भारत रत्न से कम किसी भी चीज के हकदार नहीं हैं!

पुरस्कारों का महत्व व्यक्ति से ही पता चलता है—कोई व्यक्ति सिर्फ पुरस्कार जीतने से महान नहीं बन जाता। जब तक आप इस शाश्वत सत्य को नहीं समझेंगे, तब तक आप व्यक्तिगत स्तर पर ही अटके रहेंगे; आप कभी भी दार्शनिक स्तर तक नहीं पहुंच पाएंगे। इस बारे में सोचिए। मुझे उन सभी लोगों के नाम बताइए जिन्होंने इतिहास की दिशा बदल दी और अपने प्रयासों के लिए पुरस्कार प्राप्त किए।

यह उनके कुछ अनुयायियों की निजी सभा में हुआ था। अनुयायी उनके हर शब्द को ध्यान से सुन रहे थे, जो उन्होंने एक समाधि जैसी अवस्था में कहे थे, उनकी आँखें समय को भी मात दे रही थीं। अखबारों में इसकी खबर छपी और उनकी प्रसिद्धि और सम्मान में अभूतपूर्व वृद्धि हुई।

युवाओं के बीच उनकी अपार लोकप्रियता का एक और कारण था। भारत से एमए की पढ़ाई पूरी करने के बाद, प्रोफेसर शास्त्री ऑक्सफोर्ड गए और डिग्री तथा एक ब्रिटिश पत्नी के साथ वापस लौटे। एक व्यापक रूप से प्रचलित अफवाह थी कि ऑक्सफोर्ड में प्रोफेसर शास्त्री के गुरु ने अपनी बेटी का विवाह अपने प्रतिभाशाली शिष्य को एक उपहार के रूप में दिया था। एक प्रतिवाद के रूप में, पहली अफवाह

पूरी तरह से गलत थी क्योंकि पश्चिम में 'बेटी का विवाह' जैसी कोई अवधारणा नहीं थी और वह प्रोफेसर की सहपाठी थीं जो उनकी बौद्धिक क्षमता से आकर्षित हुई थीं। अंत में, कोई भी निश्चित नहीं था कि कौन सी अफवाह सही थी। यदि उन्होंने उनके साथ स्नातक की उपाधि प्राप्त की थी, तो उनका काम न करना समझ से परे था। ऑक्सफोर्ड की डिग्री कम से कम व्याख्याता का पद तो सुनिश्चित करती ही थी। इस ब्रिटिश महिला का घर पर रहकर उनकी पत्नी बनना, बाहर जाकर अपना करियर बनाने की बजाय, कुछ तो गड़बड़ थी। अब किसी को भी इन बेबुनियाद अटकलों की याद नहीं है, जो चालीस साल पहले के युग की थीं। उनकी पत्नी, जो शुरू में प्रोफेसर शास्त्री के हर समारोह में अनिवार्य उपस्थिति थीं, धीरे-धीरे उनसे दूर होती गईं और फिर पूरी तरह से उनके साथ जाना बंद कर दिया। वह कभी-कभार किताबों की दुकानों पर जातीं और जेम्स हैडली चेज़ के कुछ उपन्यास खरीद लेतीं। रविवार चर्च का दिन होता था। प्रार्थना के बाद, वह कुछ दोस्तों के साथ बातचीत करतीं। यही उनका सामाजिक जीवन था। वह पड़ोसियों के साथ विनम्र थीं, लेकिन यह विनम्रता किसी प्रेम संबंध में तब्दील नहीं हुई। वह अपने घर में काम करने वाले नौकरों से बात करने लायक कन्नड़ जानती थीं। उनके माता-पिता, जो कट्टर कैथोलिक थे और जिन्होंने प्रोफेसर से उनकी शादी का कड़ा विरोध किया था क्योंकि उन्होंने धर्म परिवर्तन करने से इनकार कर दिया था, उनसे उनका कोई खास संपर्क नहीं था। शादी के इन सभी वर्षों में वह केवल दो बार इंग्लैंड गई थीं। उनके माता-पिता को इस बात से तसल्ली थी कि वह अभी भी कैथोलिक धर्म में विश्वास रखती थीं। कुछ वर्षों बाद उनका देहांत हो गया। उसके बाद, इंग्लैंड में उनके लिए कुछ भी नहीं बचा था।

इस दंपत्ति के एक बेटा और एक बेटी थी। दिगंथ अरुणा से दस साल बड़े थे और त्वचा और चेहरे की बनावट में अपने पिता से मिलते-जुलते थे, जबकि अरुणा गोरी और भूरे बालों वाली थीं। दिगंथ पढ़ाई में बहुत होशियार थे और उन्होंने कंप्यूटर इंजीनियरिंग में स्नातक की डिग्री हासिल की, जिसके बाद उन्होंने स्टैनफोर्ड से एमबीए किया। उन्होंने बे एरिया की एक सूचना प्रौद्योगिकी कंपनी में काम शुरू किया और कुछ साल वहां काम करने के बाद भारत लौट आए। भारत लौटने पर, उन्हें एक बड़ी बहुराष्ट्रीय सॉफ्टवेयर कंपनी में नौकरी मिल गई और दो साल काम करने के बाद उन्होंने अपनी खुद की कंपनी शुरू की। उनकी कंपनी तेजी से बढ़ी और जल्द ही उनके ग्राहक जर्मनी, संयुक्त राज्य अमेरिका और फ्रांस तक फैल गए। पिछले

साल, उनकी कंपनी ने 96 मिलियन का रिकॉर्ड कारोबार दर्ज किया। उनके बड़े-बड़े सपने थे, जिनमें से एक विप्रो और इंफोसिस जैसी कंपनियों को पीछे छोड़ना था। उन्होंने बबीता से शादी की, जो एक पंजाबी थीं और पहले उनकी सहकर्मी रह चुकी थीं। बबीता प्रशासन और स्टाफिंग का काम संभालती थीं, जबकि दिगंथ बिक्री और विपणन पर ध्यान केंद्रित करते थे। सरकार ने हाल ही में एक विशाल कॉर्पोरेट सुविधा के निर्माण के उनके प्रस्ताव को मंजूरी दी थी और इसके लिए पचास एकड़ जमीन आवंटित की थी। यह मंजूरी प्रोफेसर शास्त्री की उस मंत्री के साथ हुई चतुराई भरी बातचीत का नतीजा थी, जिनके वे अनौपचारिक रूप से चुनाव प्रचार सलाहकार थे। अफवाह थी कि दिगांथ को अपने पिता की मंत्री से कथित करीबी के चलते 50 लाख रुपये अतिरिक्त देने पड़े। यह भी कहा गया कि प्रोफेसर ने खुद यह रकम तय की थी। इन अफवाहों के पीछे कौन था और उनका मकसद क्या था, यह समझना मुश्किल नहीं था। इसका मकसद एक प्रतिबद्ध मार्क्सवादी के रूप में प्रोफेसर शास्त्री के करियर को बदनाम करना था। उनकी सार्वजनिक छवि को इससे ज्यादा नुकसान किसी और बात से नहीं पहुंच सकता था कि उन्होंने एक राजनेता और अपने ही बेटे, जो एक सफल पूंजीपति था, के बीच रिश्वत का सौदा करवाया था। हालांकि व्यापारियों और राजनेताओं के बीच मिलीभगत वाले सौदे आम बात थे, लेकिन यह सोचना भी असंभव था कि भारत में मार्क्सवाद के कट्टर समर्थक ऐसा कुछ करेंगे जिससे उनकी जीवन भर की मेहनत से बनाई हुई हर चीज बर्बाद हो जाए। और यह अफवाह प्रोफेसर के उन पूर्व वफादारों ने फैलाई थी जिनकी मीडिया के कुछ हिस्सों तक पहुंच थी। लेकिन प्रोफेसर इतने दृढ़ निश्चयी थे। उनकी प्रतिक्रिया उनकी खासियत के अनुरूप थी।

मैं लोकतांत्रिक मूल्यों का प्रबल समर्थक हूँ और यही मूल्य मेरे शब्दों को शक्ति प्रदान करते हैं। यह सच है कि वह मेरा बेटा है, लेकिन इसका यह अर्थ नहीं है कि मुझे उस पर अपनी इच्छा थोपने का अधिकार है। मैं ऐसे व्यवहार को अपने चरित्र पर धब्बा मानता हूँ। वास्तव में, मैं शुरू से ही ऐसी सामंती सांस्कृतिक परंपराओं का विरोध करता रहा हूँ। मैंने उदाहरण प्रस्तुत किया है। मैंने अपने माता-पिता को इसलिए त्याग दिया क्योंकि वे एक प्रतिगामी संस्कृति में विश्वास करते थे, जिसे वे मुझ पर थोपना चाहते थे। मैंने अपने बेटे के पंजाबी लड़की से विवाह का विरोध नहीं किया। इसके विपरीत, मैंने उसे दिल से आशीर्वाद दिया क्योंकि उसका विवाह एक

स्तर पर राष्ट्रीय एकता का उदाहरण है। साथ ही, हम सभी जानते हैं कि उदारीकरण के भ्रम में हमारे देश में क्या हो रहा है। निजी क्षेत्र खतरनाक गति से बढ़ रहा है और इसका परिणाम श्रमिकों की संख्या में उतनी ही तेजी से वृद्धि है। जैसा कि इतिहास गवाह है, निजी क्षेत्र श्रमिकों का शोषण करेगा और देर-सवेर श्रमिक एकजुट होकर इन पूंजीपतियों को उखाड़ फेंकेंगे और एक ऐसी व्यवस्था स्थापित करेंगे जहाँ श्रमिकों की तानाशाही वास्तविकता बन जाएगी। लेकिन इतिहास के उस चरण तक पहुँचने के लिए हमें वर्तमान चरण से गुजरना होगा। यही मार्क्स के उस कथन का सार है कि साम्यवाद सबसे पहले औद्योगिक देशों में विजयी होता है। मेरे अनुयायियों और जो भी मेरा सम्मान करते हैं, उन्हें वास्तव में इस बात पर गर्व होना चाहिए कि मेरा पुत्र भविष्य के पूर्णतः साम्यवादी भारत की ओर ले जाने वाली एक छोटी सी सीढ़ी मात्र है। और स्पष्ट कर दूं, मैं अपने पुत्र के साथ नहीं रहता और उसके व्यावसायिक हितों से मेरा कोई लेना-देना नहीं है। अगर मैं अपने पुत्र को अच्छी तरह जानता हूँ, तो उसने कभी किसी को रिश्वत नहीं दी है और न ही कभी देगा, और यह आरोप कि मैंने किसी सौदे में मध्यस्थता की है, एक बेहद विकृत मानसिकता की उपज है। कहने की आवश्यकता नहीं है, इसने मुझे बहुत गहरा आहत किया है और मेरे पास इस अपमानजनक व्यक्तिगत हमले के लेखकों, प्रचारकों और प्रकाशकों के खिलाफ कानूनी कार्रवाई करने के अलावा कोई विकल्प नहीं बचा है।

हालांकि, इस बयान से व्यक्तिगत हमले के दोषियों में अपेक्षित दहशत नहीं फैली। उन्होंने अपना जवाब लिखा, जिसे अखबारों ने प्रकाशित नहीं किया। उन्होंने प्रोफेसर के खिलाफ पर्चे बांटे और उन पत्रिकाओं और जर्नलों में लिखा जहां उनका कुछ प्रभाव था, लेकिन इसका कोई नतीजा नहीं निकला। प्रोफेसर जानते थे कि अंततः वे थककर हार मान लेंगे। और उन्होंने ऐसा ही किया। लेकिन इस घिनौने मामले का एक दिलचस्प परिणाम यह हुआ कि इससे वे व्यापार जगत के चहेते बन गए, जो तब तक उनकी कट्टर कम्युनिस्ट विचारधारा के कारण उनसे दूरी बनाए रखता था। वे उन्हें अपने कार्यक्रमों में आमंत्रित करने लगे और उनसे प्रेरणादायक भाषण देने का अनुरोध करने लगे। उन्होंने व्यापार के लिए खुले माहौल के महत्व पर जोर दिया, इसे तीव्र आर्थिक विकास सुनिश्चित करने का सर्वोत्तम तरीका बताया, लेकिन व्यापारियों को चेतावनी दी कि वे लाभ को ही एकमात्र लक्ष्य न बनाएं। उन्होंने महात्मा गांधी का हवाला देते हुए कहा कि उद्यमी समाज के संरक्षक हैं और उन्होंने उनसे महात्मा गांधी

के उपदेश का पालन करने का आग्रह किया। इस दृष्टिकोण से, उन्होंने कहा, महात्मा गांधी और कार्ल मार्क्स में कोई मूलभूत अंतर नहीं है। उनकी लोकप्रियता आसमान छू गई। उन्हें लगातार निमंत्रण मिलने लगे। वे विभिन्न कॉर्पोरेट समारोहों में नियमित रूप से शामिल होने लगे—शीर्ष प्रबंधन में नई नियुक्तियों का जश्न मनाने वाली पार्टियाँ, सीईओ को बधाई देने वाले समारोह और कंपनी के वार्षिक दिवस। उन्होंने शक्तिशाली व्यापारिक घरानों के प्रमुखों का परिचय अपने बेटे और बहू से कराया, जो हमेशा इन अवसरों पर उपस्थित रहते थे।

अरुणा शुरू से ही एक औसत छात्रा थी। वह कक्षा में खूब नोट्स बनाती, पाठों को याद करती और परीक्षा के दौरान उन्हें अपनी उत्तर पुस्तिका पर लिखती थी। स्कूल और कॉलेज में, यहाँ तक कि एमए तक भी, उसके अंक औसत ही रहे। अपने अपार प्रभाव के बावजूद, उसके पिता को अरुणा के लिए ऐसी नौकरी दिलाना मुश्किल लग रहा था जिससे उसका भविष्य सुरक्षित हो सके। अगर उसके भाई चाहते तो उसे अपनी कंपनी में रख सकते थे, लेकिन वह कंप्यूटर सॉफ्टवेयर कंपनी चलाते थे और अरुणा ने मानविकी में स्नातक की उपाधि प्राप्त की थी। फिर बबीता भी थीं, जो कंपनी में भागीदार थीं। उन्होंने परिवार के किसी भी सदस्य को कंपनी में किसी भी पद पर रखने से इनकार कर दिया। अंत में, प्रोफेसर ने किसी तरह उसे एक जर्जर कॉलेज में लेक्चरर की नौकरी दिलवा दी। उसे पूरी तनख्वाह तो नहीं मिलती थी, लेकिन नौकरी मिल गई थी। उसे अपना जीवनसाथी चुनने की पूरी आजादी थी, लेकिन उसने ऐसा भी नहीं किया। पूरी तरह अंतर्मुखी होने के कारण, उसने अपने जीवन को जैसा था वैसा ही स्वीकार कर लिया था। उसकी उम्र को देखते हुए प्रोफेसर शास्त्री को उसके लिए वर ढूंढना पड़ा। उन्होंने अपने दोस्तों, जान-पहचान वालों और अनुयायियों से बात की और हर जगह प्रचार किया, लेकिन कुछ भी सफल नहीं हुआ। अपने सर्वधर्म समभाव और खुलेपन के बावजूद, बैंगलोर का समाज सतही विकास से कुछ ही कदम आगे बढ़ पाया था। भावी दूल्हों के परिवारों ने कुछ चौंकाने वाली बातें देखीं: एक ब्रिटिश कैथोलिक माँ और त्योहारों और विशेष अवसरों पर रीति-रिवाजों को मनाने की भारतीय परंपराओं का पूर्ण अभाव। प्रोफेसर शास्त्री ने अपनी सहपाठी से शादी के समय वादा किया था कि वे उसके धार्मिक विश्वासों में दखल नहीं देंगे और उन्होंने अपना वादा निभाया। उन्होंने धर्म का त्याग कर दिया था और किसी भी तरह से, इससे उन्हें कोई फर्क नहीं पड़ता था। उनकी धर्मनिष्ठ कैथोलिक पत्नी हर रविवार को अपने

दोनों बच्चों को चर्च ले जाना अनिवार्य समझती थीं। हाई स्कूल के बाद, दिगंथ को यह विश्वास हो गया कि बच्चों को अपने पिता के धर्म का पालन करना चाहिए। इंजीनियरिंग की पढ़ाई के दौरान, उन्होंने जाना कि उनके पिता एक कट्टर मार्क्सवादी थे और उन्हें मार्क्सवाद का अच्छा-खासा अर्थ पता था। अमेरिका में अपने अनुभव के आधार पर उन्होंने यह निष्कर्ष निकाला कि धर्म विश्वासों, प्रथाओं और परंपराओं का एक समूह है जो अनगिनत सदियों में विकसित हुआ है और ये अलग-अलग जातियों के लिए अलग-अलग होते हैं। आईआईटी दिल्ली से स्नातक की उपाधि प्राप्त बबीता दिवाली, भांगड़ा और कुछ महत्वपूर्ण व्रतों से अपनी धार्मिक आवश्यकताओं की पूर्ति में संतुष्ट थी। दिगंथ ने पंजाबी दूल्हे की तरह शादी करने का फैसला किया। उसने एक भव्य शेरवानी पहनी, घोड़े पर सवार हुआ, बारात का नेतृत्व किया और आधी रात को विवाह से पहले पवित्र अग्नि के समक्ष बैठा। प्रोफेसर, उनकी पत्नी और अरुणा ने शादी में भाग लिया और दंपति को आशीर्वाद दिया।

अरुणा हमेशा अपनी माँ की लाडली थी। दिगांथ के दस साल बाद जन्मी इस बच्ची पर उसकी माँ ने विशेष स्नेह बरसाया। वह अपनी बच्ची को पल भर के लिए भी अपनी नज़रों से ओझल नहीं होने देती थी और अरुणा हमेशा अपनी माँ से चिपकी रहती थी। जहाँ तक उसे याद है, उसकी माँ ने यीशु को उसके जीवन का सर्वव्यापी हिस्सा बना दिया था। अरुणा सबसे सामान्य काम शुरू करने से पहले भी उनका नाम लेती थी। वह उचित अवसरों पर क्रॉस का चिन्ह बनाती थी। उसके गले में क्रॉस पर लटके हुए यीशु की माला उसके शरीर का एक हिस्सा थी। वह पूरे विश्वास के साथ यीशु से प्रार्थना करती थी कि वे उसे पाप से मुक्ति दिलाएँ। जहाँ तक उसे याद है, इन अट्ठाईस वर्षों में उसने कभी भी रविवार की प्रार्थना सभा नहीं छोड़ी थी। हाई स्कूल में, उसकी सभी सहपाठियाँ माथे पर बिंदी लगाती थीं। एक दिन, उसने एक लड़की से बिंदी उधार ली और लगा ली। घर लौटने पर उसकी माँ की नज़रें और उनके लहजे को वह कभी नहीं भूली, जब उन्होंने कहा: 'प्यारी, क्या तुम्हें सच में इस मूर्तिपूजक चिन्ह को लगाने की ज़रूरत है?' अगर आपको माथे पर कुछ पहनना पसंद है, तो क्रॉस का चिन्ह पहनें।' अरुणा ने इसे आज़माने का फैसला किया, लेकिन किसी भी दुकान पर क्रॉस के आकार की बिंदी नहीं मिलती थी। अगर बन भी जाती, तो उसे पहनकर वह हास्यास्पद लगती। महिलाएं या तो पारंपरिक बिंदी लगाती थीं या फिर

उनका माथा सादा रहता था। उसने अपना माथा बिना किसी सजावट के छोड़ने का फैसला किया। इस घटना ने उसके मन में पहली बार उलझन पैदा कर दी।

उनका नाम अरुणा शास्त्री था, लेकिन उनका रूप-रंग लगभग यूरोपीय जैसा था। वह कैथोलिक ईसाई थीं। कुछ तो गड़बड़ थी और उन्हें समझ नहीं आ रहा था कि जवाब कहाँ ढूँढ़ें। यह बात उन्हें कॉलेज के दिनों में लगातार परेशान करती रही। हर साल स्कूल, कॉलेज और कारखाने गौरी और गणेश जैसे प्रमुख त्योहारों के लिए छुट्टी घोषित करते थे। गणेश उत्सव विशेष रूप से भव्य होता था। पूरा शहर उत्सव में डूब जाता था। हर घर में भगवान गणेश की फूलों, फलों, मिठाइयों और पकवानों से भव्य पूजा-अर्चना की जाती थी, और वहाँ एक ऐसा उत्साह होता था जिसकी अरुणा को अपने घर में कमी महसूस होती थी। उनका घर सूना और बेजान लगता था। उनके पिता को अक्सर उनके दोस्तों द्वारा पूजा भोज में आमंत्रित किया जाता था, लेकिन उन्होंने कभी उनकी माँ से अपने घर में पूजा करने के लिए नहीं कहा। वह जानती थीं कि अगर वह उनसे कहें भी तो उनकी माँ इसके लिए राज़ी नहीं होंगी। इससे उन्हें वह दिन याद आया जब उन्हें दक्षिणी के घर शाम की आरती के लिए आमंत्रित किया गया था। उन्होंने अपनी माँ को नहीं बताया कि वह कहाँ जा रही हैं। जब वह वहाँ पहुँचीं, तो गणेश और उनकी माता गौरी की कथा सुनाई जा रही थी। बैठक कक्ष में जो कुछ उसने देखा, उसके लिए वह बिलकुल भी तैयार नहीं थी। बैठक कक्ष के बीचोंबीच स्थित विशाल चबूतरे को दोनों ओर केले के लंबे पौधों, चमकदार हरे आम के पत्तों के गुच्छों, रंग-बिरंगे फूलों और अनार, अमरूद, सेब और शक्कर से सजाया गया था। चबूतरे के ऊपरी पायदान पर देवी गौरी की मूर्ति और निचले पायदान पर गणेश जी की मूर्ति विराजमान थी। पूरा दृश्य, विशेष रूप से खूबसूरती से सजे हुए माता-पुत्र की जोड़ी, उसे एक ऐसे गहन भाव से भर गया जिसका अनुभव उसने पहले कभी नहीं किया था। उसका ध्यान पुजारी द्वारा सुनाई जा रही कथा की ओर गया: 'गणेश को जन्म देने के बाद गौरी अपने स्वास्थ्य लाभ के लिए अपनी मां के घर आई हैं। उन्हें यहां पांच दिन रहना होगा, इस दौरान उनकी और उनके बच्चे दोनों की पूजा की जाएगी। उनके सम्मान में प्रतिदिन भव्य भोज का आयोजन किया जाएगा। छठे दिन, मां अपने बेटे के साथ एक भावुक विदाई के बाद अपने पति के घर लौट जाएंगी।'

यह कहानी अरुणा के दिल को छू गई। मानो गौरी और गणेश उसके परिवार का हिस्सा हों। आरती के बाद अरुणा को एक अलग कमरे में ले जाया गया और उसे

विशेष मिठाई खिलाई गई, जो दिन में पहले पूजा के दौरान गौरी और गणेश को अर्पित की गई थी। वह अचानक क्रोधित हो गई। उसकी माँ ने यह सब क्यों नहीं किया? घर में तो कभी ऐसा कुछ नहीं बनता था... इससे उसे एक और अवसर की याद आ गई। पद्मलता के घर में उसे कृष्ण जन्माष्टमी मनाने के लिए आमंत्रित किया गया था। यह हर साल भगवान कृष्ण के जन्मदिन का उत्सव माना जाता था। छोटे-छोटे वस्त्रों में लिपटे, सजे-धजे पालने में सोते हुए शिशु कृष्ण को देखकर वह तुरंत उनसे मोहित हो गई। सजावट सरल थी। लगभग सादी। लेकिन उस आरामदायक वातावरण से निकलने वाले प्रेम को महसूस किया जा सकता था। मानो पालने में लेटा शिशु कृष्ण घर का असली बच्चा हो, जिस पर उन्होंने अपना सारा प्रेम उंडेल दिया हो और उस प्रेम को अपने मित्रों, रिश्तेदारों और पड़ोसियों के साथ उस भव्य भोज में आमंत्रित करके साझा किया हो जो उन्होंने इस अवसर पर तैयार किया था। वह कृष्ण के बारे में थोड़ा बहुत जानती थी। वह चतुर रणनीतिकार थे जिन्होंने पांडवों को महाभारत युद्ध में जीत दिलाने में मदद की थी। हिंदू उन्हें भगवान का अवतार मानकर पूजते थे। यह कृष्ण का एक रूप था। दूसरा रूप वह था जो चर्च के पादरी ने उन्हें बताया था—कि वे झूठे, चोर और व्यभिचारी थे और ऐसा धर्म जो ऐसे व्यक्ति को भगवान मानता है...यह किस तरह का धर्म है...और ये हिंदू किस तरह के लोग हैं जो ऐसे देवता की पूजा करते हैं? यह बात उनके अनुभव से मेल नहीं खाती थी। पद्मलता बहुत अच्छी लड़की थी। उनके पिता सरकारी अस्पताल में एक जाने-माने सर्जन थे। वे रिश्वत नहीं लेते थे और अस्पताल में अपना काम पूरा करने के बाद हर रात देर से घर लौटते थे। उनका कोई निजी क्लिनिक नहीं था, जिससे उनकी कुशलता और अनुभव को देखते हुए उन्हें कम से कम 10 लाख रुपये प्रति माह की आय होती। वे एफआरसीएस थे और उन्होंने पांच साल तक संयुक्त राज्य अमेरिका में प्रैक्टिस की थी। वे गरीब मरीजों का मुफ्त इलाज करते थे—यह एक ऐसा आदर्श था जिसका उन्होंने जीवन भर पालन किया। उन्होंने अपने आसपास के लोगों का विश्वास और सम्मान अर्जित किया था। जब वह आसपास होता तो सब खड़े होकर उसे प्रणाम करते—यह आदमी कृष्ण को भगवान मानता था। अरुणा को लगा कि हिंदू अजीबोगरीब देवताओं की पूजा करते हैं। वैसे भी, उनके पास स्त्री देवता भी हैं... तो स्त्री देवता कैसे हो सकती है? वह अकेली नहीं थी; उसकी माँ भी यही सवाल पूछती

थी—भगवान तो पुरुष हैं। और पादरी... खैर, वह तो इस बात पर उपदेश देने लगता कि हिंदू भगवान को अपने बच्चे की तरह मानकर घोर अपवित्रता कर रहे हैं।

अंततः, इन सब बातों से उसका भ्रम दूर नहीं हुआ। और न ही वह अपनी माँ से इस भ्रम के बारे में बात कर सकती थी। माँ जानती थी कि उसका क्या होगा: 'बेटी, ये सवाल क्यों पूछ रही हो? लगता है यीशु में तुम्हारा विश्वास कमज़ोर हो गया है। तुम जानती हो ना इसका क्या मतलब है? तुम एक ऐसे भयानक नरक में गिरोगी जिसका वर्णन शब्दों में नहीं किया जा सकता।' और उसकी गहरी नीली आँखों में उस नरक की एक झलक दिखाई देगी।

वह अपने पिता से पूछना चाहती थी। वह जानती थी कि इन मामलों में उन्हें एक तरह का विशेषज्ञ माना जाता था। उसे याद नहीं था कि कोई दिन ऐसा बीता हो जब वे बिना माला, मिठाई, फल या शॉल के घर लौटे हों। अखबार और टीवी पर उनके भाषणों की खबरें नियमित रूप से आती थीं। उसे यकीन था कि उनके पास जवाब होगा, लेकिन उसकी माँ ने बहुत पहले ही मना कर दिया था: 'अपनी मार्क्सवादी विचारधारा को घर के बाहर ही रखो। मुझे तुम्हारी ज़रूरत नहीं है कि तुम मेरा या मेरी बेटी का विश्वास तोड़ो।' इस पर उनका जवाब था: 'ज़रूर, प्यारी। जो तुम कहो। ईश्वर तुम दोनों को आशीर्वाद दें।' इससे उसकी शंका और पुख्ता हो गई - पिताजी माँ से डरते थे। इसके अलावा, वे घर में काफी अलग-थलग रहते थे। उन्होंने कभी भी उससे थोड़ी भी आत्मीयता से बात नहीं की थी। उनका स्नेह बनावटी था। और घर के बाहर उनका जीवन इतना व्यस्त था कि उनके पास अपनी बेटी से मिलने का समय ही नहीं था।

एक और वजह थी जिसके कारण उसके पिता उसकी माँ से डरते थे। वह अपने पिता की महिला छात्राओं और प्रशंसकों के साथ अनावश्यक रूप से शारीरिक स्नेह प्रदर्शन करने की आदत से भली-भांति परिचित थी और वह इस पर अपनी नाराज़गी खुलकर ज़ाहिर करती थी। अरुणा को एक बेहद भयंकर झगड़ा याद है जो तब हुआ था जब वह काफी छोटी थी। उसकी माँ के उग्र स्वभाव और स्थिति की अप्रियता ने उसे थोड़ा डर और शर्मिंदगी महसूस करते हुए अपने कमरे में जाने के लिए मजबूर कर दिया था। अपनी माँ के तीखे शब्दों के जवाब में, उसके पिता ने साहसपूर्वक लेकिन कमज़ोर ढंग से कहा था, 'तुम इस सब पर इतना हंगामा क्यों कर रही हो?

इतनी दकियानूसी मत बनो! तुम इंग्लैंड से हो! ऐसा तो नहीं है कि तुम्हें दोस्तों के बीच गले लगने या चुंबन करने से शर्म आती हो।'

लेकिन ये भारत है। और वहाँ भी कोई तुम्हारे जैसे व्यवहार को बर्दाश्त नहीं करता —वहाँ कोई पुरुष किसी महिला को गले नहीं लगाता, उसके कंधे पर हाथ नहीं रखता या बेवजह दूसरों को, विशेषकर महिलाओं को, नहीं छूता! मुझे पता है कि तुम ये सब क्या कर रहे हो... छूना... घिनौना!

'औरत! तेरा नाम ही संदेह है!' उसने चौड़ी मुस्कान के साथ किसी तरह कहा और उसे गले लगा लिया।

एक और मौके पर—वह रविवार का दिन था—उसने अपनी माँ को एंग्लो-इंडियन महिला, श्रीमती रॉबसन से यह कहते हुए सुना, 'अगर यह इंग्लैंड होता, तो मैं इस आदमी को कई साल पहले ही छोड़ देती। मैं कैथोलिक हूँ, इसलिए तलाक का तो सवाल ही नहीं उठता। और अब मैं इंग्लैंड से पूरी तरह कट चुकी हूँ। मुझे लगता है कि मुझे यहाँ कष्ट सहना पड़ेगा।'

अरुणा ने अंततः ईश्वर, आस्था और धर्म के विषय में अपनी माँ की सलाह को स्वीकार करके अपनी उलझन को दूर करने का निर्णय लिया। यदि उसकी जिज्ञासा पर्याप्त थी, तो उत्तर खोजने के सैकड़ों स्थान थे—उसे किताबें पढ़ने, अपने शिक्षकों से बात करने या रामकृष्ण मिशन जैसे किसी स्थान पर जाने का विचार ही नहीं आया।

~

एक दिन सुबह 10 बजे, लक्ष्मी शिवाजीनगर के होटल शरीफ महल के बाहर ऑटो रिक्शा का इंतजार कर रही थी। तभी एक कार अचानक रुकी, कुछ मीटर की दूरी पर। कार रुकी और फिर धीरे-धीरे पीछे हटते हुए उसके सामने आकर रुक गई। कार की बाईं खिड़की नीचे हुई और चेहरा देखने से पहले ही उसे आवाज सुनाई दी। ड्राइवर की सीट पर प्रोफेसर शास्त्री बैठे थे।

'लक्ष्मी? तुम्हें देखो! मैं तुम्हें पहचान ही नहीं पा रहा था। लेकिन मैं अपनी लड़की को कैसे नहीं पहचान सकता? अंदर आ जाओ। तुम यहाँ बाहर क्या कर रही हो...' उसने बाहर देखा और फिर ऊपर, 'होटल शरीफ?' जैसे ही वह अंदर आई और उसके बगल में बैठ गई, उसने खिड़की ऊपर कर दी। उसकी कार बेहद आलीशान थी। शीशे टिंटेड थे।

मैंने सुना है कि आप गांव में ही बस गए हैं। दिनभर पढ़ने के अलावा आप और क्या करते हैं? आपने बैंगलोर क्यों छोड़ा?

'क्या आप मुझे बस स्टैंड तक छोड़ सकते हैं? मुझे कुनिगल जाना है।'

'मुझे पता है। मैं तुम्हें छोड़ दूँगा। लेकिन तुम ऐसे ही नहीं जा सकते। हम चार साल बाद मिले हैं! पहले कहीं चलते हैं। कितनी सारी बातें करनी हैं और हालचाल पूछना है। इस शहर में लोगों के लिए अकेले में समय बिताने की कोई जगह ही नहीं है। क्या हम कब्बन पार्क चलें?'

उसने सिर हिलाया।

'शाबाश!' उसने कहा और अपना बायां हाथ उसके कंधे पर रखकर अपनी खुशी जाहिर की।

'एक हाथ से गाड़ी चलाना असुरक्षित है, सर, आप जानते ही हैं बैंगलोर का ट्रैफिक...' उनके लहजे में झुंझलाहट साफ झलक रही थी।

"अरे! मुझे बताओ कि तुम इस खबर से डर गई हो: "प्रसिद्ध कलाकार रजिया प्रोफेसर शास्त्री के साथ कार दुर्घटना में मृत पाई गईं!"" वह हँसा और उसका कंधा दबाते हुए उसकी ओर तिरछी नज़र से देखा। उसे समझ नहीं आया कि क्या कहे।

"पर देखो तो सही, मेरी प्यारी! तुमने अपने बालों को रंगा नहीं है; तुम्हारा चेहरा देखकर लगता है मानो तुमने सालों से किसी तरह की देखभाल नहीं की हो। मुझे पता है तुम हमारे गाँव में रह रही हो, लेकिन इसका मतलब यह नहीं कि तुम्हें खुद को संवारना नहीं चाहिए। कम से कम एक क्रीम ही क्यों नहीं लगा लेती? किसी को भी जीवन का आनंद लेने से वंचित नहीं रहना चाहिए। मुझे देखो।"

गाड़ी में बैठते ही उसने उसे देख लिया था। वह बिल्कुल वैसा ही था। उसने जानबूझकर एक समझदार, अधेड़ उम्र के बुद्धिजीवी का रूप धारण कर रखा था। उसके बाल पूरी तरह काले रंगे हुए थे, बस कान के ठीक ऊपर कुछ भूरे बाल बिखरे हुए थे। उसकी काली समाजवादी दाढ़ी में जगह-जगह भूरे-सफेद बाल बिखरे हुए थे। रंगमंच और फिल्मों में वर्षों के अनुभव से उसे पता चला कि वह अक्सर किसी ब्यूटी सैलून को खूब पैसा कमा कर देता था। अचानक उसे उस पर दया आ गई।

'आपके बच्चे क्या कर रहे हैं, महोदय? मुझे पता है कि आपके बेटे की अपनी कंप्यूटर कंपनी है। मुझे लगता है कि उसकी शादी हो चुकी है? क्या कोई पोते-पोती हैं? आपकी बेटी क्या करती है?'

वह ये सवाल क्यों पूछ रही थी? क्या ये उसकी उम्र की ओर इशारा करने का तरीका था? आह! लेकिन वो तो इतना बूढ़ा नहीं था। वैसे भी, उसे इसकी परवाह नहीं थी। उसने हिम्मत जुटाई और अपनी बेचैनी छुपाते हुए लहजे में कहा, 'मेरा बेटा और उसकी पत्नी अपनी कंपनी बनाने में व्यस्त हैं। वे लगभग कुछ और नहीं करते। मेरा पोता चार साल का है। मेरी बहू दूसरा बच्चा नहीं चाहती। उसका कहना है कि काम के दबाव में बच्चे की सही परवरिश करना मुश्किल है। भगवान जाने अगर और औरतें उसकी तरह सोचने लगें, तो शायद एक दिन ऐसा आएगा जब मानव जाति इस धरती से विलुप्त हो जाएगी...' लक्ष्मी ने अचानक उसे रोकते हुए कहा, 'इसका मतलब है कि आप एक और पोता-पोती चाहते हैं!'

नहीं नहीं नहीं! मैं अपने बारे में बात नहीं कर रहा हूँ—आप जानते हैं कि मैं कभी अपने बारे में नहीं सोचता। हममें से ज़्यादातर लोग अपने बारे में सोचते हैं, लेकिन मेरा हमेशा से मानना रहा है कि आपके विचार तभी मूल्यवान होते हैं जब वे सार्वभौमिक सत्यों पर केंद्रित हों।' उसने देखा कि गाड़ी चलाते समय भी उसकी आँखें उसी भविष्यसूचक चमक से जगमगा रही थीं, जो उसने पहले भी कई बार देखी थी। उसके दोनों हाथ अब स्टीयरिंग व्हील पर थे।

'आपकी बेटी के बारे में क्या?'

सच कहूँ तो, मुझे उसकी चिंता है। वह एक लेक्चरर है। मैंने उसे बार-बार कहा है कि उसे अपने लिए पति चुनने की पूरी आज़ादी है। चार साल बीत गए हैं। वह अभी भी अविवाहित है। मुझे लगता है कि इस देश में ज़्यादातर लोग अपने जीवनसाथी को चुनने में सक्षम नहीं हैं। हमारे समाज को बेहतर बदलाव के लिए लंबा संघर्ष करना पड़ेगा। आजकल के लड़के अभी भी पुरानी परंपराओं से चिपके हुए हैं। मैंने रिश्ता जोड़ने की कोशिश भी की, लेकिन आप जानते ही हैं समस्या...' पार्क पहुँचते ही उसने अपनी बात अधूरी छोड़ दी।

वह पार्क में एक बेंच पर उसके बगल में बैठ गया। 'तुम्हें याद है कैसे नेताओं ने इस खूबसूरत जगह को नष्ट करने की एक बड़ी साजिश रची थी? मैंने 'सेव कुब्बन पार्क' आंदोलन शुरू किया था... तुम्हें याद है उस पर लोगों का जबरदस्त समर्थन मिला था? आखिरकार मैं इसे बचाने में कामयाब रहा। वरना हम आज यहां नहीं बैठे होते। तुम्हें पता है, सरकार मुझसे नफरत करती है लेकिन मुझसे डरती भी है।'

उसकी बातें उसे समझ नहीं आईं। वह पहले से ही किसी सोच में डूबी हुई थी।

‘...मुझे ऐसी जगहों पर समय बिताना बहुत अच्छा लगता है। यह कमाल की बात है कि आपका मन कैसे प्रेरित होता है! मुझे लगता है कि इसीलिए लोग कहते हैं कि पार्क शहरवासियों के अंतर्मन की जगह होते हैं... अरे! आप क्या सोच रहे हैं?’

‘आपकी बेटी की उम्र कितनी है? नाम?’

मुझे अब दुख हो रहा है। तुम भूल गई हो। अरुणा। अट्ठाईस।'

'माफ़ कीजिए, महोदय। अब मुझे याद आया। वह बहुत गोरी है, बिल्कुल यूरोपीय जैसी। है ना?'

‘वह अपनी नानी से मिलती-जुलती है। मैंने उस महिला को देखा है। वह बेहद खूबसूरत थी। क्यों? क्या आप किसी मिलती-जुलती महिला को जानते हैं?’

मैं अपने बेटे के लिए एक जीवनसाथी ढूंढ रही हूँ। वह बत्तीस साल का है। उसने टेक्सास विश्वविद्यालय से पेट्रोकेमिकल इंजीनियरिंग में एमएस किया है। वह अभी सऊदी अरब में काम करता है और अच्छी खासी तनख्वाह कमाता है। वह आजकल अपनी छुट्टियाँ यहीं बिता रहा है। मेरा आमिर से कोई संपर्क नहीं है। मुझे लगता है कि आप जानते ही होंगे कि उसने दोबारा शादी कर ली है। इससे मेरे बेटे की शादी की संभावनाओं पर भी असर पड़ रहा है।

'ओह? तो यह सच है। मुझे खेद है। मैंने खबर सुनी थी लेकिन मुझे नहीं पता था कि यह सच है। अगर मुझे पहले पता होता, तो मैं उसे नहीं छोड़ता! लेकिन आपने मुझे क्यों नहीं बताया?'

मुझे इसके बारे में काफी देर से पता चला। खैर, अभी इसके बारे में बात नहीं करते। मैं बस यही चाहती हूं कि नाज़िर की शादी जल्द से जल्द हो जाए।

मुझे पूरा यकीन है कि वह एक सुंदर युवक है। वह आपका बेटा है।

उसने अपने पर्स से एक तस्वीर निकाली और प्रोफेसर को दे दी। देखते ही प्रोफेसर ने अपनी भौंहें ऊपर उठाईं, आंखें चौड़ी कीं और खुशी से कहा, 'ये तो बिल्कुल एक पक्के समाजवादी बुद्धिजीवी लगते हैं!'

नहीं। यह इस्लामी दाढ़ी है। बिल्कुल सऊदी।

लेकिन आप जानते हैं कि इस्लाम और समाजवाद में कोई मूलभूत अंतर नहीं है। दोनों ही 'जो खाते हो उसे साझा करो' के समान सिद्धांत पर आधारित हैं।

और आप घिसी-पिटी पुरानी झूठी बातें दोहरा रहे हैं। इस्लामी समाज की मूलभूत विशेषता स्वामी और दास के बीच स्पष्ट अंतर है। आप अपने भाषणों में वैदिक श्लोक

'ईशवास्यमिदं सर्वं यत् किंच जगत्यां जगत्; तेन त्यक्तेन भुंजीता मा ग्रुधः कस्य स्विद्धनाम्' (इस परिवर्तनशील ब्रह्मांड में जो कुछ भी विद्यमान है, वह भगवान के निवास के लिए विद्यमान है। इसलिए त्याग द्वारा स्वयं की रक्षा करो। किसी मनुष्य के धन का लोभ न करो) का अविश्वसनीय संदर्भों में प्रयोग करते हैं। वह इस प्रोफेसर के साथ बहस नहीं करना चाहती थी, इसलिए उसने कुछ नहीं कहा।

उसने भौंहें चढ़ाते हुए कहा, 'लेकिन तुमने यह पुरानी साड़ी क्यों पहनी है? तुमने कहा था कि वह बहुत पैसा कमाता है।'

मेरे पास खुद के लिए दर्जनों नई साड़ियां खरीदने के लिए पर्याप्त पैसे हैं। मुझे इसमें कोई दिलचस्पी नहीं है।'

'बहुत खूब! आप सही कह रहे हैं। अपने बच्चों से कभी पैसे मत लो। यही मेरा भी सिद्धांत है। आमिर के बारे में क्या?'

'मुझे नहीं पता, लेकिन उसे जानने के नाते मुझे नहीं लगता कि वह अपने बेटे से पैसे लेता है। उसने मुझे सीधे तौर पर नहीं बताया है, लेकिन मुझे पता है कि नाज़िर होटल शरीफ महल में रुका हुआ है क्योंकि उसे अपनी सौतेली माँ के साथ एक ही घर में रहने में शर्म आती है, जो उससे छोटी है।' अचानक उसे समझ आया कि उसने यह खास सवाल क्यों पूछा था। वह यह पता लगाने की कोशिश कर रहा था कि क्या उसके माता-पिता की बुढ़ापे में देखभाल की ज़िम्मेदारी नाज़िर पर पड़ेगी। उस ज़िम्मेदारी में पैसे खर्च करना भी शामिल होगा।

'मैं बहुत उदार हूं: आप जानते हैं कि मैं धर्म में विश्वास नहीं करती... मेरा जीवन ही मेरे विश्वासों का जीता-जागता उदाहरण है। चालीस साल पहले, मैंने एक विदेशी, एक ईसाई से शादी की थी। अरुणा किसी से भी शादी करने के लिए स्वतंत्र है। लड़के का धर्म मेरे लिए सबसे कम मायने रखता है, लेकिन मुझे लगता है कि अगर वह किसी भारतीय से शादी करे तो अच्छा होगा। कम से कम, उनमें संस्कृति और परंपरा की साझा भावना तो होगी। एलिजाबेथ चाहती है कि उसकी शादी एक कैथोलिक से हो, लेकिन मुझे पता है कि अगर... अन्य परिस्थितियाँ अनुकूल हों तो वह हाँ कह देगी। पहले उन्हें एक-दूसरे को देखने दो।'

भावी दूल्हा-दुल्हन प्रोफेसर के घर पर मिले और शादी करने के लिए राजी हो गए। अरुणा ने कहा कि उसे कोई उम्मीद नहीं थी और उसने हैरानी से नाज़िर की शर्तें मान लीं: शादी से पहले इस्लाम धर्म अपनाना, इस्लामी रीति-रिवाजों के अनुसार

शादी करना और शादी के बाद एक नेक मुस्लिम पत्नी की तरह जीवन जीना। हालांकि, उसकी मां ने इस पर आपत्ति जताई।

उसने आक्रोश से पूछा, 'क्या तुम भूल गए हो कि यीशु को त्यागने का अर्थ है जलती हुई नरक की आग में शाश्वत दंड?'

'मैं एक नबी को छोड़कर दूसरे नबी को अपना रही हूँ। अगर वो नबी मुझे सज़ा देने आए, तो ये नबी मेरी रक्षा करेगा। वैसे भी, अंतिम नबी मोहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) तुम्हारे ईसा मसीह से कहीं ज़्यादा शक्तिशाली हैं। उन्होंने कितनी लड़ाइयाँ जीतीं, कितने देश जीते और देखो उन्होंने दुनिया में इस्लाम का कितना प्रसार किया! तुम्हारे ईसा मसीह में क्या शक्ति है, एक नबी जिसने अपने अनुयायियों को दूसरा गाल आगे करने को कहा? उनमें इतनी शक्ति है कि न तो वे खुद पर हमला कर सकते हैं और न ही हमला करने वालों से अपना बचाव कर सकते हैं!' अरुणा ने उस लहजे में जवाब दिया जिसकी उसकी माँ ने कभी कल्पना भी नहीं की थी कि वो अपनी बेटी से सुनेगी।

प्रोफेसर ने कहा, 'मुझे कोई आपत्ति नहीं है। उसे इस्लाम धर्म अपना लेने दीजिए। लेकिन आपको नागरिक विवाह करना होगा।'

'चाचा जी, अगर सऊदी अरब को पता चल गया कि मैंने एक गैर-मुस्लिम से शादी कर ली है, तो अगली बार जब मेरी कंपनी में छंटनी होगी, तो मेरी नौकरी चली जाएगी। मुझे प्रक्रिया पता है। उसे पहले मुस्लिम बनना होगा और फिर हमें एक मौलवी की उपस्थिति में शादी करनी होगी और विवाह प्रमाण पत्र लेना होगा। यह प्रमाण पत्र उसके पासपोर्ट का आधार होगा। उसके विवरण में यह दर्ज होगा कि उसका नाम मुस्लिम है और वह एक मुस्लिम पुरुष की विधिवत मुस्लिम पत्नी है। अन्यथा, उसे वीज़ा नहीं मिलेगा। लेकिन चाचा जी, आप ही बताइए, नागरिक विवाह का क्या फायदा? मेरा मतलब है, हमें इसकी ज़रूरत ही क्यों है?'

प्रोफेसर शास्त्री ने बेहद आत्मीयता से भरे हंसमुख स्वर में उत्तर दिया, उनकी शारीरिक मुद्रा भी उसी आत्मीयता को व्यक्त कर रही थी, "मेरे बेटे, मैं तुम्हें एक बात खुलकर बता दूं। मैंने तुम्हारे माता-पिता की शादी में मदद की थी। मैंने तुम्हारी मां को इस्लाम धर्म अपनाने के लिए प्रोत्साहित किया था। और अब, तुम्हारे पिता ने दोबारा शादी कर ली है जबकि तुम्हारी मां अभी भी उनकी पत्नी हैं। नागरिक विवाह से यह सब रोका जा सकता था। मुझे यकीन है कि हमारी सभी मंशाएं नेक हैं, लेकिन भविष्य

का अनुमान नहीं लगाया जा सकता। मनुष्य का मन चंचल होता है। यह किसी भी दिशा में मुड़ सकता है। उसके पिता के रूप में, मुझे अतिरिक्त सावधानी बरतनी चाहिए। तुम सहमत हो ना?'

'मुझे नहीं पता मेरे माता-पिता के बीच क्या समस्या है। मैं अपनी माँ से बहुत प्यार करता हूँ। लेकिन चाचा जी, क्या आपको नहीं दिखता कि मेरे पिता ने उन्हें तलाक नहीं दिया है? क्या यह अच्छी बात नहीं है? इसके अलावा, अपने माता-पिता के रिश्ते पर टिप्पणी करना असभ्य व्यवहार है। आप सहमत हैं ना, चाचा जी?' नाज़िर ने लगभग प्रोफेसर के लहजे में कहा।

'क्या आपको किसी और देश में नौकरी नहीं मिल सकती?'

"यह बात मायने नहीं रखती, चाचा जी। मैं सलमा से प्यार करता हूँ। और जब तक मैं जीवित रहूँगा, उससे उतना ही प्यार करता रहूँगा। मुझ पर भरोसा रखिए। आप एक पुरुष हैं और मुझे पता है कि आप मेरी भावनाओं को समझ सकते हैं। ओह! सलमा आपकी बेटी का नाम है। उसने अपना नाम बदलकर सलमा रखने के लिए सहमति दे दी है।" वह उठा और उसने प्रोफेसर के कंधे पर स्नेहपूर्वक हाथ रखा। इस हावभाव ने होने वाले ससुर को बता दिया कि बहस खत्म हो गई है।

प्रोफेसर शास्त्री ने जाने के बाद अपनी बेटी से बात की।

लेकिन आपको नागरिक विवाह करना होगा। आप अपना निकाह बाद में कर सकती हैं। अगर वह दोबारा शादी करने का फैसला करता है तो यह एक प्रभावी कानूनी बाधा होगी।

'पापा, आपसी विश्वास हर शादी की बुनियाद है। आपसी विश्वास के बिना शादी कैसे संभव है? अगर मैं अभी उस पर शक करूंगी, तो हो सकता है वो शादी तोड़ दे।'

'उसे करने दो। मैं तुम्हारे लिए कोई और दूल्हा ढूंढ लूंगी।'

'पापा, चिंता मत कीजिए। मुझे नाज़िर पर पूरा भरोसा है। और कृपया ऐसा कुछ मत कहिए जिससे उसकी भावनाओं को ठेस पहुंचे। वैसे भी, परंपरा के अनुसार पत्नी को पति का धर्म अपनाना पड़ता है,' उसने दृढ़ता से कहा।

प्रोफेसर दंग रह गए। महज़ एक हफ़्ता ही बीता था और वो नाज़िर से इतनी गहराई से जुड़ गई थी! क्या यही सच्चे प्रेम का अर्थ था? उनके मन में एलिज़ाबेथ के लिए उनके शुरुआती दिनों की भावनाएँ ताज़ा हो गईं। कुछ ज़्यादा अलग नहीं थीं। लेकिन वो ये समझ नहीं पाए थे कि एक जोड़े के रूप में वे कितने असंगत थे। लेकिन

उनकी बेटी का व्यवहार उलझन भरा था। ऐसे समय में जब दुनिया भर की शिक्षित महिलाएँ मुस्लिम पुरुषों के एकतरफ़ा अधिकार की आलोचना कर रही थीं, उनकी बेटी अरुणा जानबूझकर जोखिम उठा रही थी। वो बहुत बुद्धिमान तो नहीं थी, लेकिन पूरी तरह मूर्ख भी नहीं थी। उसने काफ़ी पढ़ाई की थी और इन बातों से अनजान भी नहीं थी। तभी उन्हें समझ आया। वो यौन रूप से दमित थी। वो अट्ठाईस साल की थी। इसका मतलब था कि ये दमन कम से कम दस से बारह साल पुराना था। साथ ही, उसकी कैथोलिक माँ ने उसे सख्ती से पाला-पोसा था। और ये भारत था, पश्चिम के विपरीत, जहाँ सोलह साल की उम्र के बाद युवाओं को यौन संबंध बनाने की सामाजिक स्वीकृति थी। बच्चों को गर्भनिरोधक और सुरक्षित यौन संबंध बनाने की आवश्यकता के बारे में सिखाया जाता था। इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं कि वह तुरंत लंबे, बलवान नाज़िर पर मोहित हो गई और उसकी सारी शर्तें आँख बंद करके मान लीं। उसने क्या कहा? आह! परंपरा कहती है कि पत्नी को पति का धर्म अपनाना पड़ता है। उसे पूरा यकीन था कि उसकी सहेलियाँ भी यही मानती हैं कि किसी स्त्री के लिए विवाह के बंधन में अपनी पहचान का बलिदान देना अस्वीकार्य है। धिक्कार है! सेमिनारों में इस तरह की बातें कहने के बाद तो मुझे अनगिनत महिला प्रशंसक मिल चुकी हैं। एक स्त्री तब तक पूरी तरह से स्वतंत्र नहीं होती जब तक वह अपने शरीर से जुड़े बेतुके अंधविश्वासों को त्याग नहीं देती। मेरी अपनी बेटी ऐसी क्यों निकली?

लेकिन प्रोफेसर दृढ़ निश्चयी थे। उन्होंने लक्ष्मी से नाज़िर को समझाने के लिए कहा। लक्ष्मी को यह बात तर्कसंगत लगी और उसने नाज़िर से बात की।

'अम्माजान, विवाह शरीयत के अनुसार होता है। अगर मैं निकाह से पहले नागरिक विवाह कर लेती हूँ, तो इसका मतलब है कि मेरा निकाह सिर्फ नाम का है।'

नहीं। इसका सीधा सा मतलब है कि दोनों विवाह एक दूसरे के पूरक हैं।

"प्लीज़! आप अपने नेक इरादों वाले तर्कों से मुझे मना नहीं सकते। शरिया कानून पुरुष और स्त्री दोनों को पूर्ण न्याय प्रदान करता है। अगर पुरुष शादी के समय ही स्त्री को छोड़ने का फैसला करता है, तो उसे इसके लिए जुर्माना भरना पड़ता है। अगर वह तलाक देता है, तो उसे पत्नी को पहले से तय की गई राशि देनी पड़ती है और उसे वह राशि लेकर अलग होना पड़ता है। शादी एक अनुबंध है, है ना?"

और अगर तुम अपने पिता की तरह किसी दूसरी महिला—या महिलाओं—से शादी कर लो तो क्या होगा?

‘शरीयत में इसकी भी व्यवस्था है। यह पुरुष से कहती है कि वह अपनी सभी पत्नियों के साथ समान व्यवहार करे। लेकिन इस्लाम में मेरा विश्वास डगमगा नहीं सकता—यह गहरा, सच्चा और वास्तविक है, और यह कोई दिखावटी बात नहीं है।’

वह जानती थी कि बात यहीं खत्म हो गई। और उसने एक पल के लिए खुद को कोसा। उसकी आदर्श जीवनसाथी ऐसे परिवार से होनी चाहिए थी जो उसकी तरह ही कठोर और अतार्किक रूढ़िवादिता रखता हो, लेकिन वह चाहती थी कि वह एक पढ़ी-लिखी लड़की से शादी करे। अरुणा ने आँख बंद करके उसकी सारी शर्तें मान ली थीं, लेकिन क्या वह वाकई इसके पूरे परिणाम समझ पाई थी? उसे यकीन नहीं था कि प्रोफेसर ने उसे ये परिणाम समझाए थे या नहीं। उसे इस बात का बुरा लग रहा था। अरुणा उसकी बेटी नहीं थी, लेकिन किसी भी बेटी को दुख पहुँचाना ठीक नहीं था। उसने प्रोफेसर को फोन किया और नाज़िर के साथ हुई अपनी बातचीत के बारे में बताया।

‘महोदय, मैं अपने बेटे की अरुणा से शादी की संभावनाओं को खराब नहीं करना चाहता, लेकिन यह मामला गंभीर है। इसे हम दोनों के बीच ही रहने दीजिए। मुझे आपसे एक रूढ़िवादी मुस्लिम पुरुष से शादी करने के सभी परिणामों को समझाने की आवश्यकता है। मुझे आपसे उसे नागरिक विवाह के लिए राजी करने की आवश्यकता है...’

उसने बीच वाक्य में ही उसकी बात काटते हुए कहा, 'अगर मैंने ऐसा पहले ही कर लिया होता, तो मैं तुम्हें फोन कर देता।'

लेकिन वह उससे शादी करने पर इतनी जोर क्यों दे रही है?

मैं फोन पर यह बात नहीं कह सकता। जब हम मिलेंगे तब बताऊंगा।

~

अरुणा—अब सलमा—की शादी हुए और सऊदी अरब चले जाने को दो महीने बीत चुके थे, लेकिन प्रोफेसर की चिंता कम नहीं हुई थी। उन्हें इस बात का अफसोस था कि वे उसे अच्छी परवरिश नहीं दे पाए। इससे भी बुरा यह था कि उन्हें उसकी शादी के भविष्य को लेकर संदेह था। और वे उसकी माँ को दोषी मानते थे कि उसने अरुणा को संकीर्ण सोच वाली कैथोलिक परवरिश दी, जिसने बौद्धिक स्वतंत्रता के सभी रास्ते बंद कर दिए। उसकी माँ का गुस्सा अलग था। उन्हें इस बात से नफरत थी कि अरुणा ने एक ऐसे धर्म को अपना लिया था जो ऐतिहासिक काल से ही ईसाई धर्म का शत्रु रहा

है। और उनका गुस्सा इस बात से और भी बढ़ गया था कि अरुणा की शादी उसके पिता के पूर्ण समर्थन से हुई थी। प्रोफेसर और उनकी पत्नी ने एक-दूसरे से बात करना बंद कर दिया और यह खामोश वैवाहिक संघर्ष बिना किसी रुकावट के चलता रहा। दोनों में से किसी को भी पहले चुप्पी तोड़ने की शर्मिंदगी उठाने की जरूरत नहीं थी।

प्रोफेसर को अचानक अपनी माँ की बहुत याद आने लगी। इसका कोई तार्किक कारण नहीं था, लेकिन अरुणा के जाने के बाद से उनकी माँ उनके मन में ज़्यादा रहने लगीं। उन्हें एक कवि की पंक्तियाँ याद आईं, जिन्होंने लिखा था कि माँ पोती के रूप में पुनर्जन्म लेती है। माँ पचासी साल की हैं। मेरा जन्म तब हुआ था जब वह पंद्रह साल की थीं। खैर, उन दिनों ऐसा ही होता था... मैं इकलौता बेटा था... तीन बेटियों के अलावा इकलौता बेटा जो जीवित बचा। पता नहीं उन्होंने कितने और बच्चे पैदा किए, उनमें से सिर्फ चार ही जीवित बचे। और माता-पिता और बहनों के सीमित दायरे से बाहर निकलते ही आपकी दुनिया कितनी बदल जाती है! यहाँ तक कि एलिज़ाबेथ भी। वह थोड़ी नरमी बरत सकती थीं। 'मैं तुमसे अपना धर्म छोड़ने के लिए नहीं कह रहा हूँ। साड़ी पहनो। बिंदी लगाओ। चूड़ियाँ पहनो। इससे मेरे माता-पिता के लिए तुम्हें स्वीकार करना आसान हो जाएगा।' उन्होंने मना कर दिया। 'आपने वचन दिया है। मुझ पर अपनी गैर-ईसाई प्रथाएँ थोपने की कोशिश मत करो।' उन्होंने बैंगलोर के कैथोलिक चर्च के पादरी से इस बारे में बात की। उन्होंने उनकी बात की पुष्टि की। 'नहीं। नहीं। किसी भी गैर-ईसाई प्रथा को बढ़ावा मत दो।'

वह उसे कभी नरसपुरा नहीं ले गया। वह उसके माता-पिता से कभी नहीं मिली थी। वह हर दो-तीन साल में एक बार आता और अपने साथ कुछ पैसे ले जाता। 'नहीं, धन्यवाद। भगवान नरसिम्हा ने हमें बहुत कुछ दिया है, बेटा।' वह अपनी माँ से पूछता कि उसे कौन से गहने चाहिए। 'इस उम्र में मुझे गहनों की क्या ज़रूरत है, बेटा? तुम ये पैसे रख लो। तुम्हें अपने परिवार के लिए इनकी ज़रूरत पड़ेगी।' उसे बुरा लगता था, लेकिन किसी तरह यह बात समझ में भी आती थी। उस समय उसकी कमाई ज़्यादा अच्छी नहीं थी। उसका करियर अभी शुरू ही हो रहा था और उसे ब्रिटिश मानकों के अनुसार घर चलाने के लिए अच्छी-खासी रकम की ज़रूरत थी।

~

अगर गोमांस खाने वाली घटना न होती, तो वे मुझसे पूरी तरह संबंध न तोड़ते। उन दिनों मैं एक प्रगतिशील के रूप में काफी चर्चा में था। मैंने मासिक पत्रिका 'द

क्रिटिक' में एक तीखा लेख लिखा था कि कैसे वैदिक भारत के ऋषि-मुनि खुलेआम गोमांस खाते थे। रूढ़िवादी हिंदुओं ने इस पर इतना हंगामा मचाया! उन्होंने रैलियां निकालीं और गांवों के किसानों को अपने विरोध प्रदर्शनों में शामिल किया। उन्होंने मेरे घर पर पत्थर फेंके और हर जगह मेरा पीछा करते हुए 'शास्त्री मुर्दाबाद!' के नारे लगाए। भगवान जाने, वे कट्टरपंथी मेरा घर जला देते और शायद मुझे अपंग कर देते। तत्कालीन सरकार ने मुझे कड़ी पुलिस सुरक्षा प्रदान की और पूर्ण समर्थन का आश्वासन दिया। इसके अलावा भी, मुझे कोई नहीं रोक सकता था। मैंने अगले ही अंक में लिखा, 'गोमांस खाने पर प्रतिबंध लगाने की मांग करने वाले गोमांस खाने वालों को मुख्यधारा के समाज से बाहर रख रहे हैं, जो अलगाववाद का एक खतरनाक रूप है, जिसे अगर अनियंत्रित छोड़ दिया गया तो एक और विभाजन का कारण बनेगा। दुनिया को देखिए: किस दूसरे देश ने गोमांस खाने पर प्रतिबंध लगाया है?' मैंने विदेश में रहते हुए इसे खाया था और अब भी जब भी मौका मिलता है, मैं इसे खाती हूँ। क्या इसका मतलब यह है कि मैं भारतीय नहीं हूँ? क्या भारतीय होने की मेरी पहचान गोमांस खाने पर टिकी है? एक लोकतांत्रिक देश में, किसी को भी अपनी पसंद का खाना खाने के मेरे अधिकार पर अतिक्रमण करने का हक नहीं है...' इस लेख ने पहले जैसा आक्रोश नहीं जगाया। मुझे लगता है कि रूढ़िवादी आक्रोश शांत हो गया था। सरकार की सुरक्षा सुनिश्चित होने पर, हमने बिना किसी डर के सेमिनार और कार्यशालाओं का आयोजन जारी रखा।

मुझे लगता है कि अगले साल मैं कलेनहल्ली गया था। प्रकाश गौड़ा ने मुझे अपनी बेटी की शादी में बुलाया था। मैं निमंत्रण ठुकरा नहीं सका क्योंकि वे स्थानीय समाजवादी नेता थे। पार्टी में अपनी पहुँच बढ़ाने का यह मेरे लिए एक शानदार अवसर था, इसलिए मैं चला गया। नरसपुरा बिल्कुल पास ही था। मैं वहाँ न जाने का जोखिम नहीं उठा सकता था। अगर मैं नहीं जाता, तो देहाती चुगलखोर इसका फायदा उठाकर मेरे बारे में और भी झूठ फैला देते। जब मैं घर पहुँचा तो लगभग 3 बज रहे थे। माँ बरामदे में अपनी मूर्तियों के सामने रखे तेल के दीयों के लिए रुई की बत्तियाँ बना रही थीं। उन्होंने मुझे पहचाना नहीं। जो कि स्वाभाविक था। मैंने जयप्रकाश नारायण शैली के कपड़े पहने थे। 'माँ, मैं हूँ नानू।' उनका चेहरा खिल उठा। वे उठने ही वाली थीं कि मैंने पिताजी को उनकी ओर आते देखा। मैंने उन्हें घर से निकलते नहीं देखा।

‘तुम प्रकाश गौड़ा की बेटी की शादी से आ रहे हो? रुको!’ वो घर में घुसे, ‘द क्रिटिक’ की एक प्रति लेकर लौटे, उसे मेरे चेहरे के सामने रखकर बोले, ‘तुमने खुलेआम और बेबाकी से स्वीकार किया है कि तुम गोमांस खाते हो। क्या यह सच है?’ बिजली की तरह तेज़ इस पूछताछ ने मुझे स्तब्ध कर दिया। मैं जल्दी से संभला और बोला, ‘पिताजी, मैं राजनीतिक हलकों में काम करता हूँ। मुझे कभी-कभी ऐसी बातें कहनी और लिखनी पड़ती हैं, जिन पर मुझे विश्वास नहीं होता। क्या आप इन सब पर विश्वास करते हैं? अरे!’

अगर तुमने जो लिखा है वो सच नहीं है, तो तुम ऐसे झूठ क्यों लिखते हो? तुम कितनी ज़ुबानों से बोलते हो? मैं तुम्हारा बाप हूँ, और उसने तुम्हें जन्म दिया है। हमारी तरफ देखो और सच बताओ!

इससे मेरे आत्मसम्मान को ठेस पहुंची। मैंने गुस्से को छिपाए बिना जवाब दिया, 'मैं आपसे मिलने इतनी दूर से आता हूं और मुझे इस तरह का बर्ताव मिलता है! अगर मैं गोमांस खाता भी हूं, तो इसमें क्या गलत है? चीन और मंगोलिया को छोड़कर, जहां मवेशी नहीं पाले जाते, हर देश में, हर जाति के लोग, बल्कि दुनिया के सभी लोग गोमांस खाते हैं। यहां तक कि यहां भी... क्या आपको अंदाजा है कि कितने लोग गोमांस खाते हैं? आप लोगों के खान-पान को नियंत्रित नहीं कर सकते। यह लोकतंत्र के लिए ठीक नहीं है। यह... यह... यह फासीवाद है!'

‘मुझे खुशी है कि तुमने सच कबूल कर लिया। तुम्हारी माँ और मैं तुम्हारे जन्म के लिए ज़िम्मेदार होने के पाप का प्रायश्चित करने जाएंगे।’ और वह अंदर चला गया। मैं अपनी कार में बैठा, उसे स्टार्ट किया और वहाँ से निकल गया।

कुछ दिनों बाद प्रकाश गौड़ा ने मुझे बताया कि नरसिम्हे गौड़ा ने मेरा लेख पिताजी को दे दिया था। तो ये उस पुराने गांधीवादी का मेरी बेटी के मुस्लिम विवाह का समर्थन करने का बदला था। हा! गांधी जी भी गौभक्त थे। उनका नुकसान! प्रगतिशील आंदोलन कोई बंधन नहीं जानता। आंदोलन की बाढ़ दोस्ती, रिश्ते, लोग, भाई-बहन, माता-पिता—सबको बहा ले जाती है। हर समर्पित प्रगतिशील का जीवन दिखाता है कि वह जीवन भर अकेला रहा, अज्ञानी माता-पिता और भाई-बहनों से अलग। यही मेरा भी रास्ता है।

इससे प्रोफेसर शास्त्री को पच्चीस साल तक सुकून मिला। लेकिन अब, सऊदी अरब में अरुणा के बारे में सोचकर, जहाँ नागरिक विवाह की सुरक्षा नहीं थी... उनकी

माँ की छवि उनके मन को सताने लगी। दोनों का आपस में कोई रिश्ता नहीं था, लेकिन माँ... यह बेतुका और पागलपन भरा था। पर उनका मन इसके अलावा कुछ और सोचने को तैयार नहीं था। उनके माता-पिता ने अपनी तीनों बहनों, उनके पतियों और पोते-पोतियों पर अपना सारा प्यार लुटाया था। माँ पचासी साल की हैं। पिता पचानवे साल के हैं। शायद वे सौ साल के हो जाएँ। या उससे भी आगे। या... कौन जाने? वे मुझे अंतिम संस्कार नहीं करने दे रहे हैं। और मुझे उनके सभी पारिवारिक समारोहों से अलग कर दिया गया है। इसमें उनकी कोई गलती नहीं थी। यह कैसा धर्म है जो उन्हें अपने ही बेटे से रिश्ते तोड़ने की इजाज़त देता है सिर्फ इसलिए कि उसने गाय का मांस खाया? यह कैसा धर्म है जो मेरे ताने, आलोचना, रैलियों और भाषणों के बावजूद बिना किसी विरोध के फलता-फूलता रहता है?

11

प्रोफेसर ने पत्र नीचे रख दिया। संदेश अमेरिका से आया था। यह विभिन्न देशों के अकादमिक जगत में बौद्धिक विमर्श के रुझानों पर चर्चाओं की एक श्रृंखला का निमंत्रण था। उन्होंने प्रोफेसर को पत्र लिखकर उनकी उपलब्धता के बारे में पूछा था। एक महीने का प्रवास। उन्हें 'भारत का बौद्धिक वातावरण' विषय पर हर दो सप्ताह में एक व्याख्यान देना था। नॉर्थवेस्टर्न विश्वविद्यालय ने संकेत दिया था कि वे उनके 'शीघ्र आगमन' की सराहना करेंगे। उन्हें इस निमंत्रण के पीछे टॉम का हाथ पहचानने में देर नहीं लगी। टॉम एक समर्पित अकादमिक-बुद्धिजीवी थे जो अमेरिकी विश्वविद्यालय जगत में वामपंथी विचारधारा के प्रसार के लिए अथक प्रयास कर रहे थे। प्रोफेसर ने फैसला किया कि यह यात्रा अच्छी रहेगी। इससे उनका दिमाग रचनात्मक रूप से व्यस्त रहेगा। और फिर पैसों की भी उम्मीद थी। वे उससे एक नई कार खरीद सकते थे। लेकिन एक समस्या थी। वे पहले ही वाराणसी में एक प्रमुख लेकिन उबाऊ कार्यशाला में वरिष्ठ संसाधन व्यक्ति बनने के लिए सहमत हो चुके थे। ये कार्यशालाएँ नाम के अलावा हर मायने में अलग थीं। उत्साही युवा पुरुषों और महिलाओं की वही

भीड़। वही प्रश्न। लेकिन वे पीछे नहीं हट सकते थे। उन्होंने अपना वचन दे दिया था। अगर वह इसे रद्द कर देता, तो बहुत से लोग नाराज़ हो जाते। नकारात्मक प्रचार होता। उसने इस कार्यशाला को पूरा करने और फिर अमेरिका जाने का फैसला किया। उसने अपना कैलेंडर देखा। अरे! मैं एक छोटी सी प्रेस कॉन्फ्रेंस बुलाकर सबको बता देता हूँ कि मुझे नॉर्थवेस्टर्न यूनिवर्सिटी ने आमंत्रित किया है। नहीं। रुको। मुझे पहले दिगांथ से बात करनी होगी। उससे पूछना होगा कि वह कैसा है। उसकी कंपनी के बारे में थोड़ी बहुत बातचीत करनी होगी। संपर्क में रहना ज़रूरी है। समझदार लड़का है, मुझे पता है कि वह अच्छा कर रहा होगा।

अचानक उसे गर्व का अनुभव हुआ। उसने अपने प्रभाव का इस्तेमाल अपने बेटे के कारोबार को आगे बढ़ाने के लिए किया था, लेकिन उससे एक रुपया भी नहीं लिया था। यही तो होना चाहिए। अपने बच्चों से कभी कुछ मत लो। मुझे पता है एलिज़ाबेथ उससे पैसे लेती है, लेकिन... खैर, महिलाओं में आत्मसम्मान की कमी होती है। पर मैं यह बात सबके सामने नहीं कह सकता। नारीवादी मुझ पर टूट पड़ेंगे। क्या मैं एलिज़ाबेथ पर ज़्यादा सख्त हो रहा हूँ? अगर उसके पास नौकरी होती, तो शायद वह दिगांथ से पैसे नहीं माँगती। और अगर होती भी, तो वह मुझे बहुत पहले तलाक दे चुकी होती। नहीं नहीं नहीं। वह कैथोलिक थी... धिक्कार है! वह कैलेंडर कहाँ है?

उन्हें अपने सामने परछाइयाँ दिखाई दीं और उन्होंने सीधे आगे देखा। उनके सामने खड़े दो लोग लगभग तीस वर्ष के थे और प्रगतिशील बुद्धिजीवियों की तरह कपड़े पहने हुए थे। बिखरे बाल, ढीली कमीजें और जींस। उन्होंने परिचय देने में समय बर्बाद नहीं किया। वे कर्नाटक भर में प्रगतिशील विचारों पर एक महत्वाकांक्षी संगोष्ठी आयोजित करने की योजना बना रहे थे और वे चाहते थे कि प्रोफेसर शास्त्री इसका उद्घाटन करें। प्रोफेसर शास्त्री उन्हें जानते थे। ऐसा संभव ही था कि वे किसी ऐसे व्यक्ति को न जानते हों जो खुद को प्रगतिशील कहता हो और ऐसा भी संभव ही था कि कोई भी प्रगतिशील व्यक्ति अपने जीवन में कम से कम एक बार प्रोफेसर का आशीर्वाद लेने न आए। प्रोफेसर ने धैर्यपूर्वक उनकी बातें सुनीं और प्रगतिशील विचारों की शक्ति पर एक संक्षिप्त प्रवचन दिया। 'देखो यूरोप कहाँ था इससे पहले कि वह विचारों की उपजाऊ जड़ों पर एक विशाल वृक्ष के रूप में विकसित हुआ, जिसने दुनिया पर विजय प्राप्त करने में उसकी शक्ति प्रदान की। तर्कवाद! तर्कवाद स्वयं शक्ति है, और तर्कवाद का अभाव कमजोरी है। तो हाँ, आप इस संगोष्ठी के साथ सही

रास्ते पर हैं।' दोनों युवक उनके जादुई शब्दों के प्रभाव में खो गए। उन्होंने उसे सिगरेट दी, उसके लिए जलाई और इससे पहले कि वे अपनी सिगरेट जला पाते, फोन बज उठा। 'अरे! अब हम इसका क्या करें? सुविधा का साधन एकाग्रता भंग करने वाला बन गया! क्षमा कीजिए...'

'सर, मैं लक्ष्मी बोल रही हूँ। मैं कुनिगल से फोन कर रही हूँ। मुझे आपको एक बुरी खबर देनी है। आपकी माताजी का देहांत हो गया है...'

'क्या! हा! क्या...क्या हुआ?' उसके चेहरे का रंग उड़ गया।

'वह काफी समय से बीमार थीं। आप जानते ही हैं कि हमारे गांव में किस तरह की चिकित्सा सुविधाएं हैं। आपकी बहन विशालाक्षम्मा उन्हें इलाज के लिए तुमकुर ले गईं। आपके पिता एक महीने तक तुमकुर में रहे। डॉक्टरों ने दिल की समस्या बताई, लेकिन उन्होंने कहा कि उनकी उम्र में इलाज लगभग बेकार है। और अब...'

प्रोफेसर ने कुछ नहीं कहा।

"तो फिर उनके अंतिम संस्कार और अन्य रस्मों का सवाल उठा। आपके पिता ने कहा कि दामाद बेटे के समान होता है और उन्होंने अपने सबसे बड़े दामाद को अंतिम संस्कार की रस्में निभाने का जिम्मा सौंपा। उन्होंने अंतिम संस्कार कर दिया। अब उन्होंने बाकी की रस्में गांव में करने का फैसला किया है। मीनाक्षी और जलजाक्षी पहले से ही वहां हैं। उनके पति और बच्चे सातवें दिन उनसे मिलेंगे। विशालाक्षम्मा आज घर आईं और उन्होंने मुझे आपको फोन करने के लिए कहा। "मैं नहीं चाहती कि कल लोग मुझे दोष दें। आप उन्हें बता दीजिए। आखिर वह बेटा है और अंतिम संस्कार की सभी रस्मों पर उसका पहला अधिकार है।" मैं यह फोन करने के लिए कुनिगल आया था।"

'फोन रखने के तुरंत बाद मैं शुरू कर दूंगा। क्या आप मेरे आने तक इंतजार कर सकते हैं?' उसने बिना सोचे समझे कहा।

जी सर। मैं अब कनेक्शन काट देता हूँ।

'हम्म।'

प्रोफेसर की घबराहट साफ झलक रही थी जब उन्होंने कहा, "माफ़ कीजिए। मेरी माताजी का देहांत हो गया है। मुझे तुरंत अपने गाँव जाना होगा। यह कुनिगल से छह मील दूर है।" दोनों आदमी तुरंत खड़े हो गए। "हमें यह सुनकर बहुत दुख हुआ,

महोदय। कृपया हमारे साथ आइए। हम आपको अपनी गाड़ी में वहाँ ले जाएँगे। हम आपसे आग्रह करते हैं, महोदय।" प्रोफेसर ने हाँ कहा और पिछली सीट पर बैठ गए।

काफी देर तक कोई नहीं बोला। जब नीलमंगल के बाद गाड़ी बाईं ओर मुड़ी, तो उनमें से एक ने कहा, 'मज़ाक न करें, महोदय, लेकिन आपकी माताजी की आयु कितनी थी? हमें पूरा विश्वास है कि आप जैसे प्रतिभाशाली को जन्म देने वाली वह एक महान महिला रही होंगी।' प्रोफेसर कई मिनट तक चुप रहे। फिर उन्होंने अपनी माताजी के गुणों का विस्तृत वर्णन करना शुरू किया और अंत में कहा, 'शंकराचार्य एक आदर्श संन्यासी थे। सोचिए, अपने समय में उन्होंने परंपराओं को चुनौती दी और वह किया जो उनके समय के किसी अन्य संन्यासी ने नहीं किया - उन्होंने अपनी माताजी के अंतिम संस्कार किए और पूरी दुनिया को एक माता की महानता दिखाई। सोचिए इसका क्या अर्थ है। वे पहले मानवतावादियों में से एक थे, जिसका अर्थ है कि वे प्रगतिवादियों में से पहले थे।'

वे सबसे पहले लक्ष्मी के घर पर रुके।

'तुम हमारे साथ चलो। मुझे पिताजी और विशालाक्षी से बात करनी है।'

'यह आपके परिवार का मामला है। मैं भला कैसे आ सकता हूँ?'

'तुम हममें से ही एक हो। कृपया आ जाओ,' उसने जोर देकर कहा।

उसने इस बारे में सोचा। इतने वर्षों बाद, और खासकर उनके बिछड़ने के बाद, प्रोफेसर को अपने पिता का सामना करने में शायद बहुत शर्मिंदगी महसूस हो रही होगी। प्रोफेसर के साथियों ने उससे बातचीत शुरू की, 'महोदया, आप हमें नहीं जानतीं, लेकिन हम आपको अच्छी तरह जानते हैं। पूरा देश आपको जानता है!'

जब वे पहुँचे तो विशालाक्षी के पति सुब्बन्ना बरामदे में बैठे थे। उनका सिर मुंडा हुआ था और प्रोफेसर उन्हें पहचान नहीं पाए। उन्होंने उन्हें आखिरी बार पच्चीस साल पहले देखा था। सुब्बन्ना ने उनका अभिवादन करते हुए कहा, 'कब आए? चलिए अंदर चलते हैं। पिताजी पलंग पर बैठे हैं।' वे अंदर चले गए। दोनों युवक उनके पीछे-पीछे गए। उन्होंने देखा कि शेष शास्त्री लकड़ी के पलंग पर दीवार की ओर पीठ करके सीधे बैठे थे, मानो समय स्वयं एक सदी के बीतने का इंतजार कर रहा हो। वे गंजे थे और उनका माथा उभरा हुआ लग रहा था। ठुड्डी पर सफेद दाढ़ी असमान रूप से उगी हुई थी। उन्होंने कमर पर एक छोटी धोती पहनी हुई थी और कंधे पर एक छोटा कपड़ा और अपना जनेऊ लटका रखा था। प्रोफेसर ने दूर से ही उनके चरणों में

प्रणाम किया और खड़े हो गए। सुब्बन्ना शेष शास्त्री के पास गए और उनके कान में फुसफुसाए, 'नानू आए हैं।'

'ओह!'

काफी देर तक कोई नहीं हिला। फिर लगभग सौ साल के बुजुर्ग ने पूछा, 'सब ठीक है?'

प्रोफेसर ने धीमी आवाज़ में कहा, 'हाँ।'

और बस यहीं पर बात खत्म हो गई। वे लगभग उस मौन की दीवार को देख सकते थे जो शेषा शास्त्री ने खड़ी कर दी थी। किसी को कुछ कहने को सूझ नहीं रहा था। और फिर घंटों बाद, विशालाक्षी अंदर से बाहर निकलीं, उनके पीछे जलजाक्षी और मीनाक्षी भी थीं।

'भाई, अब आए? भाभी कैसी हैं? बच्चे कैसे हैं?' जलजाक्षी उनके पास चलकर आईं और स्नेह से पूछा। उन्होंने देखा कि उनके बाल जूट की तरह खुरदुरे और सफेद थे। फिर उन्होंने अपनी दोनों बहनों की ओर देखा। उनके बालों की बनावट और रंग भी लगभग एक जैसे थे।

शेषा शास्त्री ने प्रोफेसर को बैठने के लिए कहा। वे दूसरे छोर पर, लगभग अपने पिता के पलंग के किनारे पर बैठ गए। लक्ष्मी और युवा बुद्धिजीवी जोड़ी बैठक कक्ष के दूसरे कोने में एक चटाई पर बैठ गए। सुब्बन्ना बीच में एक खंभे से पीठ टिकाकर बैठ गया। प्रोफेसर को बोलने की तीव्र इच्छा हुई।

'अगर मुझे मां की हृदय संबंधी समस्या के बारे में पता होता, तो मैं उन्हें बैंगलोर ले आता। मैं कई उच्च कुशल, विदेश में प्रशिक्षित हृदय शल्य चिकित्सकों को जानता हूं। मैं कुछ कर सकता था।'

'तुमकुर के डॉक्टर ने कहा कि सर्जरी करना व्यर्थ है,' विशालाक्षी ने उत्तर दिया। कमरा फिर से शांत हो गया। तब विशालाक्षी अपने पिता की ओर मुड़ी और ऊँची आवाज़ में बोली, 'हम तीनों बहनों ने आपस में चर्चा की और भाई को बुलाया। बेटे द्वारा अंतिम संस्कार करना दामाद द्वारा अंतिम संस्कार करने के समान नहीं है, चाहे उनकी भक्ति और प्रतिबद्धता कितनी भी हो। शास्त्रों में लिखा है कि यदि पुत्र जीवित है, तो उसे ही अंतिम संस्कार करना चाहिए। क्या मैं सही कह रही हूँ, पिताजी?'

उन्होंने एक मिनट तक कोई जवाब नहीं दिया। फिर बोले, "मृत आत्मा के लिए यह मायने नहीं रखता कि अनुष्ठान कौन करता है। आत्मा आगे किस अवस्था में

पहुँचती है, यह इस बात पर निर्भर करता है कि उसने इस धरती पर क्या पुण्य या पाप किए हैं। जिस व्यक्ति का कोई पुत्र नहीं होता, वह क्या करता है? जिसके कोई संतान नहीं होती, वह क्या करता है? ये अनुष्ठान केवल आत्मा को एक अवस्था से दूसरी अवस्था में जाने में मदद करते हैं। इन अनुष्ठानों को करने वाला व्यक्ति कोई उपकार नहीं कर रहा होता। वह केवल अपना कर्तव्य निभा रहा होता है।"

'लेकिन वह आपका बेटा है और वह यहां है, और हम सभी चाहते हैं कि वह अंतिम संस्कार की रस्में निभाए,' मीनाक्षी ने कहा।

'यह उसकी इच्छा है। लेकिन उसे पहले प्रायश्चित करना होगा।'

सुब्बन्ना उठे और शेषा शास्त्री के पास जाकर बोले, 'अच्छा। हम वैसे भी किसी भी अनुष्ठान से पहले मंत्र का जाप करते हैं ताकि अनजाने में या जानबूझकर किए गए पापों का प्रायश्चित हो सके...'

'यह इतना आसान नहीं है। ऐसा नहीं है कि उसने अनजाने में ऐसा किया हो। उसने धर्म का उल्लंघन किया है और पूरी दुनिया के सामने यह ऐलान किया है कि उसने गाय का मांस खाया है, वह अभी भी गाय का मांस खाता है और आगे भी खाता रहेगा। उसने इसे लिखा है। उसने मंच पर इसकी घोषणा की है। और उसने हमारे सामने इसे स्वीकार किया है। नहीं, यह पाप नहीं है—यह एक अपराध है, बस यही है। आप जानते हैं कि वह अपने बेटे से कितना लगाव रखती थी, लेकिन उसने अपनी दृढ़ इच्छाशक्ति से उससे सारे रिश्ते तोड़ दिए। उसका प्रायश्चित किसी मंत्र का जाप करने जितना आसान नहीं है।'

सुब्बन्ना को समझ नहीं आ रहा था कि क्या कहे। किसी को भी समझ नहीं आ रहा था कि क्या कहे। और शेषा शास्त्री ने भी यह नहीं बताया कि प्रोफेसर को क्या करना था। न ही प्रोफेसर ने पूछा कि उसे क्या करना था। पिताजी इस बदले की भावना को सालों से अपने बिल में धैर्यपूर्वक घात लगाए बैठे सांप की तरह पाल रहे थे। धिक्कार है! अब मैं उनसे पूछ भी नहीं सकता। ये कमीने समाजवादी यहाँ आ गए हैं। मुझे अपनी कार ले जानी चाहिए थी। या दिगांथ से कहना चाहिए था कि वह अपने ड्राइवर को भेज दे। उसे अपनी पीठ पर उन दो युवकों की निगाहें महसूस हो रही थीं। मैं उनकी तरफ नहीं देखूंगा।

सुब्बन्ना ने फिर कहा, 'कृपया उसे बताएं कि प्रायश्चित करने के लिए उसे क्या करना होगा।'

शेषा शास्त्री ने तुरंत जवाब दिया, 'आप यह क्यों पूछ रहे हैं? उनसे पूछिए कि क्या यह बात उनके दिमाग में आई है।'

'कोई बात नहीं, पिताजी। हम उनकी ओर से आपसे पूछ रहे हैं,' मीनाक्षी ने कहा, जो धर्म की बारीकियों का विश्लेषण करने में अपने पिता की गहरी रुचि से अवगत थी।

बूढ़े व्यक्ति ने कुछ याद करने की कोशिश करते हुए काफी देर तक अपनी आँखें बंद रखीं। फिर बोले, 'मैं बूढ़ा हो गया हूँ। शायद मैं बारीकियाँ भूल गया हूँ, इसलिए बेहतर होगा कि आप एक बार विरुपाक्ष शास्त्री से पुष्टि कर लें...' वे रुके, फिर से अपनी आँखें बंद कीं और फिर खोलकर आगे बोले, 'पाप, अपराध के दो प्रकार के दंड होते हैं। पहला वह है जो किसी सभा द्वारा दिया जाता है...जैसे...जैसे न्यायालय। यह बाहरी दंड है। दूसरा आंतरिक दंड है—जहाँ पापी अपने किए गए पाप के प्रति पूर्ण जागरूकता के साथ स्वयं को दंडित करता है। इसे प्रायश्चित कहते हैं और यह आत्म-शुद्धि के लिए किया जाता है। प्राचीन काल में, दोनों प्रकार एक साथ किए जाते थे। कई मामलों में, सभा कुछ प्रकार के पापों पर ध्यान नहीं देती थी, लेकिन पापी स्वेच्छा से ऐसे पापों का भी प्रायश्चित कर लेता था। प्रायश्चित दो प्रकार का होता है: पहला जिसमें पापी तन, मन और आत्मा से यह महसूस करता है कि उसने जो किया वह गलत था और दूसरा जिसमें वह फिर कभी ऐसा न करने का वचन लेता है और फिर स्वयं को दंडित करता है।' अपराध भी दो प्रकार के होते हैं: सार्वजनिक रूप से किए गए और गुप्त रूप से किए गए। गुप्त रूप से किए गए अपराधों का प्रायश्चित गुप्त रूप से किया जा सकता है। किसी को बताना अनिवार्य नहीं है। सार्वजनिक रूप से किए गए पापों का प्रायश्चित सार्वजनिक रूप से किया जाना चाहिए। दूसरे शब्दों में, दुनिया को पता होना चाहिए कि वह व्यक्ति प्रायश्चित क्यों कर रहा है। हालांकि, प्रायश्चित अपराध के परिणामों को मिटा नहीं देता। पश्चाताप का एकमात्र उद्देश्य मन की शुद्धि है। दुनिया एक तरह से यह पहचान लेती है कि पापी वास्तव में पश्चाताप कर रहा है। लेकिन बात यहीं खत्म नहीं होती। एक अन्य दृष्टिकोण से पाप को दो रूपों में वर्गीकृत किया जाता है: जानबूझकर किया गया और अनजाने में किया गया। जानबूझकर किया गया पाप वह है जिसमें व्यक्ति जानबूझकर कोई बुरा काम करता है। ऐसे अपराधों के लिए सबसे कठोर दंड दिया जाता है। इस व्यक्ति का अपराध जानबूझकर किया गया है। गोमांस खाकर वह गाय की हत्या के अपराध में भागीदार

बन गया है। गाय का मांस बिना उसे मारे नहीं खाया जा सकता—चाहे अपने हाथों से मारकर या किसी और से मरवाकर। खैर, मुद्दा यह है कि उसने जानबूझकर अपराध किया है और अपने लेखन और भाषणों के माध्यम से दुनिया को बताकर अपने अपराध का जश्न मनाया है। इसलिए प्रायश्चित भी उतना ही कठोर और सार्वजनिक होना चाहिए। उससे पूछिए कि क्या वह ईमानदारी से शपथ लेने को तैयार है कि उसे अपने किए पर पछतावा है। उससे पूछिए कि क्या वह शपथ लेने को तैयार है कि वह ऐसा फिर कभी नहीं करेगा। प्राचीन काल में, इस तरह के गंभीर पाप के लिए पापी को बारह साल तक जंगल में रहना पड़ता था—उन्हें समय-समय पर उपवास करना पड़ता था और जंगल से जो कुछ भी मिलता था, उसे खाना पड़ता था और जंगली जानवरों के खतरे का सामना करना पड़ता था। उनके जीवित लौटने की संभावना बहुत कम थी। इन नियमों को बनाने वाले हमारे ऋषियों ने बाद में महसूस किया कि यह बहुत कठोर था और उन्होंने सजा की कठोरता को कम कर दिया। देखिए, समय के साथ सजा की कठोरता कम होती जाती है। यह आत्म-दंड पर भी लागू होता है। इसलिए पहले उसे स्वयं स्वीकार करना चाहिए कि उसने अपराध किया है। उसे उन्हीं कागजों पर लिखना चाहिए और मंच पर घोषणा करनी चाहिए कि वह गाय का मांस खाने के अपराध का प्रायश्चित कर रहा है। अगर उसका अहंकार उसे ये सब करने से रोकता है, तो ये पश्चाताप नहीं है, क्योंकि पश्चाताप एक तपस्या है, जिसका उद्देश्य अहंकार को जलाना है। उसे कुछ दिन भगवान नरसिम्हा के मंदिर में केवल फलों का सेवन करके बिताने दें और भगवान से क्षमा मांगें। इसके बाद, पुजारी एक अनुष्ठान करेंगे। इससे उसका प्रायश्चित पूरा हो जाएगा। विरुपाक्षा शास्त्री से बात करें और उन्हें बताएं कि मैंने आपको ये सब बताया है और फिर उनके निर्देशानुसार करें।

शेष शास्त्री ने अपनी निगाहें छप्पर की छत पर टिका दीं। किसी ने कुछ नहीं कहा। विशालाक्षी ने अपने भाई से कुछ कहने के लिए मुंह खोला, लेकिन खुद को रोक लिया। यह स्पष्ट था कि बोलने की ज़िम्मेदारी प्रोफेसर की थी। प्रोफेसर ने कुछ नहीं कहा। पिताजी इस उम्र में भी काफी दृढ़ हैं। वही लोहे जैसा दृढ़ निश्चय। धिक्कार है! मुझे अपनी कार से आना चाहिए था। या दिगंथ के ड्राइवर को बुला लेना चाहिए था। धिक्कार है! धिक्कार है! मैं इस स्थिति में उनसे बहस भी नहीं कर सकता। लेकिन क्या आदमी है! उनकी पत्नी के कुछ ही घंटे पहले गुज़र जाने के बाद भी, इस स्थिति में भी वे अपनी बात में इतनी ताकत कैसे बनाए रखते हैं? और मेरी माँ के गुज़र जाने के

ठीक इतने ही समय बाद मेरी तर्कशक्ति क्यों खत्म हो गई? उन्हें अचानक अंदर से खालीपन महसूस हुआ। हार। पिताजी ने मुझसे सीधे बात नहीं की। उन्होंने मुझे दोष नहीं दिया। उन्होंने वही कहा जो उनके शास्त्रों ने उन्हें बताया था। उन्होंने मुझसे मेरा फैसला भी नहीं पूछा... मानो प्रायश्चित करने की मेरी सहमति का कोई महत्व ही न हो। उन्होंने सब कुछ मुझ पर छोड़ दिया है। हा! इसके अलावा, मीनाक्षी ने उनसे यही सवाल पूछा था—क्या मुझे अपना सिर मुंडवाकर बाकी रस्में अदा करनी चाहिए? मुझे लगता है कि बेहतर होगा कि मैं उन्हें सोचने के लिए एक दिन का समय मांग लूं। वैसे भी काफी समय है। रस्में सातवें दिन से शुरू होंगी।

वह अचानक उठ खड़ा हुआ। 'मैं किसी बेहद ज़रूरी काम में व्यस्त था। लक्ष्मी से बुरी खबर सुनते ही मैं तुरंत यहाँ भागा।' उसने सबकी तरफ एक नज़र डाली, आगे झुका, अपने पिता के सामने प्रणाम किया और पीछे मुड़े बिना घर से निकल गया। उसके दो साथी उसके पीछे-पीछे गाड़ी तक गए। 'कुछ खा लो...कम से कम कॉफी ही पी लो...' उसकी बहनें और उनके पति गाड़ी के चारों ओर जमा हो गए और उसकी खूब देखभाल करने लगे। 'खाना...हाँ...मैं दोपहर का खाना खा लूँगा।' वह गाड़ी में बैठ गया और दरवाज़ा बंद कर लिया। गाड़ी चल पड़ी।

जब गाड़ी गांव से निकलकर कुनिगल मुख्य सड़क पर मुड़ी, तो ड्राइवर ने बातचीत शुरू की। "महोदय, मुझे बुरा न लगे अगर मैं कुछ कहूँ, महोदय। हम आपकी स्थिति समझते हैं। मुझे लगता है मैंने आपके 'कलेक्टेड वर्क्स' में गोमांस खाने पर लिखा आपका लेख पढ़ा है। यह काफी पुराना है, लेकिन व्यक्तिगत रूप से, यह आपके सर्वश्रेष्ठ लेखों में से एक है... मुझे पता है कि इसका पुनर्मुद्रण अभी भी हो रहा है। प्रगतिशील संगठन, मुस्लिम लीग, इंडियन क्रिश्चियन फेडरेशन, धार्मिक समानता समितियाँ, यहाँ तक कि मुख्यधारा की राजनीतिक पार्टियाँ भी इसे आज भी प्रसारित करती हैं। है ना महोदय?"

'जो तुमने अभी देखा, वह हमारे धर्म के भीतर से ही खोखला हो जाने का एक और उदाहरण है। यह धर्म अपने अनुयायियों को उस जानवर को अधिक महत्व देता है जिसे हम अपनी माँ मानते हैं, लेकिन एक बेटे की अपनी असली माँ के प्रति भावनाओं की परवाह नहीं करता। आह! मुझे लगता है यह एक अच्छा मुद्दा है—मैं इस पर विस्तार से चर्चा करूँगा और एक पूरा निबंध लिखूँगा।' प्रोफेसर ने अब अपनी बात में फिर से जोश भर लिया था।

‘अब हमें समझ में आया कि आप क्रांतिकारी क्यों बने, महोदय,’ दूसरे प्रगतिशील ने कहा और फिर बोला, ‘हमने सुबह से कुछ नहीं खाया है और मुझे लगता है कि आपने भी नहीं खाया होगा। क्या हमें कहीं रुकना चाहिए? कुनिगल में कुछ अच्छे रेस्तरां हैं।’

'हां। मुझे भी भूख लगी है।'

‘शाकाहारी या मांसाहारी?’ ड्राइवर ने पूछा।

‘विरोध के तौर पर मांसाहारी भोजन।’

बार और रेस्टोरेंट में आराम से बैठते ही प्रोफेसर को चक्कर आने लगा। एक अजीब सी बेचैनी। कार में जो बौद्धिक शक्ति थोड़ी देर के लिए लौटी थी, वह अब गायब हो गई थी। सहारा। मुझे अपने दिमाग को किसी चीज़ से जोड़ना होगा। जो दो सिगरेट उन्होंने पी थीं, उनसे भी कोई फायदा नहीं हुआ। 'क्या आपको बुरा लगेगा अगर मैं एक पेग ऑर्डर कर दूं?'

'बिल्कुल नहीं, महोदय! आप आगे बढ़िए। उन्हें गाड़ी चलानी है। बैंगलोर पहुँचते ही मुझे अपने कार्यालय वापस जाना है। आप इसे रख लीजिए।'

दोनों प्रगतिशील लोग जानते थे कि 'एक पेग' को शाब्दिक रूप से नहीं लेना चाहिए। प्रोफेसर ने वेटर द्वारा मेज पर रखे गए ऑमलेट को देखा और उनकी ओर एक नज़र डाली। 'क्या यहाँ गोमांस मिलता है?'

“ये सब तो आपको बैंगलोर शहर में मिल जाता है। अगर हम इसे यहाँ बनाएंगे तो गाँव वाले पल भर में इस होटल को आग लगा देंगे। हम यहाँ चिकन, मटन... और सूअर का मांस कभी-कभार ही बनाते हैं। आप क्यों पूछ रहे हैं, महोदय?”

'बस उत्सुक।'

उसने अपने साथियों की ओर देखा और एक समझदारी भरी मुस्कान बिखेरी।

वह कार की लंबी पिछली सीट पर लेट गया और बाकी की यात्रा के दौरान सोता रहा।

~

झपकी ने उन्हें तरोताज़ा कर दिया। उन्हें आराम महसूस हुआ और मन में स्पष्टता लौट आई, लेकिन फिर भी वे परेशान थे। इसका उपाय था कि वे सब कुछ किसी के साथ साझा करें। लेकिन किसके साथ? वे एक बेहद लोकप्रिय सार्वजनिक हस्ती थे, और सिर्फ़ बैंगलोर में ही नहीं—उनके अनुयायी भारत के सभी प्रमुख शहरों में फैले

हुए थे। बॉम्बे, दिल्ली और कलकत्ता के प्रमुख विश्वविद्यालय, गैर-सरकारी संगठन, समितियाँ, मंच और ट्रस्ट उन्हें गुरु का दर्जा देते थे और उनके हर शब्द को ध्यान से सुनते थे। लेकिन वे ये बातें अपने सैकड़ों प्रशंसकों में से किसी एक के साथ भी साझा नहीं कर सकते थे। इससे उनकी छवि की चमक फीकी पड़ जाती। अगर वे ऐसा करते, तो वे पलटकर सार्वजनिक रूप से उनकी निंदा करते, ठीक वैसे ही जैसे धर्मनिष्ठ लोग किसी विधर्मी की निंदा करते हैं। इससे जीवन भर में उन्होंने जो कुछ भी बनाया था, वह सब नष्ट हो जाता।

वह बस एक ऐसे दोस्त की तलाश में था जो बिना कोई राय दिए उसकी सारी बातें सुन ले। मरने के बाद कुछ नहीं बचता। यादें, विचार, विचारधारा, कल्पना, रचनात्मकता, भावनाएँ...हम्म हम्म! ये सब तब मौजूद होते हैं जब आप साँस लेते हैं, जब आपकी नसें काम करती हैं, और जब आपका दिमाग, जो आपके तंत्रिका तंत्र का नियंत्रक है, काम करता है। अगर ये सब रुक जाए, तो आप जीते जी भी मर जाते हैं। मृत्यु संस्कार—सातवाँ दिन, दसवाँ दिन, ग्यारहवाँ दिन, शुभ तेरहवाँ दिन, स्मृति में बनाए गए संस्थान, ये सब मृतकों की याद को संजोने के लिए मानव निर्मित साधन हैं। लेकिन इससे कोई फायदा नहीं हुआ। हर बार जब वह ठंडे तर्क से अपनी माँ को अपने विचारों से निकालने की कोशिश करता, तो वह उसे और भी ज़्यादा परेशान करती। मैं भी ये रस्में निभा लेता हूँ। आख़िरकार, मैं उसका बेटा हूँ। मैं अपना सिर मुंडवा लूँगा और बस सिर हिलाकर पुजारी जो भी कहे, कर दूँगा...और वैसे भी, पिताजी ने खुद कहा था कि आजकल के रीति-रिवाज उतने कठोर नहीं हैं जितने प्राचीन काल में थे। ये सब जल्दी और बिना दर्द के खत्म हो जाएगा। इस यातना से छुटकारा पाने का यही सबसे अच्छा तरीका है। और फिर ऐसी कई चीज़ें हैं जिनसे हमें नफ़रत होती है, लेकिन फिर भी हम दूसरों की खुशी के लिए उन्हें करते हैं। हम अपने बॉस के बंदर जैसे बच्चे को प्यारा कहते हैं। यह एक नई सीख होगी। मैंने कभी मृत्यु से जुड़े किसी भी रीति-रिवाज में हिस्सा नहीं लिया है। मैं देखूँगी कि आखिर इसमें क्या खास बात है। ओह! मैं उन पुजारियों को जानती हूँ...वे हर रस्म के लिए बड़े-बड़े बहाने बनाते हैं और जितना हो सके उतना पैसा हड़प लेते हैं...मैं पता लगाऊँगी कि उनका असली मतलब क्या है...और कौन जाने, इससे मुझे उनके धोखे को उजागर करने वाले कुछ लेख लिखने का मौका मिल जाए।

इन सब बातों से उसके भीतर का निराशाजनक और हताश भाव कम नहीं हुआ। वह किसी भी हालत में एलिज़ाबेथ को यह बात नहीं बता सकता था। एक साल से ज़्यादा समय से उनकी बातचीत पूरी तरह बंद हो चुकी थी। लेकिन असली वजह यह नहीं थी। वह जानता था कि अगर उसने कहा कि वह गोमांस खाने के लिए प्रायश्चित करने पर विचार कर रहा है, तो क्या होगा। वह उसके शब्द सुन सकता था। 'इसका मतलब है कि तुम कह रहे हो कि मेरे पूरे धर्म की खान-पान की आदतें किसी तरह से बुरी हैं। कौन सा दूसरा पालतू जानवर इतनी मात्रा में मांस देता है? भेड़ और बकरी में गोमांस के दसवें हिस्से के बराबर भी मांस नहीं होता, मुर्गी की तो बात ही छोड़ दो। अगर हम गोमांस खाना छोड़ दें तो क्या होगा? मैं तुम्हारे इस 'सहानुभूतिपूर्ण' तर्क को नहीं मानती कि हर जीवित प्राणी को जीने का अधिकार है, कि जानवरों पर क्रूरता करना बुरा है क्योंकि...क्योंकि यह प्रकृति के नियम के विरुद्ध है। एक बाघ हिरण के बिना कैसे जीवित रहेगा? या एक साँप मेंढक के बिना कैसे जीवित रहेगा?' इस तर्क के बिना भी, वह अपने 'अपने धर्म का पालन करने की स्वतंत्रता' का सहारा लेगी। उसका मानना था कि सारी सृष्टि—पौधे, वृक्ष, जड़ी-बूटियाँ और जानवर—मनुष्य के आनंद के लिए ही बनी है। इसका मतलब था कि आप किस तरह का मांस खाते हैं, इस बारे में कोई भेदभाव नहीं कर सकते। वह कभी मेरी दोस्त नहीं थी। जो दोस्त ही न हो, वह पत्नी कैसे हो सकती है? मैं उसके साथ क्यों रह रहा हूँ? उसने सिगरेट जलाई।

फोन की घंटी दो बार देर तक बजती रही, फिर उसने उठाया। लंबी दूरी की कॉल थी। उसका मूड अचानक ठीक हो गया।

‘लक्ष्मी बोल रही हूँ, महोदय। मैं कुनिगल से आपको फोन कर रही हूँ। आपके जीजाजी आपसे बात करना चाहते हैं। बस एक पल रुकिए।’

प्रोफेसर ने सुब्बन्ना की आवाज़ सुनी, “आपके जाने के आधे घंटे बाद जयराम गाँव आया था। मुझे नहीं पता आपको याद है या नहीं। वह मीनाक्षी का बेटा है। वह मद्रास से गाड़ी चलाकर आया है। वह वहाँ एक बहुत बड़ी सॉफ्टवेयर कंपनी में इंजीनियर है। उसकी तरक्की बहुत अच्छी चल रही है। आपको उसकी गाड़ी देखनी चाहिए। वह किसी जहाज़ जैसी है। हम उसकी गाड़ी से कुनिगल आए हैं। सब लोग यहाँ हैं। विशालाक्षी, मीनाक्षी और जलजाक्षी। हम आपसे बात करना चाहते थे। मुझे अब भी लगता है कि आपके लिए अंतिम संस्कार करना ही सबसे अच्छा है। आप पुत्र हैं और आपको अपनी माता के प्रति अपना कर्तव्य निभाना ही चाहिए। हमने विरुपाक्षा

शास्त्री से बात कर ली है। उन्होंने कहा कि आपके पिता इन मामलों के ज्ञाता हैं और उन्होंने आपके पिता द्वारा बताए गए तरीके से सहमति जताई है। उनका कहना है कि प्रायश्चित करने का यही सही तरीका है। वापस यहीं आ जाइए। आपकी माता के निधन की खबर सभी रिश्तेदारों तक पहुँच चुकी है। घर में इतनी भीड़ होगी कि बैठने-सोने की जगह नहीं होगी। लड़के-लड़कियाँ मंदिर में ही सोएँगे।" इस तरह आपको कुछ साथी मिल जाएंगे। फिर आपको तीन दिन और तीन रात मंदिर में ही रहना है, कहीं बाहर नहीं जाना है। हम आपके लिए फल और दूध लाएंगे। तीन दिन बहुत जल्दी बीत जाएंगे। सबसे ज़रूरी बात यह है कि पश्चाताप आपके भीतर होना चाहिए। और अखबारों में माफीनामा लिखना है या नहीं, यह पूरी तरह से आपका फैसला है... एक मिनट... मैं उसे फोन देती हूँ।

उन्होंने विशालाक्षी की आवाज़ कभी फोन पर नहीं सुनी थी। फिर मीनाक्षी बोलीं। फिर जलकाशी। और फिर जयराम बोले, 'चाचा जी, मुझे नहीं लगता कि आपको मुझे देखना याद होगा, लेकिन मैंने आपको टीवी पर कई बार देखा है। मतलब, टीवी पर आपको भाषण देते, वाद-विवाद में भाग लेते, महत्वपूर्ण सार्वजनिक मामलों पर राय देते और मशहूर हस्तियों की मृत्यु पर शोक व्यक्त करते हुए दिखाया जाता है। जब भी आप टीवी पर आते हैं, मैं अपनी पत्नी को फोन करके कहता हूं कि आप मेरे चाचा हैं। खैर, मुझे लगता है कि... कानूनी तौर पर आपके लिए अंतिम संस्कार करना बड़ी चाची के पति से ज़्यादा उचित है। खबर सुनते ही मैं नरसपुरा चला गया और कल सुबह जल्दी निकल रहा हूं। मुझे कुछ ज़रूरी दफ्तर का काम है, वरना मैं वहीं रुक जाता। मैं तेरहवें दिन वापस आऊंगा।'

लक्ष्मी ने फिर कहा, 'महोदय, मैं भी चाहती हूँ कि आप यहाँ आएँ। अपने परिवार के साथ संबंध फिर से स्थापित करने का यह आपका आखिरी मौका हो सकता है। उस कहावत को याद कीजिए जिसमें कहा गया है कि माँ और मातृभूमि स्वर्ग से भी बढ़कर हैं। आपका जन्मस्थान आपकी माँ के समान ही पवित्र है।'

प्रोफेसर ने जाने का फैसला किया। यह एक अनोखा अनुभव होगा। तीन दिन पूरी तरह से मंदिर में बिताना! उसके बाद मैं लक्ष्मी के घर रुक सकता हूँ। यह मंदिर उनके बचपन का हिस्सा था। उन्होंने इसके विशाल परिसर में चोर-पुलिस, पकड़ो-अगर पकड़ सकते हो और पकड़ सकते हो, जैसे खेल खेले थे। वे दोपहर में इसके बरामदे पर सोते थे। क्या चरवाहे दोपहर में यहीं आराम नहीं करते थे?

‘ठीक है। आप सब इतना ज़ोर दे रहे हैं, तो मेरा मन मना करने का नहीं कर रहा। मैं परसों आ जाऊँगा।’ उन्होंने फ़ोन नीचे रखा, एक और सिगरेट जलाई और खिड़की से बाहर देखने लगे। उन्हें सुकून मिला। लड़का कितनी अच्छी बातें करता है! मुझे पता ही नहीं था कि मद्रास के टीवी चैनल मुझे भी दिखाते हैं! और उसने मुझे अंकल कहा। खून का रिश्ता पानी के रिश्ते से मज़बूत होता है। आख़िरकार, मैं उसकी माँ का बड़ा भाई हूँ। उन्हें जयराम के लिए अचानक स्नेह का भाव उमड़ आया। उन्होंने मन में ठान लिया कि अगली बार मद्रास आने पर जयराम के घर ज़रूर जाएँगे। उन्होंने कुछ देर कन्नड़ भाषा की विशेषता और विशिष्टता पर विचार किया। वह उनके दामाद थे। दामाद—कन्नड़ में सोदरा आलिया—एक ऐसा शब्द था जिसका प्रयोग दो अर्थों में होता था: बहन का बेटा और बेटी का पति। उन्होंने इस बारे में सोचा। पहले जब ननिहाल में विवाह करना आम बात थी, तब शायद बहन के बेटे और बेटी के पति के लिए अलग-अलग शब्दों का इस्तेमाल करने की ज़रूरत ही नहीं पड़ती थी। जयराम अकेले खाना खाते हुए सोच में डूबा रहा। उसकी उम्र बत्तीस या तैंतीस साल होगी। अरुणा से करीब पाँच साल बड़ा। कितना होशियार लड़का है! अरुणा के लिए एकदम सही जोड़ी बनता। अगले कुछ मिनटों तक उसका मन इसी छूटे हुए मौके के बारे में सोचता रहा।

उन्हें काफी देर तक नींद नहीं आई। अचानक कुछ सूझा। गांधी फाउंडेशन के अग्रवाल कई महीनों से मुझे अपने त्रैमासिक पत्रिका के लिए कुछ लिखने के लिए परेशान कर रहे थे। अब समय आ गया है! उनके मन में शब्द उमड़ने लगे। एकदम सही शीर्षक: गाय और गांधीवादी अर्थशास्त्र। 'शोध से सिद्ध हुआ है कि ट्रैक्टर और रासायनिक उर्वरकों के बजाय खेती का पुराना लेकिन प्राकृतिक तरीका सबसे अच्छा है: बैलों और गायों का उपयोग करके की जाने वाली प्राकृतिक खेती। इसके लाभ बहुत अधिक हैं। गायें किसान की मदद सिर्फ जुताई में ही नहीं करतीं। वे खाद भी देती हैं और इस तरह से काटी गई फसल अधिक स्वस्थ होती है। इसका मतलब है कि गायों की हत्या पर प्रतिबंध लगाना आवश्यक और अत्यंत महत्वपूर्ण है।' एकदम सही! एक तीर से दो निशाने। यह लेख मेरा सार्वजनिक प्रायश्चित है और वैसे भी कोई प्रगतिशील उस दिल्ली स्थित पत्रिका को नहीं पढ़ता। लेकिन अगर कोई पढ़ता है, और मैं उन्हें जानता हूँ... तो ठीक है, पढ़ने दो। यह सब गांधीवादी अर्थशास्त्र का ही हिस्सा है। एक वाक्य ही उन्हें चुप कराने के लिए काफी था: ‘मेरा निबंध पूरी तरह से

गांधीवादी अर्थशास्त्र के अनुरूप है और ये इस विषय पर मेरे निजी विचार नहीं हैं।' उन्होंने इसे कल लिखने और तुरंत डाक से भेजने का फैसला किया और फिर परसों नरसपुरा के लिए रवाना हो गए। इसके बाद प्रोफेसर चैन से सो गए।

वह सुबह जल्दी उठे, थोड़ी देर तेज सैर की और तरोताजा महसूस किया। उन्होंने अपनी कॉफी खत्म की, सिगरेट जलाई और गांधीवादी अर्थशास्त्र पर अपना लेख लिखना शुरू किया। जब वे दूसरे पैराग्राफ पर थे, तभी फोन की घंटी बजी।

'सर, ये हम हैं।'

'माफ़ कीजिए, मुझे नहीं पता कि ये कौन है।'

'हम कल आपके साथ आपके गांव आए थे।'

'तुम! ठीक है, ठीक है, अब जल्दी करो। मैं कुछ लिख रहा हूँ।'

मुझे खेद है। लेकिन मुझे आपको कुछ बताना ज़रूरी था। यहाँ कुछ लोगों को शक है कि आप प्रायश्चित और अपनी माता के अंतिम संस्कार के लिए अपने गाँव जा रहे हैं। उन्होंने आपकी हर गतिविधि पर नज़र रखने के लिए जासूस भेजे हैं। मैंने आपको चेतावनी देने के लिए फ़ोन किया था कि वे आपको बदनाम करने के लिए किसी गुप्त योजना पर काम कर रहे हैं। वे कोई किताब या कुछ और प्रकाशित करने की योजना बना रहे हैं, महोदय।

लेकिन मैंने कहा था कि मैं ये सब नहीं कर रही हूँ। जब मैंने ये कहा था तब तुम वहीं थे। क्या तुमने उन्हें नहीं बताया?

'हमने किया, महोदय, लेकिन उन्होंने कहा कि आप दोहरे चरित्र वाले व्यक्ति हैं। उन्होंने कहा कि यह सिर्फ एक मुखौटा है जिसे आप पहने हुए हैं और आप वास्तव में वे अनुष्ठान करने जाएंगे और इसीलिए उन्होंने अपने सीआईडी को भेजा है। उन्होंने हमसे इसे गुप्त रखने को कहा है।'

'यह वाकई दुर्भाग्यपूर्ण है। यह इतना निजी मामला है। मेरी मां की मौत और मेरे गांव में जो कुछ भी हुआ, उसे सार्वजनिक करना आपके लिए उचित नहीं था।'

हमें खेद है, लेकिन कल रात पार्टी में बातचीत इधर-उधर भटक गई और हम इस बात पर चर्चा करने लगे कि आज हिंदू धर्म कितना पतित हो गया है। हमें उस पतन के उदाहरण के रूप में कल आपके घर में जो देखा, उसका वर्णन करना पड़ा। लेकिन हमने आपका पक्ष लिया, महोदय। हमने कहा कि आप एक दुर्भाग्यशाली पीड़ित हैं जिनमें ऐसी बुराइयों से लड़ने का साहस और दृढ़ता है।

‘पार्टी में कौन-कौन मौजूद थे?’

‘इससे क्या फर्क पड़ता है, महोदय?’

'कलेनहल्ली प्रकाश गौड़ा, रामाराजू, आनंदप्पा बडिगेराहल्ली, जयेंद्र हंसुर निश्चित रूप से वहां रहे होंगे।'

‘आप सब कुछ जानते हैं, महोदय। मुझे यकीन है कि आपके अपने सीआईडी (संस्थागत जांच अधिकारी) हैं।’

‘छी! मुझे किसी सीआईडी की ज़रूरत नहीं है। ये कमीने अपराधी मुझे सीढ़ी बनाकर शोहरत हासिल कर चुके हैं और अब पलटकर मुझ पर थूकना चाहते हैं! मैं इन बदमाशों को कुचल दूंगा। मैं यह सुनिश्चित करूंगा कि उनकी लिखी कोई भी चीज़ कहीं भी प्रकाशित न हो। जाकर उन्हें बता दो कि मैं उन्हें बर्बाद करने वाला हूँ!’ उसने फ़ोन पटक दिया और गुस्से से फुफकारता हुआ वहीं खड़ा रहा। वह काफी देर तक उसी तरह खड़ा रहा, फ़ोन को घूरता रहा और अपने इस असामान्य गुस्से पर सोचने लगा। मुझे चिल्लाना नहीं चाहिए था। धिक्कार है! इन कमीनों को पता चल जाए कि मुझे भी गुस्सा आ सकता है। मुझे इन स्थानीय कंजूसों की चिंता करने की ज़रूरत नहीं है। मैं राष्ट्रीय स्तर पर मशहूर हूँ...नहीं! मुझे अंतरराष्ट्रीय पहचान मिली है। इनमें से किसी भी कीड़े को विदेशों के विश्वविद्यालयों में भाषण देने के लिए स्थायी निमंत्रण नहीं मिलते। इससे उसका आत्मविश्वास बढ़ा। अब उसे भूख लगने लगी। उसने कैथरीन कुट्टी को आवाज़ दी और उससे ऑमलेट और टोस्ट बनाने को कहा। उसने नाश्ते के बाद दो केले खाए और कड़क कॉफी पीकर अपने स्टडी रूम में गया और सिगरेट जलाई। कलेनहल्ली प्रकाश। कमीना। ये है मेरे प्यार का बदला। मैं अपने माता-पिता से मिलने से पहले उस हरामखोर की बेटी की शादी में गया था। और वो मुझे धोखा देकर बदला चुका रहा है। मैंने उसे चुनाव न लड़ने के लिए कहा था। लेकिन वो हरामखोर विधायक बनने की जल्दी में था। और वो हार गया, जैसा कि मुझे पता था। और उसने अपनी हार का दोष मुझ पर मढ़ दिया। 'तुमने दिल से प्रचार नहीं किया।' मैं उसे और उस पूरे हरामखोर गिरोह को बर्बाद कर दूंगा। अगर मैं ऐसा नहीं करूंगा तो मैं प्रोफेसर शास्त्री नहीं हूं! उसने मन ही मन कसम खाई।

वह अपने कंप्यूटर पर लौट आया, लेकिन उसका मूड पूरी तरह खराब था। पंद्रह मिनट बाद, वह बिस्तर पर बेसुध पड़ा था। लेख न लिखने से उसका कुछ भी नुकसान नहीं होगा। उसने अपनी आँखें बंद कर लीं। महिलाओं को अपने बेटों से ज़्यादा

दामाद से लगाव होता है... सुब्बन्ना ने तो वैसे भी अपना सिर मुंडवा लिया है और माँ का अंतिम संस्कार भी कर दिया है। माँ को उससे प्यार था... बाकी जो करना है करने दो। वह कमीना प्रकाश गौड़ा पड़ोसी गाँव में रहता है... मुझे यकीन है कि अगर मैं वहाँ गया तो वह अपने जासूस भेज देगा। उसके कुत्ते मालिक को खबर देंगे—शास्त्री मंदिर में सोए थे। शास्त्री ने अपना सिर मुंडवाया था। शास्त्री ने किसी ब्राह्मण को गाय दान में दी थी। शास्त्री ब्राह्मणों के चरणों में गिरे थे। शास्त्री... कमीना प्रकाश गौड़ा इस जानकारी का इस्तेमाल मेरे खिलाफ करेगा... वह एक घटिया गपशप लिखेगा... मैं प्रोफेसर शास्त्री हूँ। मुझे परवाह नहीं। मैं दूसरा लेख लिखूँगा। मैं उसे एक असभ्य और नीच व्यक्ति कहूंगा जिसे मातृत्व की पवित्रता का ज्ञान नहीं है। जब आदि शंकराचार्य ने संन्यासी के निषेध का उल्लंघन करते हुए अपनी माता के अंतिम संस्कार किए, तो इससे यही पता चलता है कि ऐसे महान पुरुष भी मातृत्व की पवित्रता को कितना महत्व देते थे। वे पलंग पर बैठ गए और सिगरेट जलाई।

शाम तक उनका मन बदल गया। सुब्बन्ना को यहाँ अंतिम संस्कार करने दीजिए। मैं गया जाकर सीधे अंतिम संस्कार करूँगा। सब कुछ आस्था पर निर्भर करता है। अगर मेरी आस्था मजबूत है, तो माताजी सीधे भगवान विष्णु के चरणों में पहुँच जाएँगी। गया जाकर दिवंगत आत्मा को एक बार पिंड (पवित्र चावल का गोला) अर्पित कर दूँ, तो फिर वार्षिक अंतिम संस्कार नहीं करने पड़ेंगे। मैं अकेला ही जाऊँगा, जैसे मैंने अपनी सारी लड़ाइयाँ अकेले ही लड़ी हैं... ये कमीने वैकुंठ के दिन तक, यानी तेरहवें और अंतिम दिन तक, यहाँ और नरसपुरा में मेरा पीछा करेंगे। मैं बैंगलोर से बाहर नहीं निकलूँगा। मैं बैंगलोर में ही रहूँगा, हर फोन उठाऊँगा और तेरहवें दिन के अंतिम संस्कार पूरे होने के बाद गया के लिए रवाना हो जाऊँगा। मेरे पुराने प्रशंसक और साथी विचारक प्रोफेसर सिन्हा ने मुझे पटना विश्वविद्यालय में 'भौतिकवाद और प्रगति' विषय पर बोलने का निमंत्रण दिया है। मैं उन्हें फोन करूँगा। वे मुझे यात्रा खर्च दिलवा देंगे। बैंगलोर-पटना-बैंगलोर। दो व्याख्यान। दस हजार। मुझे उसमें से कुछ सामग्री गया की रस्में निभाने के लिए चाहिए।

उन्होंने अपनी एड्रेस बुक खोली, 'एस' के नीचे देखा और सिन्हा को फोन किया, जो शास्त्री से बात सुनकर प्रसन्न हुए।

'इसे तय समझो। मुझे बताओ कि तुम कौन सी फ्लाइट ले रहे हो। मैं तुम्हें एयरपोर्ट से लेने आऊंगा।'

प्रोफेसर ने एक पल सोचा। उन्हें पता था कि सिन्हा एक कट्टर प्रगतिवादी हैं। उन्हें यह भी पता था कि एक बार एयरपोर्ट से उन्हें लेने का प्रस्ताव मान लेने के बाद वे सिन्हा के चंगुल से नहीं बच पाएंगे। और फिर प्रोफेसर को यह भी पता चल गया कि वे गया यात्रा को सिन्हा से छिपा नहीं पाएंगे।

मैंने अपनी फ्लाइट बुक नहीं की है। मुझे नहीं पता कि मुझे कौन सी फ्लाइट मिलेगी। कृपया आप मेरी परेशानी न उठाएं। मुझे पूरा यकीन है कि मैं एक दिन पहले वहां पहुंच जाऊंगा। कृपया मेरे लिए गेस्ट हाउस में एक कमरा आरक्षित कर दें। मैं सीधे वहीं पहुंच जाऊंगा।

प्रोफेसर शास्त्री तेरहवें दिन तक शहर में ही रहे। उन्होंने चार सार्वजनिक कार्यक्रमों में भाग लिया। उन्होंने सार्वजनिक हित के कुछ मुद्दों पर अलग-अलग महत्वपूर्ण विचार व्यक्त किए और यह सुनिश्चित किया कि उन्हें मीडिया में उचित कवरेज मिले। उनकी तस्वीरें समाचार पत्रों में प्रमुखता से छपीं।

नरसपुरा से कोई फोन नहीं आया। उनकी बहनें, बहनोई... किसी ने फोन नहीं किया। उन्होंने बाद में उन्हें सूचित करने का निर्णय लिया, जब वे उन अनुष्ठानों के बदले गया अनुष्ठान कर लेंगे, जो केवल उन्हें अपमानित करने वाले प्रायश्चित के निरर्थक तरीकों का ही परिणाम होंगे।

~

प्रोफेसर शास्त्री ने उत्तर भारत में काफी यात्रा की थी, लेकिन उनकी यात्राएँ लगभग प्रमुख शहरों तक ही सीमित थीं। उनकी यात्रा का तरीका लगभग एक जैसा था: हवाई अड्डे पर उनका नाम लिखे हुए तख्तियाँ लिए स्वयंसेवकों का एक समूह उनका स्वागत करता, फिर उन्हें टैक्सी से किसी गेस्ट हाउस या स्टार होटल ले जाया जाता और वे वहाँ एक दिन या ज़्यादा से ज़्यादा एक सप्ताह बिताते, विशाल जनसमूहों को संबोधित करते। इस वजह से उनके लिए हिंदी सीखना लगभग असंभव था। जब दूसरे लोग हिंदी बोलते थे तो वे उसे समझ तो लेते थे, लेकिन यह समझ नाममात्र की ही थी। उनके लिए बोलते समय एक पूरा वाक्य बनाना असंभव था। वे हिंदी बोलते समय अंग्रेज़ी व्याकरण के नियमों का प्रयोग करते थे और जब कोई हिंदी शब्द उन्हें याद नहीं आता था, तो वे उसे उसके अंग्रेज़ी समकक्ष से बदल देते थे। जब वह भी काम नहीं करता था, तो वे कन्नड़ समकक्ष का प्रयोग करते थे। गया में प्रोफेसर को ऐसी कोई भाषाई समस्या नहीं थी। वहाँ के पंडित—पुजारी जो समारोह आयोजित करते थे

—लगभग हर भारतीय भाषा में पारंगत थे। गया उन पवित्र स्थलों में से एक था जहाँ देश भर से हज़ारों लोग आते थे। जिस पंडित से वे मिले, वे उत्कृष्ट कन्नड़ और अंग्रेज़ी बोलते थे।

'पांच हजार, सब कुछ मिलाकर। इसमें पुजारी का चढ़ावा और नाई की फीस भी शामिल है।'

प्रोफेसर मान गए। पाँच हज़ार डॉलर उनके व्याख्यान दौरे की कमाई का आधा हिस्सा था।

लेकिन मेरी एक शर्त है। मैं अपना पूरा सिर मुंडवाना नहीं चाहता। बस कुछ बाल हटवाना चाहता हूँ, एक प्रतीक के तौर पर।

पांडा मान गया और उसने अपने सिर पर पानी की कुछ बूँदें छिड़कीं और कुछ मंत्र जपने लगा। उसने नाई को बुलाया और उसके कान में हिंदी में कुछ फुसफुसाया और वहाँ से चला गया। नाई ने प्रोफेसर को अपने पीछे आने को कहा और उन्हें नदी के किनारे एक चिकने पत्थर पर बैठा दिया। नाई ने उनसे कुछ देर इंतजार करने को कहा।

मुझे नरसपुरा जाना चाहिए था...उन कमीनों से डरना नहीं चाहिए था। सुब्बन्ना एक अच्छा आदमी है। वह पूरी श्रद्धा से अंतिम संस्कार करेगा, लेकिन मैं उसका बेटा हूँ। मुझे ही करना चाहिए था। मैंने सबको नाराज़ कर दिया है—सुब्बन्ना को, मेरी बहनों को, लक्ष्मी को और सबसे ज़्यादा पिताजी को। इस उम्र में। कौन जाने कब उनकी मृत्यु हो जाएगी? और मुझे पता है कि वह क्या...ओह, उन्होंने तो पहले ही तय कर लिया होगा कि मैं उनके अंतिम संस्कार नहीं करूँगा...जो बेटा अपनी माँ के अंतिम संस्कार नहीं करता, वह पिता के अंतिम संस्कार कैसे कर सकता है...क्या शंकराचार्य गया गए थे? पांडा से पूछना पड़ेगा...अरे! अरे! ओए! उसने क्या कर दिया? कमीने नाई! प्रोफेसर गुस्से से आग बबूला हो गए और कांपती उंगलियों से अपना सिर छुआ। उन्होंने जल्दी से अपनी उंगलियों को अपने दाहिने गाल पर घुमाया। उस कमीने नाई ने सिर से दाढ़ी तक दाहिना हिस्सा पूरी तरह से काट दिया था। प्रोफेसर बार-बार अपना सिर और गाल छूते रहे और नाई पर चिल्लाते रहे।

'आईना, आईना! मुझे एक आईना दो!' उसने इशारे से कहा, उसके हाथ उसकी आवाज से निकलने वाले तिरस्कार और क्रोध की नकल कर रहे थे।

नाई ने उसे खाली निगाहों से देखा।

'आईना!'

नाई ने अपना दाहिना हाथ उठाया, जिसमें रेजर था, और इशारे से कुछ कहा जो प्रोफेसर को समझ नहीं आया।

‘आईना! आईना...पांडा! पांडा! पांडा को बुलाओ!’ वह फिर चिल्लाया।

नाई पांडा को ढूंढने निकल पड़ा। उसने किनारे पर नज़र दौड़ाई कि कहीं वह वहाँ तो नहीं है। नहीं। दूसरा सबसे संभावित स्थान बस स्टैंड था, जहाँ आमतौर पर बड़ी संख्या में पांडा तीर्थयात्रियों और श्रद्धालुओं का इंतज़ार करते थे। उसने पांडा को अपने लगभग पचास साथियों के एक समूह के बीच पाया, जो अगली बस का इंतज़ार कर रहे थे, जो उन्हें संभावित ग्राहकों को लाएगी।

जब पांडा दोबारा प्रोफेसर से मिला तो प्रोफेसर चिल्लाए, 'देखो इसने क्या कर दिया!'

‘क्या हुआ साहब?’ पांडा ने शांत स्वर में पूछा।

‘मैंने तुम्हें विशेष रूप से निर्देश दिया था... स्पष्ट रूप से कहा था कि कुछ बाल मुंडवा लो। देखो इसने क्या कर दिया!’

‘ओह ओह ओह! हाँ, हाँ। मुझे याद है। मैंने इस आदमी को बताया था...’ वह नाई की ओर मुड़ा और तेजी से हिंदी में बोला।

नाई ने प्रोफेसर की आँखों में सीधे देखते हुए कहा, 'यह कोई फैशन वाले हेयरकट करवाने की सैलून नहीं है। मैं रोज़ाना सैकड़ों लोगों की दाढ़ी बनाता हूँ। मैं पांडा के निर्देश भूल गया था, लेकिन आप सुनिए साहब—कोई भी चावल का अर्पण अनुष्ठान बिना सिर मुंडवाए नहीं करता। मुझे शास्त्रों और नियमों का ज्ञान है।'

प्रोफेसर को यह बात समझ नहीं आई। पांडा ने उनके लिए इसका अनुवाद किया और उसी शांत स्वर में कहा, 'अब हम क्या कर सकते हैं, साहब? मुझे लगता है कि बेहतर होगा कि आप पूरी तरह से दाढ़ी मुंडवा लें। मेरा मतलब है, मैं आपकी ज़रूरतों के हिसाब से मंत्रों में बदलाव कर सकता हूँ, लेकिन ये नाई शास्त्रों के मामले में बहुत हठी हैं।'

नहीं! मैं इस बकवास और इस रस्म से तंग आ चुका हूँ। मेरे पैसे वापस करो, मैं जा रहा हूँ।

'कौन सा पैसा?'

‘ये पाँच हज़ार रुपये मैंने तुम्हें दिए थे।’

‘यह मेरे पास नहीं है। मैंने इसे आपके सामने खड़े मुखिया पांडा को दे दिया है। वही सब कुछ निर्देशित करता है। हम बस उसके आदेशों का पालन करते हैं।’

‘धोखाधड़ी! तुमने मुझे धोखा दिया है! अभी मेरा पैसा लौटाओ वरना मैं पुलिस के पास जाऊंगा!’ प्रोफेसर चिल्लाया।

‘पुलिस? कौन सी पुलिस? याद रखो, तुम एक पवित्र स्थान पर आए हो और तुम अपने वचन से मुकर रहे हो, मैं नहीं। यह नया है। लोग यहाँ इस पवित्र आस्था के साथ आते हैं कि यहाँ किए जाने वाले अनुष्ठान उनके माता-पिता और पूर्वजों को स्वर्ग में स्थान दिलाएंगे। और तुम ऐसे शब्द बोल रहे हो जो तुम्हें नरक में ले जाएंगे,’ पांडा ने प्रोफेसर के लहजे से मिलते-जुलते स्वर में कहा।

तब तक, लगभग दस और पांडा उनके चारों ओर जमा हो गए थे। प्रोफेसर ने अपनी कहानी सुनाई।

‘नाई सही कह रहा है। बाईं तरफ के बाल मुंडवा लो और अपनी रस्म जल्दी पूरी कर लो,’ उन्होंने एक साथ कहा।

प्रोफेसर ने अपने अभी-अभी शेव किए हुए गाल को छुआ, समूह की ओर देखा और नाई को इशारा किया। कोई और रास्ता नहीं था। बाएँ हिस्से के बाल काटने ही पड़ेंगे।

रस्में पूरी करने के बाद वह होटल के कमरे में लौटा और आईने में अपना चेहरा देखा। किसी कारणवश, उसका चेहरा और गंजा सिर उसे सुब्बन्ना के चेहरे और सिर की याद दिला रहा था। रस्में इसी तरह चलती हैं। उसे बेचारे नाई पर चिल्लाने का पछतावा हुआ। लेकिन यह एक नई समस्या थी। उस रात वह इस बारे में सोचता रहा, और सुबह उसने एक टोपी खरीदने का सोचा और इस बात पर गहराई से विचार करने लगा कि कौन सी टोपी उस पर जंचेगी। गांधी टोपी अच्छी रहेगी, लेकिन जयप्रकाश नारायण की टोपी और भी बेहतर होगी। असल में, टोपी सबसे अच्छी रहेगी। लेकिन टोपी पहनने से समस्या हल नहीं हुई, बस छिप गई। उसे अभी भी सिन्हा को जवाब देना था, उसे यकीन था कि प्रोफेसर के गंजे सिर के पीछे का कारण जानना चाहेंगे। अंत में, प्रोफेसर ने एक काली टोपी खरीदी। तभी उसे एक विचार आया—वह कहेंगे कि उनके सिर पर कोई त्वचा का संक्रमण हो गया था और उन्होंने डॉक्टर की सलाह पर अपना सिर मुंडवा लिया था।

‘त्वचा विशेषज्ञ ने कहा कि लोशन तब तक काम नहीं करेगा जब तक वह सीधे त्वचा के संपर्क में न आए। मुझे अपना पूरा सिर मुंडवाना पड़ा,’ उन्होंने सिन्हा को बिना कोई स्पष्टीकरण मांगे ही बता दिया।

‘आप सही कह रहे हैं। डॉक्टर की सलाह मानना हमेशा सबसे अच्छा होता है,’ उसने सहमति जताई।

लेकिन जब सिन्हा ने यात्रा भत्ता और महंगाई भत्ता के बिल तैयार करने के लिए हवाई टिकट लिए, तो प्रोफेसर को अपनी गलती का एहसास हुआ। उनके टिकट में बनारस अंतिम गंतव्य के रूप में दिखाया गया था। पटना पहुँचने वाले 99 प्रतिशत लोग गया में जाकर धार्मिक अनुष्ठान अवश्य करते। यह बात सिन्हा की नज़र से नहीं बच सकती थी। लेकिन सिन्हा ने कुछ नहीं कहा। उन्होंने बिल पर हस्ताक्षर कर दिए, जिसके अनुसार प्रोफेसर को बैंगलोर-बनारस-बैंगलोर की हवाई यात्रा और बनारस-पटना-बनारस की प्रथम श्रेणी की ट्रेन यात्रा का टिकट मिला।

‘भौतिकवाद और प्रगति’ विषय पर दिए गए दोनों व्याख्यान बेहद सफल रहे। यह प्रोफेसर के सबसे चर्चित व्याख्यानों में से एक था। वे लगभग दो दशकों से इस विषय पर हर जगह भाषण देते आ रहे थे। उन्हें किसी तैयारी की आवश्यकता नहीं थी; शब्द सहजता से प्रवाहित होते थे, मानो आदत से। श्रोता झूमते रहे, देर तक तालियाँ बजाते रहे और उन्हें घेर लिया। प्रोफेसर शास्त्री की लोकप्रियता फिर से लौट आई।

बनारस जाते समय ट्रेन में ही उन्होंने तय कर लिया कि वे वहां कार्यशाला में अपने पूरे प्रवास के दौरान काली टोपी पहने रहेंगे। और फिर अमेरिका में उन्हें टोपी की ज़रूरत ही नहीं पड़ी। किसी को कोई फर्क नहीं पड़ता था कि आप टोपी पहनते हैं या नहीं, या आप गंजे हैं। अमेरिका में सचमुच आज़ादी थी।

जब मैं वापस आऊंगा, तब तक मेरे बाल दोबारा उग चुके होंगे।

दिगंथ और बबीता खबर सुनते ही तुरंत नरसपुरा के लिए रवाना हो गए। दंपति ने अपनी दादी की अस्थियों को प्रयाग में विसर्जित करने का सुझाव दिया। शेषा शास्त्री ने इस सुझाव का समर्थन किया और सभी रीति-रिवाजों के पूरा होने के बाद किसी शुभ दिन प्रयाग जाने की सलाह दी। सुब्बन्ना, जिन्होंने दाह संस्कार से लेकर अब तक सभी रस्में निभाई थीं, उन्हें यह यात्रा करनी पड़ी।

'चाचा जी, कृपया फ्लाइट ले लीजिए। हम आपके लिए टिकट खरीद देंगे,' दिगांथ ने कहा।

लेकिन एक व्यावहारिक समस्या थी। अस्थियों को सीलबंद मिट्टी के बर्तन में बहुत सावधानी से ले जाना था। सुब्बन्ना ने इससे पहले कभी हवाई यात्रा नहीं की थी। उन्हें हवाई अड्डे के सुरक्षा नियमों की जानकारी नहीं थी, इसलिए उन्होंने ट्रेन से यात्रा करने का फैसला किया। लक्ष्मी की बनारस जाने की योजना भी मददगार साबित हुई। परिवार ने उनसे सुब्बन्ना और विशालाक्षी को प्रयाग तक ले जाने और अस्थि विसर्जन के बाद उन्हें बेंगलुरु वापस जाने वाली ट्रेन में चढ़ाने में मदद करने का अनुरोध किया। लक्ष्मी मान गईं, हालांकि उनकी योजना बेंगलुरु जाने वाली ट्रेन में चढ़ाने के बाद बनारस में ही रुकने की थी।

लक्ष्मी ने एक बार फिर काशी जाने का निश्चय किया था। यह यात्रा आवश्यक थी यदि उन्हें उपन्यास में औरंगजेब द्वारा काशी विश्वनाथ मंदिर के विध्वंस और उसी स्थान पर ज्ञानवापी मस्जिद के निर्माण को प्रामाणिक रूप से चित्रित करना था। उन्हें वास्तव में किसी साथी की आवश्यकता नहीं थी। उन्हें एकांत में रहना अच्छा लगता था। उनकी वास्तविकता उनके पिता के अध्ययन कक्ष के बंद दरवाजों के भीतर, सैकड़ों वर्षों के इतिहास में और उनके द्वारा रचित पात्रों में निहित थी। जब वह खेतों में टहलती और आराम करतीं तो वे उनसे बातें करते थे और आम के पेड़ों और ऊंचे नारियल के पेड़ों से उन्हें देखते थे। केंचप्पा और लक्ष्मम्मा अपनी मर्जी से उनसे बात नहीं करते थे। वह बनारस की अपनी अकेली यात्रा के लिए उत्सुक थीं। उन्होंने ट्रेन के प्रत्येक पड़ाव की कहानी याद करने के बारे में सोचा था। उस क्षेत्र के ऐतिहासिक या वास्तविक नाम को याद करते हुए, जिससे वह संबंधित था, और पिछले हज़ार वर्षों में उस पर शासन करने वाले मूल राजा को, और यह कैसे अन्य राजाओं, सुल्तानों और नवाबों को हस्तांतरित हुआ, और आसपास के मंदिरों, जैन बस्तियों, विहारों और बौद्ध स्तूपों को, और किस बादशाह, सुल्तान या नवाब ने उन्हें नष्ट किया या उन्हें अक्षुण्ण

छोड़ दिया, उसे याद आ रहा था। उसने कल्पना की थी कि यह यात्रा उसे उपमहाद्वीप के इतिहास को एक अलग तरीके से सिखाने वाली ज्ञानवर्धक यात्रा होगी।

जैसा कि उसने उम्मीद की थी, विशालाक्षी और सुब्बन्ना ने उसे अपनी बातचीत में खींच लिया। विशालाक्षी उससे आठ साल बड़ी थी और उससे प्रथम पुरुष के रूप में बात करती थी। लक्ष्मी सुब्बन्ना को कॉलेज में पढ़ते समय थोड़ा-बहुत जानती थी। इसलिए, लगभग तेरह साल के उम्र के अंतर के बावजूद, वह उससे द्वितीय पुरुष के रूप में बात करता था। ढाई दिन की ट्रेन यात्रा के दौरान, हर विषय अंततः प्रोफेसर शास्त्री पर ही आकर रुक गया। कम से कम विशालाक्षी ने तो यही सुनिश्चित किया।

'मैं ये नहीं कह रहा कि हर पढ़ा-लिखा इंसान ऐसा बन जाता है, लेकिन वो ऐसा क्यों बन गया? उस कहावत की तरह जिसमें बंदर न सिर्फ खुद को बल्कि पूरे बगीचे को बिगाड़ देता है... लेकिन देखो, ये मेरे शब्द नहीं हैं। ये बात मुझे तुम्हारे पिता, हमारे नरसिम्हे गौड़ा ने बताई थी। उन्होंने भी यही कहावत कही थी। तुम इतने समझदार हो कि जानते हो कि उन्होंने ये किस संदर्भ में कही थी...'

सुब्बन्ना ने उसकी बात काट दी। 'यह पुरानी कहानी है और अब खत्म हो चुकी है। अब इसे क्यों कुरेद रही हो? क्या तुम्हें इस बात का जरा भी अंदाजा है कि तुम क्या बोल रही हो?'

लक्ष्मी को उस पर तरस आया। वह जानती थी कि विशालाक्षी असभ्य, देहाती और बहुत सीधी-सादी थी। 'नहीं, नहीं, कोई बात नहीं। बुरा मत मानो। उसने सच कहा।'

सुब्बन्ना ने कहा, 'फिर भी, किसी को अप्रिय सत्य नहीं बोलना चाहिए। "न ब्रुयात् सत्यमप्रियम्",' उन्होंने संस्कृत की इस कहावत का हवाला दिया।

उनके पास इटारसी तक का रिजर्वेशन था। उन्होंने एक सहयात्री से बात की जिसने उन्हें आधे घंटे बाद वाली ट्रेन लेने की सलाह दी। उनका प्लान मुगल सराय में उतरने का था। काशी वहाँ से सिर्फ दस मील दूर थी। काशी और प्रयाग जाने के लिए बहुत सारी बसें, रिक्शा और टैक्सियाँ उपलब्ध थीं।

सुब्बन्ना ने कहा, 'चलो पहले काशी चलते हैं। हम वहां एक दिन रुकेंगे और फिर प्रयाग के लिए रवाना होंगे।'

वे सुबह दस बजे मुगल सराय पहुँचे। लक्ष्मी ने दो साइकिल रिक्शा किराए पर लिए। पति-पत्नी एक में बैठे और लक्ष्मी दूसरे में। सफेद लुंगी में लिपटी राख की कलश, जो गले में कसकर बंधी थी, सुब्बन्ना की गोद में सुरक्षित रखी थी। मुगल सराय

से निकलने के पंद्रह मिनट बाद, दोनों साइकिल रिक्शाओं के बीच की दूरी लगभग एक फर्लांग (लगभग 10 किमी/घंटा) हो गई थी। रिक्शा चालक भाई थे। लक्ष्मी के रिक्शा का चालक लगभग तीस वर्ष का दुबला-पतला आदमी था। उसकी त्वचा काली पड़ गई थी। उसने कपड़े का एक टुकड़ा लुंगी की तरह पहन रखा था। उसकी बिना आस्तीन वाली छोटी कमीज से पसीने की बूँदें लगातार टपक रही थीं। उसकी बिना आस्तीन वाली कमीज के बाएँ कंधे से गंदे धागे का एक गुच्छा झाँक रहा था, जो देखने में पवित्र धागे जैसा लग रहा था। उसके सिर पर केसरिया कपड़ा रुमाल की तरह बंधा हुआ था।

‘भाई, तुम्हारा नाम क्या है?’

सांसें लेते हुए उन्होंने कहा, 'बिश्वनाथ शर्मा।'

‘क्या यह सरमा है या शर्मा?’

‘बिल्कुल वही। जो तुमने कहा था। सरमा।’

‘शर्मा। इसका मतलब है कि आप ब्राह्मण हैं?’

'हां, उपाधियाँ। हम कन्याकुब्ज ब्राह्मण हैं।'

‘तुम ब्राह्मण हो और साइकिल रिक्शा चलाते हो?’

‘माताजी, हम जीविका कमाने के लिए और क्या कर सकते हैं?’

‘लेकिन...’ वह अचानक रुक गई, उसे समझ नहीं आ रहा था कि सवाल को सही तरीके से कैसे पूछे। उसने रिक्शा को किनारे रोका, गति धीमी की और एक घने नीम के पेड़ के नीचे रोक दिया। उसने हैंडल से बंधी थैली की डोरी खोली, एक पान निकाला, मुंह में डाला और धीरे-धीरे चबाने लगा। थोड़ी देर बाद उसने कहा, ‘माताजी, आप कुछ पूछ रही थीं... मुझे पता है... आप मुझसे पूछना चाहती थीं...’ वह रुका, फिर बोला, ‘ब्राह्मणों का कर्तव्य है स्वेच्छा से गरीबी को अपनाना। प्राचीन काल से ही यह जाति सभ्यता से दूर जंगलों में आश्रमों में रहती आई है और जीवन भर ज्ञान प्राप्त करने और समाज में ज्ञान का प्रसार करने में लगी रही है। है ना? हर बादशाह, सुल्तान और नवाब ने यह जान लिया था कि इस जाति का पूर्ण विनाश ही हिंदुओं को इस्लाम में परिवर्तित करने का एकमात्र तरीका है। उन्होंने ब्राह्मणों को इकट्ठा किया और चिमटे से उनके मुंह खोलकर उनमें थूका क्योंकि वे जानते थे कि इससे उनकी जाति अपवित्र हो जाएगी। उन्होंने उनके गले काट दिए और उन्हें जिंदा जला दिया।’ हमारे हजारों पूर्वज भीतरी गांवों में भाग गए और लोगों को हमारी पौराणिक कथाओं और

शास्त्रों से कहानियां और उपदेश सुनाने लगे और इस तरह हिंदू धर्म को बचाए रखने में कामयाब रहे। जब अंग्रेज आए, तो उन्हें जल्दी ही एहसास हो गया कि इस जाति को कुचलने से उन्हें पूरे भारत को ईसाई बनाने में मदद मिलेगी। अंग्रेज तो चले गए, लेकिन हमारे अपने नेता वोट पाने के लिए ब्राह्मणों के खिलाफ नफरत भड़काते रहते हैं,' उन्होंने व्यंग्य भरी मुस्कान के साथ कहा। उसने देखा कि उनके मुंह में पान का रस हिल रहा था।

'अगर आपको इतनी जानकारी है, तो मुझे यकीन है कि आपको काशी का इतिहास भी गहराई से पता होगा। क्या आप मुझे दो-तीन दिन के लिए काशी घुमाएंगे?'

'जी, मैं जरूर करूँगा। मैं आपको काशी का एक-एक कोना दिखाऊँगा और हर स्तंभ, मंदिर और मस्जिद की कहानी सुनाऊँगा।'

'आपने क्या-क्या पढ़ा है?' अब वह उत्सुक हो गई। उसने अनुमान लगाया कि उसने कम से कम किसी विश्वविद्यालय से बीए तो किया ही होगा। शायद भारतीय इतिहास में एमए भी।

'थोड़ी-बहुत संस्कृत। मुझे तुलसी रामायण कंठस्थ है। मैंने इसे ज्यादातर सुनकर ही सीखा है। माताजी, काशी में हर किसी को काशी के बारे में सब कुछ पता होना चाहिए। उन्हें इस पवित्र नगर के हर पत्थर की कहानी पता होनी चाहिए, वरना वे यहाँ रहने के लायक नहीं हैं।' उन्होंने सड़क की ओर देखते हुए कहा, 'वे बहुत आगे निकल गए होंगे। मेरा भाई मुझसे ज्यादा ताकतवर है। वह मुझसे ज्यादा तेजी से साइकिल चलाता है, लेकिन मैं हमारे पवित्र महाकाव्यों और पौराणिक कथाओं को उससे बेहतर जानता हूँ। चलिए चलते हैं।'

उसने उसके शब्दों में इतिहास देखा। जब मंदिरों को औद्योगिक पैमाने पर नष्ट कर दिया गया, जब हजारों पुजारियों का नरसंहार किया गया और जब लोगों के पूजा करने के लिए कोई मूर्ति नहीं बची, तब हिंदू धर्म मुख्य रूप से घुमंतू कवियों और भिक्षुओं की मौखिक परंपरा के माध्यम से जीवित रहा। भजन, श्लोक, कविता, कहानियां और प्रवचन एक प्राचीन धर्म के अस्तित्व का साधन बन गए। जब हिंदू धर्म का खुले तौर पर पालन करना संभव नहीं रहा, तो इससे संस्कृत में वैदिक भजनों के पाठ की पुजारी परंपरा में कमी आई। हालांकि, हिंदुओं ने अपने धार्मिक आदर्शों को क्षेत्रीय भाषाओं में व्यक्त किया। यह विकास और भी अधिक बल के साथ आगे बढ़ा

और व्यापक हो गया क्योंकि निचली जातियों से संत उभरने लगे। इसने लोक कथाओं और प्रतीकों का उपयोग और आत्मसात किया और आस्था को तेजी से पुनर्जीवित किया। इस बार, इसकी शक्ति ने एक नया आयाम प्राप्त कर लिया था: हिंदू धर्म का भक्ति या धार्मिक पहलू पूरे देश में फैल गया।

जो दृश्य उसकी आंखों के सामने आया, उसे देखकर वह अपने विचारों में खोई हुई सी स्तब्ध रह गई।

काशी!

दोपहर के सूरज की तेज़ किरणों में, आँखों के सामने अचानक फैला विशाल भूभाग चकाचौंध हो उठा। या फिर यह काशी है?

'वह कौन सी जगह है, सरमाजी?'

'काशी, मुकुट। बनारस।'

'वास्तव में?'

जी हां, माताजी। इसमें कोई शक नहीं।

इतनी दूरी से देखने पर, विशाल मस्जिद एक विशाल मुट्ठी की तरह प्रतीत होती थी जिसने पूरे काशी को अपने वश में कर लिया हो। इसकी भव्य उपस्थिति काशी में प्रवेश करने से पहले ही हर आगंतुक की निगाहों पर छा जाती थी। लक्ष्मी चाहती थी कि उसके पास दूरबीन हो। उसने ध्यान से देखा। उसे मस्जिद के ठीक नीचे घाटों की एक कतार दिखाई दी। उसके दाहिनी ओर एक और मस्जिद थी, जो उतनी भव्य तो नहीं थी, लेकिन ऊंची और आकर्षक थी।

'सरमाजी, मुझे तो सिर्फ मस्जिदें ही दिख रही हैं। विश्वनाथ मंदिर कहाँ है?'

'अरे? क्या आपको नहीं पता था, माताजी? बाईं ओर वह मस्जिद देखिए...' उन्होंने तर्जनी उंगली से इशारा किया। 'वह लंबी, मोटी मस्जिद जो काशी की सबसे बड़ी मस्जिद होने के कारण मानो हंस रही हो? वह ज्ञानवापी मस्जिद है जो मूल काशी विश्वनाथ मंदिर की जगह पर बनी है। औरंगजेब बादशाह ने इसे 1669 में ध्वस्त कर दिया और इसकी दीवारों और स्तंभों पर एक गुंबद बना दिया। और इतना सब करने के बावजूद भी लोग इसे ज्ञानवापी मस्जिद ही कहते हैं। और दाईं ओर वाली मस्जिद देखिए? वहां बिंदु माधव मंदिर था। उसने उसे 1659 में ध्वस्त कर दिया और उसके स्तंभों, पत्थरों और बीमों का उपयोग करके यह आलमगिरी मस्जिद बनवाई। यही वह मस्जिद है जो अब आपको दिखाई दे रही है।'

वाह! उन्हें तो तारीखें भी पता हैं! यहाँ की सभी मस्जिदों का इतिहास बताने के लिए वे सबसे अच्छे व्यक्ति हैं। उन्होंने तेज़ धूप से बचने के लिए अपनी दाहिनी हथेली माथे पर रखी और पूरे शहर पर नज़र डाली। हर जगह मस्जिदें ही मस्जिदें थीं। आकार मायने नहीं रखता। हर मस्जिद किसी पुराने मंदिर की नींव पर बनी थी। इस्लाम की श्रेष्ठता दर्शाने के लिए बनाई गई। उसी ध्वस्त मंदिर की सामग्री का उपयोग करके। काशी। वाराणसी। हिंदू धर्म के विविध संप्रदायों, मार्गों और स्कूलों का घर। वैदिक, जैन, बौद्ध, शाक्त, तंत्र, वैष्णव, शैव, गणपति, राम, कृष्ण... काशी ने सबके लिए अपने द्वार खोल दिए। काशी में ऐसा कोई देवी-देवता नहीं है जिसका निवास स्थान न हो। भारत में प्रचलित पूजा-पाठ का हर रूप यहाँ मौजूद है। दूर-दराज के गुमनाम गांवों से लोग यहां उमड़ पड़े, लुटेरों के गिरोहों का सामना करते हुए और अपनी सारी बचत खर्च करके सुल्तानों द्वारा हिंदुओं पर लगाए गए तीर्थयात्रा कर का भुगतान करते हुए, इस अटूट विश्वास से प्रेरित होकर कि काशी में मृत्यु जन्म और मृत्यु के अंतहीन चक्र से मुक्ति दिलाएगी। हर संप्रदाय का अपना प्रमुख देवता का मंदिर है। हमारी पौराणिक कथाओं के हर छोटे-बड़े देवी-देवता और पात्र का काशी में एक पूजा स्थल है। किसी अन्य शहर में इतने मंदिर नहीं हैं। यही कारण है कि यहां इतनी सारी मस्जिदें हैं। सदियों तक एक ऐसे धर्म के लोगों द्वारा शासित, जो मानते थे कि अन्य धर्मों के मंदिरों को नष्ट करना और उनके स्थान पर मस्जिदें बनाना ही धार्मिक पवित्रता की परिभाषा है। काशी ने हर धर्म, संप्रदाय, पंथ का स्वागत किया और उन्हें एक माँ की तरह समान रूप से पाला-पोसा, और काशी अपनी भावना के अनुरूप इस्लाम को वह सारी भूमि दे देती जो वह चाहता। और इस्लाम ने अपने एकमात्र अस्तित्व की भावना के अनुरूप... एक ऐसी भावना जिसका अर्थ हमेशा अन्य धर्मों का विनाश रहा है... यहां के सभी मंदिरों को ध्वस्त कर दिया और उनकी कब्रों पर मस्जिदें बना दीं।

अब घाटों का नाम स्पष्ट हो गया था। हर घाट का एक नाम था। अस्सी घाट, हनुमान घाट, शिवाला घाट, बच्छराज घाट, आनंदमयी घाट, केदार घाट, चौकी घाट, नारद घाट, अमृतराव घाट, चौसत्ती घाट, पांडे घाट, राणा घाट, दशाश्वमेध घाट, मणिकर्णिका घाट, भोसला घाट, यज्ञेश्वर घाट, राम घाट, मंगलगौरी घाट, दलपत घाट... बाकी के नाम उसे याद नहीं आ रहे थे। मणिकर्णिका घाट का निर्माण मराठा शासक बाजी राव ने करवाया था। दरअसल, इन घाटों का निर्माण मराठों ने या कम से कम

मराठा राजाओं के समय में करवाया था। उसने मोतीचंद्र और डायना एक के वाराणसी पर लिखे विद्वतापूर्ण कार्य को फिर से पढ़ने का फैसला किया। वह काशी के वैकल्पिक इतिहास के बारे में सोचने लगी। एक ऐसा इतिहास जिसमें मराठों के उदय के बिना काशी सीधे मुगलों से अंग्रेजों के हाथों में चली गई, और उसने खुद से पूछा कि क्या यह अस्तित्व में रह पाती—क्या हिंदुओं का पुनर्जन्म हो पाता। उसकी निगाहें सामने घाटों की कतार पर टिकी थीं, लेकिन उसने उन्हें देखना बंद कर दिया।

~

विशालाक्षी का कहना था कि पवित्र काशी में होटल में ठहरना धर्म के विरुद्ध है। वे तीर्थयात्री थे, पर्यटक नहीं। बैंगलोर और अन्य जगहों पर वह बिना किसी अपराधबोध के रेस्तरां का खाना खाती थी, लेकिन इन मामलों में उसका विश्वास दृढ़ था। काशी और रामेश्वरम जैसे पवित्र स्थलों की यात्रा करते समय कुछ नियमों का पालन करना अनिवार्य था। और अब वे यहाँ अपनी माताजी की अस्थियों को प्रयाग में विसर्जित करने का सबसे पवित्र संस्कार करने आए थे। सुब्बन्ना और लक्ष्मी को यह बात उचित लगी। साइकिल रिक्शा चालक विश्वनाथ शर्मा ने भी उसकी बात का समर्थन किया।

'आप कर्नाटक से हैं। हरिश्चंद्र घाट के ठीक ऊपर एक मैसूर विश्राम गृह है। लेकिन वहाँ आपको परेशानी होगी क्योंकि आपको दिन भर जलते हुए शवों की दुर्गंध सहनी पड़ेगी। मुझे लगता है कि आपके लिए सबसे अच्छा होगा कि आप मनमंदिर घाट के पास स्थित मारवाड़ी विश्राम गृह में रुकें। वह साफ-सुथरा है। वहाँ सभी को रहने की अनुमति है। मैं प्रबंधक को जानता हूँ, मेरे साथ आइए।' शर्मा उन्हें मारवाड़ी विश्राम गृह ले गईं। विशालाक्षी को वहाँ के पास वाले हॉल में परोसा गया भोजन बहुत पसंद आया। यह वैष्णव शैली में बना था और स्वादिष्ट, पौष्टिक और शाकाहारी था।

शाम हो चुकी थी। 'कल सुबह जल्दी मिलते हैं। मैं अपने साथ एक पांडा लाऊंगा। उसे सारे रीति-रिवाज बहुत अच्छे से पता हैं और चाहे कितने ही लोग अपनी बारी का इंतज़ार कर रहे हों, वो सबसे पहले आपका संस्कार करेगा। अगर आप थके नहीं हैं, तो आप अभी विश्वनाथ मंदिर जा सकते हैं। मैं आपको मंदिर घुमा दूंगा,' उसने कहा।

वह अपनी साइकिल रिक्शा को पास के दशाश्वमेध घाट तक ले गया, दाहिनी ओर मुड़ा और एक संकरी, भीड़भाड़ वाली गली में प्रवेश किया, जो गेंदे के फूल बेचने वालों, फल विक्रेताओं और पूजा सामग्री बेचने वालों से भरी हुई थी। हर विक्रेता तीर्थयात्रियों को केवल उसी से सामान खरीदने के लिए पुकार रहा था और उन्हें अपनी

दुकान पर जूते-चप्पल मुफ्त में रखने की सुविधा दे रहा था। शाम का समय होने के बावजूद, गली तीर्थयात्रियों और स्थानीय लोगों से खचाखच भरी हुई थी, जो प्रतिदिन विश्वनाथ मंदिर दर्शन करने आते थे।

'अपने पर्स, सोने और पैसों का ध्यान रखना,' शर्मा ने कहा और फिर इशारा करते हुए कहा, 'काशी विश्वनाथ।'

'क्या...कहाँ? कौन सा?' विशालाक्षी ने शर्मा की उंगली की ओर देखते हुए पूछा। सुब्बन्ना भी उतनी ही उलझन में दिख रही थी। और फिर उन्होंने उसे देखा। उन्हें इस अधूरे मंदिर की बिल्कुल भी उम्मीद नहीं थी। ऐसा लग रहा था मानो किसी भिक्षु ने गाँव-गाँव में भीख माँगकर थोड़े-थोड़े पैसे जमा करके मंदिर जैसा कुछ बना दिया हो। भक्तों के लिए मंदिर की परिक्रमा करने की भी जगह नहीं थी।

'...क्या ये काशी विश्वनाथ हैं?' सुब्बन्ना और विशालाक्षी ने एक साथ हैरानी से कहा, शर्मा को ऐसे देखते हुए जैसे गलती उसी की हो। लक्ष्मी को आश्चर्य नहीं हुआ। उसे पहले से ही पता था कि क्या होने वाला है, लेकिन फिर भी उसका दिल बैठ गया।

'लोग इस छतरी को विश्वनाथ मंदिर की तरह पूजते हैं?' सुब्बन्ना ने पूछा।

'चलिए मैं आपको दिखाता हूँ।' शर्मा भीड़ को चीरते हुए आगे बढ़ा और उन्हें नंदी की पत्थर की मूर्ति के पास ले गया।

'देखो। हर शिव मंदिर में नंदी होता है, जो सीधे भगवान विश्वनाथ की ओर मुख किए होता है। वह हर शिव मंदिर के भीतर शिवलिंग पर ध्यान लगाता है... तुम्हें पता ही है।' वह रुका, फिर बोला, 'अब इस नंदी को देखो। देखो यह किसकी ओर मुख किए हुए है।'

तीनों ने ध्यान से देखा। लक्ष्मी को तुरंत ही वह दृश्य याद आ गया जो उसने मुगल सराय से काशी की ओर आते समय देखा था। काशी अभी भी लगभग छह मील दूर थी। उस दूरी से उसने स्पष्ट रूप से देखा था कि विश्वनाथ मंदिर की समाधि पर सदियों से खड़ी विशाल ज्ञानवापी मस्जिद, काशी के आकाश पर अपने अडिग अहंकार में बेपरवाह राज कर रही थी। यह औरंगजेब के धार्मिक उत्साह की विजय थी। और अब उसने देखा कि यह कितनी सुरक्षित थी। बारह फुट ऊँची, आंतों को छेदने वाली कांटेदार तार की अभेद्य बाड़ के अंदर एक मच्छर भी नहीं घुस सकता था। काशी में सर्वव्यापी, निडर हरकतों से लोगों से भोजन और थैले छीनने वाले बंदर भी यहाँ से दूर रहे। मस्जिद के चारों ओर सेना के जवान पहरा दे रहे थे, हर चार फुट पर एक युद्ध के

लिए तैयार सैनिक स्वचालित राइफल लहरा रहा था। यह दृश्य सुब्बन्ना और उसकी पत्नी दोनों को झकझोर गया। अपने व्यापक अध्ययन के बावजूद, लक्ष्मी इस दृश्य के संदेश को समझ नहीं पाई।

'हमारी सरकार ने बाड़ लगाई है, और हमारे सैनिक उस मस्जिद की रक्षा कर रहे हैं जिसे औरंगजेब ने विश्वनाथ मंदिर को ध्वस्त करके बनवाया था,' सरमा ने कहा।

~

तीन दिनों की लगातार ट्रेन यात्रा की थकान के बावजूद नींद आना नामुमकिन था, जिसमें इटारसी से मुगल सराय तक की वह रात भी शामिल थी जो उन्होंने बिना सोए बिताई थी क्योंकि उन्हें स्लीपर बर्थ नहीं मिली थी। सुब्बन्ना और विशालाक्षी दोनों जल्दी सो गए थे और अब गहरी नींद में थे। जैसे ही लक्ष्मी ने अपनी आँखें बंद कीं, ज्ञानवापी मस्जिद उसे चिढ़ाने लगी। उसके मन में उस इमारत की भयानक छवियाँ उभर आईं। उसकी शाखाएँ काशी के क्षितिज के छोर तक और उससे भी आगे फैली हुई थीं, शहर को अपनी शक्ति में जकड़े हुए। वह काशी के हृदय पर खड़ी थी, उसकी पसलियों को कुचल रही थी और उसकी साँसें रोक रही थी। आँखें खोलते ही उसे राहत महसूस हुई, मानो वह किसी जेल से आज़ाद हो गई हो। वह उठ बैठी और अँधेरे में वहीं बैठी रही, जहाँ वह बैठी थी, उससे लगभग चालीस-पचास फीट नीचे बह रही गंगा की आवाज़ सुनने की कोशिश करती रही। उसे कुछ सुनाई नहीं दिया। यह एक शांत नदी है। वास्तव में, गंगा एक गतिशील संस्कृति है जो सब कुछ समाहित और पचा लेती है और चुपचाप बहती रहती है। ये किनारे दर्शन और तर्क के कभी न खत्म होने वाले वाद-विवादों के शाश्वत साक्षी हैं। हर दार्शनिक विचारधारा यहाँ आई है। एक विचारधारा ने दूसरी से बहस की है और उन्होंने आपस में भी बहस की है, ग्रंथ लिखे हैं और खंडन प्रस्तुत किए हैं। संतों ने यहाँ ध्यान किया है। विभिन्न संप्रदायों और पंथों के नेताओं ने अपने-अपने प्रमुख देवता की स्तुति की है। नास्तिकों ने यहाँ अपने नास्तिकता का ज़ोरदार प्रचार किया है। और फिर भी, सदियों से इस शोर को देखते हुए, गंगा शांत भाव से बहती रहती है। उसे नदी किनारे बैठने का मन हुआ। वह चुपचाप उठी, सो रहे दंपति को परेशान न करते हुए दरवाज़ा बंद किया, गली पार की और घाट पर आ गई। नदी एक लंबे दर्पण की तरह लग रही थी, जो पूर्णिमा के साफ चाँदनी को प्रतिबिंबित कर रही थी। उसने बाईं ओर देखा और विशाल ज्ञानवापी

मस्जिद उसे आक्रामक अहंकार के प्रतीक के रूप में दिखाई दी, जबकि जिस नदी के किनारे वह मस्जिद खड़ी थी, वह मानो अचेतन रूप से बह रही थी।

'औरंगजेब का विश्वनाथ मंदिर को ध्वस्त करने का आदेश शीघ्र ही काशी पहुँच गया। इसके साथ ही हिंदुओं द्वारा होने वाले व्यापक विद्रोह को रोकने और, यदि आवश्यक हो, तो उसे दबाने के लिए एहतियाती कदम भी उठाए गए। सूबेदार स्वयं हर गली में गए और हर कोने पर मुस्लिम सैनिकों को तैनात कर दिया। पुजारियों को आहत हो गया। वे जानते थे कि मंदिर को बचाने के लिए शारीरिक हमला करना व्यर्थ है। रातोंरात वे मंदिर के गर्भगृह में प्रवेश कर गए, लिंगम की मूल प्रतिमा को निकालने के लिए आवश्यक अनुष्ठान किए, उसे पास के ज्ञानवापी कुएँ में डाल दिया, कुएँ को मिट्टी से लबालब भर दिया, उसे समतल कर दिया, सारे निशान मिटा दिए और वहाँ से चले गए। अगले दिन काशी विश्वनाथ मंदिर ध्वस्त कर दिया गया, लेकिन विध्वंसकों को पता नहीं था कि पिछली रात क्या हुआ था।' उन्होंने शर्मा के शब्दों को याद किया। केवल शर्मा ही नहीं, काशी में हर कोई यह जानता था।

'कौन है?' उसने मुड़कर उस आवाज़ की ओर देखा जिसके साथ बूट की खुरदरी आवाज़ भी आ रही थी। 'एक महिला। आप इस समय अकेली हैं।' उसने चारों ओर देखा और पाया कि वह अकेली नहीं थी। कुछ लोग सीढ़ियों पर बैठे थे। शायद ध्यान कर रहे थे। या बस गंगा की शांति में डूबे हुए थे, शांति में विलीन होने की कोशिश कर रहे थे। उनके बीच बातचीत हुई: 'आप कहाँ से हैं?'; 'दूसरे देश से?'; 'रेस्तरां का नाम?' उसके मुँह से बीड़ी के धुएँ की बदबू आ रही थी। 'आप इस समय यहाँ अकेली क्यों आई हैं? पानी के पास मत जाइए।'; 'गुंडों से पंगा हो सकता है।'

बाद में, उसने उसे दशाश्वमेध घाट की ओर जाते देखा। उसने अपनी दाहिनी ओर देखा और लकड़ी के खंभों से बंधी नावों की एक कतार देखी। वह उसी सीढ़ी पर बैठ गई जिस पर वह अब तक खड़ी थी और अंधेरे में, किसी खास चीज़ को देखे बिना, बस देखती रही। उसे समय का एहसास नहीं रहा। चंद्रमा अब पश्चिम की ओर बढ़ चुका था और धुंधला हो गया था। वह भूल गई थी कि चंद्रमा किस चक्र में है। उसे चंद्र पंचांग के अनुसार आज का दिन भी नहीं पता था। उसने इसे पढ़ना सीखने का फैसला किया। शायद सुब्बन्ना उसे सिखा सकता था। अगर वह नहीं सिखाता, तो उसे पूरा यकीन था कि वह शास्त्री अय्या से सीख सकती है। उसे इसे जल्द से जल्द सीखना था। वह अपनी बेटी के साथ तुमकुर में रहने के लिए हमेशा के लिए गाँव छोड़ देगा।

अंधेरे से उसे डर नहीं लगा। उसने खुद को याद दिलाया कि कैसे उसने तीन से भी कम बार में गली के गुंडों की बेहतरीन तस्वीरें खींची थीं। और फिर अचानक उसके दिमाग में एक विचार आया। आह! हमदुल्लाह कुहफी को ख्वाजा जहां के साथ काशी जाना चाहिए ताकि वह विश्वनाथ मंदिर के विध्वंस को देख सकें।

मैंने हमदुल्लाह साहब को काशी विश्वनाथ मंदिर के विध्वंस को अपनी आँखों से देखने की इच्छा बताई और उनसे प्रार्थना की कि वे मेरी शीघ्र यात्रा की व्यवस्था करें। उन्होंने मुझे एक दिन का समय दिया ताकि मैं इस पर विचार कर सकूँ और कल मिलने को कहा। जब मैं उनसे मिला, तो उन्होंने कहा, 'मैं तुमसे बहुत प्रसन्न हूँ। तुम्हारा उत्साह तो सबको प्रेरित करता है, मेरे बेटे! मैं अब यहाँ नहीं बैठ सकता, चलो साथ चलते हैं! मुझे उनके अंधकारमय धर्म के इस भव्य भवन को अपनी आँखों के सामने ढहते हुए देखकर और पुण्य अर्जित करने दो। मैं वज़ीर-ए-आज़म को तुरंत एक निवेदन लिखूँगा। उसमें मैं उन्हें बताऊँगा कि मुझे काशी के लिए तुरंत रवाना होना है ताकि मैं काफ़िरों के इस पवित्र ढाँचे के विध्वंस को देख सकूँ और इस पुण्य कर्म का हर एक विवरण लिख सकूँ। मैं उन्हें यह भी बताऊँगा कि मेरे साथ चलकर तुम मेरी बहुमूल्य सहायता करोगे। देखते हैं क्या होता है।' उनका निवेदन उसी शाम स्वीकार कर लिया गया। उन्हें आश्चर्य हुआ कि काशी जा रहे दूतों के साथ उनके लिए यात्रा की व्यवस्था कर दी गई है।

उस वर्ष मानसून भीषण था और नदी में आई बाढ़ के कारण नावों से यात्रा करना असंभव हो गया था...

~

सुबह तीनों ने गंगा में स्नान किया, देवी को प्रार्थना अर्पित की और दशाश्वमेध घाट की सीढ़ियाँ चढ़कर विश्वनाथ मंदिर की ओर चल दिए। शर्मा और उनका पांडा उनके साथ चल रहे थे। अगर लक्ष्मी अकेली आई होतीं तो वह इनमें से कुछ भी नहीं करतीं, यहाँ तक कि मंदिर में होने वाली पूजा भी नहीं। उनके प्रारंभिक वर्षों में ईश्वर और धर्म के बारे में उनके विचार उनके पिता के इस गहरे विश्वास से प्रभावित थे कि अहिंसा ही एकमात्र धर्म है और बाकी सब अंधविश्वास हैं। कॉलेज में उन्होंने मार्क्सवाद को अपना लिया था और मानती थीं कि धर्म जनता के लिए अफीम है, और फिर उनमें एक तरह का धार्मिक उत्साह पैदा हो गया कि एक पुरुष और एक स्त्री के बीच का प्रेम ही

एकमात्र सच्चा धर्म है और वहीं से उन्हें यह विश्वास हो गया कि केवल इस्लाम ही समाजवाद का सबसे शुद्ध रूप प्रदान करता है। और फिर उन्हें यह विश्वास हो गया कि इस्लाम और ईसाई धर्म दोनों ही आक्रामक साम्राज्यवाद हैं जो दुनिया पर अपने विश्वास थोप रहे हैं। इतनी दूर यात्रा करने के बाद, उन्हें हिंदू धर्म के रीति-रिवाजों और अनगिनत पूजा-पाठ का पालन करना कठिन लगा। उसने बहुत पहले ही उन्हें त्याग दिया था और अब वे उसके लिए स्वाभाविक रूप से मायने नहीं रखते थे। लेकिन उसने सोचा कि जब विशालाक्षी और सुब्बन्ना जैसे सरल स्वभाव के लोग पूजा-अर्चना कर रहे हों, तो उनसे अलग रहना उचित नहीं है। यह उसके लिए मूल विश्वनाथ मंदिर की समाधि पर खड़ी अभिमानी ज्ञानवापी मस्जिद का आध्यात्मिक बहिष्कार करने का भी अवसर था। उसने इस बहिष्कार को व्यक्त करने का इससे बेहतर तरीका नहीं सोचा कि वह शिवलिंग पर गंगा की कुछ बूँदें और फूल अर्पित करे।

जैसे-जैसे वे सीढ़ियाँ चढ़ते गए, विशालाक्षी अचानक रुक गई और आश्चर्य से चिल्लाई, 'यह आप नहीं हो सकते! आख़िरकार आप आ ही गए, भाई!...लेकिन... लेकिन आपको आना ही था। यही तो गर्भनाल का खिंचाव है...शंकराचार्य सही थे। माँ के प्रति हमारा ऋण सबसे बड़ा ऋण होता है। यही आपको यहाँ लाया है...' लक्ष्मी ने उन्हें पहले देखा था और उन्हें शक था कि यह वही हैं, लेकिन विशालाक्षी की लगातार प्रशंसा ने इस बात की पुष्टि कर दी। प्रोफ़ेसर शास्त्री उनके सामने खड़े थे। काली पतलून, लाल कुर्ता, कंधों पर हरी शॉल और हाथ में एक जापानी कैमरा। वे सभी निशान जो पहले उन्हें एक बुद्धिजीवी के रूप में दर्शाते थे, गायब हो चुके थे। सिर पूरी तरह मुंडा हुआ था और चेहरे पर एक भी बाल नहीं था, वे किसी और की तरह लग रहे थे। यह स्पष्ट था कि उन्होंने उन्हें यहाँ देखने की उम्मीद नहीं की थी। उनके चेहरे पर सदमा, बेचैनी, उलझन के भाव थे और वे धीरे-धीरे लाल होने लगे।

'...मुझे पता है कि तुम सीधे यहाँ क्यों आए। अगर पिताजी इतने जिद्दी न होते, तो मुझे पता है कि तुम गाँव में ही रस्में पूरी कर लेते! अस्थियाँ विश्राम गृह में रखी हैं। तुम कल हमारे साथ प्रयाग चलो और अपने हाथों से अस्थि विसर्जन की रस्में पूरी करो।'

प्रोफेसर को बोलने में काफी संघर्ष करना पड़ा और एक मिनट बाद जब उन्होंने बोलना शुरू किया तो उनकी कोशिश साफ झलक रही थी, 'मैं यहां विश्वविद्यालय में एक कार्यशाला आयोजित करने आया हूं और... रजिया! तुम फिल्म निर्माता हो! जब तुम्हें पता था कि तुम बनारस के घाटों पर जा रही हो, तो क्या तुम्हें कम से कम एक

साधारण टेलीकैमरा साथ ले जाने का ख्याल नहीं आया? मेरा मतलब है, बनारस का नजारा मतलब घाट, बंदर, बैल... तुमने सुना ही होगा ना? रांड, सांड... और... और... खैर...'

यह सुनकर पांडा ने देखा कि प्रोफेसर बाकी शब्द याद करने में संघर्ष कर रहे हैं और उनकी मदद के लिए आगे आया, 'रांड, सांड, सीढ़ी, संन्यासी।' उसके उच्चारण में एक खास लय थी। 'साहिब यहाँ आने से पहले गया गए थे?' प्रोफेसर का चेहरा पीला पड़ गया। उसे कैसे पता चला? ये पांडा! ऐसी कोई भाषा नहीं है जो ये न जानते हों। या फिर ये ऐसे तीर्थयात्रियों से संपर्क कर लेते हैं जो उन्हीं की भाषा बोलते हों। इस चालाक पांडा ने विशालाक्षी की बातें सुनकर ही हमारे रिश्ते का पता लगा लिया।

"शास्त्रों में इसे त्रिस्थली यात्रा कहते हैं। इस तीर्थयात्रा में गया, काशी और प्रयाग तीनों स्थानों की यात्रा शामिल है। मुझे यकीन है कि आप गया से आए हैं। अगर आपने अभी तक काशी में पूजा नहीं की है, तो अपनी बहन के साथ आइए। मैं आपको प्रयाग ले चलता हूँ," पांडा के शब्दों ने उन्हें उनकी तल्लीनता से जगा दिया।

'आप अपना काम जारी रखिए। मुझे इन सब बातों पर विश्वास नहीं है। मैं यहाँ कुछ तस्वीरें खींचने आया हूँ।' प्रोफ़ेसर ने अपना कैमरा अपने चेहरे के पास उठाया, उनसे मुँह फेर लिया और चले गए। क्या वे सचमुच गया जाकर अपना सिर मुंडवा चुके थे? अगर मैं यहाँ नहीं होती तो क्या वे अपनी बहन के साथ मंदिर जाते? और फिर उन्होंने मुझे लक्ष्मी नहीं, रजिया कहकर पुकारा... ये क्या था? लक्ष्मी! मेरे गाँव की मेरी लड़की।

अगले दिन वे प्रयाग गए और अस्थियों को विसर्जित कर दिया। विशालाक्षी और सुब्बन्ना ने चार दिन बाद चलने वाली ट्रेन में पक्की सीट बुक करवा ली। लक्ष्मी काशी में दो और सप्ताह रुकेंगी। वे एक सप्ताह इस विश्राम गृह में रह सकती हैं और फिर उसी तरह के एक विश्राम गृह में ठहर सकती हैं जिसे रिक्शा चालक शर्मा ने उनके लिए आरक्षित करने का वादा किया था। विशालाक्षी और सुब्बन्ना ने चारों दिन अकेले ही एक के बाद एक कई मंदिरों के दर्शन किए। लक्ष्मी का मन उपन्यास की ओर लौट गया। विश्वनाथ मंदिर के विध्वंस से संबंधित भाग को वे किस प्रकार आकार देंगी, इसका उन्हें पहले से ही काफी स्पष्ट अंदाजा था, और उन्हें सहज ज्ञान से पता था कि जब वे वास्तव में लिखने बैठेंगी तो विवरण अपने आप आ जाएंगे। उन्होंने पहले ही बहुत सारी शोध सामग्री का अध्ययन कर लिया था। अब वे पैदल चलकर उस स्थान

को देखेंगी और प्रत्येक मस्जिद और प्रत्येक मंदिर के इतिहास के बारे में जानेंगी जो नष्ट होकर फिर से निर्मित हुए थे। और फिर गंगा की अपनी कहानी थी। उन्होंने फैसला किया कि सुब्बन्ना और उनकी पत्नी के ट्रेन में चढ़ने के बाद वे काशी में बैठकर ही इस भाग को लिखने का प्रयास करेंगी।

13

मैंने हमदुल्लाह साहब को काशी विश्वनाथ मंदिर के विध्वंस को अपनी आँखों से देखने की इच्छा बताई और उनसे प्रार्थना की कि वे मेरी शीघ्र यात्रा की व्यवस्था करें। उन्होंने मुझे एक दिन का समय दिया ताकि मैं इस पर विचार कर सकूँ और मुझे अगले दिन मिलने के लिए कहा। जब मैं उनसे मिला, तो उन्होंने कहा, 'मैं तुमसे बहुत प्रसन्न हूँ। तुम्हारा उत्साह तो अद्भुत है, मेरे बेटे! मैं अब यहाँ नहीं बैठ सकता, चलो साथ चलते हैं! मुझे उनके अंधकारमय धर्म के इस भव्य भवन को अपनी आँखों के सामने ढहते हुए देखकर और पुण्य अर्जित करने दो। मैं वज़ीर-ए-आज़म को तुरंत एक निवेदन लिखूँगा। उसमें मैं उनसे कहूँगा कि मुझे काफ़िरों के इस पवित्र ढाँचे के विध्वंस को देखने और इस पुण्य कर्म के हर छोटे से छोटे विवरण को दर्ज करने के लिए तुरंत काशी के लिए रवाना होना है। मैं उनसे यह भी कहूँगा कि मेरे साथ चलकर तुम मेरी बहुमूल्य सहायता करोगे। देखते हैं क्या होता है।' उनका निवेदन उसी शाम स्वीकार कर लिया गया। उन्हें आश्चर्य हुआ कि काशी जा रहे दूतों के साथ उनके लिए यात्रा की व्यवस्था कर दी गई है।

उस साल मानसून बहुत भीषण था और बाढ़ अपने चरम पर थी। नाव से यात्रा करना नामुमकिन था। हमें एक-एक घोड़ा मिला और हमारे साथ संदेशवाहक भी थे। शुरुआत में उस विशाल घोड़े को संभालना थोड़ा मुश्किल था क्योंकि मुझे पता नहीं था कि यह जानवर किस बात का हुकुम मानता है, और साथ ही मुझे उन दो संदेशवाहकों का भी ख्याल था जो मेरी घुड़सवारी देख रहे थे। अगर मैं कोई साधारण व्यक्ति होता, तो वे मेरा मज़ाक उड़ाने में ज़रा भी देर नहीं लगाते और कौन जाने, वे

मुख्य संदेशवाहक से शिकायत भी कर देते कि मेरे जैसे नासमझ के साथ वे घुड़सवारी नहीं कर सकते। लेकिन मैं हमदुल्लाह साहब के साथ था, जो फ़ारसी मूल के थे, संगमरमर जैसी सफ़ेद त्वचा, लहराती दाढ़ी और नीली आँखों वाले; कोई भी बता सकता था कि वे अरबी, फ़ारसी, कुरान और हदीस के विद्वान थे। और मैं उनका चुना हुआ सहायक था। और मैं स्वयं उदयपुरी महल का एक प्रतिष्ठित हिजड़ा भी था। इससे उन्हें अपनी औकात पता चल गई। उन्होंने बहुत धैर्य और सम्मान दिखाया और मुझे सभी नियम सिखाए। तीन घंटे के भीतर ही घोड़े पर मेरा पूरा नियंत्रण स्थापित हो गया और मैंने देखा कि हमदुल्लाह साहब भी उस पर सहज थे। जाहिर है, उन्हें वर्षों का अभ्यास था। संदेशवाहकों द्वारा ले जाए जा रहे पत्र पर बादशाह की राजसी मुहर लगी थी। उसे बड़े करीने से लपेटकर एक बांस की नली में रखा गया था, जिसे लकड़ी के आवरण से मजबूत किया गया था और मोम से सील किया गया था। फिर उसे एक कपड़े के थैले में रखा गया था, जो दांतों तक सिला हुआ था और उस पर भी बादशाह की राजसी मुहर लगी थी। संदेशवाहकों का काम केवल पत्र ले जाना था। उन्हें उस थैले के अंदर के संदेश के बारे में कोई जानकारी नहीं थी। केवल हमदुल्लाह साहब को, गोपनीयता के सख्त आदेशों के तहत, पत्र की सामग्री की आधिकारिक जानकारी थी और उन्हीं के माध्यम से मुझे इसकी अनौपचारिक जानकारी मिली। यात्रा लंबी थी, लेकिन सौभाग्य से राजमार्ग पर थी। दिल्ली से बनारस तक का सीधा राजमार्ग बनारस से आगे भी जारी था। संदेशवाहकों ने हमदुल्लाह साहब को बताया कि बनारस पहुँचने के लिए उन्हें शाहबाद, गाजियाबाद, दाना, हापुड़, बगसर, गढ़ मुक्तेश्वर, बागड़ी, अमरोहा, मुरादाबाद, रायबरेली, सेला, कड़ा और दलमावु से होकर जाना होगा। यह राजमार्ग एक प्रसिद्ध व्यापार मार्ग था और इस पर मुस्लिम यात्रियों के ठहरने, भोजन करने और नमाज़ अदा करने के लिए विश्राम गृह बने हुए थे। सरकारी काम से यात्रा करने वालों के लिए अलग सुविधाएँ थीं। हमारी यात्रा काफी सुगम और सुखद रही, हालाँकि बीच-बीच में बारिश भी हुई। बारिश होने पर संदेशवाहक अपने सामान का विशेष ध्यान रखते थे। हमने कुछ बार घोड़े बदले और बिना किसी परेशानी के बनारस पहुँच गए।

बनारस में अपने प्रवास के दूसरे दिन, मैंने विभिन्न देशों से आए तीर्थयात्रियों की अचानक भीड़ देखी, जो किसी बड़े त्योहार के लिए आते हैं। किसी भी तीर्थ नगर में तीर्थयात्रियों की संख्या स्थानीय लोगों से अधिक होती है, और यह काशी था, जो तीर्थ

नगरों का सम्राट है। और यदि कोई त्योहार होता, तो संख्या अत्यधिक बढ़ जाती थी क्योंकि धर्मनिष्ठ हिंदू मानते थे कि ऐसे दिनों में काशी की तीर्थयात्रा करने से सामान्य दिनों की तुलना में कहीं अधिक पुण्य प्राप्त होता है। 'पुत्र, जब से मुसलमानों ने हिंदुस्तान पर शासन करना शुरू किया है, हर राजा ने हिंदुओं पर तीर्थयात्रा कर लगाया है—सिवाय उस काफिर अकबर के! हिंदू अधिकतर गरीब लोग हैं। और जो हिंदू व्यापार करते हैं, उन्हें मुस्लिम व्यापारियों की तुलना में दुगुना कर देना पड़ता है। और फिर वे जजिया भी देते हैं। इससे उनके पास तीर्थयात्रा के लिए कुछ नहीं बचता। देखो, कितने हजारों लोग दूर-दूर के राज्यों से यहाँ आए हैं! सभी पैदल। उन्हें घोड़े की सवारी करने की अनुमति नहीं है। और फिर उन्हें तीर्थयात्रा कर भी देना पड़ता है। और इन सबके बावजूद, अगर इतने लोग यहाँ आए हैं, तो उनके अंधकारमय विश्वासों की गहराई का अंदाजा लगाओ!' हमदुल्लाह साहब भीड़ देखकर पूरी तरह से चकित थे।

कोतवाल हमदुल्लाह साहब से मिलने गए, हालांकि उन्हें बुलाया नहीं गया था। उन्हें पता था कि बादशाह के दफ्तर से सीधे आने वाले लोगों के सामने शिष्टाचार का पालन करना चाहिए। उन्होंने आदरपूर्वक मुजरा किया। हमदुल्लाह साहब ने मुझे बाद में बताया कि दिल्ली में एक मामूली अधिकारी को भी सूबे में आने पर ऐसा ही सम्मान मिलता है। कोतवाल ने हमदुल्लाह साहब को मंदिर विध्वंस की निगरानी के लिए भेजा गया अधिकारी समझा। वे पास आए, झुके और लगभग फुसफुसाते हुए बोले, 'अभी त्योहार चल रहा है। इन हिंदुस्तानियों के पागलपन को आप तभी समझ पाएंगे जब आप बनारस में रहेंगे। हम अभी मंदिर नहीं तोड़ सकते... वरना लाखों लोग हमारे पीछे पड़ जाएंगे। मुझे पता है सच्चाई हमारे पक्ष में है, लेकिन उनकी संख्या कहीं ज़्यादा है। चलिए एक हफ़्ते इंतज़ार करते हैं। त्योहार खत्म होने के बाद, ज़्यादातर तीर्थयात्री लौट जाएंगे... इंतज़ार कीजिए... हमें इंतज़ार करना चाहिए। और फिर जब वे चले जाएंगे, तो मैं एक फरमान जारी कर यहां बचे हुए सभी बाहरी लोगों को निकाल दूंगा। उसके बाद, मैं अपने आदमियों को हर गली और कोने की सुरक्षा के लिए तैनात कर दूंगा।' फिर मैं बादशाह का फरमान पूरा करूँगा। कृपया मेरी ओर से बादशाह से क्षमा मांग लें। कृपया उन्हें यह भी बता दें कि मैं उनसे प्रार्थना करता हूँ कि वे इस विनम्र सेवक से नाराज न हों।

जब काम आस्था से जुड़ा हो, तो एक लाख सैनिकों का विरोध भी मायने नहीं रखता। उन्हें मार गिराना ही होगा। यही अपने आप में आस्था है। लेकिन जब हमारी संख्या कम हो, तो हमें रणनीति का इस्तेमाल करना चाहिए। हाँ। मैं सहमत हूँ। आखिर आप लोग युद्धकला के विशेषज्ञ हैं।

कोतवाल का चेहरा खुशी से चमक उठा।

विशेष अतिथि भवन में हमारा शाही मेहमानों जैसा स्वागत किया गया। मैंने दिल्ली में भी इस तरह का खाना नहीं खाया था। खाने की विविधता असीमित थी। दिल्ली की तुलना में बनारस में फलों की पैदावार गुणवत्ता और मात्रा दोनों में अधिक थी। आम का मौसम था। मैंने आम के गूदे, पिसी हुई गुड़ और इलायची के एक बेहद स्वादिष्ट मिश्रण का भरपूर आनंद लिया। हमदुल्लाह साहब अपनी उम्र भूल गए और इस लाजवाब मिश्रण के कटोरे भर-भरकर खाए, जिसका नतीजा उन्हें तुरंत भुगतना पड़ा। पेट खराब होने के कारण उन्हें दो दिन बिस्तर पर आराम करना पड़ा।

मैं हर दिन अकेले ही गलियों में घूमता था। मैं हिंदू धर्म के इस सबसे पवित्र तीर्थ नगर को देखना चाहता था, जिसके बारे में मैंने देवगढ़ में रहते हुए सुना था। मैं यह नहीं समझा सकता था कि मुझे क्या खींच रहा था... यह सिर्फ एक खिंचाव नहीं था, बल्कि एक गहरी आसक्ति थी, उस धर्म के प्रति मेरी नफरत के बावजूद जिसने मेरी रक्षा करने में विफल रहा था। मुझे लगा कि मेरी यह भावना इस तथ्य से जुड़ी है कि मेरे पूर्वज काशी को अत्यंत श्रद्धा से देखते थे। वास्तव में, यही बात थी। यहाँ कदम रखते ही मुझे यह एहसास हुआ। और अब भी, हालांकि मैंने इसे दबाना सीख लिया है, मुझे यह महसूस होता है। मेरे मन में, काशी का मतलब सिर्फ विश्वनाथ मंदिर था। लेकिन यह... यह शहर... ऐसा लग रहा था जैसे काशी मंदिरों में डूबी हुई हो। और हालांकि लोग मेरे पहनावे, व्यवहार और भाषा से जानते थे कि मैं मुसलमान हूँ, फिर भी लोग मेरे हर सवाल का जवाब देते थे। मेरे सवाल का जवाब देने वाले हर चेहरे पर एक अलग भाव था: डर और सम्मान का, क्योंकि मैं शासक वर्ग से था। तिरस्कार का, क्योंकि मैं म्लेच्छ था, विदेशी था, पराया था। मुझे प्रसन्न करने और बदले में कुछ पाने की आशा में दासता। छल-कपट, मानो मुझ पर वार करने के अवसर की प्रतीक्षा में घात लगाए बैठे हों। फिर भी, कुछ अन्य चेहरों पर इन सभी भावों का मिश्रण दिखाई देता था। वे छड़ी की बार-बार पिटाई से वश में की गई गायों की तरह थे। आज्ञाकारी,

वफादार और मददगार, लेकिन आँखों में छिपा क्रोध जो कहता था कि मालिक की कमजोरी का पहला संकेत मिलते ही वे भयानक रूप से प्रहार करेंगे।

इससे मुझे बहुत असहजता हुई और मैंने कुछ पल के लिए उनके जैसा ही वस्त्र पहनने का सोचा—धोती और सीने को ढकने वाला कपड़ा। काशी वैसे भी कपड़ा व्यापार का एक प्रसिद्ध केंद्र था। वहाँ दुकानों की कोई कमी नहीं थी और मेरे पास कुछ कपड़े खरीदने के लिए पर्याप्त पैसे भी थे। लेकिन मैंने यह विचार छोड़ दिया क्योंकि यह निरर्थक था। मैं उनके जैसा वस्त्र तो पहन सकता था, लेकिन अपनी दाढ़ी का कुछ नहीं कर सकता था, जो मेरे धर्म का प्रतीक थी। और अगर मैं उसे मुंडवा लेता, तो मुझे पता था कि हमदुल्लाह साहब के हाथों मेरा क्या अंजाम होगा। मैं उन्हें बता सकता था कि मैंने दाढ़ी इसलिए मुंडवाई ताकि मैं उनके जैसा बनकर उन पर आसानी से जासूसी कर सकूँ, लेकिन वे इस पर विश्वास नहीं करेंगे। ये सब खतरनाक प्रयोग थे।

हर गली में कम से कम चार से पाँच मंदिर थे। कुछ गलियों में तो दस तक थे। फिर लोगों के घरों में बने निजी मंदिर भी थे। अन्नपूर्णा, लक्ष्मी, पार्वती, गौरी, काली, चंडी, चामुंडी, दुर्गा... देवियाँ। और फिर लिंगमों के नाम भी अनगिनत थे: बृहस्पतिश्वर, कामेश्वर, पंचकेश्वर, अंधकेश्वर, शांतेश्वर, वाल्मीकेश्वर, च्यवनेश्वर, कर्कटकेश्वर, भैरवेश्वर... दसियों... सैकड़ों... शायद हजारों; कौन जाने? मैं मार्कंडेश्वर मंदिर पर रुका और उसके प्रवेश द्वार पर खड़े एक व्यक्ति से मंदिर का नाम पूछा। वह लगभग बीस वर्ष का था।

'खान साहब, मेरा नाम दादिचा भट्ट है। मैं आपको काशी के सभी मंदिर दिखाऊंगा और उनकी शक्तियों के बारे में बताऊंगा। आप मुझे जो चाहें दे सकते हैं।'

मैंने उसकी ओर देखा। उसके माथे पर पवित्र राख लगी हुई थी और बीच में चंदन के लेप से बना गोल तिलक था। उसका सिर पूरी तरह मुंडा हुआ था, सिवाय गाय के पैर के आकार के एक छोटे से गुच्छे के।

"काशी के सभी मंदिरों को सिर्फ बाहर से देखने के लिए आपको पूरे चार दिन लगेंगे। यानी, अगर आप हर मंदिर को बिना पूजा-अर्चना के देखना चाहते हैं। मुझे पता है कि आपके धर्म में आप मंदिरों में नहीं जाते। इसलिए मैं आपके साथ बाहर खड़ा होकर हर मंदिर का इतिहास सुनाऊंगा। क्या यह ठीक रहेगा?"

मैंने सिर हिलाकर उसे दो रुपये देने का वादा किया। वह बहुत खुश हुआ।

मैंने सुना है कि काशी में बहुत से विद्वान और प्रख्यात पंडित रहते हैं। क्या यह सच है?' मैंने पूछा।

'जी हां, यह सच है। इसमें वेदों, वेदांत, व्याकरण, मीमांसा, कविता आदि के विद्वान हैं... और सिर्फ यही नहीं... हमारे पास जैन और बौद्ध विद्वान और गुरु भी हैं।'

'इनमें से इतने सारे प्रख्यात पंडितों ने काशी को अपना घर क्यों बनाया है, इसका क्या कारण है?'

'कारण...हम्म...' वह रुका और संदेह भरी निगाहों से मेरी ओर देखा, '...मुझे नहीं पता। मैं इतना पढ़ा-लिखा तो नहीं हूँ।'

'भट्टजी, डरिए मत। मैं जासूस नहीं हूँ। आप मुझे जो कुछ भी बताएंगे, वह किसी और को पता नहीं चलेगा। अल्लाह की कसम।' ऐसा लग रहा था कि इससे उन्हें यकीन हो गया।

जब मुसलमानों ने मंदिरों, स्तूपों और बस्तियों को ध्वस्त कर दिया और हजारों हिंदू विद्वानों, गुरुओं और शिक्षकों तथा बौद्ध भिक्षुओं और संतों की हत्या कर दी, तो जो लोग बच गए वे कश्मीर, तक्षशिला, पुरुषपुरा, कन्याकुब्ज और स्थानेश्वर जैसे दूर-दराज के इलाकों से पूर्व की ओर भागकर अपनी जान बचाने के लिए आए। काशी ने उन्हें शरण दी। जब भक्तियार खिलजी ने नालंदा विश्वविद्यालय को ध्वस्त कर दिया और वहां हजारों बौद्ध शिक्षकों और विद्वानों के सिर काट दिए, तो जो लोग बच निकलने में कामयाब रहे, वे तिब्बत, काशी और सारनाथ भाग गए। फिर एक ऐसी मान्यता है जो सदियों पुरानी है कि काशी में मृत्यु जन्म-मृत्यु के चक्र से मुक्ति दिलाती है। प्राचीन काल से ही भारतवर्ष के विभिन्न दार्शनिकों के लोग काशी आते रहे हैं और कुछ यहीं स्थायी रूप से बस गए हैं। यही कारण है कि आपको काशी में इतनी बड़ी संख्या में विद्वान दिखाई देते हैं।

मैं चकित रह गया—इतना छोटा लड़का, उसे इतना ज्ञान था। शायद उसने बड़े विद्वानों से सुनकर यह सब सीखा होगा। उसने वेदों का अध्ययन किया है। और उसने मुझे बताया कि वह पांडा धर्म की सभी रस्मों को भली-भांति जानता है।

'आपने मुझे मंदिरों के बारे में जितनी भी कहानियां दिखाई हैं, उन सभी में राक्षसों, यानी देवताओं से युद्ध करने वाले और युद्ध में मारे गए दानवों के सम्मान में एक लिंगम और उसके चारों ओर मंदिर बने हुए हैं। ऐसा क्यों? मेरा मतलब है, इसका क्या

अर्थ है? मधु-कैतभ की कहानी में मधु और कैतभ दानव हैं। और यहां मधुकैतभेश्वर मंदिर है।'

'खान साहब, एक व्यक्ति जीवन भर ईश्वर से घृणा कर सकता है और उसे शत्रु मान सकता है। लेकिन ईश्वर का स्वभाव है कि वह ऐसे व्यक्ति को भी स्वर्ग में स्थान प्रदान करे। ईश्वर किसी से घृणा नहीं करता। क्या ऐसा नहीं है, खान साहब?'

'क्या भगवान किसी से नफरत नहीं करते? शैतान से भी नहीं?'

"तुम्हारे धर्म में जिस शैतान का वास है, वह हमारे धर्म में नहीं है। हमारा ईश्वर उस व्यक्ति को भी क्षमा कर देता है और अपनी शरण में ले लेता है जो अज्ञानतावश बुराई के मार्ग पर चल पड़ता है। ठीक वैसे ही जैसे एक माँ अपने बच्चे की गलतियों को क्षमा कर देती है।"

इस व्यक्ति के ईश्वर के बारे में विचार मेरे विचारों से मेल नहीं खाते थे... एक ऐसा ईश्वर जिसमें मैं पिछले आठ वर्षों से गहरी आस्था रखता आया था। भला वह कैसा ईश्वर था जिसमें साहस ही नहीं था? और जब उनके स्वयं के ईश्वर में ही साहस नहीं था, तो इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि ये लोग ऐसे कायर थे। मैं इस चर्चा को आगे नहीं बढ़ाना चाहता था और मैंने उससे मुझे अगले मंदिर ले जाने के लिए कहा।

चार दिनों तक लगातार मंदिर दर्शन करने के बाद जब मैं उनसे अतिथि हवेली में मिला, तो हमदुल्लाह साहब ने मुझसे पूछा कि मैंने क्या-क्या देखा।

'इतने सारे मंदिर हैं कि उन्हें याद रखने की बजाय भूलना आसान है।'

'अगर आपने इतने सारे मंदिर देखे हैं कि उन्हें भूल जाना आसान है, तो क्या इसका मतलब यह है कि आपने इतिहास सीख लिया है?'

मुझे समझ नहीं आ रहा था कि इसका क्या जवाब दूं और मैंने उसे खाली निगाहों से देखा। मुझे मूर्खता महसूस हो रही थी और शायद यह मेरे चेहरे पर दिख भी रहा था। मैं जानती थी कि चाहे वह मुझसे कितना भी नाराज़ क्यों न हो, वह अपनी नाराज़गी को कभी गुस्से में नहीं बदलने देगा।

आप लोग मंदिरों में दर्शन करते थे, जबकि मैं प्रतिदिन घोड़े पर सवार होकर लगभग सभी मस्जिदें देखता था। कोतवाल ने मुझे दो मौलाना साहब सौंपे हैं जो इतिहास के विद्वान हैं। और यह महत्वपूर्ण है। हमें स्थानीय लोगों से इतिहास सुनना और सीखना चाहिए। वे जो हमें बताते हैं, उससे पता चलता है कि हम कितना कम जानते हैं—हम जो दूर दिल्ली में किसी कमरे में बैठकर इतिहास लिखते हैं। खैर,

कुतुबुद्दीन ऐबक और शहाबुद्दीन घोरी ने हिजरा 604 में बनारस को अपने अधीन कर लिया और सैयद जलालुद्दीन नामक एक योग्य व्यक्ति को सूबेदार नियुक्त किया। सैयद जलालुद्दीन ने इस शहर के पास जलालुद्दीनपुरा नाम की एक बस्ती बसाई। वह आज भी मौजूद है। जलालुद्दीन ने मूर्ति पूजा पर प्रतिबंध लगाने का पुरजोर प्रयास किया। लेकिन बहुत जल्द बनारस में सत्ता हमसे छीन ली गई। हमें हिजरा 607 तक इंतजार करना पड़ा, जब कुतुबुद्दीन ने इसे पुनः प्राप्त किया। उसके बाद से, ओह! हमारा धर्म कितना फला-फूला! उन्होंने उस समय मौजूद सभी मूर्ति मंदिरों को ध्वस्त कर दिया और इन मंदिरों के मलबे से स्तंभों और अन्य सामग्रियों का उपयोग करके उनकी जगह मस्जिदें बना दीं। क्या आपने हनुमान-गेट गली में स्थित दो मीनारों वाली खूबसूरत गुंबद मस्जिद देखी है? नहीं, आपने नहीं देखी होगी। कभी देखना। इसका निचला हिस्सा कई अलग-अलग हिंदू मंदिरों के अवशेषों से बना है। इसकी दूसरी मंजिल पर संस्कृत में लिखा एक शिलालेख है। नहीं। यह शिलालेख हमने नहीं लिखा। यह किसी अन्य मंदिर के लिए लिखा गया था। उन्होंने बस उस पत्थर का उपयोग दीवार बनाने के लिए किया है। और चौखंबा मोहल्ले की मस्जिद भी देख लीजिए। चौबीस स्तंभों वाली यह मस्जिद भव्य दिखती है! आपको ये स्थान अवश्य देखने चाहिए। अरे रुकिए! और भी कई जगहें याद आ रही हैं। गुलजार मोहल्ले में मकदूम साहिबत के सम्मान में बनाया गया कब्रिस्तान। इसके पश्चिम और उत्तर में स्थित बड़े कमरे सभी ध्वस्त हिंदू मंदिरों के स्तंभों से बने हैं...।

तथ्यों और तिथियों पर उनकी पकड़ अद्भुत थी। उन्होंने हिंदू मंदिरों को नष्ट करके उनकी जगह मस्जिदें बनवाने वाले राजवंशों और सुल्तानों के नाम और तिथियों का वर्णन करना जारी रखा। उन्होंने बलबन, खिलजी, तुगलक, सिकंदर लोदी आदि के समय के नष्ट हुए मंदिरों के नाम भी सुनाए... लेकिन वे तो महारथी हमदुल्लाह साहब थे। मेरे लिए इतनी विशाल जानकारी का एक अंश भी याद रखना असंभव था। उनकी स्मृति असाधारण थी और ऐतिहासिक अभिलेखों के संरक्षक के रूप में उनकी प्रतिष्ठित स्थिति के लिए पूरी तरह से उपयुक्त थी। मुझे यह समझने में ज्यादा बुद्धि की आवश्यकता नहीं थी कि हमदुल्लाह साहब उस भट्ट से कहीं अधिक जानते थे और उनकी अंतर्दृष्टि कहीं अधिक थी जिसने मुझे मंदिर दिखाए थे। मैंने अपना प्रश्न बड़ी सावधानी से पूछा, 'जो बात मुझे समझ नहीं आती वह यह है कि बार-बार और बड़े पैमाने पर विनाश के बावजूद, काशी में आज भी इतने सारे मंदिर क्यों हैं?'

तो बात ये है! हमारे लोगों को बेहतरीन सुविधाएं मिलती हैं। वे मामूली कर देते हैं और उन्हें भरपूर प्रोत्साहन मिलता है, लेकिन फिर भी वे इन बनियों, इन...इन...हिंदू व्यापारियों का मुकाबला नहीं कर सकते। हमारे लोग लड़ने के लिए प्रशिक्षित हैं और कुशलता से लड़ते हैं। बाकी समय वे लूटपाट करते हैं और महिलाओं के साथ मौज-मस्ती करते हैं...आपने देखा ही है...खैर, ये बनिया भारी कर देते हैं, लेकिन किसी तरह एक पैसा भी बर्बाद नहीं करते और समय के साथ अपनी दौलत बढ़ाते जाते हैं। ऐसा तब भी होता है जब गैर-मुसलमानों के लिए व्यापार पूरी तरह से वर्जित है। हमारे व्यापारी अपने नाम से व्यापार करते हैं, लेकिन बनियों के साथ समझौता कर लेते हैं। बनिया उन्हें मुनाफे का कुछ हिस्सा देते हैं, लेकिन असल व्यापार उन्हीं के हाथ में होता है। और हमेशा की तरह, हमारे लोग शराब में डूबे रहते हैं और महिलाओं की बाहों में खो जाते हैं। यही उन लोगों का भाग्य है जिन्हें सिर्फ सेना के लिए प्रशिक्षित किया जाता है। लेकिन देखिए, अगर आपके पास मुख्य रूप से हमारे अपने लोगों से बनी सेना नहीं है, तो आप साम्राज्य को कायम नहीं रख सकते। लेकिन साम्राज्य को सुचारू रूप से चलाने के लिए धन की भी आवश्यकता होती है। यहीं पर हम अभी भी कमजोर हैं। और ये नीच बनिया अपने देवताओं को छोड़ने से इनकार करते हैं। वे स्थानीय मुस्लिम अधिकारियों को रिश्वत देते हैं और इस तरह शहंशाह के आदेशों का पूरी तरह पालन नहीं होता। हमारे धर्म द्वारा शासित भूमि में गैर-इस्लामी पूजा स्थल नहीं होने चाहिए। यदि वे मौजूद हैं, तो उन्हें ध्वस्त कर दिया जाना चाहिए या कम से कम उनका जीर्णोद्धार नहीं किया जाना चाहिए और नए पूजा स्थलों का निर्माण तो पूरी तरह से प्रतिबंधित होना चाहिए। बनारस में इनमें से कुछ भी नहीं होता। प्रारंभ से ही, दिल्ली के बादशाहों ने भी इस पर ज्यादा ध्यान नहीं दिया। वे मुख्य रूप से सूबे से मिलने वाले कर के पैसे की परवाह करते थे। और सूबेदार बनारस के कोतवाल से मिली रिपोर्टों पर आँख बंद करके विश्वास करते थे। लेकिन अब, शक्तिशाली, सक्षम, चतुर और इस्लाम में अडिग आलमगीर औरंगजेब बादशाह के मुगल साम्राज्य की कमान संभालने के साथ, जरा देखिए कि कैसे उनका दयालु शासन रिश्वतखोरी और घिनौनी और भ्रष्ट प्रथाओं की ओर ले जाने वाले छोटे से छोटे छेद को भी बंद कर देगा!

'वर्तमान विश्वनाथ मंदिर का निर्माण किसने करवाया था?'

'बनारस में तोडरमल नाम का एक राजा था। उसके पुत्र गोवर्धन ने इसे बनवाया था। नारायण भट्ट नाम के एक ब्राह्मण ने उसे बताया कि अगर तोडरमल अपने पिता

के नाम पर मंदिर का पुनर्निर्माण करवाएगा तो उसे शाश्वत आनंद प्राप्त होगा। तो बस। फिर से, ऐसे सभी पाप कर्मों की प्रेरणा हमेशा ब्राह्मण ही होते हैं। आप जानते हैं ब्राह्मण...वे हिंदुओं के मुल्ला हैं...' अचानक उसे अपने शब्दों का अर्थ समझ आया और उसने खुद को सुधारने की कोशिश की '...नहीं नहीं...वे पापी मान्यताओं के जनक हैं। याद रखिए: एक ब्राह्मण को मारने से दस हिंदुओं को मारने के बराबर पुण्य मिलता है...मैं क्या कह रहा था? ओह? अकबर। हाँ। यह अकबर के समय में बना था। उसका एक कानून था जो मंदिरों के निर्माण के लिए सरकारी धन के उपयोग पर रोक लगाता था, लेकिन उसने लोगों को अपनी मर्जी से कुछ भी बनाने की छूट दी थी। दुष्ट। पापी। मुझे पता है कि उसका जीवन अभी भी भयानक नरक की आग में जल रहा है! याद रखिए, उसकी मृत्यु हिजरा 1015 में हुई थी। अब 1079 है। आप हिसाब लगाइए। वह पिछले चौंसठ वर्षों से जल रहा है।' और वह हमेशा जलता रहेगा!

उनके चेहरे पर उस आग की एक झलक दिखाई दी, जो मेरे लिए पहली बार था क्योंकि मैंने उन्हें हमेशा एक खुशमिजाज, मुस्कुराते हुए चेहरे के साथ देखा था।

हम दोनों ने रात के खाने पर कुछ नहीं कहा। सोने से पहले मैंने उनसे पूछा, 'दयालु आलमगीर बादशाह ने हिंदू मंदिरों को नष्ट करने की शुरुआत के लिए काशी को ही क्यों चुना?'

'क्या जवाब स्पष्ट नहीं है? क्या काशी काफिरों का गढ़ नहीं है?' वह रुका, बगल में देखा और फिर बोला, 'मुझे लगता है कि एक और कारण है। ऐसा लगता है कि भक्ति पंथ नाम का एक संगठन है, जो तीन सौ साल पहले शुरू हुआ था और इस शहर में लगातार मजबूत होता जा रहा है। रामानंद नाम के एक व्यक्ति ने। और कबीर ने। और उनके बाद वल्लभ ने। और उनके बाद तुलसीदास, एक कवि ने। वे लोगों को बता रहे हैं कि मंत्रों की आवश्यकता नहीं है। केवल भक्ति, शुद्ध श्रद्धा ही मायने रखती है। अगर बात सिर्फ इतनी ही होती तो हम उन्हें जाने देते। लेकिन नहीं, काफिर तो काफिर हैं! ये लोग यह भी कहते हैं कि उनका भगवान और हमारा भगवान एक ही है। इसका क्या मतलब है! वे कह रहे हैं कि उनका भगवान अल्लाह के बराबर है! क्या यह निंदनीय नहीं है? क्या अल्लाह के बराबर किसी भगवान के होने का सुझाव मात्र देने का अपराध गला काटकर मौत की सजा के लायक नहीं है? ओह, और यह कबीर! वह हमारे ही लोगों में से एक है। एक मुसलमान। ऐसा लगता है कि वह राम का कट्टर भक्त है।' और वह बेखौफ होकर प्रचार करता है कि राम और रहीम एक

ही ईश्वर के दो अलग-अलग नाम हैं। मुसलमान पैदा होकर किसी दूसरे देवता का नाम लेना ही उसके लिए सज़ा के काफ़ी है, लेकिन यह व्यक्ति अल्लाह को उनके देवताओं के बराबर बताकर अपने पाप को और बढ़ा रहा है—हम कितनी बार उसका सिर काटें? और अगर यह सब मुस्लिम नियंत्रण वाले देश में हो रहा है, तो सोचिए इसका क्या मतलब है। सोचिए, उन नीच मुस्लिम अधिकारियों ने बनियों से कितनी रिश्वत ली होगी! आलमगीर बादशाह यह बात भली-भांति जानते हैं, इसीलिए उन्होंने सबसे पहले बनारस को इस गंदगी से साफ़ करने का फैसला किया है, उनके अटूट विश्वास पर अल्लाह की कृपा हो! मैं जानता हूँ कि ऐसे लोगों का दिमाग कैसे काम करता है। आज ही और अभी मुझसे सुन लीजिए! स्वर्ग में आलमगीर के लिए सोने का एक विशाल महल पहले से ही बन रहा है।

मैंने ऐसे महल के निर्माण के लिए आवश्यक लाखों किलोग्राम सोने की गणना शुरू की, लेकिन मुझे महल के आयाम और कमरों की संख्या का पता नहीं था। मैंने हमदुल्लाह साहब से पूछने का सोचा, लेकिन वे पहले ही सो चुके थे।

दो दिन बाद, हर गली और सड़क तलवार लिए घुड़सवार सैनिकों से भरी हुई थी। घाटों की सीढ़ियाँ भी सैनिकों से घिरी हुई थीं—किसी को भी गंगा में स्नान करने की अनुमति नहीं थी। गैर-मुसलमानों को घोड़े की सवारी करने या किसी भी प्रकार के हथियार रखने की अनुमति नहीं थी, यह प्रतिबंध पूरे मुगल साम्राज्य की नींव बना। हथियार बनने की थोड़ी सी भी संभावना वाली कोई भी वस्तु निषिद्ध थी। इसलिए, उन्होंने ढोल बजाने वाले को यह घोषणा करने के लिए नियुक्त किया कि लकड़ी काटने के लिए कुल्हाड़ी, झाड़ियाँ काटने के लिए कृपाण, सब्जियाँ काटने के लिए चाकू जैसे औजार घर के अंदर ही रखे जाएँ, जब तक कि आधिकारिक ढोल बजाने वाला फिर से यह घोषणा न कर दे कि उन्हें सार्वजनिक रूप से ले जाया जा सकता है। इससे मुझे लगा कि हिंदुओं को किसी तरह यह समझ आ गया था कि यह किसी मंदिर के विध्वंस का संकेत है। वे निहत्थे थे। यदि वे सशस्त्र भी थे, तो उनके पास उन हथियारों का उपयोग करने के लिए पर्याप्त संख्या नहीं थी। राजनीतिक और सैन्य शक्ति मंदिर विध्वंसकों के पक्ष में थी। कई घरों के अंदर से 'हर हर महादेव! बम बम बोलेनाथ! शिवोहम! शिवोहम!' के नारे गूंज रहे थे। लोग अपने घरों की दीवारों के भीतर डर से चीख-पुकार और मंत्रोच्चार कर रहे थे। कुछ लोग ध्यान लगा रहे थे। घुड़सवार सैनिकों ने ऐसे घरों के दरवाजे तोड़ दिए और उन्हें काफिरों की प्रार्थना न

करने की चेतावनी दी, अन्यथा उनके घर जला दिए जाने का खतरा था। देखते ही देखते, प्रार्थना की आवाज़ मानो पानी में डूब गई। हालांकि, कहीं-कहीं कोई दुर्लभ हिंदू इस नियम को तोड़ने का साहस कर रहा था और खुलेआम सड़कों पर चल रहा था, उसका माथा पवित्र राख से ढका हुआ था, हाथ में लकड़ी का हंसिया था, और वह निडर होकर 'हर हर महादेव' का जाप करते हुए विश्वनाथ मंदिर की ओर बढ़ रहा था। मुश्किल से दस कदम ही चले थे कि तलवार की एक तेज वार ने एक ही सटीक प्रहार में उसका सिर धड़ से अलग कर दिया और सड़क खून से लथपथ हो गई। यह काम करने वाला सैनिक ऐसे आगे बढ़ गया जैसे उसने कोई और नियमित काम पूरा कर लिया हो। नागरिकों के घरों की भयभीत दीवारों के भीतर से निकली 'हाई!' की दर्द भरी चीखें इस बार अपनी सीमा पार करने की हिम्मत नहीं कर पाईं। हमदुल्लाह साहब और मुझे विशेष घोड़े दिए गए थे। सुरक्षा व्यवस्था को देखने के लिए हमारे पास शाही मुहर वाला एक-एक मुखौटा था। हमने धीरे-धीरे पूरे शहर का भ्रमण किया और पहरेदारों और अपने आसपास घटित होने वाली हर चीज़ का अवलोकन किया।

'साहिब, जब कानून गैर-मुसलमानों को हथियार रखने और घोड़े की सवारी करने से सख्ती से रोकता है, तो क्या फिर भी इतनी विस्तृत सुरक्षा व्यवस्था की आवश्यकता है?'

क्या हम यह अनुमान लगा सकते हैं कि कुत्ता कब काटेगा? याद रखिए, काफ़िर धोखेबाज़ लोग होते हैं... सुनिए, मैं एक घटना सुनाता हूँ। यह लगभग छत्तीस या सैंतीस साल पहले की बात है। हमारे रहमदिल आलमगीर बादशाह के पिता, शाहजहाँ बादशाह—यद्यपि हमारे आलमगीर के बराबर नहीं थे—एक धर्मनिष्ठ मुसलमान थे। उनके पिता, जहाँगीर बादशाह, धर्मनिष्ठ तो थे, लेकिन उनमें अपने पिता, उस घोर काफ़िर अकबर का घिनौना खून था। उन्होंने अकबर की उन नीतियों को जारी रखा, जिनके तहत काफ़िरों को अपने खर्च पर मंदिर बनाने की अनुमति थी। इसी तरह पूरे साम्राज्य में नए मंदिर पनपे और फले-फूले। लेकिन जहाँगीर बादशाह की मृत्यु के बाद जब शाहजहाँ बादशाह गद्दी पर बैठे, तो उन्होंने इस अपवित्र कानून को रोक दिया और सभी नए बने मंदिरों और अधूरे बने मंदिरों को तुरंत ध्वस्त करने का आदेश दिया। उनके बादशाहनामा में दर्ज है कि यह फरमान हिजरा 1042 में पारित किया गया था। अकेले बनारस में ही छिहत्तर अधूरे मंदिरों को ध्वस्त कर दिया गया था। लेकिन यह आसान नहीं था। हैदर बेग इलाहाबाद के सूबेदार थे। उन्होंने अपने छोटे

भाई के बेटे को इस पवित्र कार्य को करने के लिए बनारस भेजा। लेकिन रास्ते में कहीं एक हिंदू दूत छुप गया था। उसने हैदर बेग और उनके चार सहायकों पर घात लगाकर हमला किया और उन सभी को चाकू मारकर मार डाला। लेकिन यह दुष्ट उनके पीछे आ रही सेना की टुकड़ी का मुकाबला नहीं कर सका। वह पल भर में मारा गया। लेकिन देखो, बच्चे? उस दुष्ट ने हमारे कमांडर और चार अन्य लोगों को इस बात के पूर्ण विश्वास के साथ मार डाला कि उसकी मृत्यु निश्चित है। क्या यह इन काफिरों के अपने काले धर्म में विश्वास की हद नहीं दिखाता? खैर, इसलिए हमारे सैनिकों ने दूसरों को सबक सिखाने के लिए उसके शव को सड़क किनारे एक पेड़ पर लटका दिया। अब तुम समझ गए होगे कि कोतवाल ने इतनी व्यापक सुरक्षा व्यवस्था क्यों की है?

काशी पहुँचने के पहले दिन के बाद मैंने विश्वनाथ मंदिर देखा था। यह जानते हुए कि यह मंदिर अगले छह-सात दिनों तक वहीं खड़ा रहेगा, मैंने इसे गहराई से देखने के लिए एक बार फिर दर्शन किए। इसकी वास्तुकला वर्गाकार थी, जिसके चार स्तंभ थे। प्रत्येक स्तंभ लगभग 125 फीट चौड़ा था। गर्भगृह के दोनों ओर चार आंतरिक कक्ष थे, जिनमें से प्रत्येक 10 फीट चौड़ा और 19 फीट लंबा था। इसके बाद, एक और आंतरिक कक्ष से होकर, जो 8 फीट चौड़ा और 12 फीट लंबा था, चार स्तंभों वाले हॉल तक पहुँचा जा सकता था। पूर्वी और पश्चिमी स्तंभों वाले हॉल में एक-एक मंदिर था, जो दंडपाणि और द्वारपाल देवताओं को समर्पित था। विश्वनाथ मंदिर के चारों कोनों में एक-एक उप-मंदिर था। एक स्तंभों वाले हॉल में नंदी की एक विशाल पत्थर की मूर्ति थी, जो मंदिर के ठीक सामने बाहर की ओर स्थापित थी। मंदिर 128 फीट ऊँचा था, जिसमें इसका शिखर 64 फीट ऊँचा था। चारों स्तंभों वाले हॉल के शीर्ष पर बने शिखर प्रत्येक 48 फीट ऊँचे थे। यह सचमुच पाँच स्तंभों वाले हॉलों से बना एक मंदिर था। मंदिर के पूर्वी भाग में 125 फीट लंबा और 35 फीट चौड़ा एक मंडप था। यहीं पर हिंदू दार्शनिक बहस और चर्चाएँ करते थे और विद्वानों को प्रवचन देने के लिए आमंत्रित करते थे। मैं भट्ट का जितना भी धन्यवाद करूँ कम है। मैं स्वयं इस तरह की जानकारी प्राप्त नहीं कर पाता। मंदिर में एक चौकोर मार्ग था जिससे भक्तों के लिए परिक्रमा करना आसान था और इस मार्ग पर अनगिनत देवी-देवताओं को समर्पित छोटे-छोटे मंदिर बने हुए थे।

मैंने अनुमान लगाया था कि वे चारों दिशाओं से तोपों से हमला करके मंदिर को नष्ट कर देंगे। जब मैं हमदुल्लाह साहब के साथ मंदिर पहुँचा, तो मैंने देखा कि लोगों का एक समूह किसी गंभीर चर्चा में मशगूल था। और वास्तव में वह गंभीर ही था। वे मुस्लिम वास्तुकारों का एक समूह थे जो शुद्ध फ़ारसी में बात कर रहे थे। वे इस बात पर सहमति बनाने की कोशिश कर रहे थे कि किन दीवारों पर तोपों का वार किया जाए और किन दीवारों और स्तंभों को सुरक्षित रखा जाए। यह चर्चा काफी देर तक चली, अंततः किसी नतीजे पर पहुँची। तोप चलाने वालों को निशाना साधने का आदेश दिया गया। मंदिर के अंदर स्थित मूर्ति के बारे में किसी ने कुछ नहीं कहा। शायद वे उसके बारे में भूल गए थे। वास्तुकारों ने अपना फैसला सुना दिया था: नींव, मुख्य दीवारें और स्तंभ सुरक्षित रखे जाने थे। जब उनका पुन: उपयोग किया जा सकता है, तो उन्हें तोड़कर उसी स्थान पर दोबारा मस्जिद क्यों बनाई जाए? पूरा परिसर लगभग पाँच सौ घुड़सवार सैनिकों से घिरा हुआ था, जिनकी तलवारें तनी हुई और तैयार थीं। पहले दो तोपों के धमाकों से सामने की दीवार चकनाचूर हो जाने के कुछ ही मिनटों बाद, सरदार, जो इस अभियान का नेतृत्व कर रहा था, चिल्लाया, 'मूर्ति! अंदर मूर्ति है! अंदर मूर्ति है! रुको! ठहरो!' तोपची रुक गए। कुछ ही सेकंड में, सरदार और उसके दस-बारह आदमी अंदर घुस गए, जबकि हम बाकी लोग बाहर इंतज़ार करते रहे। कुछ देर बाद वह बाहर आया और घोषणा की कि वहाँ कोई मूर्ति नहीं है, और उसे ऐसे संकेत मिले हैं कि मूर्ति को हटा दिया गया है। कोतवाल अंदर गया और सिर हिलाते हुए वापस आया। इससे फिर से चर्चा का दौर शुरू हो गया। वे समझ नहीं पा रहे थे कि आखिर हुआ क्या था। उन्होंने हमदुल्लाह साहब से सलाह ली। क्या वह शिवलिंग वास्तव में मौजूद था या उसे पहले ही ध्वस्त कर दिया गया था? क्या पुजारी उस खाली जगह की पूजा कर रहे थे? वे उन शापित पुजारियों को पकड़ सकते थे, उन्हें बांध सकते थे और चिमटे और चाकू से उनके मुंह खोल सकते थे। लेकिन वे ऐसे गायब हो गए थे मानो वे कभी बनारस में थे ही नहीं। अंत में, उन्हें कोई ऐसा जवाब नहीं मिला जिससे वे संतुष्ट हो सकें, इसलिए उन्होंने इस बात पर बहस की कि मूर्ति मिले या न मिले, क्या इससे कोई फर्क पड़ता है। आखिरकार, उन्होंने फैसला किया कि फर्क नहीं पड़ता। ज़्यादा से ज़्यादा, वे इसे उस मस्जिद की सीढ़ी के रूप में इस्तेमाल कर सकते थे जो इस जगह पर बनेगी, ताकि श्रद्धालुओं को इस्लाम की शक्ति की याद दिलाई जा सके। वैसे भी, विश्वनाथ मंदिर के आसपास के छोटे मंदिरों

में सभी मूर्तियों का यही हाल था। एक और मूर्ति इतनी महत्वपूर्ण नहीं थी। उनके लिए सबसे ज़रूरी था कि वे अपने पवित्र कार्य में देरी न करें। सरदार ने तोपखाने के सैनिकों को इशारा किया।

अचानक मेरे पेट में तेज दर्द होने लगा। फिर से। आज दूसरी बार। मैंने सुबह हमेशा की तरह शौच किया था और उससे पहले या बाद में कोई तकलीफ नहीं हुई थी। घोड़े पर सवार होने से पहले मैंने कोतवाल द्वारा हर दिन भेजा जाने वाला शाही भोजन खाया था—आज वह स्वादिष्ट बिरयानी और फल, मलाई, शहद और दूध से भरे कटोरे थे। फिर यहाँ आने से पहले मैंने काशी की गलियों और सड़कों का एक और चक्कर लगाया था, ताकि आगे जो होने वाला है उसे देख सकूँ। अब वही बेचैनी। मुझे अब शौच करना था और मैंने हमदुल्लाह साहब से कहा कि मुझे तुरंत गेस्ट हाउस जाना है।

जाओ, लेकिन अकेले मत जाना। अपने साथ कुछ पहरेदार ले जाओ। कौन जाने, इन काफिरों पर भरोसा नहीं किया जा सकता। वे अपनी खिड़कियों से चाकू या कुछ और फेंककर तुम्हें मार सकते हैं। वैसे, अगर तुम्हें सिर्फ़ शौच करना है, तो नदी के किनारे कर लो। कमीने! ये लोग उस नदी को पवित्र समझते हैं। इससे उन्हें सबक मिलेगा; और तुम्हें पुण्य भी मिलेगा।

बाढ़ का पानी कम हो गया था। मैं एक ऐसी सीढ़ी पर बैठ गया जो फिसलन भरी नहीं थी और जिस पर गीली और चिपचिपी मिट्टी नहीं थी। हमदुल्लाह साहब के शब्दों से जो भावना जागृत हुई थी, वही भावना मुझमें भी उमड़ रही थी—मैं उस जगह को अपवित्र करने जा रहा था जिसे काफिर पवित्र मानते हैं। मेरे पेट में बेचैनी और गड़गड़ाहट पहले से भी ज़्यादा तेज़ हो गई, पर कुछ भी बाहर नहीं निकला। कुछ मिनट बाद, मुझे एहसास हुआ कि अंदर कुछ भी नहीं बचा है जो बाहर आ सके। मेरे सिर में दर्द होने लगा। इसका मेरे पेट से कोई लेना-देना नहीं था। मैं परेशान था। मुझे लगा कि बेचैनी मेरे दिमाग में थी। इसने मेरे विचारों को अवरुद्ध कर दिया और मुझे कुछ ऐसा महसूस कराया जिसे मैं समझ नहीं पा रहा था। मेरे घुटनों में दर्द होने लगा। मैं उठा, अपनी पैंट की डोरियाँ बाँधीं, नदी की ओर मुड़ा, थोड़ा चला और एक सीढ़ी पर बैठ गया। मैदानों में अभी भी बारिश हो रही थी। पानी लाल रंग का था और उसकी धारा का बल लगभग वैसा ही था, पर उसकी सतह पर उस बल का कोई निशान नहीं था। एक निरंतर, शांत और स्थिर प्रवाह, एक अंतहीन भंवर जो सूखी

शाखाओं, लकड़ियों और गायों, बकरियों, बकरियों और मनुष्यों के शवों को बहा ले जा रहा था। गंगा, जिसने युगों से अनगिनत मृत्युओं को अपनी गोद में लिया था, जिसने सबको अपनी गोद में लिया था, जिसने अनगिनत शवों को भोजन दिया था, जिसके पास मानो भोजन का कभी न खत्म होने वाला भंडार था और जिसकी अविश्वसनीय शक्ति उसकी शांत सतह के नीचे समाई हुई थी... अचानक वह फिर से प्रकट हुई... इसने मुझे विष्णु मंदिर के सामने उस स्थान पर वापस पहुँचा दिया, जिसकी रक्षा करने में मैं देवगढ़ में असफल रहा था और इसके बजाय उस विशाल सेनापति के सामने कांपता खड़ा था। इसने मुझे उस क्षण में पहुँचा दिया जब मैंने आत्महत्या करने का साहस खो दिया था और अपने विश्वास से विमुख हो गया था। इसने मुझे उस अस्तबल में पहुँचा दिया जहाँ मेरा पुरुषत्व चकनाचूर हो गया था। विष्णु से विश्वनाथ तक। विश्वनाथ, जिसका अर्थ है 'सृष्टि का स्वामी'। जगत का स्वामी, अपने ही मंदिर की रक्षा करने में असमर्थ, वह पूरी दुनिया की रक्षा कैसे कर सकता था? कहीं न कहीं कुछ गड़बड़ थी। मेरे पीछे सुनाई देने वाले धमाकों की आवाज़ ने मेरे पेट में मची बेचैनी को और बढ़ा दिया। यह बेचैनी सीने तक पहुँच गई और गले, नाक, सिर तक फैल गई, और उन विशाल तोपों से निकलने वाली हर गड़गड़ाहट के साथ मेरे पूरे शरीर में फैल गई। मैं मंदिर वापस जाने की हिम्मत नहीं कर पा रहा था। मैं खड़ा हो गया और उस निराकार नदी को देखता रहा जो बिना किसी उतार-चढ़ाव के बहती जा रही थी। अचानक, गंगा मुझे प्रतिमा-भंग करने वाली शक्ति के रूप में दिखाई दी।

मुझे समझ नहीं आ रहा था कि क्या करूँ और मैं आगे बढ़ने लगा। मैंने देखा कि एक साधु नदी की ओर मुख करके सीढ़ी के दूसरे छोर पर बैठा है। उसके बाल सफेद और उलझे हुए थे और उसने केवल एक मैला-कुचैला कपड़ा पहना हुआ था, जो उसकी धोती से थोड़ा बड़ा था। वर्षों तक धूप और बारिश के संपर्क में रहने से उसकी त्वचा कोयले जैसी काली हो गई थी। बरसात के मौसम के बीच निकलने वाली तेज धूप में उसका रूप स्पष्ट दिखाई देने लगा। पहले तो मुझे लगा कि वह ध्यान कर रहा है या बस नदी को देख रहा है। मैंने पता लगाने का फैसला किया और उसके पास गया। शायद मेरे कदमों की आहट या मेरी परछाईं से, वह मुड़ा और मेरी ओर देखा। इससे मैं चौंक गया और किसी तरह उससे बात करने के लिए विवश हो गया, लेकिन मुझे समझ नहीं आ रहा था कि क्या कहूँ। शायद पिछले कुछ घंटों की घटनाओं ने मेरे

दिमाग को पूरी तरह से घेर लिया था, इसलिए मैंने सोचा कि यह बातचीत के लिए एक अच्छा विषय है।

मैंने इशारा करते हुए कहा, 'मुझे यकीन है कि आपने वहां से आने वाली आवाजें सुनी होंगी। हम आपके विश्वनाथ मंदिर को तोड़ रहे हैं और आप यहां ऐसे शांति से बैठे हैं जैसे कुछ हुआ ही नहीं हो।'

उन्होंने कोमल मुस्कान के साथ कहा, 'तुमने अपना लक्ष्य प्राप्त कर लिया है। भगवान तुम्हारा भला करे।'

इससे मैं चौंक गया... उलझन में पड़ गया। क्या यह विध्वंस मेरा उद्देश्य था? दरअसल, विश्वनाथ मंदिर के विध्वंस को देखने और सर्वशक्तिमान इस्लाम में अपनी आस्था को और मजबूत करने के लिए ही मैंने हमदुल्लाह साहब से और बादशाह की प्रिय बेगम की कृपा से यहाँ आने की प्रार्थना की थी। उनकी बात झूठी, बल्कि अन्यायपूर्ण लगी। मेरा इरादा विध्वंस करने का नहीं था... खैर, कम से कम उनका यह आरोप गलत था कि मंदिर के विध्वंस में मेरा व्यक्तिगत हाथ था। मैंने इसे स्पष्ट करने का सोचा, लेकिन उनके शब्द भी पूरी तरह झूठे नहीं थे। और मुझे उचित जवाब देना मुश्किल लगा। मैंने उनकी आँखों में देखा और अचानक महसूस किया कि उनकी निगाहें मुझ पर काफी देर से टिकी हुई थीं, मानो वे मुझे परख रहे हों। मुझे लगा कि उन्होंने कुछ खोज लिया है और इससे मुझे एक अजीब सा आत्मविश्वास मिला। मुझे लगा कि मुझे जवाब देने का कोई तार्किक आधार मिल गया है।

'यह मेरा लक्ष्य नहीं है। यह उस बादशाह का लक्ष्य है जो पूरे हिंदुस्तान पर राज करता है। बादशाह तो बस ब्रह्मांड के सर्वोच्च शासक की इच्छा का पालन कर रहा है, जिसने उसे हिंदुस्तान पर शासन करने के लिए इस धरती पर भेजा है। लेकिन मेरा आपसे एक सवाल है।' मैंने उसकी ओर देखा। 'यह भगवान जिसे आप विश्वनाथ कहते हैं। उसके नाम का अर्थ है जगत का स्वामी। वह कैसा स्वामी है जो अपने सम्मान में बने मंदिर की रक्षा नहीं कर सकता? इसलिए वह एक झूठा देवता है। और वह अकेला नहीं है—हिंदुस्तान में ऐसे लाखों झूठे देवता हैं। इसीलिए हमारे बादशाह का लक्ष्य इन झूठे देवताओं का नाश करना और एकमात्र सच्चे ईश्वर की शक्ति स्थापित करना है।' मैंने उत्तेजित होकर, लगभग क्रोध से कहा। 'और ऐसा करके, बादशाह अंततः अज्ञान और अंधकारमय विश्वासों का अंत करना चाहता है—अनेक

देवताओं की पूजा अज्ञान का ही रूप है। बादशाह एकमात्र सच्चे ईश्वर की पूजा की पवित्र प्रथा को हमेशा के लिए समाप्त करना चाहता है!'

साधु ने अपने बगल में एक जगह की ओर इशारा करते हुए कहा, 'बैठ जाओ। जब हम इस तरह के महत्वपूर्ण मामलों पर चर्चा कर रहे हों तो तुम्हें खड़े नहीं रहना चाहिए।' मैं बैठ गया, अपने दर्द भरे पैरों को आराम देने से राहत मिली। मैं सुबह से खड़ा ही था। 'तुम कहाँ से हो? तुम्हारे माता-पिता क्या करते हैं?' उन्होंने मुझसे पूछा, जैसे कोई बुजुर्ग किसी युवा से पूछता है, लगभग तिरस्कारपूर्ण लहजे में। मैं उन्हें कैसे बताता कि मैं देवगढ़ से हूँ, कि मेरे पिता राजा जगवीर सिंह थे... लेकिन वे मुझसे ऐसे सवाल पूछने वाले कौन होते हैं? मैंने इस बारे में सोचा। किसी नए व्यक्ति से मिलने पर ठीक ऐसे ही सवाल पूछना आम रिवाज था। और यह रिवाज मुसलमानों में भी था। वास्तव में, यह हममें अधिक प्रचलित था। पहले नाम के बाद लगने वाला 'बिन' प्रत्यय अनिवार्य था, तभी आपके पहले नाम में कोई वैधता होनी चाहिए थी, और 'बिन' के बाद आने वाला नाम बताता था कि आप किसके पुत्र हैं। मैंने अनुमान लगाया कि वे मुझसे यही पूछ रहे थे। उन्होंने मेरे विचारों को तोड़ते हुए कहा, 'मैं समझ सकता हूँ कि तुम असहज क्यों महसूस कर रहे हो, तो चलो मैं तुम्हें बताता हूँ कि तुम कौन हो।' आप राजपुताना से हैं। आपको युद्ध में बंदी बनाया गया था, आपकी मर्दानगी चकनाचूर हो गई थी और आपको ज़नाना की सेवा में भर्ती कर लिया गया था। क्या मैं सही कह रहा हूँ?

मैं थोड़ा कांप उठा। मेरे शरीर पर पसीने की बूँदें आ गईं। वह कौन था? ज़रूर, वह एक सिद्ध, एक ऋषि, एक प्रबुद्ध गुरु था जो किसी अजनबी के चेहरे को देखकर ही उसकी जीवन कहानी बता सकता था। मुझे उसके सामने प्रणाम करने का मन हुआ, लेकिन मैं अभी भी कांप रहा था, इसलिए मैं वहीं बैठा रहा और खुद को शांत करने की कोशिश करता रहा। 'मैं जानता हूँ कि मेरे बारे में आपकी राय तेज़ी से बदल रही है। अब आप मुझसे थोड़ा डर रहे हैं, उस व्यक्ति से जिसे आपने कुछ क्षण पहले फटे-पुराने कपड़ों में एक भटकता हुआ साधु समझा था। मैं आपको सच बताता हूँ। मुझे कोई जादू नहीं आता। मेरे पास कोई विशेष शक्तियाँ नहीं हैं। मैंने लगभग पूरे हिंदुस्तान की यात्रा की है और मैं भीख मांगकर अपना भोजन प्राप्त करता हूँ। मैंने अधिकांश पवित्र स्थानों को देखा है - नष्ट हो चुके तीर्थ स्थलों को भी और उन स्थानों को भी जो अभी भी अछूते हैं। मैंने विभिन्न क्षेत्रों के लोगों के शरीर की बनावट, कद,

कद-काठी, व्यक्तित्व और चेहरे की विशेषताओं में अंतर देखा है। आपका चेहरा स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि आप राजपूताना से हैं।' मैंने देखा कि आप अच्छे से खाते-पीते और स्वस्थ हैं, लेकिन आपका चेहरा भावहीन है और उस पर वही विचित्र भाव दिखाई देता है जो उन पुरुषों में होता है जिनकी मर्दानगी टूट चुकी होती है। और आपकी त्वचा का रंग मुझे बताता है कि आप कई वर्षों से धूप से बचे रहे हैं, जिससे मैंने यह निष्कर्ष निकाला कि आप किसी ज़नाना में सेवा कर रहे होंगे। क्या मेरा अनुमान सही है?

मुझे ऐसा लगा जैसे कोई मरीज किसी विशेषज्ञ चिकित्सक द्वारा पूरी तरह से जांचा जा रहा हो। भला ऐसा मरीज इस असाधारण चिकित्सक के विश्लेषण की आलोचना करने या उस पर सवाल उठाने की हिम्मत कैसे जुटा सकता था? मुझे पूरा विश्वास था कि यह व्यक्ति कानून, नैतिकता और ईश्वर जैसी चीजों का मूल ज्ञान रखता है। जब मैंने बात की, तो मेरा स्वर अत्यंत विनम्र था। 'महाराज, इस्लाम में केवल एक ईश्वर है, जबकि हिंदुओं में हजारों हैं। इसीलिए मुसलमान एकजुट हैं और इसीलिए हिंदू आपस में बंटे हुए हैं। क्या यह सच नहीं है कि उन्होंने अपने राज्य हर जगह खो दिए हैं और इस्लाम पूरे हिंदुस्तान में विजयी है?'

क्या आपने कभी सुना है कि गणेश-भक्त मुसलमानों को विष्णु-भक्तों की हत्या करने के लिए उकसा रहे हैं? या पार्वती-भक्त लक्ष्मी-भक्तों के साथ ऐसा ही कर रहे हैं?

मुझे ऐसी कोई घटना याद नहीं आई और मैंने सिर हिलाया, लेकिन फिर भी बोलना जारी रखा, 'लेकिन...लेकिन क्या यह सच नहीं है कि अल्लाह की शक्ति के आगे एक के बाद एक मंदिर ढह रहे हैं? क्या यह इस बात का प्रमाण नहीं है कि अल्लाह कहीं अधिक शक्तिशाली है?'

उनकी ईश्वर की अवधारणा गलत है। और हम उनकी इस गलत अवधारणा को केवल इसलिए स्वीकार कर रहे हैं क्योंकि हम लगातार युद्ध हार रहे हैं। आपका प्रश्न भी इसी तर्क पर आधारित है। हम नैतिकता, सदाचार और आध्यात्मिकता के स्तर के अनुसार अपने ईश्वरों की रचना करते हैं। अल्लाह एक ईर्ष्यालु ईश्वर है। वह किसी अन्य देवता की पूजा करने वाले को अनन्त नरक में डाल देता है। क्या इसका अर्थ यह नहीं है कि ऐसे देवता की रचना करने वाला व्यक्ति भी उसी ईर्ष्यालु स्वभाव से ग्रस्त था? और यह किस प्रकार का धर्म है जो स्वयं को एकमात्र सत्य मानता है और किसी

अन्य भिन्न विचार वाले धर्म को स्वीकार नहीं करता? यह इच्छा, लोभ, क्रोध, अभिमान, आसक्ति और लालच से प्रेरित धर्म है। अनुचित रणनीति अपनाकर युद्ध में विजय प्राप्त करना और फिर उस विजय को अपने धर्म की श्रेष्ठता का प्रमाण बताना... क्या यह आध्यात्मिक रूप से स्वीकार्य है?

मैं पूरी तरह से अवाक रह गया। मैंने कभी सोचा भी नहीं था कि इन चीजों के बारे में इस तरह से सोचना भी संभव है। मैंने देखा कि वह मुझे घूर रहा था, मेरे कुछ कहने का इंतज़ार कर रहा था। कुछ मिनट बाद उसने कहा, 'हम मानते हैं कि आध्यात्मिकता आस्था का आधार है। उनके पास आध्यात्मिकता की अवधारणा ही नहीं है। हम मानते हैं कि प्रत्येक मनुष्य को भीतर से विकसित होना चाहिए, परिपक्व होना चाहिए और खुद को शुद्ध करना चाहिए। यह एक धीमी, निरंतर और जीवन भर चलने वाली प्रक्रिया है। अहिंसा, सत्य, लोभहीनता, ब्रह्मचर्य, त्याग, पवित्रता, आनंद, तपस्या, आत्म-अध्ययन... क्या आपने इनके बारे में सुना है?'

'हां। जब मैं बहुत छोटा था। अब, उनके अर्थ अस्पष्ट हैं।'

“जो व्यक्ति इन प्रथाओं का पालन करके स्वयं को शुद्ध नहीं करता, वह ईश्वर के बारे में बात करने के योग्य नहीं है। जैसा कि मैंने कहा, यह एक सतत प्रक्रिया है और इसी निरंतर और अटूट अभ्यास से आध्यात्मिक विकास होता है। विकास का प्रत्येक चरण ईश्वर की एक अलग अवधारणा को आपके मन में लाता है। इसलिए, ईश्वर केवल उस व्यक्ति की नैतिक स्थिति या आध्यात्मिक उपलब्धि की स्थिति का प्रतिनिधित्व करता है जिसने उस ईश्वर की कल्पना की है। अब आप ही बताइए, उस व्यक्ति के आध्यात्मिक विकास का स्तर क्या है जो कहता है कि उसने जिस ईश्वर की रचना की है वह एक ईर्ष्यालु ईश्वर है जो आपको दूसरों के देवताओं को नष्ट करने का आदेश देता है?”

यह बात मेरी समझ से परे थी। मैं उनके शब्दों को मुश्किल से ही समझ पाया। मैंने उनके चेहरे को खाली निगाहों से देखा। वे समझ गए कि मैं नहीं समझा, और बोले, 'देखिए, मेरा मानना है कि सभी धर्मों का सार एक ही है, ऋषियों और संतों के उपदेश देने का तरीका अलग-अलग है। कुछ लोग इसे सकारात्मक रूप में बताते हैं तो कुछ नकारात्मक रूप में: कुछ इसे 'असमप्रज्ञा समाधि' कहते हैं तो कुछ 'प्रज्ञा'; कुछ हमें हमेशा सत्य का पालन करने को कहते हैं तो कुछ असत्य से दूर रहने को। कुछ सुख प्राप्त करने के साधन बताते हैं तो कुछ दुख से बचने के तरीके। लेकिन वे

सब एक ही बात कह रहे हैं: सदाचारी जीवन जीना। वेदांती, योगी, जैन, बौद्ध... मैंने उन्हें एक ही बात का उपदेश देते हुए देखा, बस उनकी शब्दावली अलग-अलग थी। अंतर केवल नाम और रूप का था। मैंने पूरे हिंदुस्तान का भ्रमण किया और कई विद्वान गुरुओं और अध्यात्मों से मिलकर इन विषयों पर चर्चा की। एक बार मेरी मुलाकात एक मौलवी साहब से हुई।' मैंने सुना था कि वे गैर-मुसलमानों से बहस करने के इच्छुक नहीं थे। उनका मानना था कि उनका धर्म सर्वोच्च है और इसके अलावा, यह स्वयं अल्लाह का भेजा हुआ अंतिम आदेश भी है, इसलिए किसी अन्य धर्म को दूसरा स्थान देने का कोई सवाल ही नहीं उठता। जब मैं उनसे मिला, तो उन्होंने पैगंबर मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) से जुड़ी एक घटना सुनाई। उन्होंने कहा कि अल्लाह ने अपने फ़रिश्ते जिब्राइल के ज़रिए उन्हें कई संदेश भेजे, और इन संदेशों के संग्रह को कुरान कहा जाता है, और पैगंबर मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के वचनों और कार्यों से संबंधित कथाओं को हदीस कहा जाता है। ये कथाएँ इसलिए लिखी गईं ताकि मुसलमान पैगंबर मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के जीवन और आचरण का अनुकरण कर सकें। इस प्रकार कुरान सुनी हुई वही है जबकि हदीस क्रियान्वित वही है और ये दोनों एक दूसरे के पूरक हैं। यही कारण है कि पैगंबर मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का जीवन और कार्य कुरान के समान ही महत्वपूर्ण हैं। कुरान को हदीस के प्रकाश में समझना चाहिए। क्या मेरी समझ सही है?

'जहां तक मुझे पता है, हां।'

मौलवी साहब ने मुझे यह घटना सुनाई: पैगंबर (उन पर शांति हो) अरब के सभी कबीलों को अपने धर्म में परिवर्तित करने के लिए उत्सुक थे। इनमें से एक यहूदी कबीला बनू कुरैज़ा था। वे अपने धर्म के प्रति अत्यंत निष्ठावान थे और अन्य कबीलों की तरह उन्हें धर्म परिवर्तन कराना असंभव था। यहूदी कुशल व्यापारी थे। वे चतुर और धनी थे और उनका व्यापक प्रभाव था। वे अत्यंत धार्मिक थे और तोरा का अच्छा ज्ञान रखते थे और उसके सिद्धांतों का पालन करते थे। ऐसा प्रतीत होता है कि तोरा को पुराना नियम भी कहा जाता है, जिससे ईसाइयों ने अपनी पवित्र पुस्तक बाइबिल में कई शिक्षाओं को शामिल किया है। कुरान बाइबिल के कई वर्षों बाद आया। यहूदियों का बहुत सम्मान था क्योंकि वे सबसे पुरानी पुस्तक के अनुयायी थे। ऐसा प्रतीत होता है कि तोरा में एक भविष्यवाणी है कि भविष्य में एक पैगंबर पृथ्वी पर अवतरित होंगे।

पैगंबर (उन पर शांति हो) का मानना था कि यदि वे यहूदियों को यह घोषित करने में सफल हो जाते हैं कि वे तोरा में वर्णित पैगंबर हैं, तो उनका नया धर्म पूरे अरब में स्वीकार कर लिया जाएगा। उन्होंने बनू कुरैज़ा के सरदारों को बुलवाया। उन्होंने उन्हें पैगंबर मानने से इनकार कर दिया, लेकिन वे यहीं नहीं रुके। उन्होंने उन अन्य कबीलों के साथ गुप्त समझौते किए जिन्होंने उनकी पैगंबरी को स्वीकार नहीं किया और उनके खिलाफ कई साजिशें रचनी शुरू कर दीं। पैगंबर (उन पर शांति हो) ने उन्हें सबक सिखाने का फैसला किया। उन्होंने बनू कुरैज़ा का साथ देने वाले दो अरब कबीलों के साथ एक गुप्त संधि की और यहूदियों के किले को घेर लिया। कई दिनों बाद, यहूदियों ने अपना किला छोड़ दिया और आत्मसमर्पण कर दिया तथा पैगंबर (उन पर शांति हो) से दया की भीख मांगी। आगे जो हुआ वह आपके प्रश्न के संदर्भ में महत्वपूर्ण है। पैगंबर (उन पर शांति हो) के सैनिक किले में दाखिल हुए और फिर सात सौ यहूदियों को लेकर बाहर आए। कैदियों के हाथ मरोड़कर पीछे बांध दिए गए थे। लगभग 1,200 महिलाओं और बच्चों को अलग से इकट्ठा किया गया और मवेशियों की तरह इधर-उधर धकेला गया। पैगंबर (उन पर शांति हो) ने कबीले के सरदार को संबोधित करते हुए कहा: 'तुम्हें निश्चित रूप से दंडित किया जाएगा।' मैं तुम्हें एक विकल्प देता हूँ। मैं तुम्हारे ही किसी एक को चुनकर उसे न्यायाधीश बनाऊँगा। वही सज़ा तय करेगा। उसका फैसला अंतिम होगा। क्या तुम मानते हो?' उन्हें यह अच्छा विचार लगा। उनके ही किसी व्यक्ति का उनके प्रति नरम रुख अपनाना स्वाभाविक था। इसलिए वे मान गए। अब, यहूदियों में भी आपसी कलह चल रही थी। कुछ ही दिन पहले, साद नाम के एक यहूदी ने बनू कुरैज़ा के विरुद्ध युद्ध छेड़ा था, जिसमें उसे बुरी तरह हार का सामना करना पड़ा, वह गंभीर रूप से घायल हो गया और किसी तरह बच निकला। तीरों से लगे घाव अभी ताज़े ही थे। पैगंबर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की एक महिला परिचारिका को उनकी सेवा में भेजा गया था। उसने साद को बुलवाया, जो गधे पर सवार होकर आया। पैगंबर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने उससे कहा, “तुम्हें इन लोगों को उनकी उचित सज़ा सुनानी होगी।” कैदियों ने ज़ोर-ज़ोर से दया की भीख माँगी। साद का फैसला स्पष्ट और अंतिम था: पुरुषों का सिर कलम कर दिया जाएगा और उनकी संपत्ति विजेताओं में बाँट दी जाएगी। महिलाओं और बच्चों को गुलाम बनाकर बेच दिया जाएगा। पैगंबर मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने इस बात को मंज़ूरी दी और अल्लाह से दुआ की कि

साद को जन्नत में बुलंद मकाम अता करे। औरतों और बच्चों को शहर ले जाया गया। उस रात कैदियों को विशाल मैदान में छोड़ दिया गया। फिर उन्हें इस्लाम कबूल करने और मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) को पैगंबर मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) मानने का विकल्प दिया गया, ताकि उनकी जान बच जाए। लेकिन कैदियों को अपनी जान का डर नहीं था। उन्होंने अपने सदियों पुराने धर्म को छोड़ने के बजाय मरना बेहतर समझा। इस तरह, उन सात सौ लोगों ने पूरी रात कुरान की आयतें पढ़ते हुए बिताई, एक-दूसरे को हिम्मत और तसल्ली देते रहे। इसी बीच, पैगंबर मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने अपने आदमियों को शहर के बीचोंबीच गहरी खाइयाँ खोदने का हुक्म दिया। सुबह कैदियों को पाँच-छह के समूहों में लाया गया और उन्हें खाई की तरफ़ मुँह करके खड़ा किया गया। एक आदमी एक कैदी का सिर काटकर खाई में गिरा देता और दूसरा उस कटे हुए शरीर को खाई में धकेल देता। यह खूनी उन्माद दिनभर चलता रहा, शाम को लालटेन जलाने का समय आ गया, और अंत में सात सौ सिरों और शवों के ढेर में तब्दील हो गया, जिनसे खून नदी की तरह बह रहा था। घेराबंदी में शामिल सैनिकों ने महिलाओं और बच्चों को आपस में बाँट लिया। बाईस वर्षीय रिहाना सबसे सुंदर थी। पैगंबर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने उसे चुना और उससे विवाह का प्रस्ताव रखा। लेकिन उसने अपना धर्म छोड़ने से इनकार कर दिया, इसलिए उन्होंने उसे अपनी रखैल बना लिया। पैगंबर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने यह नियम बनाया कि युद्ध की लूट का पाँचवाँ हिस्सा उन्हें मिलेगा और बाकी सैनिकों में बाँट दिया जाएगा। बँटवारे के बाद जो महिलाएं और बच्चे बचे, उन्हें युद्ध के घोड़ों और हथियारों के बदले बेच दिया गया। आप जानते हैं कि इस्लाम में युद्ध की लूट का पाँचवाँ हिस्सा राज्य की आय में जाता है? यह नियम पैगंबर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के जीवन की इसी घटना से उत्पन्न हुआ है। क्या आपने यह घटना सुनी है?

मैंने सिर हिलाया। मैंने सुना था। हमदुल्लाह साहब के मुँह से। सम्मान और भय के मिले-जुले भाव से।

'तो इस घटना से आपको क्या सबक मिलता है?' साधु ने पूछा।

इस बार उन्होंने मेरे चेहरे को और भी तीव्र निगाहों से देखा, मानो मुझसे कोई जवाब निकलवाने के लिए दृढ़ संकल्पित हों। उनकी तीखी निगाहों को सहन न कर पाने के कारण मैं झट से बोल पड़ा, 'पैगंबर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) जो कुछ भी

करते हैं, वह अल्लाह की प्रेरणा से ही होता है, है ना? यहूदियों ने पैगंबर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की पैगंबरी क्यों नहीं स्वीकारी?' यह एक हताशा भरा जवाब था और जब मैंने इसे कहा, तब भी मुझे पता था कि यह मेरा नहीं है। केवल मेरी ज़बान से निकला, लेकिन शब्द हमदुल्लाह साहब के थे...वही शब्द, जो उन्होंने मुझे इस घटना के बारे में बताते समय कहे थे।

हर इंसान—संत, साधु, पैगंबर...चाहे उसका कोई भी रूप हो—जो अपने कार्यों को ईश्वर की वाणी से निर्देशित बताता है, वह अपने कार्यों की ज़िम्मेदारी से बच रहा है। याद है मैंने तुमसे कहा था कि हम अपने ईश्वर का निर्माण इस आधार पर करते हैं कि हम नैतिकता, सदाचार और आध्यात्मिकता के किस स्तर पर हैं? केवल मेरे ईश्वर की पूजा करने का आदेश देना अहंकार का चरम रूप है। केवल एक ईश्वर की पूजा करने का अर्थ यह भी है कि तुम उस ईश्वर की पूजा कर रहे हो जिसकी पूजा करने के लिए मैं तुम्हें कहता हूँ। क्या ऐसा नहीं है? क्या वे दूसरों के देवताओं की पूजा करने के लिए तैयार होंगे और स्वेच्छा से अपने ईश्वर को त्याग देंगे? क्या वे उन लोगों के साथ प्रेम से पेश आ सकते हैं जो ईश्वर के अस्तित्व को नहीं मानते? मैं तुम्हें बता दूँ, सच्ची आध्यात्मिकता को ईश्वर की आवश्यकता नहीं है। जो ईश्वर में विश्वास नहीं करता, वह भी आध्यात्मिक हो सकता है। और वास्तव में आध्यात्मिक होने के लिए, व्यक्ति को करुणा, अहिंसा—विचार, वचन और कर्म में—और ब्रह्मचर्य के गुणों को विकसित करना चाहिए, क्योंकि जब तक तुम इच्छा पर विजय प्राप्त नहीं कर लेते, तब तक तुम हिंसा पर विजय प्राप्त नहीं कर सकते।

'महाराज, क्या आप यह कह रहे हैं कि युद्ध में पराजित व्यक्ति पर अपना धर्म थोपना गलत है?'

क्या आपने याज्ञवल्क्य स्मृति नामक ग्रंथ के बारे में सुना है?

'No, maharaj.'

उस ग्रंथ का एक श्लोक कहता है: यदि कोई राजा किसी दूसरे राज्य पर विजय प्राप्त करता है, तो उसे यह सुनिश्चित करना चाहिए कि विजित राज्य की पारिवारिक और सामाजिक परंपराएँ पहले की तरह ही अक्षुण्ण रहें और उनमें कोई छेड़छाड़ न हो। यही हमारे प्राचीन ऋषियों का संदेश है। क्या आपने कवि कालिदास की महाकाव्य रचना, "रघुवंशम" के बारे में सुना है?

'No, maharaj.'

कवि ने राजा रघु को धर्मविजयी बताया है। सैकड़ों वर्ष पूर्व, कश्मीर के एक विद्वान वल्लभदेव ने राजाओं को तीन श्रेणियों में वर्गीकृत किया था। पहली श्रेणी थी धर्मविजयी, वह राजा जो अपने शत्रु को परास्त करने के बाद उसे पहले की तरह ही राज्य पर शासन करने देता था, लेकिन उस पर प्रशासनिक नियंत्रण रखता था। दूसरी श्रेणी थी लोभविजयी, वह राजा जो अपने शत्रु को परास्त करने के बाद उसका राज्य और खजाना दोनों छीन लेता था, परन्तु पराजित राजा को बख्श देता था। जो राजा अपने शत्रु को परास्त करने के बाद न केवल उसका राज्य और धन छीन लेता था, बल्कि उसे मृत्युदंड भी दे देता था, उसे असुरविजयी राजा कहा जाता था... क्या आपने कौटिल्य के अर्थशास्त्र के बारे में सुना है?

'जी हां, मैंने इसे पढ़ा है। मेरे आदरणीय पिता के दरबार में विद्वान अक्सर इसका हवाला देते थे। मेरे गुरु शिवपाद भट्ट ने मुझसे कहा था कि युद्ध प्रशिक्षण पूरा होने के बाद वे मुझे अर्थशास्त्र की शिक्षा देंगे।'

मैं आपको बताता हूँ कि पराजित राजाओं के साथ कैसा व्यवहार किया जाना चाहिए। यह बहुत विस्तृत है, इसलिए मैं आपको केवल कुछ महत्वपूर्ण श्लोक ही बताऊँगा। यदि कोई राजा युद्ध में मारा जाता है, तो उसकी पत्नी, बच्चे, परिवार, रिश्तेदार और उसकी संपत्ति को युद्ध की लूट के रूप में नहीं लिया जाना चाहिए। पराजित राज्य के सभी वर्गों के लोगों को अछूता छोड़ दिया जाना चाहिए और इतना ही नहीं, उन्हें और मजबूत किया जाना चाहिए। मृत राजा के पुत्र को उत्तराधिकारी बनाया जाना चाहिए। इससे न केवल पुत्र की, बल्कि आने वाली पीढ़ियों की भी उस विजयी राजा के प्रति वफादारी सुनिश्चित होती है जिसने अपने पराजित प्रतिद्वंद्वी के साथ सम्मानपूर्वक व्यवहार किया। एक अन्य श्लोक में बताया गया है कि एक विजयी राजा को कैसा आचरण करना चाहिए: उसे पराजित लोगों की परंपराओं, पहनावे, शिष्टाचार और खान-पान की आदतों का सम्मान, संरक्षण और स्वयं पालन करना चाहिए। उसे उच्च संस्कृति, शिक्षा और विद्वत्ता को प्रोत्साहित करना चाहिए और विभिन्न क्षेत्रों में उत्कृष्टता प्राप्त कर चुके लोगों को उदारतापूर्वक भूमि अनुदान देना चाहिए। मैं और भी बता सकता हूँ, लेकिन सार यह है कि एक विजयी राजा को अपने द्वारा जीते गए राज्यों की संस्कृति और परंपराओं का सम्मान और संरक्षण करना चाहिए। हमारे धर्म ने इसे राजाओं का कर्तव्य बताया है।

‘महाराज, क्या युद्ध में पराजित व्यक्ति पर अपना धर्म थोपना गलत है?’ मैंने दृढ़ता से पूछा।

किसी को हराने के पक्के इरादे से निकलना अपने आप में एक अविकसित मानसिकता की उपज है। हम इसे तमस कहते हैं, जो मानव स्वभाव का एक ऐसा गुण है जिसमें आलस्य, गैरजिम्मेदारी, विश्वासघात और असंवेदनशीलता शामिल है। अंततः यह मृत्यु और विनाश की ओर ले जाता है। युद्ध होते हैं, लेकिन युद्ध समाप्त होने के बाद भी पराजितों को लूटना, गुलाम बनाना और मारना कितना स्वीकार्य है? हम मानते हैं कि जिस प्रकार हमारी आत्मा सार्वभौमिक आत्मा की एक चिंगारी मात्र है, उसी प्रकार शत्रुओं की आत्मा भी है। तो फिर दूसरों को गुलाम बनाने का क्या अर्थ है? भारत, जिसे आप हिंदुस्तान कहते हैं, इन लोगों के आने से सदियों पहले कई युद्धों का साक्षी रहा है, लेकिन किसी भी राजा ने किसी पराजित प्रजा पर जबरदस्ती अपना धर्म नहीं थोपा।

मैंने इस जन्म से पहले, जब मैं दास था, इस जन्म में भी ये और इसी तरह के श्लोक सुने थे। मुझे भगवद् गीता के कुछ अंश पढ़ाए गए थे और अब मुझे धुंधली सी याद आ रही थी कि मैंने क्या सीखा था—कि यद्यपि प्रत्येक व्यक्ति की अपनी आत्मा होती है, फिर भी वह एक ही सार्वभौमिक आत्मा है जो विभिन्न शरीरों में निवास करती है। इसका अर्थ यह था कि पेड़-पौधों, कीड़ों और जानवरों में भी आत्मा होती है। मानव स्वभाव में तीन गुण या मूलभूत प्रवृत्तियाँ होती हैं—सत्व, रजस और तमस। लेकिन अब मुझे याद नहीं आ रहा था कि उनका वास्तविक अर्थ क्या था। मैं इस साधु के ज्ञान की विशालता और लगभग हर बात की उनकी तीक्ष्ण व्याख्याओं पर चकित था... तो क्या पैगंबर मुहम्मद (उन पर शांति हो) के कार्यों ने बाद में आने वाले लुटेरों, नवाबों और सुल्तानों के लिए आदर्श स्थापित किया? ऐसा लगा जैसे बातचीत समाप्त हो गई हो। हम चुपचाप एक-दूसरे को देखते हुए बैठे रहे। और अचानक, मेरे मन में कुछ कौंधा। मैंने कहा, 'तो आप क्या कर रहे हैं?' मेरा मतलब है, ये लोग पूरे देश में घूम-घूमकर मंदिर तोड़ रहे हैं, मूर्तियाँ फोड़ रहे हैं, हिंदुओं की हत्या कर रहे हैं, उनके पुजारियों को यातना दे रहे हैं और लाखों लोगों को गुलाम बनाकर बेच रहे हैं...आप लोग क्या कर रहे हैं?'

हम्म...मैं क्या कर रहा हूँ? मैं वही कर रहा हूँ जो मेरे जैसे हज़ारों साधु, संन्यासी, बैरागी कर रहे हैं। हम देश भर में, शहरों से लेकर दूरदराज के गाँवों तक, घूमते हैं

और अपने लोगों से कहते हैं कि हिम्मत न हारें क्योंकि हम बहुत कठिन समय का सामना कर रहे हैं। हम उन्हें दिलासा देते हैं और उनसे कहते हैं कि वे अपने पूर्वजों के धर्म को न छोड़ें। हम उन्हें शिवाजी महाराज का उदाहरण देते हैं। हम उन्हें बताते हैं कि वे रामदास के शिष्य थे, जो हमारी ही तरह एक साधु थे। हम उन्हें बताते हैं कि उनके जैसे और भी लोग जन्म लेंगे या अंततः उठ खड़े होंगे और शक्तिशाली बनेंगे। समय का पहिया एक जगह स्थिर नहीं रहता।

'क्या वह अभी भी जीवित हैं? शिवाजी?'

'वह न केवल जीवित है, बल्कि सुरक्षित रूप से अपने किले तक पहुँच गया है और अब वह एक-एक करके अपने खोए हुए किलों पर फिर से कब्ज़ा कर रहा है। मुझे लगता है, समय के साथ भारत इस अभिशाप से मुक्त हो जाएगा।' ये कहते हुए उसने अपनी नज़र पीछे घुमाई। कदमों की आहट तेज़ होती गई। मैं मुड़ा और देखा कि एक सैनिक पूरी तरह से तनी हुई तलवार लिए मेरी ओर आ रहा है। उसने मुझसे रूखेपन से एकवचन में पूछा, 'तुम कहाँ से हो?'

'दिल्ली।'

'तुम बादशाह के दूत के साथ आए हो?'

'हाँ।'

'इसका मतलब है कि आप यहाँ शौच करने आए हैं। हमदुल्लाह साहब चिंतित हैं। उन्होंने आपको बुलवाया है। अब आपको हमारे साथ चलना होगा।' इस बार उन्होंने मुझे बहुवचन में संबोधित किया। मैं तुरंत वहाँ से चला गया। उनकी उपस्थिति में इस साधु से बात करना सुरक्षित नहीं था।

~

हमदुल्लाह साहब एक अत्यंत सलीके से रिकॉर्ड रखने वाले व्यक्ति थे। वे यहाँ की छोटी-छोटी घटनाओं, दृश्यों और रोजमर्रा की जिंदगी के विवरण भी लिखते थे। वे लिखवाते थे, मैं लिखता था। विश्वनाथ मंदिर के विध्वंस का वास्तविक लेखन तोपों द्वारा दीवारों को उड़ा दिए जाने के एक दिन बाद शुरू हुआ।

"वो कोतवाल तो विध्वंस की रिपोर्ट भेजने का अपना फर्ज निभाएगा। लेकिन ये रिपोर्ट लिखने वाले तुच्छ क्लर्कों को क्या पता कि मैं जिस तरह से बारीकियाँ लिखता हूँ, उन्हें दर्ज करने की कला का क्या ज्ञान? उनकी भाषा भद्दी है, उसमें उस शुद्ध फ़ारसी की कोई शालीनता नहीं है जिसमें मैं लिखता हूँ! आलमगीर बादशाह तो मेरे

विध्वंस के वर्णन को पढ़ते ही मुझे बड़ी जागीर दे देंगे! लेकिन मेरी त्रासदी समझ रहे हो, बच्चे? वो नीच दरबारी मेरी मेहनत को बादशाह तक पहुँचने ही नहीं देंगे।" उन्होंने एक लंबी आह भरी और फिर कहा, "पर मैंने ये अपना पवित्र कर्तव्य समझकर किया है। अल्लाह मुझे जो भी इनाम दे, मेरे लिए काफी है।" उन्होंने आत्म-संतोष भरे स्वर में ये कहा।

मैंने उत्तर दिया, 'काफ़िर कहते हैं कि ईश्वर की उपासना कोई भी व्यक्ति अपनी इच्छानुसार किसी भी रूप में कर सकता है। परन्तु बुद्धिमान कहते हैं कि मूर्तिपूजा एक घृणित प्रथा है और इसीलिए हमें सभी मूर्ति-मंदिरों को नष्ट कर देना चाहिए। क्या स्वयं पैगंबर मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने यही कहा था?'

"सिर्फ उनके वचन ही नहीं, बल्कि उनके कर्म भी। उन्होंने अपने पवित्र जीवनकाल में बार-बार इस ज्ञान की सत्यता सिद्ध की है। अल-लत, मनात, अल-उज्ज़ा, शम्स, धू, श-शरा, अत-थुरैया, खु'ज़ू, वा'द, रुदा, ज़ाद, मनाफ़, यगुत... इन सभी देवताओं की मूर्तियाँ थीं। उनके लिए मूर्ति-मंदिर बनाए गए थे। पैगंबर (उन पर शांति हो) ने उन्हें जलाकर भस्म कर दिया और उन्हें पूर्णतः पराजित किया तथा एकमात्र सच्चे ईश्वर, अल्लाह की सर्वोच्चता स्थापित की और विश्वासियों के लिए मार्ग प्रशस्त किया। हिंदुस्तान पर शासन करने वाले नवाबों और सुल्तानों ने इस पवित्र सिद्धांत का पालन किया और अंधकार के प्रतीकों को नष्ट किया और अब, औरंगज़ेब बादशाह के शासनकाल में, इस सिद्धांत का पूर्ण श्रद्धापूर्वक पालन किया जा रहा है। इससे सीख लें!"

इससे बात पक्की हो गई क्योंकि पैगंबर मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने खुद ही मिसाल कायम की थी, और पैगंबर मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के वचन पर कोई सवाल नहीं उठाता था। फिर भी, साधु के शब्द मेरे मन में गूंज रहे थे। 'जो कोई भी सत्य, संयम, चोरी न करने जैसे नियमों का पालन करके खुद को पाक नहीं करता, वह अल्लाह के बारे में बात करने के लायक नहीं है... यह एक निरंतर प्रक्रिया है और इसी निरंतर और अटल अभ्यास से आध्यात्मिकता बढ़ती है।' मैं उलझन में था, लेकिन मुझमें हमदुल्लाह साहब से इस बारे में बात करने की हिम्मत या आजादी नहीं थी। मैं साधु से दोबारा मिलना चाहता था, लेकिन रात हो चुकी थी और पूरे शहर में कर्फ्यू लगा हुआ था। मैं अकेले बाहर जाने का जोखिम नहीं उठा

सकता था। मैंने उनसे कल मिलने का फैसला किया। मुझे बहुत देर तक नींद नहीं आई।

अगली सुबह जब मैं नदी किनारे गया तो वह वहाँ नहीं था—वहाँ कोई नहीं था। गंगा नदी काशी में घटी महत्वपूर्ण घटनाओं से बेखबर सी बह रही थी। ऐसा लग रहा था मानो उसकी धारा में काशी की हजारों परंपराओं की बारीकियाँ समाहित हो गई हों, जिन्हें वह बहते हुए दुनिया को दिखा रही थी। मुझे लगा कि मैंने एक अनपेक्षित और महत्वपूर्ण अंतर्दृष्टि खोज ली है, लेकिन मैं इसका अर्थ नहीं समझ पाया।

~

हमें आलमगीर बादशाह के फरमान के जवाब के साथ ही यात्रा परमिट भी मिल गए। इन्हें बड़े करीने से लपेटकर एक बाँस में रखा गया था, जिसे लकड़ी के आवरण से मजबूत किया गया था और मोम से सील किया गया था। फिर इसे एक कपड़े के थैले में रखा गया था, जिसे दाँतों से सिलकर फिर से मोम से सील किया गया था। दिल्ली जाने का समय हो गया था। हमदुल्लाह साहब को एक कीमती शॉल भेंट की गई और मुझे एक नया कुर्ता उपहार में मिला। नायब नाम का कोतवाल हमें विदा करने स्वयं आया। बाँस में रखे पत्र की सामग्री का हम आसानी से अनुमान लगा सकते थे। कम अनुभव होने के बावजूद, खदर खान और इम्तियाज खान, जो संदेशवाहक थे, जानते थे कि यह लगभग एक खुला रहस्य था। उस रात जब हम राजमार्ग विश्राम गृह पर रुके, तो हमने गरमागरम और स्वादिष्ट भोजन किया। फिर हमने नमाज़ पढ़ी और सो गए। मैंने संदेशवाहकों की बातचीत सुनी। 'मुझे पूरा यकीन है कि मैंने उस मंदिर को ध्वस्त करने में अपना पुण्य अर्जित कर लिया है।' 'जन्नत में मुझे भले ही महल न मिले, लेकिन मुझे पता है कि मुझे संगमरमर का एक विशाल महल जरूर मिलेगा!' इम्तियाज खान ने स्पष्ट आत्मविश्वास के साथ कहा।

'तुम्हें जन्नत के बारे में क्या पता? यह तो तनख्वाह लेने और फरमान बांटने वालों के लिए नहीं है। कुछ सीखो!' कादर खान ने तुरंत उसे फटकारा। वह हिंदुस्तान का रहने वाला काले रंग का मुसलमान था, लेकिन इस्लाम का उसे अच्छा ज्ञान था। इम्तियाज़ भी हिंदुस्तानी मुसलमान था, लेकिन कादर खान की तरह उसे भी नहीं पता था कि उसके पूर्वजों ने कब इस्लाम धर्म अपनाया था। खैर, बनारस की यात्रा के दौरान जब मैंने उनसे बातचीत की, तो दोनों ने ही मुझे अपने वंश के बारे में पूरी सच्चाई नहीं बताई। मैं उन पर दबाव नहीं डालना चाहता था—या तो उन्हें सच में पता नहीं था या वे

अपने वंश की कहानी बताना नहीं चाहते थे। लेकिन मैंने गौर किया कि दोनों बार-बार यही कहते रहे कि वे अरब देश से हैं, लेकिन उन्हें फारसी या अरबी बिल्कुल नहीं आती थी। वे हिंदुस्तानी बोलते थे, जो अरबी और फारसी का एक अजीब मिश्रण था और सेना की आम भाषा थी। हालांकि सेना के उच्च अधिकारी मुगल साम्राज्य की प्रशासनिक भाषा, शुद्ध फारसी में पारंगत थे, वे हिंदुस्तानी में भी उतने ही पारंगत थे। लेकिन आपस में वे कभी भी, गलती से भी, घृणित हिंदुस्तानी भाषा का प्रयोग नहीं करते थे। ऐसा लगता है कि आलमगीर बादशाह भी हिंदुस्तानी जानते थे। लेकिन उन्होंने इसे राजनीतिक सूझबूझ के चलते सीखा था—अपने अधीनस्थों से उनकी अपनी भाषा में बात करने से उन पर बेहतर नियंत्रण रखा जा सकता था, यह बात मुझे हमदुल्लाह साहब ने बताई थी।

अब इम्तियाज़ का स्वाभिमान आहत हुआ। उसने पलटवार करते हुए कहा, 'तो क्या आप यह कह रहे हैं कि अगर हमने फरमान न दिया होता तो भी मंदिर नष्ट हो जाता?'

नहीं नहीं नहीं। ऐसा नहीं है। जन्नत वही पाता है जो जिहाद में शहीद होता है... सच्चे धर्म का प्रचार करने के लिए छेड़े गए युद्ध में... क्या आप जानते हैं कि जन्नत में क्या है?

‘आप तो विद्वान हैं। आप ही बताइए,’ इम्तियाज ने अब दबी हुई आवाज में कहा।

मैं खुश हूँ। मैं तुम्हें बताती हूँ। जन्नत वो जगह है जहाँ दूध और शहद की कभी न खत्म होने वाली आपूर्ति होती है। जन्नत वो जगह है जहाँ बड़े-बड़े, फूलों से भरे और सुगंधित बगीचे होते हैं जो हमेशा सुहावने होते हैं—न गर्मी में जलते हैं और न सर्दी में जमते हैं। माणिक से बने घोड़े तुम्हें जहाँ चाहो, जब चाहो ले जाते हैं। तुम्हारे आराम करने के लिए हर जगह मुलायम तकिए बिछे होते हैं। और शर्मीली, काली आँखों वाली कुंवारी लड़कियाँ... वे सीप के सुरक्षित अंडों की तरह पवित्र होती हैं और उनकी आँखें हमेशा आधी बंद रहती हैं और उनके स्तन भरे हुए और गोल होते हैं। उन्हें हूरें कहा जाता है। वे शाश्वत कुंवारी होती हैं और तुम्हारी सेवा करेंगी, और चाहे तुमने कितनी ही बार उनका आनंद लिया हो, उनकी योनि हमेशा पवित्र रहेगी। उनके शरीर पारदर्शी होते हैं जिससे तुम उनकी हड्डियाँ देख सकते हो, जो मोती के अंदर की कोमल पतली रेखाओं की तरह होती हैं। वे सफेद प्याले में शुद्ध लाल शराब की तरह होती हैं। उनकी त्वचा संगमरमर जैसी सफेद होती है और उन्हें इस धरती पर आम महिलाओं

को होने वाली किसी भी समस्या का सामना नहीं करना पड़ता। न उन्हें मासिक धर्म होता है और न ही वे रजोनिवृत्ति से गुजरती हैं। वे अपने गर्भ में बच्चे नहीं पालतीं। वे पेशाब और मल त्याग नहीं करतीं। और आप जानते हैं कि उनकी आंखें हमेशा आधी खुली क्यों रहती हैं?

इमितियाज़ ने मना कर दिया।

क्योंकि वे शर्मीली हैं, क्योंकि वे तुम्हारे सिवा किसी और पुरुष को नहीं देखतीं और क्योंकि तुमने उनसे विवाह किया है, इसलिए वे तुम्हारी ऋणी हैं। उनके शरीर से हमेशा मीठी सुगंध आती है और वे किसी भी तरह की दुर्गंध से मुक्त होती हैं। वे सदा युवा रहती हैं। वे पूर्ण विलासिता में पली-बढ़ी हैं। क्यों! एक हूर विलासिता का प्रतीक है! उसका रूप मदहोश कर देने वाला है। उसके बड़े, गोल स्तन कभी ढीले नहीं पड़ते; वे भरे हुए, परिपक्व और बेदाग हैं। उसे बस इस धरती की ओर देखना है और हर जगह प्रकाश और सुगंध फैल जाएगी। वह दर्पण से भी अधिक परावर्तक है—कोई भी उसके गालों में अपना प्रतिबिंब देख सकता है। स्वर्ग में प्रवेश करने वाले प्रत्येक पुरुष को बहत्तर हूरें दी जाएंगी। सोचो इसका क्या अर्थ है! स्वर्ग में कदम रखते ही वह बत्तीस वर्ष का हो जाएगा, चाहे इस धरती पर उसकी उम्र कितनी भी रही हो, और उसकी उम्र हमेशा के लिए बत्तीस वर्ष ही रहेगी। और बात सिर्फ इतनी ही नहीं। उसे सौ पुरुषों के पौरुष से परिपूर्ण किया जाएगा! उसे हीरों से जड़ा एक महल दिया जाएगा और उसके पास अस्सी हजार गुलाम होंगे। क्या तुम समझते हो?'

इमितियाज़ ने कोई जवाब नहीं दिया। काफी देर बाद भी उन्होंने कुछ नहीं कहा।

कुछ देर बाद, मुझे हमदुल्लाह साहब के उठने की आवाज़ सुनाई दी। मैं उन्हें धुंधला-सा देख सका कि वे टटोलते हुए, फिर दीवारों को छूते हुए दरवाज़े की ओर बढ़े। मैं भी उठ बैठा। वे बाहर निकले और संदेशवाहकों की ओर चल दिए। एक पल में, मुझे उनकी आवाज़ सुनाई दी, 'खदर, तुमने अब तक जो कुछ भी कहा है, वह सही है। लेकिन याद रखना, आस्था के मामलों में जो कुछ भी कहो, उस पवित्र ग्रंथ का नाम अवश्य लेना जिससे वह लिया गया है, और अध्याय का नाम भी अवश्य लेना।'

'खान साहब, मैं आपके जितना विद्वान नहीं हूँ। मैंने सैन्य प्रशिक्षण के दौरान हिंदुस्तानी भाषा में अनुवादित पवित्र ग्रंथ पढ़ा है। मैंने थोड़ा-थोड़ा पढ़ा है, लेकिन मैं प्रतिदिन पढ़ता हूँ। इसमें इतने सारे सूरह और आयतें हैं कि मुझे उनके नाम और

संख्याएँ याद नहीं हैं। लेकिन आपने मुझे बताया है कि मैंने इसे सही ढंग से सीखा है। इसका अर्थ है कि अल्लाह की कृपा मुझ पर है।'

'अच्छा।'

~

अपनी यात्रा के तीसरे दिन दोपहर में, हमें राजमार्ग पर अचानक रुकना पड़ा। लगभग पाँच-छह सौ लोग—पुरुष और महिलाएँ, बूढ़े और जवान, और विभिन्न आयु वर्ग के बच्चे—बेकाबू होकर भाग रहे थे। बच्चों को छोड़कर लगभग सभी अपने कंधों और सिर पर बर्तन, औजार और किराने के सामान से भरे बोरे उठाए हुए थे। कई महिलाओं ने अपने शिशुओं को अपनी कमर से चिपका रखा था और अपने सिर पर कपड़े का थैला लाद रखा था। यह भी स्पष्ट था कि वे गाँव के लोग थे—जन्म से कुपोषण के कारण दुबले-पतले शरीर, धूप से झुलसी त्वचा और बिखरे बाल जिन पर तेल की एक बूँद भी नहीं लगी थी। पुरुषों ने अपने गुप्तांगों को ढकने के लिए केवल कपड़े का एक बड़ा टुकड़ा पहना हुआ था। महिलाओं के ब्लाउज के छेदों से त्वचा झाँक रही थी और कुछ महिलाओं के स्तनों के ऊपर और पीठ का नग्न भाग स्पष्ट रूप से दिखाई दे रहा था। देखते ही देखते, धूल का एक बड़ा बादल उठा और उसके पीछे लगभग बीस सशस्त्र घुड़सवार सैनिक उन्हें घेर लिया। भागने वाला समूह उसी भय से रुक गया जिसने उन्हें भागने के लिए प्रेरित किया था। उन्हें देखकर मुझे लगा कि वैसे भी उनके हमेशा के लिए भागने की कोई उम्मीद नहीं थी। वे आखिरकार रुक ही जाते। वे जल्दी-जल्दी और ज़ोर-ज़ोर से साँस ले रहे थे। बच्चे ज़ोर-ज़ोर से रोने लगे। हम चारों सैनिकों के पास पहुँचे, जिन्होंने हमारे कपड़े देखकर 'सलाम अलैकुम' कहा। हमने भी उन्हें सलाम किया और पूछा कि क्या बात है।

“ये सब बदमाश हैं! ये गंदे सूअर बिना टैक्स चुकाए भाग रहे थे! जैसे ही हमें इसकी जानकारी मिली, हमने तुरंत उनका पीछा किया! ये कमीने भाग जाते!” एक सैनिक लगभग चीखते हुए बोला।

समूह के एक बुजुर्ग व्यक्ति ने कहा, "लेकिन हमने कर चुका दिया है और अब वे इस पर एक और अन्यायपूर्ण कर मांग रहे हैं।"

‘सूर! तुम्हारी हिम्मत कैसे हुई जजिया को अन्यायपूर्ण कर कहने की! अगर जजिया नहीं देना चाहते तो इस्लाम कबूल कर लो। बादशाह दयालु हैं। उन्होंने फरमान जारी किया है कि इस्लाम कबूल करने वालों को भूमि कर से भी छूट है।

इस्लाम कबूल कर लो, और तुम्हारी जमीन और मवेशी तुम्हारे पास ही रहेंगे,' वह गरजते हुए बोला।

'हाँ। वह सही कह रहा है। तुम सब धर्म परिवर्तन कर लो। यह तुम्हारे लिए अच्छा होगा,' चार और सैनिकों ने एक साथ कहा।

लेकिन बूढ़ा व्यक्ति जोशीला था। 'तुम कौन होते हो हमें हमारे भगवान को छोड़ने का आदेश देने वाले? अगर तुम सोचते हो कि तुम्हारा भगवान सबसे महान है, तो वह सिर्फ तुम्हारे लिए है। अगली बार जब तुमने हमारे भगवान का अपमान किया, तो लो!' उसने अपना मुंह चौड़ा खोला, एक घिनौनी सी कर्कश आवाज निकाली और जमीन पर थूकते हुए जोर से 'टचथू' की आवाज निकाली।

सैनिक तुरंत एक जगह इकट्ठा हो गए और इस घिनौने कृत्य के लिए उचित दंड तय करने पर विचार-विमर्श करने लगे। अचानक, कहीं से भी, इम्तियाज़ बेबस और भयभीत लोगों की भीड़ में एक अप्रत्याशित हवा के झोंके की तरह तेज़ी से आगे बढ़ा, अपनी तलवार को बूढ़े आदमी के कंधे की ओर क्षैतिज रूप से घुमाया और एक ही झटके में उसकी गर्दन को दो हिस्सों में काट दिया। खून फव्वारे की तरह फूट पड़ा। बूढ़े आदमी के मुँह से एक कमजोर सी 'राम! राम!' की आवाज़ निकली और वह ज़मीन पर गिर पड़ा और मर गया। ज़ोरदार सामूहिक विलाप सुनाई दिया और फिर सैनिकों की कड़ी निगरानी के बावजूद, भीड़ फिर से बेकाबू होकर भागने लगी। सैनिकों ने रणनीतिक रूप से मोर्चाबंदी की थी, लेकिन उनकी संख्या कम थी और जब लगभग पाँच सौ लोग पागलों की तरह भागने लगे तो उन्हें समझ नहीं आया कि क्या करें। वे कुछ लोगों को पकड़ने में कामयाब रहे, लेकिन उनमें से अधिकांश भाग निकले। 'सूअर! सूअर! ये कहाँ तक भागेंगे? हमारी सेना इनका मक्खियों की तरह शिकार करेगी।' बैंड के मुखिया ने दहाड़ते हुए कहा, 'उन्हें हमारे बादशाह की ताकत का जरा भी अंदाजा नहीं है!'

इसी बीच, इम्तियाज़ खून से सनी तलवार लिए समूह से बाहर निकला। कादर खान ने कहा, 'जजिया वसूलना हमारा काम नहीं है। क्या तुम पागल हो गए हो? तुमने ऐसा क्यों किया? हमने पहले ही बहुत समय बर्बाद कर दिया है। हमें अभी बहुत लंबा सफर तय करना है। संदेशवाहक को जल्द से जल्द बादशाह तक पहुंचना है।'

'क्या तुमने उस बूढ़े सूअर की बात नहीं सुनी? अगर तुम सोचते हो कि तुम्हारा भगवान सबसे महान है, तो वह सिर्फ तुम्हारे लिए ही महान है। अगली बार जब तुम

हमारे भगवान का अपमान करोगे... क्या तुमने नहीं देखा कि उसने कैसे थूका? कौन सा सच्चा मुसलमान ऐसे घिनौने शब्दों को चुपचाप सुन सकता है और उस काफिर कमीने पर जिहाद न करे? मैंने उसे नरक में भेज दिया है। अब बताओ: क्या मुझे जन्नत में जगह नहीं मिलेगी?'

चाहे खेल ही क्यों न हो, अधिकृत अधिकारी के अलावा कोई भी हत्या नहीं कर सकता था और न ही हत्या का आदेश दे सकता था। इस कानून का उल्लंघन करने वाले को तत्काल और कड़ी सजा मिलती थी। लेकिन फिर, इम्तियाज़ ने कहा कि उसने एक ऐसे व्यक्ति की हत्या की है जिसने घोर अपमान किया था—एक काफ़िर जिसने हमारे ईश्वर की सर्वोच्चता को अस्वीकार करने का साहस किया था। इस पर, कादर ने कहा कि वे आधिकारिक संदेशवाहक थे जिन्होंने काशी में काफ़िरों के पवित्र मूर्ति-मंदिरों को ध्वस्त करने का बादशाह का फरमान पहुंचाया था और अब वे मंदिर विध्वंस की सफल रिपोर्ट लेकर दिल्ली वापस जा रहे थे। सैनिकों के उस दल का मुखिया इस स्पष्टीकरण से संतुष्ट हो गया और हमें जाने दिया। हम जितनी जल्दी हो सके वहां से निकलना चाहते थे और अपने घोड़ों को तब तक दौड़ाया जब तक कि हम उनकी नजरों से पूरी तरह ओझल नहीं हो गए। फिर कादर ने घोड़े को एक स्थिर, आरामदायक गति से दौड़ाया।

इमितियाज़ ने उस बूढ़े आदमी का सिर जिस तरह काटा था, उसे देखकर मैं बेचैन और चक्कर खा रहा था। मैंने अपनी तलवार को छुआ और बगल से हमला करके इमितियाज़ का सिर काट डालने के प्रलोभन को रोका। यह क्रोध से भरा विचार मेरे दिमाग में काफी देर तक घूमता रहा और इससे बाहर निकलना मेरे लिए बहुत मुश्किल था। क्या फायदा? मैं इस नीच इमितियाज़ को मार तो सकता था, लेकिन मुझे पता था कि मैं पकड़ा जाऊंगा और दिल्ली ले जाया जाएगा, जहां मेरा सिर काट दिया जाएगा। इमितियाज़ को मारने से कुछ हासिल नहीं होगा। लेकिन उस बूढ़े आदमी का चेहरा मेरे दिमाग से निकल ही नहीं रहा था—ज़मीन पर मृत पड़ा हुआ, उसका आधा कटा हुआ गला...और फिर उसके शब्द: 'अगर तुम सोचते हो कि तुम्हारा भगवान सबसे महान है, तो वह सिर्फ तुम्हारे लिए है, हमारे लिए नहीं!' मैं समझ सकता था कि बाकी लोगों का भी जल्द ही शिकार किया जाएगा। मुझे पता था कि उनके साथ क्या होगा। गुलामों के रूप में बेच दिया जाएगा, सुंदर लड़कियों को यौन गुलाम बना दिया जाएगा...यही कहानी हमेशा दोहराई जाती थी। श्यामला! उस दिन के बाद मैंने उसे

फिर कभी नहीं देखा। शायद मैं उसे देख सकता था। अचानक मेरे मन में एक विचार आया। मैं उदयपुरी महल से दया की भीख मांग सकता था और उसे मना सकता था कि वह उसे अपनी नौकरानी बना ले। मुझे यह विचार अच्छा लगा, लेकिन इसके होने की संभावना बहुत कम थी। तीन बच्चों की माँ किसी काम की नहीं थी। अगर उदयपुरी महल मान भी जाती, तो क्या फायदा? मैं उससे शादी कर सकता था। ऐसा कई मामलों में हुआ था—मालिक की अनुमति से नौकर आपस में शादी कर लेते थे, लेकिन मेरा मामला हास्यास्पद लगता। एक ऐसी शादी जिसमें पुरुष का कोई पुरुषत्व ही न हो। क्यों, श्यामला खुद मुझ पर हँसेगी। और मेरे विचार उन ग्रामीणों की ओर लौट गए जो भागने में कामयाब हो गए थे। वे अच्छी तरह जानते थे कि पकड़े जाने पर उनका क्या हाल होगा... उनके पास एकमात्र विकल्प था कि वे जंगलों और पहाड़ों में इतनी गहराई तक चले जाएँ कि वे सैनिकों की पहुँच से पूरी तरह बाहर हो जाएँ। फिर वे अपना बाकी जीवन वहाँ कच्चा मांस शिकार करके, फल, सब्जियाँ और पत्ते तोड़कर और हर पल जंगली जानवरों से अपनी जान बचाने की कोशिश करते हुए बिताएँगे। वे ठीक से कपड़े नहीं पहनते थे और बारिश, धूप और ठंड के लगातार संपर्क में रहने से उनके शरीर खुरदुरे और मुरझाए हुए हो जाते थे। वे जानवरों की तरह रहते थे... ठीक वैसे ही जैसे महाराणा प्रताप और उनके वफादार सैनिक अकबर बादशाह की सेना से बचने के लिए जंगलों में भाग गए थे।

~

उदयपुरी महल साहिबा ने मुझसे उस पवित्र घटना का विस्तृत वर्णन करने को कहा, जिसे मैंने देखा था। मेरा मन हुआ कि मैं उन्हें बता दूँ कि यह ईश्वर के नाम पर किया गया सबसे घिनौना कृत्य था। परन्तु मैं जानता था कि इस तरह के खुले बयान का क्या अंजाम होगा। इसलिए मैंने विनाश का संक्षिप्त वर्णन किया। यह उनके लिए भी सामान्य बात थी—उन्होंने ऐसी सैकड़ों कहानियाँ सुनी थीं और एक और ऐसी घटना सुनकर उन्हें कोई खास उत्साह नहीं हुआ। अंत में उन्होंने कहा, 'अल्लाह आपको जन्नत में सुशोभित करे।'

कुछ दिनों बाद, बेहद उत्साहित हमदुल्लाह साहब ने कहा, "सुना आपने? बादशाह ने मथुरा के केशवरया मंदिर को गिराने का फरमान जारी कर दिया है! और बस इतना ही नहीं। और भी अच्छी खबर है। राजपुताना में उसके जागीरदार नए मंदिर बनाकर उसकी सत्ता को चुनौती दे रहे हैं। उसने इन बदमाशों को करारा

सबक सिखाने की योजना बना ली है। बस देखते रहिए; आने वाले दिनों में जोधपुर में कई मंदिर ध्वस्त कर दिए जाएंगे। और उदयपुर महल के ठीक सामने वाला मंदिर भी गिरा दिया जाएगा। सोचिए उस राजपूत बादशाह के लिए इसका क्या मतलब होगा! उदयसागर झील के किनारे के तीन मंदिर और कुछ...नहीं, रुकिए...उदयपुर के आसपास 172 मंदिर, चित्तूर में 63 और आमेर में 66 मंदिर। यही बादशाह की योजना है। मुझे पूरा यकीन है कि वह इस काम को कितनी कुशलता से अंजाम देगा।" अगर वह किसी चीज़ को ठान लेता है, तो वह पूरी लगन और अनुशासन के साथ उसे हासिल करने में जुट जाता है और तब तक चैन से नहीं बैठता जब तक कि वह या तो हिंदुस्तान के आखिरी काफ़िर को धर्म परिवर्तन न करा दे या उसका सफाया न कर दे! मेरी बात याद रखना, मेरे बच्चे: अल्लाह ने उसके लिए स्वर्ग में एक भव्य महल—सबसे भव्य महल—बनाया है।

~

अपने लंबे अनुभव से उसने जान लिया था कि प्रोफेसर सचमुच कार्यशाला की अध्यक्षता करने आए थे। यह कार्यशाला भी, बाकी कार्यशालाओं की तरह, सामान्य मानदंडों को पूरा करती थी—एक बड़ी सभा, बहस, अपनी वाक्पटुता दिखाने का भरपूर अवसर और यह तथ्य कि इसके लिए दूसरे लोग भुगतान कर रहे थे। वे आम तौर पर उन विशाल वीआईपी गेस्ट हाउसों में से किसी एक में ठहरते थे। उन्हें अपने प्रशंसकों को संबोधित करने, उनके बोलते समय उनकी आँखों में चमक देखने, आदि के लिए इस तरह के स्थान की आवश्यकता होती थी। आमतौर पर, केवल सरकारी या सरकारी सहायता प्राप्त संस्थान ही इतने बड़े गेस्ट हाउस बनवा सकते थे। इस मामले में, इसका मतलब विश्वविद्यालय का गेस्ट हाउस था। उसने उनसे मिलने का फैसला किया। और यह विश्वविद्यालय उसके लिए नया नहीं था। कई साल पहले, वह यहाँ एक छात्रा के रूप में, उनके मार्गदर्शन और नेतृत्व में उनकी सबसे होनहार छात्रा के रूप में आई थी। अखिल भारतीय प्रगतिशील छात्र संघ, जो इस विश्वविद्यालय के छात्रों द्वारा गठित एक प्रकार का संघ था, ने एक संगोष्ठी का आयोजन किया था। पूरा विश्वविद्यालय का खेल का मैदान शामियानों से ढका हुआ था। प्रोफेसर के मार्क्सवादी भाषणों में भारत में जातिगत संघर्ष और कला, संगीत आदि क्षेत्रों में आध्यात्मिकता की आड़ में चल रहे भयानक शोषण का जिक्र था। वे सुबह से शाम तक लगातार बोलते रहे, उनका जोश और उत्साह बेकाबू था। यही वह सेमिनार था जिसने उन्हें हमेशा के

लिए प्रसिद्धि दिला दी। उन्होंने उनका एक भी भाषण नहीं छोड़ा और उनके शब्दों से उत्पन्न जोश को आत्मसात कर लिया। शाम को उन्होंने इन्हीं विषयों पर आधारित नाटकों और लोक नृत्यों में भाग लिया। इसका आयोजन दिल्ली स्थित प्रगतिशील नाट्य समूह 'द कॉकेशियन चॉक सर्कल' ने किया था। वे काशी शहर में एक बार भी नहीं गईं। वहाँ शोषण के अवशेषों के सिवा कुछ नहीं था। अनगिनत मंदिर और स्नान घाट—सब गरीबों के खून-पसीने से बने थे, उन्हें आध्यात्मिक मुक्ति का नशा पिलाकर।

‘काशी एक सड़ी हुई सभ्यता का बचा हुआ प्रतीक है।’ उन्होंने डॉ. रामस्वरूप यादव के भाषण की अंतिम पंक्ति को याद किया। उन्होंने उनसे पूछा था कि अगर उन्हें अपने धर्म से इतनी नफरत है तो उन्होंने अपना नाम क्यों नहीं बदल लिया।

उन्होंने जवाब दिया, 'अपने माता-पिता की मूर्खता को याद दिलाने के लिए।'

~

‘जी हां, सही है। बैंगलोर से प्रोफेसर शास्त्रीजी यहीं हैं। कमरा नंबर 2। वे अभी कार्यशाला में हैं। सामाजिक विज्ञान ब्लॉक,’ गेस्ट हाउस के प्रबंधक ने उसे बताया। उसने धन्यवाद दिया और रास्ता पूछा। जैसे ही वह सामाजिक विज्ञान ब्लॉक की ओर चली, उसने देखा कि सभी कक्षाएँ खाली थीं। ऐसा लग रहा था मानो आज छुट्टी हो।

सामाजिक विज्ञान ब्लॉक के भीतरी हिस्से में स्थित एक विशाल हॉल में उसने सौ से अधिक छात्रों की सभा देखी। वह खिड़की से कार्यवाही देख रही थी। उसे इस संगोष्ठी में आमंत्रित नहीं किया गया था। उसने अनुमान लगाया कि मंच पर उपस्थित तीन अन्य व्यक्ति ही मुख्य वक्ता थे। प्रोफेसर शास्त्री बीच वाली कुर्सी पर बैठे थे, जो अध्यक्ष थे, और लाल कुर्ते में वे बेहद आकर्षक लग रहे थे। दाढ़ी-मूंछ का अभाव और स्पष्ट गंजापन उनके व्यक्तित्व को एक विशेष क्रांतिकारी आभा प्रदान कर रहा था। वह हॉल के बाहर खड़ी होकर खिड़की से कार्यवाही देख रही थी।

प्रश्न-उत्तर सत्र चल रहा था। छात्र बारी-बारी से हाथ उठाते और अध्यक्ष के इशारे का इंतज़ार करते। अध्यक्ष के इशारे पर ही छात्र प्रश्न पूछ सकता था, यह प्रक्रिया उनके लिए जानी-पहचानी थी। एक युवक ने पूछा, 'बनारस हिंदू विश्वविद्यालय में इस कार्यशाला के आयोजन का कोई विशेष महत्व है क्या?'

दाहिनी ओर बैठे, राख के रंग की आधी कमीज और पतलून पहने हुए, विशेषज्ञ जवाब देने के लिए खड़े हुए।

शास्त्रीजी ने कहा, 'मैं इसका जवाब दूंगा।' दूसरा आदमी बैठ गया।

“इसका जवाब आपके सवाल में ही छिपा है। इस विश्वविद्यालय का पूरा नाम बनारस हिंदू विश्वविद्यालय है, जिसकी स्थापना प्रतिक्रियावादी मदन मोहन मालवीय ने प्रतिक्रियावादी राजाओं और मारवाड़ी व्यापारियों के चंदे से की थी और संयोगवश इसे भारत के सबसे बड़े प्रतिक्रियावादी केंद्र काशी में स्थापित किया गया था। यह भी उचित ही है कि कट्टर पूंजीवादी बिरला ने इस विश्वविद्यालय के ठीक बीच में एक विशाल विश्वनाथ मंदिर बनवाया, जो प्रतिगामी सोच का एक उपयुक्त प्रतीक है। तो क्या यह उचित नहीं है कि हम तथाकथित भारतीय संस्कृति—उस सड़ी-गली, बदबूदार कचरे के ढेर—को जलाकर राख कर दें, और इसकी शुरुआत इसी जगह से करें?”

‘लेकिन यह विश्वविद्यालय अपने विज्ञान, प्रौद्योगिकी और चिकित्सा विभागों के लिए भी प्रसिद्ध है,’ छात्र ने जोर देकर कहा।

जी हां। हमें उनसे कोई असहमति नहीं है। लेकिन इन विषयों को पढ़ाने वाले प्रोफेसर भी उन्हीं प्रतिगामी नैतिक और सामाजिक विचारों को मानते हैं। उन्हें सुधारना हमारा कर्तव्य है। इन विषयों के अधिकांश छात्र—और कुछ प्रोफेसर—दर्शक दीर्घा में उपस्थित हैं, जो इस कार्यशाला की सफलता का प्रत्यक्ष प्रमाण है।

पूरा हॉल तालियों की गड़गड़ाहट से गूंज उठा। तालियां थमने के बाद, एक छात्र खड़ा हुआ और उसने अपना हाथ उठाया।

‘जी हां।’ प्रोफेसर ने सिर हिलाया।

‘तो फिर पास ही स्थित अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय भी उतना ही बदबूदार होगा। आप वहां कार्यशाला का आयोजन क्यों नहीं करते? या प्रोफेसर साहब, क्या वही आपका अगला गंतव्य है?’

इस पर एकदम सन्नाटा छा गया। ऐसा लगा जैसे श्रोता अचानक रुक गए हों। प्रोफेसर ने अपनी तीखी निगाहों से उस युवक को घूरा, मानो उनकी निगाहों में प्रश्नकर्ता को अपराधबोध कराने की शक्ति हो। और फिर, 'हाहाहा! यहाँ एक प्रतिक्रियावादी है! देखो, जब मैंने हमारी संस्कृति के पतन के बारे में बात की, तो इस लड़के ने कैसे हमारे निर्दोष अल्पसंख्यकों, हमारे बेचारे भाइयों पर उंगली उठाई! लेकिन वह अकेला नहीं है। उसके जैसे लाखों हैं... ओह, और मुझे यकीन है कि तुम्हारा आरएसएस से संबंध है। हमें सच बताओ, क्योंकि यह बहुत अजीब है कि

हमारी कार्यशाला में भाग लेने के बावजूद भी तुम्हारे मन में ऐसे सवाल हैं। चलो, सच बताओ! क्या आरएसएस ने तुम्हें हमारी जासूसी करने भेजा है? हममें से कोई भी तुमसे नहीं डरता, लेकिन तुम्हें एक बुनियादी सच्चाई समझनी चाहिए: बहुसंख्यक हमेशा कट्टरपंथी होते हैं। अल्पसंख्यक, जो केवल जीवित रहने के लिए संघर्ष कर रहे हैं, उनके पास कट्टरपंथ के लिए समय, संसाधन या झुकाव नहीं है। जो व्यवस्था अल्पसंख्यकों को अपने धर्म का स्वतंत्र रूप से पालन और पोषण करने की अनुमति नहीं देती, उसे खुद को लोकतंत्र कहने का कोई अधिकार नहीं है।' बहुसंख्यक वर्ग का कट्टरवाद किसी भी राष्ट्र के लिए सबसे बड़ा खतरा है। यह एक शाश्वत, सार्वभौमिक सत्य है जिसे हमें कभी नहीं भूलना चाहिए!

इस बार तालियों की गड़गड़ाहट मूसलाधार थी और छात्र के चेहरे पर निकला पसीना उसकी स्पष्ट हार का सबूत था।

लक्ष्मी चाहती थी कि वह हॉल में घुसकर प्रोफेसर के झूठ को ठोस सबूतों के साथ शब्द-दर-शब्द उजागर कर दे, लेकिन उसने ऐसा नहीं किया। उसे आमंत्रित नहीं किया गया था। और अब, वह उससे सीधे तौर पर संबंधित था। लेकिन जो कुछ उसने सुना था, उसके बाद वह उससे मिलने के मूड में नहीं थी।

~

और कहानी यहीं समाप्त हुई। दिल्ली लौटने के बाद ख्वाजा जहाँ क्या कर सकते थे? अंगरक्षकों को भेदकर औरंगजेब की हत्या करना उनके लिए नामुमकिन था। मैं कोई काल्पनिक कथा नहीं लिख रहा हूँ। विश्वनाथ मंदिर को ध्वस्त करने के बाद औरंगजेब अड़तीस साल और जीवित रहा। मैं ख्वाजा जहाँ को उसे समय से पहले मारने नहीं दे सकता। मेरा मतलब है, ख्वाजा जहाँ को इतना अटपटा काम करने देना मूर्खता होगी। अंगरक्षकों के मजबूत घेरे को तोड़कर औरंगजेब तक पहुँचना उनके लिए नामुमकिन था... यह कोई दिवास्वप्न नहीं है जहाँ मैं मनोरंजन के लिए कुछ भी लिख सकूँ... एक ऐतिहासिक रचना को पात्रों की भावनाओं और संवेदनाओं के माध्यम से ऐतिहासिक सत्यों को व्यक्त करना चाहिए... मैं इतिहास के साथ छेड़छाड़ नहीं कर सकता। या मैं इस पूरे उपन्यास को त्याग कर पिता की योजना के अनुसार नीरस इतिहास लिख सकता हूँ। लेकिन वहाँ भी, आप इतिहास को किसी भी मनमाने बिंदु पर अचानक नहीं रोक सकते। तर्क। घटनाओं का क्रम, आदि। ऐतिहासिक कथाओं

में इस तरह की अचानक समाप्ति भावहीनता पैदा कर देगी। तबस्सुम...श्यामाला देवी...को एक तार्किक निष्कर्ष की आवश्यकता है।

ये विचार लक्ष्मी को पूरे दो दिन तक परेशान करते रहे। वह दो महीने से कुछ ज़्यादा समय से काशी में थी और उसने विश्वनाथ मंदिर के विध्वंस के बारे में लिखा था। गेस्ट हाउस के प्रबंधक ने अपना फर्ज निभाया था। उसने लक्ष्मी को अलग-अलग नामों और पतों पर पंजीकृत करके इतने लंबे समय तक वहाँ रहने दिया था, और वह अनिश्चित काल तक यह जोखिम नहीं उठा सकता था। उसने पास के गेस्ट हाउस के लोगों से बात की और उसे वहाँ स्थानांतरित करवा दिया।

उसके पास लिखने के लिए कुछ नहीं बचा था। उपन्यास में काशी से संबंधित घटनाएँ पूरी हो चुकी थीं, लेकिन इस जगह के इतिहास के प्रति उसका आकर्षण अब भी प्रबल था। अब वह अपना समय विश्वविद्यालय पुस्तकालय में औरंगजेब के बाद काशी के इतिहास से संबंधित सामग्री एकत्र करने और नोट्स बनाने में बिताती थी। उसने लाइब्रेरियन को यकीन दिलाया कि वह एक शोध छात्रा है। लाइब्रेरियन ने उसे मनचाहा पढ़ने की अनुमति दे दी। और फिर अचानक एक दिन, उसे कुछ सूझा। उसने नोट्स बनाए:

मोहम्मद ग़ज़नी के आक्रमण ने पश्चिमी भारत के सभी विद्वानों को विवश कर दिया... पंजाब और कश्मीर के संस्कृत विद्वान बड़ी संख्या में भागकर काशी पहुँचे और इसे उत्तर भारत का एकमात्र विद्वता और ज्ञान केंद्र बना दिया। औरंगज़ेब ने केवल विश्वनाथ मंदिर को ही नहीं ध्वस्त किया, बल्कि उसने सभी शिक्षा केंद्रों को नष्ट कर दिया। एक तरह से यह दुखद था। काशी के इन विद्वानों को आज भी याद था कि भक्तियार खिलजी ने नालंदा के साथ क्या किया था, जो शिक्षा और विद्वता का सबसे बड़ा और सर्वोत्कृष्ट केंद्र था। भक्तियार खिलजी ने उस विशाल विश्वविद्यालय को ध्वस्त कर दिया था, उसकी विशाल पुस्तकालय को जला दिया था और बौद्ध गुरुओं और भिक्षुओं का नरसंहार किया था। इसके बावजूद, काशी के इन विद्वानों ने आगे बढ़कर बड़े-बड़े शिक्षा केंद्र स्थापित किए। अब वे औरंगज़ेब के लिए आसान शिकार बन गए थे। जब औरंगज़ेब ने उन्हें नष्ट कर दिया, तो इन विद्वानों ने अपने घरों की गुप्त और भयभीत परिस्थितियों में छात्रों को शिक्षा प्रदान की। यह व्यवस्था पीढ़ियों तक चलती रही और बीसवीं शताब्दी में मदन मोहन मालवीय ने अथक परिश्रम करके एक विशाल विश्वविद्यालय की स्थापना की। और अब, प्रोफेसर जैसे लोग कार्यशालाओं का

आयोजन करके इसे नष्ट करना चाहते हैं। क्या उन्हें औरंगजेब का भावुक वंशज कहना उचित है?

आज मूल काशी का कुछ भी शेष नहीं है। आज हम जो मंदिर, घाट और यहाँ तक कि कब्रिस्तान भी देखते हैं, वे मराठों द्वारा निर्मित किए गए थे। बिना किसी अपवाद के, प्रत्येक मराठा राजा, सेनापति और कमांडर ने मुसलमानों द्वारा नष्ट किए गए मंदिरों और घाटों को पुनः प्राप्त करने के लिए अथक प्रयास किया, जिन्होंने उनकी जगह मस्जिदें बना दी थीं। उन्होंने हर कौशल, कला और तरकीब का इस्तेमाल किया। लेकिन फिर, एक बार जब उन्होंने किसी मंदिर को नष्ट करके उसकी जगह पर जबरदस्ती मस्जिद बना दी, तो सब कुछ समाप्त हो गया—कोई भी मुस्लिम राजा ऐसी मस्जिदों को छोड़ने और मराठों को मंदिरों का पुनर्निर्माण करने की अनुमति देने के लिए कभी सहमत नहीं हुआ। और फिर बनारस अंग्रेजों के हाथ में आ गया। मराठों ने अंग्रेजों के लिए लाभकारी संधियाँ कीं—उन्होंने विश्वनाथ मंदिर के मूल स्थान को पुनः प्राप्त करने की आशा में अंग्रेजों को धन और सेना से सहायता प्रदान की। दूसरी ओर, अंग्रेजों ने भारत में अपनी सफलता का मार्ग शीघ्र ही सीख लिया था—हिंदुओं और मुसलमानों के बीच संतुलन बनाए रखना। उन्होंने मराठों के 'काशी अनुरोध' को अस्वीकार कर दिया। मराठा पेशवा, बाजी राव प्रथम, केवल ज्ञानवापी मस्जिद को पुनः प्राप्त करना और विश्वनाथ मंदिर का पुनर्निर्माण करना चाहते थे। लेकिन बालाजी बाजी राव (1740-61) कहीं अधिक महत्वाकांक्षी थे। उन्होंने पूरी काशी को अपने अधीन करने का निश्चय किया। 1742 में, वे एक विशाल सेना के साथ मिर्जापुर तक पहुंचे। नवाब सफदरजंग को इसकी सूचना मिली और वे तुरंत बनारस पहुंचे। उन्होंने वहां सभी ब्राह्मणों को इकट्ठा किया और उन्हें चेतावनी दी कि यदि बालाजी बाजी राव अपने इस मूर्खतापूर्ण अभियान से पीछे नहीं हटे, तो वे काशी के सभी ब्राह्मणों के नरसंहार का आदेश देंगे। भयभीत ब्राह्मणों ने बालाजी बाजी राव के समक्ष एक प्रतिनिधिमंडल भेजा और मराठा राजा वापस लौट गए। नौ सौ वर्ष पूर्व, मुस्लिम लुटेरों ने मूलस्थान में दृढ़ हिंदू रक्षकों को धमकी दी थी कि यदि वे उनसे लड़ते रहे तो वे सूर्य मंदिर को नष्ट कर देंगे। हिंदू रक्षक पीछे हट गए थे। उसी धमकी, उसी सिद्धांत का उपयोग बालाजी बाजी राव को डराने के लिए किया गया। काशी के ब्राह्मण उन हजारों ब्राह्मणों की महान परंपरा को जानते थे और उसका पालन करते थे जिन्होंने अपने धर्म की रक्षा के लिए अपने प्राणों का बलिदान दिया था। फिर भी, वे कायर

निकले। इस कायरता की जड़ क्या थी? एक तरह से, मुस्लिम राजाओं का उद्देश्य पूरा हो गया था—ब्राह्मणों ने कायरता को आत्मसात कर लिया था।

23 फरवरी 1759 को सिंधिया के दीवान रामजी अनंत को लिखे पत्र में बालाजी बाजी राव ने लिखा, "हमें शुजा-उद-दौला के साथ कुछ महत्वपूर्ण मामलों पर फैसला करना होगा। उनसे बनारस, अयोध्या और इलाहाबाद लेने का प्रयास करें। उन्होंने मेरे पिता को (1757 में) अयोध्या और बनारस सौंपने का वचन दिया था। मैं अभी भी उनसे इलाहाबाद के बारे में बातचीत कर रहा हूँ। यदि वे बिना किसी झंझट के इस पर सहमत हो जाते हैं, तो इसे बिना देरी किए ले लें। [यादी, एट अल., हिस्टोरिकल पैड्रे, पृष्ठ 166]"

लेकिन शुजा-उद-दौला के मन में कुछ और ही विचार चल रहे थे। बाहरी तौर पर तो उन्होंने अयोध्या और बनारस सौंपने पर सहर्ष सहमति दे दी, लेकिन दिल्ली में बैठे वज़ीर ने उन्हें दृढ़ता से आश्वासन दिया था कि जीती हुई ज़मीन को लौटाना इस्लाम के साथ विश्वासघात करने के बराबर है।

अकबर को छोड़कर, हर मुस्लिम राजा ने हिंदुओं पर तीर्थयात्रा कर लगाया, जो अपने पवित्र स्थलों की यात्रा करना चाहते थे। औरंगजेब ने इसे इतना बढ़ा दिया कि हिंदुओं के लिए इसे चुकाना नामुमकिन हो गया। उसके बाद के बादशाहों और नवाबों ने भी यही दर बनाए रखी। लेकिन मराठों ने हार नहीं मानी। वे काशी, अयोध्या और इलाहाबाद (प्रयाग) को वापस पाने के लिए लगातार प्रयास करते रहे ताकि हिंदू बिना किसी परेशानी के अपनी तीर्थयात्रा कर सकें। चाहे उन्होंने कितने ही युद्ध जीते और कितना ही सोना दिया, मुस्लिम राजाओं ने इन शहरों को सौंपने से इनकार कर दिया। इस बीच, सैन्य और राजनीतिक रूप से शक्तिशाली हो चुके अंग्रेजों ने मुसलमानों का साथ दिया। नाना फड़नवीस ने टीपू सुल्तान के खिलाफ युद्ध में अंग्रेजों का साथ देने की पेशकश की, इस शर्त पर कि अंग्रेज काशी का नियंत्रण उन्हें सौंप दें। अंग्रेजों ने उनकी पेशकश ठुकरा दी, जिससे मराठा-अंग्रेज संबंध खराब हो गए।

विश्वनाथ मंदिर का अस्तित्व सन् 1669 से लगभग 1775 तक समाप्त हो गया, जिस वर्ष औरंगजेब ने इसे ध्वस्त कर दिया था। इसी सन् 1775 में अहल्याबाई होल्कर ने वह छोटा सा ढांचा बनवाया जो आज हम देखते हैं: ज्ञानवापी मस्जिद के बगल में स्थित यही ढांचा विश्वनाथ मंदिर के रूप में पूजा जाता है। सन् 1857 के सिपाही

विद्रोह के दौरान, मुसलमानों ने अहल्याबाई द्वारा निर्मित इस छोटे से ढांचे पर हरा झंडा फहराने का प्रयास किया। इस प्रयास से अंग्रेजों को ही लाभ हुआ।

स्वतंत्रता के बाद, भारत के राजनीतिक नेताओं ने ब्रिटिश शासन द्वारा अपनी राजनीतिक सत्ता को बनाए रखने के लिए अपनाई गई नीति को संवैधानिक रूप से मान्यता दे दी। इससे मुसलमानों का रुख और भी कठोर हो गया—उनका मानना था कि संविधान ही उन्हें उन मंदिरों को हिंदुओं को वापस सौंपने से रोकता है जिन्हें उनके पूर्वजों ने नष्ट कर दिया था। लॉर्ड वैलेंटिया, 1803: '...औरंगजेब की मस्जिद के ऊंचे मीनारों को देखकर मुझे पर्याप्त हिंदू होने का अहसास हुआ और मेरी इच्छा है कि भविष्य में सरकार इस स्थान को इसके मूल स्वामियों को लौटा दे और इस क्रूर विघ्न को पवित्र शहर से हटा दे।' (जॉर्ज विस्काउंट वैलेंटिया, भारत, श्रीलंका, लाल सागर, अबीसीनिया और मिस्र की यात्राएं, भाग 1, लंदन, 1811, पृष्ठ 90)। मुस्लिम शासन के सदियों पहले समाप्त हो जाने के बावजूद, हिंदू तीर्थ केंद्रों की नगरपालिकाएं आज भी तीर्थयात्रा कर लगाती हैं। मुझे अपने ही लोगों की इस घृणित मानसिकता का वर्णन करने के लिए उचित शब्द नहीं मिल पा रहा है, जो विदेशी आक्रमणकारियों की अन्यायपूर्ण, भेदभावपूर्ण परंपराओं को जारी रखे हुए हैं।

लक्ष्मी को संतोष का अनुभव हुआ। उसे संदेह था कि अगर वह केवल अपने पिता के शोध और अपने नोट्स पर निर्भर रहती, तो उसके उपन्यास का काशी वाला भाग इतना प्रभावशाली होता या नहीं। उसे सहज ज्ञान से पता था कि गाँव में अपने पिता के घर में इस भाग को लिखने से उसकी कल्पना शक्ति बुरी तरह प्रभावित होती। साथ ही, औरंगज़ेब के बाद काशी के बारे में उसे जो कुछ भी पता चला, वह उसे नहीं पता चलता। उसे खुशी थी कि उसने इसे यहीं, काशी में लिखा। पुस्तकें, यूरोपीय यात्रियों के यात्रा वृत्तांत, शोध पत्र, इतिहास पत्रिकाएँ, पेशवाओं के आधिकारिक अभिलेखों के अनुवाद... उसने मन ही मन सहायक पुस्तकालयाध्यक्ष सरला पंत को धन्यवाद दिया, जिन्होंने बड़ी मेहनत से उसकी माँगी हर चीज़ उपलब्ध कराई थी। लक्ष्मी को लगा जैसे उसे कोई ज्ञान प्राप्त हो गया हो।

वह अगले पांच-छह महीनों तक काशी नहीं छोड़ेगी। पांच महीने बीतने के बाद भी उसका मन काशी छोड़ने का नहीं हुआ।

14

काशी की यात्रा ने मुझे अपार स्वतंत्रता दिलाई। मैं ज़नाना के काम से ऊब चुका था। हमदुल्लाह साहब की सिफ़ारिश से मुझे उनके कार्यालय में नौकरी मिल गई। मुझे मुग़ल साम्राज्य के आधिकारिक दस्तावेज़ों की नकल करने का काम सौंपा गया। हालाँकि गुलाम के रूप में मेरी स्थिति में कोई बदलाव नहीं आया, लेकिन अब मुझे वेतन मिलने लगा। मैंने अपना निवास हमदुल्लाह साहब के घर में स्थानांतरित कर लिया और वहीं भोजन करने लगा। मैं अपने भोजन खर्च के लिए अपने वेतन का आधा हिस्सा उन्हें देता था। कार्यालय में मुझे मुग़ल साम्राज्य के सबसे वफ़ादार सेवकों में गिना जाता था और इससे मुझे बहुत सम्मान मिला। शायद ही कोई दिन ऐसा गुज़रता हो जब कोई मुझे काफ़िरों के सबसे पवित्र स्थान के विनाश को देखने के एकमात्र उद्देश्य से बनारस जाने के सौभाग्य पर बधाई न देता हो। लेकिन मैं अपने दिन औरंगज़ेब के साम्राज्य की जड़ों को उखाड़ फेंकने की योजना बनाने में बिताता था। मैं कल्पना करता था कि मैं अकेले ही लाखों भयंकर योद्धाओं को चीरता हुआ औरंगज़ेब का सिर एक ही झटके में काट डालूँगा। और हर बार, अंत में, मुझे ऐसे व्यर्थ के दिवास्वप्नों पर शर्म आती थी।

मेरी नई मिली आज़ादी का एक फ़ायदा यह था कि मैं श्यामला से जब चाहूँ मिल सकता था। मैं उससे पहले ही चार बार मिल चुका था। मैं जब चाहूँ घोड़ा मंगवा सकता था। शबाना बेगम मुझे श्यामला से मिलवाने में बहुत खुश थीं। उन्हें यह जानकर अजीब सी खुशी हुई कि इस तबस्सुम का वास्तव में एक पति है, कि यह तबस्सुम जिसने अपनी मासूमियत और भरपूर जवानी से उनके पति को आकर्षित किया था, वास्तव में किसी और पुरुष की पत्नी है। उन्होंने हमारे गुप्त मिलन का विशेष प्रबंध किया और हमें मवेशीखाने में मिलवाया। इतना ही नहीं, उन्होंने हमें स्वादिष्ट दोपहर का भोजन भी भेजा। उन्होंने बच्चों को भी हमारे साथ रहने दिया। मुझे इब्राहिम से विशेष लगाव हो गया। मैंने उनसे वादा किया था कि मैं उनके सभी बच्चों को समान रूप से प्यार करूँगा और मैंने उन्हें सहलाकर, गोद में लेकर और उनके साथ खेलकर अपने वचन को सच साबित किया। एक दिन मैंने कहा, 'श्यामला, मैं पैसे देकर तुम्हें गुलामी से मुक्त करवा सकता हूँ। या मैं अपनी सद्भावना का इस्तेमाल करके शबाना बेगम से तुम्हें रिहा करने के लिए कह सकता हूँ। दोनों ही तरह से, काम

बन जाना चाहिए।' मैं भी खुद को रिहा करवा सकती हूँ और फिर हम दोनों पति-पत्नी बनकर कहीं रह सकते हैं। वैसे भी, मैं अभी वेतन कमाती हूँ।'

'यह कैसे संभव है?'

'क्यों नहीं?'

'लेकिन...लेकिन...क्या आप हिजड़ा नहीं हैं?' उसने अचानक कहा और फिर अपनी बात का एहसास होने पर अपने होंठ काट लिए।

उसने जो कहा था उसमें कुछ भी गलत नहीं था। वह सच था। मैं एक हिजड़ा था और मुझे यह पता था, लेकिन मैंने यह प्रस्ताव तीव्र भावनाओं के आवेश में आकर जल्दबाजी में दिया था। हम दोनों ने ही कई अपमान, तिरस्कार और नीचाइयाँ झेली थीं, और मैंने सोचा कि प्रेम का शारीरिक इज़हार हमारे पति-पत्नी के रूप में फिर से एक साथ जीवन बिताने में बाधा नहीं बनेगा। मैं उसे यह सब बताना चाहता था, लेकिन मेरा दिल पहले ही डूब चुका था। मेरे मुँह से शब्द नहीं निकले। मैं वहाँ से चला गया और तीन महीने तक वापस नहीं लौटा। वह एक दासी थी, पत्नी नहीं, लेकिन दिलशाद खान से उसके दो बच्चे थे। उसने उससे शारीरिक सुख प्राप्त किया था... और अब भी करती है। वह एक दासी थी, लेकिन अपेक्षाकृत आरामदायक जीवन जी रही थी। एक तरह से वह सही थी। उसके लिए यह सब छोड़कर एक ऐसे आदमी के साथ गरीबी में रहने जाना समझ से परे था जो वास्तव में पुरुष नहीं था। और क्यों? क्या इसलिए कि कुछ समय के लिए उसके साथ उसका कोई रिश्ता था, जिसकी याद अब धुंधली सी रह गई थी? मुझे बहुत दुख हुआ लेकिन मैंने वास्तविकता में सांत्वना पाई—मैं एक हिजड़ा था और कोई भी चीज इसे बदल नहीं सकती थी।

कुछ दिनों बाद मुझे शिवाजी के बारे में खबर मिली। दफ्तर में हर कोई... पूरे दिल्ली में कानाफूसी फैल गई। उनके भागने की जांच से कई बातें सामने आईं। उनकी बीमारी एक चाल थी, एक सोची-समझी साजिश। उन्होंने कहा कि उनके धर्म के अनुसार ब्राह्मणों को फूल और फल चढ़ाने से वे ठीक हो सकते हैं। इसलिए वे हर दिन फलों, फूलों और मिठाइयों से भरी बड़ी-बड़ी टोकरियाँ भेजते थे। एक दिन, उन्होंने खुद को टोकरी में इस तरह से सरका लिया कि वे उसमें समा गए। और भाग निकले! उनका पीछा करने वाले, तेज घुड़सवार जिन्हें तुरंत उन्हें पकड़ने के लिए भेजा गया था, उनकी हल्की सी भी आहट नहीं सूंघ पाए। अपने राज्य पहुँचते ही उन्होंने एक-एक करके अपने खोए हुए किले वापस जीतना शुरू कर दिया। मुझे गंगा के

किनारे साधु के शब्द याद आए: शिवाजी का जल्द ही एक सच्चे महाराजा की तरह राज्याभिषेक होगा। शिवाजी चतुर थे। उन्होंने पहले ही अनुमान लगा लिया था कि जरूरत पड़ने पर बादशाह अपने सैनिकों को दक्षिण में, यहाँ तक कि मराठा देश के मध्य तक भी उनका पीछा करने के लिए भेजेंगे। और इसलिए वह विपरीत दिशा में भागा: आगरा से मथुरा की ओर। मथुरा पहुँचकर उसने अपनी दाढ़ी, मूंछ और सिर मुंडवा लिया और संन्यासी के वस्त्र धारण कर लिए। वह पूर्व की ओर यात्रा करता रहा और प्रयाग पहुँच गया। वहाँ से वह दक्षिण की ओर बढ़ा और अंततः मराठा देश पहुँचने में उसे पच्चीस दिन लगे। रातोंरात वह दिल्लीवासियों का नायक बन गया। अब वह अनुकरणीय व्यक्तित्व बन गया था। जिन लोगों ने उसे यहाँ नहीं देखा था, वे भी मनगढ़ंत कहानियाँ गढ़ने लगे। उन्होंने कहा कि उन्होंने उसे बादशाह के दरबार में देखा था। यहाँ तक कि बादशाह के कट्टर वफादार भी उसकी रणनीति, साहस और सूझबूझ की प्रशंसा करने से खुद को रोक नहीं पाए।

मुझे एक और खबर मिली। बुंदेलखंड के छत्रसाल ने शिवाजी से मुलाकात की और उनकी सेना में शामिल होने की इच्छा जताई। छत्रसाल के पिता चंपक्रम उन सामंतों में से एक थे जिन्होंने मुगल सिंहासन के लिए औरंगजेब बादशाह की लड़ाई में उनकी मदद की थी। लेकिन बाद के वर्षों में, बादशाह का उनसे कुछ मतभेद हो गया और उन्होंने एक बड़ी सेना के साथ उनका पीछा किया, जिससे उन्हें आत्महत्या करने के लिए मजबूर होना पड़ा। जयपुर के मिर्जा राजा जय सिंह ने हस्तक्षेप किया और बादशाह को छत्रसाल को अपनी सेना में शामिल करने के लिए राजी किया। यह वही जय सिंह थे जिन्होंने शिवाजी को आगरा आने के लिए मजबूर किया था। छत्रसाल ने शिवाजी के खिलाफ उस लड़ाई में भाग लिया था। लेकिन शिवाजी के बादशाह औरंगजेब के चंगुल से भाग निकलने के बाद हालात बदल गए। यह एक साहसी योद्धा था जिसने मुगल साम्राज्य का सामंत बनने और अपनी शक्ति को ऐसे व्यक्ति की सेवा में समर्पित करने से इनकार कर दिया जिसका एकमात्र उद्देश्य मंदिरों को नष्ट करना था। साहस के इस असाधारण प्रदर्शन ने छत्रसाल का दिल जीत लिया और उन्होंने उनसे संपर्क करके उन्हें कमांडर बनाने का अनुरोध किया।

शिवाजी ने कहा, 'मराठा राज्य में हमारे पास स्वतंत्रता के लिए लड़ने को तैयार पर्याप्त योद्धा हैं। लेकिन मराठों की स्वतंत्रता का यह अर्थ नहीं है कि पूरा हिंदुस्तान अपने आप स्वतंत्र हो जाएगा। आप बुंदेलखंड लौट जाइए और अपने लोगों को मुगलों

के विरुद्ध विद्रोह करने के लिए प्रेरित कीजिए। मेरा पूरा समर्थन आपके साथ है।' ऐसा प्रतीत होता है कि छत्रसाल बुंदेलखंड लौट आए थे। शुरुआत में लोगों में विद्रोह करने का न तो साहस था और न ही उत्साह। लेकिन जब औरंगजेब बादशाह ने मथुरा में केशवरया मंदिर को ध्वस्त कर दिया, तो बुंदेलों का धैर्य टूट गया। अकबर बादशाह ने अपने सबसे भरोसेमंद और वफादार सहयोगी अबुल फजल—जिन्होंने आईन-ए-अकबरी और अकबरनामा लिखा था—को बादशाह के पुत्र सलीम द्वारा छेड़े गए विद्रोह को दबाने के लिए भेजा था। जब सलीम को इसकी सूचना मिली, तो उसने बुंदेलों में से एक बीर सिंह को अबुल फजल की हत्या करने के लिए बुलवाया। बीर सिंह ने तुरंत रास्ते में ही उसकी हत्या करवा दी। बाद में जब सलीम सम्राट बने और जहांगीर की उपाधि धारण की, तो उन्होंने बीर सिंह की वफादारी का सम्मान करते हुए उन्हें मथुरा में केशवरया मंदिर का निर्माण करने की अनुमति दी, जो भगवान कृष्ण के जन्मस्थान पर बना था। यह उस मुस्लिम शासन वाले क्षेत्र में हुआ जहाँ गैर-मुसलमानों को किसी भी प्रकार का पूजा स्थल बनाने की मनाही थी। बुंदेल इस मंदिर के प्रति विशेष श्रद्धा रखते थे। और अब औरंगजेब ने इस मंदिर को ध्वस्त कर उसी स्थान पर एक मस्जिद का निर्माण कर दिया था और ध्वस्त मंदिर के स्तंभों, मूर्तियों और अन्य सामग्री का उपयोग किया था। क्रोधित बुंदेल छत्रसाल के नेतृत्व में एकजुट हो गए और अपनी स्वतंत्रता की घोषणा कर दी। बादशाह अब इस विद्रोह को कुचलने के लिए सेना जुटाने में व्यस्त थे।

कहने की ज़रूरत नहीं, हमेशा की तरह हमदुल्लाह साहब ही इस तरह की विस्तृत जानकारी के मेरे स्रोत थे। वे शिवाजी के बारे में हमेशा की तरह अपमानजनक भाषा का प्रयोग करते रहे। अब उन्होंने इस सूची में छत्रसाल का नाम भी जोड़ दिया। उन्होंने कहा कि छत्रसाल एक कुत्ता है, जिसे बहुत जल्द ही नरक में भेजा जाना तय है। उस रात सोते समय अचानक मेरे मन में एक बात कौंध गई। एक पल की कमजोरी ने मुझे अंतहीन अपमान का जीवन दे दिया। मुझे और कितने साल ऐसे ही जीना पड़ेगा? मुझमें शिवाजी जैसा साहस क्यों नहीं है? एक ऐसा व्यक्ति जो बादशाह की अभेद्य सुरक्षा के बावजूद न केवल बच निकला, बल्कि अपने साम्राज्य का पुनर्निर्माण किया और आज भी लगातार तरक्की कर रहा है? इसके अलावा, पुरुषत्व क्या है? क्या यह सिर्फ एक स्त्री के साथ शारीरिक संबंध बनाने की क्षमता है? मुझे

हिंदुस्तान के मुस्लिम इतिहास से उन हिजड़ों के नाम याद आए जो बड़े होकर भयंकर योद्धा बने। ऐसे कई योद्धा थे।

उस रात मुझे नींद नहीं आई। अगली सुबह मैंने अपनी हालत पर गौर किया: एक हिजड़ा जिसने अपना पूरा जीवन ज़नाना में बिताया, शारीरिक कष्टों से दूर, भरपूर भोजन से पोषित और चिलचिलाती धूप से सुरक्षित। मुझमें किस तरह का साहस हो सकता था? बेशक, मैं भाग्य के आगे हार मानकर खुद को दिलासा दे सकता था। मैंने दो दिन इसी तरह बिताए। मैं उस कुत्ते की तरह था जो लात लगने पर डरपोक होकर अपनी पूंछ पैरों के बीच दबा लेता है। एक हफ्ते बाद मैंने फैसला किया। इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि मैंने युद्ध में कितने दुश्मनों को मारा या कितनों की रक्षा की। मुझे कम से कम एक दिन के लिए तो आज़ाद होना ही था। आज़ादी। मैं भाग सकता था। शिवाजी ने मिसाल कायम की थी। उनकी तरह मैं भी अपना सिर, दाढ़ी और मूंछ मुंडवाकर भगवा वस्त्र पहन सकता था। तब कोई मेरा पीछा नहीं करता। लेकिन अगर—और यह एक वास्तविक संभावना थी—मेरी तलाशी ली गई और उन्होंने देखा कि मेरा खतना हुआ है, तो मुझे पता था कि क्या होगा। इस्लाम छोड़ने की कोशिश करने वाले मुसलमान को तुरंत मौत की सजा दी जाती थी। यह एक बुरा विचार था। मुझे एक आसान रास्ता मिल गया। मैं आसानी से यात्रा की अनुमति प्राप्त कर सकता था। मैं उनसे कहता कि मैं आलमगीर बादशाह के किले और ताजमहल की भव्यता और सुंदरता को निहारने के लिए वहां जाने का इच्छुक हूं। मैं वहां से निकलकर जंगल पहुंच सकता था। कुछ दिनों की यात्रा के बाद मैं छत्रसाल के साथ होता। मैंने मराठा देश न जाने का फैसला किया। वह एक ऐसा देश था जो सुरक्षा की गारंटी देता था: वह सुरक्षा जो शिवाजी ने प्रदान की थी। मुझे सुरक्षा नहीं चाहिए थी। मैं छत्रसाल का हिस्सा बनना चाहता था—उनकी मदद और सेवा करना चाहता था जो मुगल राजधानी के इतने करीब स्थित थे और एक स्वतंत्र राज्य स्थापित करने के लिए संघर्ष कर रहे थे।

मेरे फैसले के साथ एक सवाल भी जुड़ा था। मैं आखिरी बार यह जानना चाहता था कि श्यामला तबस्सुम बनकर रहना चाहती है या नहीं। लेकिन इब्राहिम, वह तो मेरी संतान था। अगर वह मेरे साथ आने से इनकार कर देती, तो कम से कम मैं उसे अपने साथ ले जा सकता था। देवगढ़ वंश का इकलौता वंशज। अगर वह दिलशाद खान के घर में ही रहता, तो वह सिपाही बन जाता और एक दिन मंदिर फोड़ने और जजिया वसूलने में शामिल हो जाता। मैंने उसे इस नियति से बचाने का सोचा।

मैं अपने घोड़े पर सवार हुआ और जल्दी ही गौशाला पहुँच गया। फिर मैंने एक नौकरानी के ज़रिए शबाना बेगम को संदेश भेजा। मैं इंतज़ार करता रहा। और इंतज़ार करता रहा। बेचैनी। हर पल बढ़ता हुआ शक। और उसके साथ डर भी। मुझे यकीन हो गया था कि उन्होंने मुझे वैवाहिक जीवन के लायक नहीं समझा है। अगर उन्होंने दिलशाद खान को बता दिया होता तो! मैंने इस संभावना पर ध्यान न देने के लिए खुद को कोसा। अगर ऐसा हुआ तो मेरा सिर धड़ से अलग हो जाएगा। सब कुछ शुरू होने से पहले ही खत्म हो जाएगा। मैं पसीने से तरबतर हो गया और गौशाला में इधर-उधर चक्कर लगाने लगा। और फिर मैंने उन्हें देखा। एक दर्दनाक घंटे का अंतराल। मैंने सोचा कि थोड़ी बातचीत करूँ, उनका हालचाल पूछूँ और चला जाऊँ। लेकिन जैसे ही वह मेरे पास आईं, मैंने उनके चेहरे के भाव देखे। वह साफ़ तौर पर बहुत चिंतित थीं। मेरे सामने बैठते हुए उन्होंने कुछ नहीं कहा। मैं कुछ कहने के लिए सोचता रहा। एक लंबे, असहज क्षण के बाद, मैंने कहा, 'तो, आप कैसी हैं?'

छह महीने। है ना? आप छह महीने बाद मुझसे मिलने आए हैं। मैं समझती हूँ कि आप नाराज़ हैं। आपको होना भी चाहिए। आपने पहले की तरह ही मुझसे पत्नी बनने को कहा और मैंने वही कह दिया जो मेरे मन में सबसे पहले आया। क्या मैं आपको कुछ बताऊँ? दिलशाद खान की चार पत्नियाँ हैं... वो उनमें से किसी एक को तलाक दे देते हैं ताकि वो अपनी पसंद की किसी दूसरी लड़की से शादी कर सकें। या फिर रखैलें, ये सब उनकी इच्छा, धन और हैसियत पर निर्भर करता है। मैंने अपना ज़्यादातर जीवन इसी माहौल में बिताया है। मुझे शारीरिक संबंधों के बिना शादी की कल्पना करना मुश्किल लगता था। खैर, अब मैंने आपको सच बता दिया है। बताइए, क्या आपका प्रस्ताव अभी भी खुला है?

मुझे अपने कानों पर विश्वास नहीं हुआ। मैं आँखें फाड़कर उसे देखती रही।

‘क्या तुम इस नजरिए से मेरी परीक्षा लेना चाहते हो?’ उसने कहा।

‘अब यह हम दोनों के पति-पत्नी के रूप में रहने के बारे में नहीं है।’ और मैंने उसे काशी की अपनी यात्रा, शिवाजी और छत्रसाल के बारे में और उसके साथ जुड़ने के अपने निर्णय के बारे में सब कुछ बताया।

‘मैं उदयपुरी महल से आगरा जाने की इजाज़त ले लूँगा। क्या आप बच्चों के साथ यहाँ से जा सकती हैं? हम दोनों को बस तीन दिन के लिए बाहर रहने की इजाज़त चाहिए। इतना हमारे लिए आगरा पार करके जंगल में जाने के लिए काफ़ी है। जब

तक उन्हें पता चलेगा कि हम गायब हैं, तब तक हम बुंदेल के इलाके में पहुँच चुके होंगे। लेकिन ज़िंदगी मुश्किल होगी। और हम यह ज़िंदगी इसलिए नहीं छोड़ रहे हैं कि कहीं और आराम से रह सकें। हम इसलिए छोड़ रहे हैं ताकि हम आज़ाद हो सकें। ज़रूरत पड़ने पर अपनी आज़ादी के लिए जान भी दे सकते हैं।'

वह काफी देर तक चुप रही। फिर बोली, 'किसी को मत बताना कि हम विद्रोहियों के संघर्ष में उनका साथ देने के लिए राज्य छोड़कर जा रहे हैं। मुझे बस शबाना बेगम को बताना है कि मैं यहाँ से निकलकर तुम्हारे साथ रहना चाहती हूँ। मुझे छुड़ाने के लिए वह कोई भी रकम देने को तैयार है। प्रतिद्वंद्वी को खोने से उसे ही फायदा होगा। दिलशाद खान साहब को अपनी संतानों से कोई खास लगाव नहीं है। उनकी कई अलग-अलग महिलाओं से ऐसी कई संतानें हैं। बेगम तभी खुश होंगी जब मेरी संतानें उनकी नजरों से हमेशा के लिए ओझल हो जाएँगी। तुम अपने इंतजाम कर लो।'

15

अमेरिका से लौटने से बहुत पहले ही उनके बाल पूरी तरह से बढ़ चुके थे, घने और सुडौल। कुछ हफ़्तों बाद ही उनमें फिर से पहले जैसी चमक आ गई थी। उन्होंने अपने बालों को काला रंगवाया, जिसमें कुछ खास जगहों पर सफेद बाल दिख रहे थे। उन्हें बहुत खुशी हुई। उनकी उम्र में इतने घने और खूबसूरत बाल बहुत कम लोगों को मिलते हैं। ज्यादातर लोग तो गंजे हो जाते हैं। उन्हें अपने जीन पर गर्व महसूस हुआ। इसी के साथ उन्हें अपनी मां की याद आ गई। उनके पिता तो काफी कम उम्र में ही गंजे होने लगे थे। लेकिन उनकी मां? उन्हें यह एहसास एक गहरी समझ लेकर आया —बुद्धि और गंजेपन के बीच कोई संबंध नहीं है, उन्होंने सोचा और आईने में खुद को देखते हुए मुस्कुरा दिए।

उन्हें दिल्ली के लिए रवाना होना था। वे समय से काफी पहले हवाई अड्डे पहुँच गए और देखा कि लक्ष्मी इकोनॉमी क्लास के चेक-इन काउंटर पर अपनी बारी का इंतजार कर रही हैं। हमेशा की तरह, वे बिजनेस क्लास में यात्रा कर रहे थे और वहाँ

कोई लाइन नहीं थी। उन्होंने अपना चेक-इन पूरा किया, लक्ष्मी के पास गए और बोले, 'हाय लक्ष्मी! क्या आपके गाँव में फोन लाइन नहीं लग सकती? आपको पता नहीं मैंने कितनी बार आपसे संपर्क करने की कोशिश की है! मैं भी उसी मीटिंग में जा रहा हूँ जिसमें आप जा रही हैं।' उनकी आँखों में शरारती चमक थी, 'आपको इकोनॉमी क्लास में यात्रा करते देखकर मुझे दुख हो रहा है। आपको लिखकर बता देना चाहिए था कि आप इकोनॉमी क्लास में यात्रा नहीं कर सकतीं। मैंने आपका टिकट बिजनेस क्लास में बदलवा दिया।'

'यह सिर्फ ढाई घंटे की बात है। इससे क्या फर्क पड़ता है कि मैं कहाँ बैठता हूँ?'

अरे! लेकिन आप असली बात समझ नहीं पाए। हम बहुत अच्छी बातचीत कर सकते थे!

'ज़रूर। लेकिन मुझे अपनी टिकट को आपकी श्रेणी में अपग्रेड करवाने के लिए बहुत सारा पैसा देना पड़ेगा। सरकार भुगतान नहीं करेगी। लेकिन अगर आप मेरी श्रेणी में यात्रा करते हैं, तो एयरलाइन वालों को कोई आपत्ति नहीं होगी।'

'तुम्हें पता है मैं कभी भी वर्गों के बीच भेदभाव नहीं करता। सब बराबर हैं। उड़ान भरने दो, मैं तुम्हारे साथ आऊंगा।'

इकोनॉमी क्लास में काफी खाली सीटें थीं। उड़ान भरने के कुछ ही देर बाद प्रोफेसर शास्त्री उनके बगल में बैठ गईं। उन्होंने पहले बात शुरू की। 'हम आपका इंतजार कर रहे थे। आप क्यों नहीं आईं?'

उसने उसकी आँखों में देखा और उसी आत्मीय स्वर में कहा, 'सच कहूँ तो, यह प्रायश्चित का सारा मामला क्या है? मेरा मतलब है, अगर धरती पर सोने के लिए वही एकमात्र जगह बची है तो मुझे मंदिर में सोने में कोई आपत्ति नहीं है... लेकिन...'

'तुम्हारा अहंकार बहुत बड़ा है... मेरा मतलब है, आत्म-सम्मान।' वह उसे बीच में ही रोकने से खुद को रोक नहीं पाई और दृढ़ता से उसकी आँखों में देखने लगी।

वह इस बात पर बहस कर सकता था, लेकिन जिस तरह से उसने उसे देखा, उससे उसे पता चल गया कि वही जीतेगी। इसलिए उसने कहा, 'बताओ, कौन-कौन आया था? तेरहवाँ दिन बहुत खास माना जाता है, मुझे यकीन है कि काफी भीड़ रही होगी। मैं तुम्हें सच बताता हूँ। मैं अंतिम संस्कार का सारा खर्च खुद उठाना चाहता था, लेकिन तुम जानती हो ना—"अगर कोई अपनी माँ के अंतिम संस्कार के लिए तैयार नहीं है, तो उसे अपने पैसे की क्या ज़रूरत है" और इस तरह की बातें...'

‘आपने भुगतान नहीं किया। आपके बेटे ने किया। आपने रस्में नहीं निभाईं। उसने निभाईं... खैर, कुछ हद तक। उसने, उसकी पत्नी और बच्चे ने सभी को पारंपरिक तरीके से भोजन परोसा, मेहमानों के खाने के बाद केले के पत्ते हटाए और बाद में फर्श साफ किया। उसकी पत्नी एक अद्‌भुत लड़की है। सभी ने घंटों तक उसकी प्रशंसा की।’

‘उसे यह खबर किसने दी? उसका अपने दादा-दादी से बिल्कुल भी संपर्क नहीं था! क्या तुमने उसे बताया?’

‘वह उनके संपर्क में था। जयराम याद है? तुम्हारी बहन का बेटा जो मद्रास में रहता है? लगता है दिगंथ की कंपनी का उससे कुछ कारोबार है। किसी व्यापारिक सौदे के सिलसिले में उनकी मुलाकात हुई, बातचीत शुरू हुई और पता चला कि उनकी मातृभाषा एक ही है। फिर बात आगे बढ़ी और जल्द ही उन्हें पता चल गया कि वे चचेरे भाई हैं। बस इतना ही काफी था। उनके परिवार बहुत जल्दी एक-दूसरे के करीब आ गए। जब भी वह मद्रास जाता है, जयराम के घर पर ही ठहरता है और जब जयराम बैंगलोर आता है, तो वह भी ऐसा ही करता है। जयराम उसे नरसपुरा तक ले गया और तुम्हारे माता-पिता से मिलवाया। इसके बाद, दिगंथ साल में कम से कम एक बार अपने दादा-दादी से मिलने जाता था। हर बार जब वह जाता, तो उन्हें धोती और साड़ी भेंट करता और वहाँ भोजन करता और पारंपरिक तरीके से उनके सामने प्रणाम करता। लगता है उसने उन्हें दस हजार रुपये भी दिए। फिर उसने तुम्हारी दूसरी बहनों से संपर्क किया और उन्हें अपने बारे में बताया। अब वे सब एक बहुत ही घनिष्ठ पारिवारिक संबंध में हैं।’ याद है, जयराम ने आपको फोन करके बताया था कि आपकी माताजी का देहांत हो गया है? वह तुरंत मद्रास के लिए रवाना हुए और उसी रात दिगंथ को फोन करके यह दुखद खबर सुनाई। दिगंथ और उनकी पत्नी अगले ही दिन नरसपुरा आ गए। उन्होंने अपने दादाजी और आपकी बहनों से बात की और उन्हें पचास हजार रुपये देते हुए कहा, “दादीजी ने एक भरा-पूरा जीवन जिया। वे एक गरिमापूर्ण अंतिम संस्कार की हकदार हैं। मुझे खेद है कि मैं रुक नहीं सकता क्योंकि मुझे व्यापार के सिलसिले में अबू धाबी के लिए तुरंत निकलना है। मैं तेरहवें दिन वापस आऊंगा...”

प्रोफेसर ने आधे सदमे भरे भाव से उसकी ओर देखा। अपने ही बेटे द्वारा पीठ में छुरा घोंपने की इस घटना से अप्रभावित रहने का उन्होंने दिखावा नहीं किया। उसने

मुझे सीधे-सीधे क्यों नहीं बताया कि वह अपने दादा-दादी से कितना प्यार करता है? कि वह उनसे अक्सर मिलना चाहता है? उसने यह निष्कर्ष कैसे निकाला कि मैं उसे अनुमति देने से इनकार कर दूंगी? उसने मुझे इतना घटिया कैसे समझा? मैं कोई तानाशाह नहीं हूँ। इसके अलावा, उसे किसी से भी मिलने का पूरा लोकतांत्रिक अधिकार है। फिर प्रोफेसर को याद आया कि पति-पत्नी दोनों उनके साथ बहुत सौहार्दपूर्ण थे। उन्होंने कभी भी ऐसी कोई बात नहीं कही जिससे उन्हें ठेस पहुंचे। कभी नहीं। और उन्होंने अपने व्यवसाय को बढ़ाने के लिए मेरे संपर्कों का इस्तेमाल किया। लक्ष्मी ने बोलना जारी रखा, "...हमने नानी के नाम पर नरसिम्हा मंदिर का जीर्णोद्धार कराने का फैसला किया है। हम बैंगलोर से एक वास्तुकार बुलाएंगे। फिलहाल, हमने पांच लाख रुपये का अनुमान लगाया है। पैसे की चिंता मत कीजिए। और उन्होंने मुझे जीर्णोद्धार कार्य की देखरेख का जिम्मा सौंपा है। दिगंथ की पत्नी को इन चीजों में अधिक श्रद्धा और विश्वास है।" ऐसा लगता है कि वे हर साल वैष्णो देवी की वार्षिक तीर्थयात्रा अवश्य करते हैं। तिरुपति भी। वे गाड़ी से पहाड़ियों की तलहटी तक जाते हैं, वहाँ गाड़ी खड़ी करते हैं और फिर ऊपर की ओर चढ़ाई करते हैं...

तिरुपति का जिक्र होते ही प्रोफेसर को अपनी बहू के साथ हुई बातचीत याद आ गई। उन्होंने बहू से कहा था कि तिरुपति के देवता पूंजीवादी देवता हैं; और वहां तीर्थयात्रा करने वालों में से अधिकांश मध्यम, निम्न-मध्यम और गरीब वर्गों से आते हैं। बहू ने विनम्रता से मुस्कुराते हुए कहा था, 'इसका मतलब है कि तीर्थयात्रा करना उनका यह कहने का तरीका है कि वे भी पूंजीवादी बनना चाहते हैं।'

जिस पर उन्होंने जवाब दिया, "...यही वह चीज है जिसकी मार्क्स ने जनता के लिए अफीम के रूप में निंदा की थी।"

वह मुस्कुराना बंद नहीं कर पाई, "और रूस अफीम को नष्ट करने के अपने महत्वाकांक्षी युद्ध में हार गया। चीन भी हार गया। और भारत भी, जिसने अफीम को नष्ट करने के ऐसे अभियानों से दूरी बनाकर पूंजीवाद को अपना लिया है, जिसकी वजह से हम अपना कारोबार कर पा रहे हैं। क्या मैं सही कह रही हूँ?"

उसने आगे बहस नहीं की। एक महिला। उससे काफी छोटी। अगर वह उससे बहस हार जाता तो उसके स्वाभिमान को बहुत ठेस पहुँचती। अब वह समझ नहीं पा रहा था कि उन्होंने अपने दादा-दादी से लगातार संपर्क में रहने की बात क्यों छुपाई थी। क्या वे उससे डरते थे? या फिर यह महज़ कूटनीति थी? दोनों ही व्यवसायी थे और

ऐसी बातों पर चर्चा करना पसंद नहीं करते थे जिनमें थोड़ी सी भी बहस की गुंजाइश हो। उसके भीतर अपने बेटे के प्रति क्रोध उमड़ रहा था, पर वह उसे डांटता क्या? उसे ऐसा लग रहा था जैसे किसी ने उसके दिमाग में आग लगा दी हो। उसने गुस्से में कॉल बटन दबा दिया। जब एयर होस्टेस आई, तो उसने उसे अपना बिजनेस क्लास पास दिखाया और कहा, 'एक बड़ा जिन (शुभकामनाएं)।' वह लक्ष्मी की ओर मुड़ा। 'तुम?'

'नहीं, धन्यवाद महोदय।'

~

सरकार ने राष्ट्रीय एकता हासिल करने और सांप्रदायिक सद्भाव को बढ़ावा देने के तरीकों पर चर्चा करने और उन्हें खोजने के लिए तीन दिवसीय संगोष्ठी का आयोजन किया था। उसने जीवन के सभी क्षेत्रों के प्रतिष्ठित लोगों—बुद्धिजीवियों, प्रोफेसरों, विद्वानों और इतिहासकारों—को निमंत्रण भेजा था। भारत के विभिन्न हिस्सों से लगभग तीस लोग संगोष्ठी में शामिल हुए। इनमें से अधिकांश टीवी और प्रिंट मीडिया में नियमित रूप से दिखाई देते थे। रजिया एकमात्र अपवाद थीं। वह पिछले पांच वर्षों से टीवी से गायब थीं। सत्र शुरू होने से ठीक पहले चाय पार्टी में कई लोगों ने उन्हें पहचान लिया: 'आप कहां गायब हो गईं, महोदया? क्या आप अभी भी भारत में हैं?' प्रोफेसर शास्त्री ने अपनी भूमिका बखूबी निभाई। वे एक विनम्र मेजबान थे जो सबसे सौहार्दपूर्ण बातचीत करते हुए सभी को महत्वपूर्ण महसूस करा रहे थे। मंत्रालय के सचिव और सहायक सचिव भी इसी तरह सबसे मिल रहे थे, सभी का अभिवादन कर रहे थे और उन्हें स्वागत का भाव दे रहे थे। आमंत्रित लोगों में से किसी ने भी इस बात पर ध्यान नहीं दिया कि ये दोनों शक्तिशाली नौकरशाह प्रत्येक आमंत्रित व्यक्ति के साथ किस तरह का व्यवहार कर रहे थे। प्रोफेसर के प्रभाव का अंदाजा सबको जल्दी ही लग गया। इससे पहले जब वे दिल्ली हवाई अड्डे पर अपने सामान का इंतजार कर रहे थे, तब उन्होंने रजिया से कहा कि उन्होंने इस संगोष्ठी के लिए उनके नाम की सिफारिश की है। अन्य लोगों के विपरीत, जिन्हें जनपथ होटल में ठहराया गया था, मंत्रालय से एक कार आई और उन्हें सरकारी पांच सितारा होटल अशोक ले गई। वह टैक्सी से जनपथ होटल गईं।

सेमिनार का उद्घाटन करने वाले मंत्री जी अंदर आए। अधिकांश आमंत्रित लोग उनके पास गए और उनके परिचय का लाभ उठाया। उन्होंने मुस्कुराते हुए सभी से हाथ मिलाया और सौहार्दपूर्ण लहजे में बात की। उन्होंने सभी के स्वास्थ्य और

हालचाल पूछे और यह भी पूछा कि क्या वे अपने आवास से संतुष्ट हैं। उनमें से कुछ को वे कई वर्षों से जानते थे। वे पुराने जमाने के मंत्री नहीं थे। उन्होंने खादी से बने कुर्ते, पजामा और सफेद टोपी वाली राजनेताओं की जानी-पहचानी वर्दी नहीं पहनी थी। उन्होंने टेरीकॉट मिश्रित खादी से सिला हुआ सफारी सूट पहना था।

परिचय समारोह समाप्त होने के कुछ मिनट बाद वह मंच पर पहुंचे।

आप सभी यहाँ अत्यंत विद्वान व्यक्ति हैं, और आप मुझसे बेहतर जानते हैं कि इस राष्ट्र का कोई भविष्य नहीं है जब तक हम जाति, समुदाय और धर्म की विभाजनकारी शक्तियों को नष्ट नहीं कर देते, जो इस महान राष्ट्र को टुकड़ों में बाँट रही हैं। ये बुरी शक्तियाँ पहले ही अधिकांश संस्थानों—शिक्षा, कला, विश्वविद्यालय, साहित्य, अनुसंधान और मीडिया—में घुसपैठ कर चुकी हैं। इस संगोष्ठी का आयोजन सरकार द्वारा इन बुरी शक्तियों को जड़ से उखाड़ने के लिए अपनाई जाने वाली कार्ययोजना पर सुझाव प्राप्त करने के उद्देश्य से किया गया है। कृपया ध्यान रखें कि यह केवल एक प्रारंभिक चरण है—वास्तविक निर्णय सरकार ही लेगी, चाहे वह कितना भी कठिन क्यों न हो। इस संगोष्ठी की दिशा, नियम और संचालन देश के सर्वोत्कृष्ट बुद्धिजीवी, प्रोफेसर शास्त्री द्वारा अपने मुख्य भाषण में निर्धारित किए जाएँगे।

श्रोता प्रभावित हुए। ये कोई साधारण मंत्री नहीं थे। ये एक बहुत ही चतुर राजनीतिज्ञ थे।

प्रोफेसर शास्त्री उठे। उन्होंने गर्मजोशी से मुस्कुराते हुए मंत्री के बारे में कुछ शब्द कहे और वर्तमान सरकार की प्रशंसा की। फिर उन्होंने कहा कि देश भविष्य की राह में एक महत्वपूर्ण मोड़ पर खड़ा है।

भारत कभी एक आयामी नहीं था। अजंता और एलोरा हमारे लिए उतने ही महत्वपूर्ण हैं जितना ताजमहल। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि ताजमहल देखने आने वाले विदेशी पर्यटकों की संख्या विजयनगर आने वालों की संख्या से कहीं अधिक है। यह बात बार-बार दोहराई जानी चाहिए कि इस देश के इतिहास में कभी भी हिंदू बनाम मुस्लिम जैसी कोई बात नहीं थी! अगर हम अपने बच्चों को इस जहरीले दुष्प्रचार से बचाना चाहते हैं, तो हमें उस विषैली धारणा का मुकाबला करना होगा जिसने हाल ही में हमारी शिक्षा को दूषित कर दिया है: यह धारणा कि मुस्लिम राजाओं ने हिंदू पूजा स्थलों को ध्वस्त कर दिया और वे अन्य धर्मों के प्रति असहिष्णु थे। इसलिए, इस संगोष्ठी के प्रत्येक प्रतिभागी का यह महत्वपूर्ण दायित्व और लक्ष्य है

कि वे इस खतरे से निपटने के लिए विशिष्ट सुझाव दें। हमें अपना शैक्षिक पाठ्यक्रम कैसे तैयार करना चाहिए? इतिहास पढ़ाने की कौन सी विधि और पद्धति हमें अपनानी चाहिए? मीडिया, कलाकार, प्रकाशक और आलोचक सार्वजनिक चर्चा को किस प्रकार आकार दें ताकि राष्ट्रीय एकता के इस गंभीर खतरे को प्रभावी ढंग से रोका जा सके? यह केवल एक प्रारंभिक संगोष्ठी है। इस प्रकार की कई और संगोष्ठियों की योजना पहले ही बनाई जा चुकी है। प्रत्येक सेमिनार के अंत में दिए गए सुझावों की जांच की जाएगी, उन्हें एकत्रित किया जाएगा और आवश्यकतानुसार उन पर कार्रवाई की जाएगी। आने वाले महीनों में, विशिष्ट क्षेत्रों पर केंद्रित सेमिनार आयोजित किए जाएंगे। फिलहाल, हमें कुछ सामान्य दिशा-निर्देश तैयार करने की आवश्यकता है। माननीय मंत्री जी ने मुझे इस सेमिनार की दिशा, नियम और आचरण निर्धारित करने के लिए कहा है। सच कहूं तो, मैं पहले ही इस जिम्मेदारी को स्वीकार करने से इनकार कर चुका हूं, क्योंकि यहां मुझसे कहीं अधिक वरिष्ठ व्यक्ति मौजूद हैं। हालांकि, मुझे श्रोताओं के निर्णय के आगे विनम्रतापूर्वक नतमस्तक होना ही होगा... पैंतालीस मिनट तक चले उनके प्रभावशाली भाषण के अंत में, यह सभी को स्पष्ट हो गया कि वे इस सेमिनार के लिए अपरिहार्य थे। साथ ही, सभी को यह भी पता था कि वे वहां इसलिए उपस्थित थे क्योंकि प्रोफेसर ने उनके नामों की सिफारिश की थी। प्रोफेसर शास्त्री मंत्री जी की पसंद थे।

मंत्री जी ने पूछा, 'इस संगोष्ठी के अध्यक्ष के चुनाव के संबंध में उपस्थित लोगों का क्या मत है?' पहले कुछ हाथों की हल्की तालियों की गड़गड़ाहट धीरे-धीरे इतनी तेज हो गई कि पूरा श्रोतागण तालियों में शामिल हो गया।

मंत्री जी के जाने के बाद कार्यवाही शुरू हुई। नौकरों ने बैठे हुए सभी लोगों को बिस्कुट, चाय और कॉफी परोसी। कई बार विषयांतर के बाद, अध्यक्ष ने मुख्य विषय पर ध्यान केंद्रित किया।

'वह एक क्षेत्र, बल्कि वह सबसे उपजाऊ क्षेत्र जहाँ बुराई की ताकतों ने फूट के बीज बोए हैं, वह है इतिहास: सटीक रूप से कहें तो इतिहास का शिक्षण। हम सभी इस बात से सहमत हैं कि इतिहास का उद्देश्य प्रगतिशीलता का मार्ग दिखाना है। दूसरे शब्दों में, जन्मजात मानवीय समानता के सिद्धांतों पर आधारित सामंजस्यपूर्ण जीवन सुनिश्चित करना है। हालाँकि, मुसलमानों द्वारा हिंदू मंदिरों को ध्वस्त करने और अन्य धर्मों के लोगों को जबरन धर्म परिवर्तन कराने जैसे बेशर्म झूठ हमारी इतिहास

की किताबों में जगह बना चुके हैं। इसलिए, हमारे इतिहास के पाठों को साफ करना, इन झूठों को मिटाना और सच्चाई बताना अत्यंत आवश्यक है। हमें अपने इतिहास पाठ्यक्रम को पूरी तरह से संशोधित करना होगा और इसे भारत के सभी स्कूलों और कॉलेजों में प्रसारित करना होगा। दूसरे शब्दों में, एक आदर्श इतिहास पाठ्यपुस्तक के लिए सिफारिशें प्रस्तुत करनी होंगी। इसके लिए, हमें विशेषज्ञों की एक कोर कमेटी का गठन करना होगा...'

यह सुनकर लक्ष्मी को पहले तो निराशा हुई, जो धीरे-धीरे झुंझलाहट और फिर घृणा में बदल गई। उसके लिए खड़े होकर उस आदमी की चाल का पर्दाफाश करना मुश्किल हो रहा था। उसे यह भी एहसास था कि यह राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त विद्वानों का सम्मेलन था। वह घिरना नहीं चाहती थी। यह सम्मेलन केंद्र सरकार के उच्च अधिकारियों द्वारा आयोजित किया गया था।

'...औरंगजेब, टीपू सुल्तान, सुल्तान मोहम्मद गोरी, मोहम्मद गजनी के बारे में सत्य की विकृतियों को दूर करने के लिए...'

वह खड़ी हो गई। उसे पता ही नहीं चला कि उसके मुंह से ये शब्द कैसे निकल गए, 'महोदय, क्या आपने बनारस देखा है?'

ऐसा लगा मानो किसी ने अचानक एक कठोर बांध खड़ा कर दिया हो जिसने प्रोफेसर के प्रचंड भाषण को रोक दिया हो। 'हूँ?' उसने उसकी ओर देखा। 'तुम्हारा क्या मतलब है?'

विश्वनाथ मंदिर के स्थान पर एक विशाल मस्जिद खड़ी है। स्थानीय मुसलमान इसे ज्ञानवापी मस्जिद कहते हैं। इसके पीछे एक छोटा मंदिर जैसा ढांचा है, जिसे श्रद्धालु हिंदू विश्वनाथ मंदिर मानते हैं और वहां पूजा-अर्चना करते हैं। तो उस मस्जिद का निर्माण किसने किया और उसे उस स्थान पर क्यों बनाया? एक व्यापक भाषण देना बेशक अच्छा लगता है। लेकिन इससे पहले, आपको लगभग तीस हजार ऐसी ही ज्ञानवापी मस्जिदों के बारे में इसी तरह के सवालों के जवाब देने होंगे।' उनकी आवाज में उमड़ी भावनाओं से वे स्वयं हैरान थीं।

"चलिए देखते हैं। बात ये है: कहीं किसी खाली ज़मीन पर कोई मस्जिद बनाई गई थी। मान लीजिए कि औरंगज़ेब ने इसे बनवाया था, तो इससे ये कैसे साबित होता है कि उसने उसी जगह पर पहले से मौजूद किसी मंदिर को तोड़कर इसे बनवाया था?

सबूत क्या है? क्या सिर्फ़ दावे करना अवैज्ञानिक नहीं है?" उसने आत्मविश्वास से भरे स्वर में जवाब दिया।

क्या आपने साक़ी मुस्तद खान के बारे में सुना है? उन्होंने औरंगज़ेब के अंतिम प्रधानमंत्री इनायतुल्ला खान कश्मीरी के आदेश पर औरंगज़ेब के जीवन और काल का इतिहास लिखा। यह इनायतुल्ला खान का उस व्यक्ति को मरणोपरांत श्रद्धांजलि देने का तरीका था जिसे वे वास्तव में आदर्श सम्राट मानते थे। और इस पुस्तक को लिखने के लिए, साक़ी मुस्तद खान ने औरंगज़ेब के शासनकाल के दौरान दस्तावेजित, संरक्षित और संग्रहित आधिकारिक अभिलेखों का अध्ययन किया। इस पुस्तक का नाम 'मसीर-ए-आलमगिरी' है। इस कृति की हर पंक्ति आधिकारिक प्रमाणों से समर्थित है। इसी पुस्तक में बताया गया है कि 1669 में, आलमगीर औरंगज़ेब के आदेशानुसार काशी विश्वनाथ मंदिर के सफल विध्वंस की सूचना दरबार को प्राप्त हुई थी। इसी कृति के अगले अध्याय में बताया गया है कि 1670 में रमज़ान के पवित्र महीने में, औरंगज़ेब ने मथुरा स्थित केशवरया मंदिर को ध्वस्त करने और उसके स्थान पर एक मस्जिद बनाने का आदेश दिया था। मैं इस सभा का ध्यान इस ओर आकर्षित करना चाहता हूँ कि विश्वनाथ मंदिर औरंगजेब के शासनकाल के बारहवें वर्ष में और केशवरया मंदिर तेरहवें वर्ष में नष्ट हो गया था।

दर्शक तुरंत ही सन्नाटे में डूब गए। पांच साल तक लगभग पूरी तरह से खामोशी में रहने के बाद, उन्हें आखिरकार अपनी आवाज़ मिल गई थी।

हिंदू और मुसलमानों के बीच सद्भाव स्थापित करने का लक्ष्य महान और आवश्यक दोनों है और मैं इसका पूर्ण समर्थन करता हूँ। हालाँकि, आप असत्य की नींव पर एक मजबूत समाज का निर्माण नहीं कर सकते। पच्चीस लाख से अधिक तीर्थयात्री हर साल वाराणसी आते हैं। इन तीर्थयात्रियों के लिए, वाराणसी परम और शाश्वत आध्यात्मिक आश्रय स्थल है, विश्वनाथ मंदिर द्वारा प्रतीकित संपूर्ण जीवन शैली का सांसारिक आधार है। विश्वनाथ मंदिर के लिए प्रत्येक हिंदू के मन में ऐसी ही श्रद्धा और लालसा है। यही श्रद्धा उन्हें मंदिर की एक भव्य छवि की कल्पना करने के लिए प्रेरित करती है। लेकिन जब वे वास्तव में वहाँ जाते हैं, तो वे स्तब्ध रह जाते हैं और उनकी कल्पना चकनाचूर हो जाती है। जब वे अपनी आँखों से देखते हैं कि उनकी श्रद्धा का केंद्र अब अस्तित्व में नहीं है, तो उनकी निराशा उस भावना को पूरी तरह से व्यक्त नहीं कर पाती। उसके स्थान पर, एक विशाल मस्जिद न केवल मंदिर स्थल पर

खड़ी है, बल्कि पूरे शहर के दृश्य को भी ढक लेती है, जिसे हिंदू अपना सबसे पवित्र स्थान मानते हैं। अब, ये तीर्थयात्री पूरी तरह निराश होकर घर लौटते हैं और अपनी निराशा परिवार, चचेरे भाइयों, रिश्तेदारों, पड़ोसियों और दोस्तों के साथ साझा करते हैं। जब यह कड़वी, रोज़मर्रा की सच्चाई है, तो हम किस आधार पर हिंदू-मुस्लिम सद्भाव को बढ़ावा देने की उम्मीद कर सकते हैं? आप इतिहास की पाठ्यपुस्तकों को फिर से लिख सकते हैं और इन ऐतिहासिक सच्चाइयों को छुपा सकते हैं। लेकिन जब आपकी पाठ्यपुस्तकों को पढ़ने वाले छात्र ऐसी जगहों की शैक्षिक यात्राओं पर जाते हैं और असहज सवाल पूछते हैं, तो उनके शिक्षकों को क्या जवाब देने चाहिए? यह सिर्फ काशी या अयोध्या की बात नहीं है। ऐतिहासिक शोध से हमें लगभग तीस हज़ार मंदिर मिलते हैं जिन्हें मुस्लिम राजाओं ने नष्ट कर दिया था। क्या आप यह तर्क देंगे कि जंगली जानवरों ने उन्हें नष्ट किया? या आप यह तर्क देंगे कि हिंदू धर्म के विभिन्न संप्रदायों - बौद्ध, जैन, वैष्णव और शैव - ने आपस में झगड़ा किया और एक-दूसरे के मंदिरों को नष्ट किया? इन संप्रदायों के किसी भी धर्मग्रंथ या ग्रंथ में मूर्तिभंजन और मंदिर विनाश का उपदेश नहीं दिया गया है। अगर कभी ऐसा हुआ भी है, तो इन संप्रदायों ने ऐसे किसी मूर्तिभंजक को आदर्श के रूप में महिमामंडित नहीं किया है। मूर्तिभंजन, मंदिर विध्वंस, तलवार की नोक पर धर्मांतरण, जजिया, बड़े पैमाने पर दास व्यापार... ये वे उदाहरण हैं जो संस्थापक ने स्थापित किए थे, जिन्होंने न केवल अपने जीवनकाल में इन्हें अंजाम दिया, बल्कि इन्हें उस धर्म के मूल सिद्धांतों के रूप में स्थापित किया। ये बर्बरतापूर्ण कृत्य एक बर्बर देश में इतिहास के एक विशिष्ट कालखंड में किए गए थे। यदि ये मान्यताएँ बनी रहें, यदि ये सिद्धांत आज भी प्रचारित और अमल में लाए जाते रहें, तो हम राष्ट्रीय एकता और सांप्रदायिक सद्भाव की अपेक्षा कैसे कर सकते हैं? जब हमारे संविधान की परिकल्पना की गई थी, तब इसके निर्माताओं ने समाज की उस पदानुक्रमित व्यवस्था को अस्वीकार कर दिया था जिसे मनु और अन्य विधि निर्माताओं ने हजारों साल पहले प्रतिपादित किया था। ठीक उसी तरह, हम सच्ची सद्भाव तब तक प्राप्त नहीं कर सकते जब तक हम उस विश्वास और मानसिकता को अस्वीकार नहीं कर देते जो हर चीज को छोड़कर अपनी श्रेष्ठता का दावा करती है; एक ऐसी मानसिकता जो भिन्न मत रखने वालों के धर्मांतरण या मृत्यु का उपदेश देती है। एकीकरण और सद्भाव तभी सार्थक हैं जब हम अपने बच्चों को यह सिखाएँ कि सत्य एक है, परन्तु अलग-अलग लोग इसे अलग-अलग तरह से

परिभाषित करते हैं। हम इसे कैसे प्राप्त कर सकते हैं, यही इस संगोष्ठी का लक्ष्य होना चाहिए।

वह आश्चर्यचकित और प्रसन्न दोनों थी। मानो कोई शक्ति उसे आगे बढ़ा रही हो। इसके अलावा, वह जानती थी कि उसके पास तीन दिनों से अधिक समय तक चलने के लिए पर्याप्त सामग्री है। वह कोई नोट्स या किताबें नहीं लाई थी। यहाँ आने से पहले, उसे इस सेमिनार के बारे में कोई जानकारी नहीं थी। और अब इससे कोई फर्क नहीं पड़ता था। उसका आत्मविश्वास उसके पिता के गहन अध्ययन और उसके स्वयं के शोध पर आधारित था। उसे अधिकांश बातें लगभग रटकर याद थीं। उसने प्रतिभागियों को व्यक्तिगत रूप से देखा। उसने उनकी आँखों में आँखें मिलाने के लिए समय लिया। उसे स्पष्ट हो गया कि वे समझ गए थे कि उन्हें परखा जा रहा है। उसने सोचा कि उसने आधी लड़ाई जीत ली है। और फिर उसने उसे देखा। जब वह हॉल में दाखिल हुई थी, तब उसे याद नहीं आया था कि उसने उसे देखा था। बाद में, जब वह जोश से बोल रही थी, तो उसका ध्यान प्रोफेसर पर था। वह सत्र शुरू होने के बाद देर से आए होंगे। किसी कारण से वह घबरा गई थी। लेकिन अगर उसने इस घबराहट पर काबू नहीं पाया, तो वह सब कुछ खो देगी। उसने पहले उसके चेहरे को देखा और फिर, अधिक स्पष्ट रूप से, उसकी आँखों में देखा और उसकी निगाहों में खो गई। अमीर ने कुछ देर के लिए उसकी ओर देखा, फिर और अधिक दृढ़ता से और फिर एक पल में, उसकी आँखें हट गईं और उसकी निगाहें नीचे झुक गईं और मेज पर रखी फाइल पर टिक गईं।

‘अपना दृष्टिकोण स्पष्ट रूप से बताने के लिए धन्यवाद। यदि बेगम रजिया की राय पर किसी को कोई टिप्पणी या आपत्ति हो, तो वे उसे बताने के लिए स्वतंत्र हैं,’ प्रोफेसर ने अचानक कहा और गोल मेज के बिल्कुल अंतिम छोर पर बैठे लोगों की ओर देखा।

लक्ष्मी गुस्से से आग बबूला हो गई। उसका भाषण अभी खत्म भी नहीं हुआ था कि प्रोफेसर ने बड़ी चतुराई से स्थिति को अपने नियंत्रण में ले लिया था। उसने फिर से उसकी ओर देखा। उसकी मनमोहक मुस्कान और आँखों में शरारत की झलक ने उसे बता दिया कि वह इस तरह की सैकड़ों असहज स्थितियों को सफलतापूर्वक संभाल चुका है। अब उसने गोल मेज के दूसरे छोर की ओर देखा। दस लोग। दस दाढ़ियाँ। यह पहचानना मुश्किल था कि वे मार्क्सवादी दाढ़ियाँ थीं या आधुनिक मुस्लिम दाढ़ियाँ। उसे अपने बेटे की दाढ़ी याद आ गई। उनमें से एक बोला, 'यह

पहली बार नहीं है जब मैं किसी ऐसे व्यक्ति से मिल रहा हूँ जो अधूरी जानकारी के आधार पर किसी धर्म और उसके पैगंबर पर आरोप लगाता है। लेकिन अगर कोई यह समझा सके कि ऐसे व्यक्ति को जिम्मेदार लोगों की सभा में कैसे आमंत्रित किया गया, तो मैं आभारी रहूँगा।'

उन्हें यह समझने में बस एक पल लगा कि यह सीधा व्यक्तिगत हमला था। वह सवाल उन्हीं से पूछना चाहती थीं: कि दर्शकों को भी यह जानने का उतना ही अधिकार है कि उन्हें कैसे आमंत्रित किया गया था और गंभीर, जायज़ सवालों का जवाब देने के बजाय व्यक्तिगत हमले करना अशोभनीय था। लेकिन उन्होंने ऐसा नहीं किया।

अब उनके बगल में बैठे व्यक्ति ने कहा, 'महोदया, क्या आप फ़ारसी जानती हैं? यदि हां, तो क्या आप बता सकती हैं कि आप इसे कितनी अच्छी तरह जानती हैं? मैं यह इसलिए पूछ रहा हूं क्योंकि जिस रचना का आपने उल्लेख किया है, 'मसीर-ए-आलमगिरी', वह फ़ारसी में है।'

नहीं। मुझे फारसी नहीं आती। मैंने जदुनाथ सरकार के अनुवाद पर भरोसा किया है।

पूरे समूह से तिरस्कारपूर्ण हंसी की आवाजें गूंज उठीं।

एक आवाज ने कहा, 'जो व्यक्ति सांप्रदायिक इतिहासकार पर निर्भर करता है, उससे हमें कुछ नहीं कहना है।'

और एक अन्य टिप्पणी में कहा गया, 'एक ऐसी व्यक्ति जो फारसी नहीं जानती, अनुवादों पर निर्भर रहती है और फिर भी अपने तथ्यों को लेकर आश्वस्त है। हमें आपकी विद्वत्ता के स्तर पर गंभीर संदेह है।'

‘क्या आपको ग्रीक आती है?’ उसने तुरंत पलटकर पूछा।

'क्यों नहीं?'

‘तो आपको ग्रीक भाषा नहीं आती, लेकिन क्या आपने अनुवादित प्राचीन यूरोप का इतिहास नहीं पढ़ा है?’ उसने कहा।

जब वह जवाब देने के लिए हड़बड़ा रहा था, तभी उसके बगल में बैठे व्यक्ति ने कहा, 'हम आपस में लड़कर इस सेमिनार की प्रगति में बाधा डाल रहे हैं। इस आदरणीय महिला ने पहले ही पैंतालीस बहुमूल्य मिनट बर्बाद कर दिए हैं। कोई एक व्यक्ति सेमिनार पर एकाधिकार नहीं कर सकता। हर किसी को अपनी बारी मिलनी

चाहिए। हम यहाँ तीस लोग हैं। प्रति व्यक्ति पैंतालीस मिनट की दर से, कुल मिलाकर साढ़े बाईस घंटे हो जाते हैं। क्या हम इतना समय दे सकते हैं? अगर दे भी सकते हैं, तो मेरी विनम्र राय में यह समय बर्बाद करने का एक व्यर्थ तरीका है। माननीय अध्यक्ष को इस पर निर्णय देना चाहिए।'

अध्यक्ष ने फैसला सुनाया, 'दूसरों को बोलने दीजिए। श्रीमती रजिया कुरैशी को फिर से बोलने का मौका मिलेगा।'

उन्होंने तुरंत जवाब दिया, "यह सवाल इससे कहीं ज़्यादा गंभीर है कि किसकी बारी है। आदरणीय अध्यक्ष महोदय, मैं बुनियादी सवाल पूछ रही हूँ—ऐसे सवाल जो किसी इमारत को मज़बूत नींव पर खड़ा करने से जुड़े हैं। राजनेता अपने मुखपत्रों के ज़रिए, अपने लिए ऐसा करने को तैयार लोगों के ज़रिए, ऐतिहासिक हस्तियों के जीवन और कार्यों की रचनात्मक रूप से पुनर्व्याख्या कर रहे हैं। राजनेताओं के पास इन विकृतियों को समर्थन देने के लिए उनकी पार्टी की विचारधारा है और हमारे कलाकार, लेखक और फिल्म निर्माता इतिहास को तोड़-मरोड़ कर ऐसी रचनाएँ बना रहे हैं ताकि वे इन राजनेताओं को खुश कर सकें। क्या मैं यह मान सकती हूँ कि इस सेमिनार का उद्देश्य ऐसी साहित्यिक कृतियों को पाठ्यक्रम में शामिल करने की सिफ़ारिश करना नहीं है?"

'आप किस बारे में बात कर रहे हैं? और अगर आप तथाकथित विकृतियों के बारे में इतने आश्वस्त हैं, तो कृपया कुछ उदाहरण दीजिए?'

आवाज दाईं ओर से आई। लक्ष्मी ने मुड़कर देखा। छठी कुर्सी पर बैठी महिला ने लाल रंग की साड़ी और ब्लाउज पहना था, जो पूरी तरह से आस्तीनहीन नहीं था। गले में लाल मोतियों की बड़ी-बड़ी माला थी, जो सबका ध्यान खींच रही थी। उसने बिंदी नहीं लगाई थी। रजिया ने उसे गौर से देखा, यह समझने की कोशिश करते हुए कि वह कौन है। महिला ने आगे कहा, 'दुनिया के प्रमुख धर्मों में से एक के पैगंबर के बारे में इस तरह से अपमानजनक बातें करना आपके लिए कितना उचित है?'

'मैंने न तो किसी के बारे में, खासकर किसी पैगंबर के बारे में, अनादरपूर्ण बातें कही हैं और न ही ऐसा करने का मेरा कोई इरादा है। ऐतिहासिक सत्य के सच्चे अन्वेषक को किसी भी व्यक्ति—चाहे वह ऐतिहासिक हो या समकालीन—का अनादर नहीं करना चाहिए। मैं तथ्यों को स्वयं बोलने दूंगी...तो पैगंबर ने अरब में क्या किया?' वह रुकी, उस महिला को ध्यान से देखा और फिर बोली, 'उनकी पहली पत्नी,

खदीजा, एक बुद्धिमान और समृद्ध व्यवसायी थीं। वह ऐसे समाज में रहती थीं जहाँ उन्हें एक व्यापक कारवां व्यवसाय चलाने के लिए सामाजिक और आर्थिक स्वतंत्रता प्राप्त थी। उन्होंने अपने तीसरे पति को स्वयं चुना, जो उनसे पंद्रह वर्ष छोटे थे। जब तक वह जीवित रहीं, वह उनके प्रति वफादार रहे। उनकी मृत्यु के बाद—तब उनकी आयु बावन वर्ष से अधिक थी—उन्होंने ग्यारह महिलाओं से विवाह किया।' वह मुड़ी और गोल मेज के चारों ओर बैठे सभी चेहरों को देखा, फिर अंत में उनकी दृष्टि आमिर पर टिकी। ऐसा लगा मानो उन्होंने उत्तर का भार पूरी तरह से उनके कंधों पर डाल दिया हो। 'इसके बाद, इस्लाम के पूरे इतिहास में किस महिला को इस प्रकार की आर्थिक स्वतंत्रता प्राप्त हुई? इस्लाम-पूर्व अरब में कई महिला देवी-देवताओं की पूजा की जाती थी, लेकिन इस्लाम में कोई महिला ईश्वर नहीं है।' किसमें इतनी हिम्मत है कि वह सवाल करे कि अल्लाह को केवल पुरुष देवता ही क्यों माना जाए? इस देश में नारी समानता के मुखर समर्थक यह सवाल क्यों नहीं पूछते? इस्लामी आक्रमण के भारतीय महिलाओं पर पड़े बुरे प्रभावों के बारे में कोई बात क्यों नहीं करता? उन मुस्लिम आक्रमणकारियों के बारे में सब चुप क्यों हैं जिन्होंने लाखों भारतीय महिलाओं को अगवा कर काबुल, ईरान और तुरान के लाभदायक दास बाजारों में बेच दिया? और हमारी नारीवादी इस तथ्य को क्यों नहीं उजागर करतीं कि इस तरह की यौन गुलामी का सीधा परिणाम सती प्रथा में अचानक और व्यापक वृद्धि थी, जो बाद में राजस्थान, पंजाब और उत्तर भारत के अधिकांश हिस्सों में एक पूर्ण परंपरा बन गई? उत्तर भारत में आज भी विवाह रात में क्यों होते हैं, यह सवाल कोई क्यों नहीं पूछता? हमारे बुद्धिजीवी, बरसात के मौसम में टर्राने वाले मेंढकों की तरह, भारत की सभी बुराइयों का दोष हिंदू धर्म और उसके धर्मशास्त्रों पर मढ़ने में आनंद लेते हैं। क्या उन्हें इतिहास का ज्ञान है? पुनर्जागरण के बाद, यूरोप की शक्ति में तेजी से वृद्धि हुई—यांत्रिक जहाज, तेज यात्रा, विश्वव्यापी अभियान, मुद्रण मशीन का आविष्कार जिसने ज्ञान के प्रसार को गति दी...जब यह सब वहाँ हो रहा था, तब यहाँ क्या हो रहा था? भारत में मुस्लिम शासन लगभग पूर्ण था। मुस्लिम राजा सोने और महिलाओं का संचय करने, मूल निवासी बहुसंख्यक हिंदू आबादी को मारने और धर्म परिवर्तन कराने, मंदिरों को नष्ट करने और लूटने, और नालंदा, तक्षशिला और ओदंतपुरी जैसे प्रसिद्ध शिक्षा केंद्रों, पुस्तकालयों और पुस्तकों को जलाने में व्यस्त थे। किस प्रकार का इतिहास भारत के वर्तमान पिछड़ेपन का दोष हजारों साल पहले लिखे गए हिंदू

धर्मग्रंथों पर डालता है, जबकि वास्तविक उत्तर इस देश के केवल एक हजार साल पुराने इतिहास में मिलता है? यह इतिहास इस बात का अंतहीन वर्णन है कि कैसे भारत को सैन्य, आध्यात्मिक, नैतिक और सांस्कृतिक रूप से लगातार कमजोर किया गया। भारत की शक्ति को निचोड़ने के लिए कौन जिम्मेदार था, इस बारे में कोई बात क्यों नहीं करता? अकबर—निस्संदेह सबसे शक्तिशाली मुस्लिम सम्राट—ने भी भारतीय जलक्षेत्र पर नियंत्रण रखने वाली पुर्तगाली नौसेना की सुरक्षा मांगी थी, ताकि भारतीय मुसलमान सुरक्षित रूप से हज यात्रा कर सकें। इससे भारत की सैन्य शक्ति का क्या पता चलता है? तो आप लोग क्या कहते हैं? हमें अपने बच्चों को कौन सा इतिहास पढ़ाना चाहिए?' वह रुकीं, गहरी सांस ली और चारों ओर देखा। सन्नाटा छा गया। आमिर फाइल को घूरते रहे।

वह और देर तक रुकी रही। सन्नाटा छा गया। 'मैं इस सभा में उपस्थित कलाकारों, लेखकों और नाटककारों से सच बताने का आग्रह करती हूँ: दुनिया में कौन सा दूसरा धर्म या आस्था गीत, नृत्य और साहित्य में अभिव्यक्ति की ऐसी असीमित स्वतंत्रता देता है जैसी हिंदू धर्म देता है? कौन सा दूसरा धर्म या आस्था कला को आध्यात्मिक आनंद का साथी मानता है और सच्चे कलाकार को ऋषि, संत के समान पूजता है? हम अपने देवताओं का अपमान कर सकते हैं और अपने धार्मिक गुरुओं का मज़ाक उड़ा सकते हैं। कौन सा धर्म इस तरह की स्वतंत्रता को स्वीकार करता है? यूरोपियों ने एक लंबा और कठिन संघर्ष किया और पुनर्जागरण के बाद अंततः यह स्वतंत्रता प्राप्त की। और इस्लाम में, हम इसकी कल्पना भी नहीं कर सकते। लेकिन हमारे लोग क्या कर रहे हैं? हमारे अपने कलाकार इस स्वतंत्रता का उपयोग उसी धर्म को नष्ट करने के लिए कर रहे हैं जो उन्हें यह स्वतंत्रता देता है। और वे यह जानते हुए भी कर रहे हैं कि अगर वह दूसरा धर्म इस भूमि पर पूर्ण नियंत्रण कर ले तो क्या होगा। इस आत्म-धोखे, इस स्वेच्छा से किए गए दुराचार का क्या कारण है?' वह अब कांप रही थी और एक पल के लिए उसे लगा जैसे उस पर किसी बुरी आत्मा का साया आ गया हो। जब उसने मेज के चारों ओर देखा, तो उसकी आँखें चौड़ी और क्रोध से भरी हुई थीं।

मौन।

मार्क्सवादी दाढ़ी वाले लोग अपनी सीटों से उठ खड़े हुए। अध्यक्ष शास्त्री ने कहा, 'हमें देर हो रही है। दोपहर का भोजन पहले ही पैंतालीस मिनट विलंबित हो चुका है।

श्रीमती रजिया को उनके दृष्टिकोण प्रस्तुत करने के लिए हार्दिक धन्यवाद। दोपहर के भोजन के बाद, अन्य प्रतिभागी बारी-बारी से बोलेंगे।'

उसे साफ पता चल गया था कि आमिर जानबूझकर उससे बचने की कोशिश कर रहा था और किसी से बात करने में व्यस्त होने का नाटक कर रहा था। वह यहाँ कई लोगों को जानता था और अब वह ज़्यादा लोकप्रिय हो गया था। उसकी डॉक्यूमेंट्री फिल्मों को पूरे देश में सराहना मिली थी। वह यहाँ के लोगों के ज़्यादा करीब था, जबकि वह पिछले पाँच सालों से इस दायरे से दूर थी। और यह बात कि वह अब भी उससे बचने की कोशिश कर रहा था, उसके आत्मविश्वास को और बढ़ा रही थी।

दोपहर के भोजन के बाद का सत्र एक वक्ता के संबोधन से शुरू हुआ, जिन्होंने कहा कि इतिहास अध्ययन का उद्देश्य समाज में सद्भाव को बढ़ावा देना है और अतीत की कटुताओं की स्मृति को वर्तमान समय में जीवित रखना व्यर्थ है। एक अन्य वक्ता ने कहा कि हिंदू-मुस्लिम विभाजन अंग्रेजों द्वारा बोया गया विषैला बीज था और अंग्रेजों द्वारा भारत पर विजय प्राप्त करने से पहले हिंदुओं और मुसलमानों के बीच कोई शत्रुता नहीं थी। लक्ष्मी ने एक के बाद एक वक्ताओं द्वारा दिए गए विभिन्न सिद्धांतों को ध्यानपूर्वक सुना।

“दबे-कुचले वर्गों के लोगों ने सामाजिक पदानुक्रम से मुक्ति पाने के लिए मुस्लिम आक्रमणकारियों को आमंत्रित किया था। पैगंबर मोहम्मद के उपदेशों के बिना, इन वर्गों का जीवन हमेशा के लिए शापित हो जाता।”

यदि मुसलमान परदेसी आक्रमणकारी थे, तो आर्य भी थे।

‘याद रखें कि मूर्ति पूजा की उत्पत्ति उस प्रतीकवाद से हुई है जो कहता है कि ब्राह्मण भगवान के मुख से, क्षत्रिय उनकी भुजाओं से, वैश्य उनकी जांघों से और शूद्र उनके पैरों से उत्पन्न हुए।’

'इस्लामी मूर्तिभंजन ने उच्च वर्गों को सबसे अधिक प्रभावित किया, यही कारण है कि उन्होंने मुस्लिम घृणा की आग को भड़काना शुरू कर दिया।'

लक्ष्मी ने बीच में ही टोकते हुए कहा, 'झूठ! सब झूठ! सब झूठ! इस बात के पर्याप्त अकाट्य प्रमाण मौजूद हैं कि कैसे हजारों उच्च वर्ग के लोग जजिया अदा करने में असमर्थ होने के कारण जंगलों में भाग गए। अकबर से हारने वाले महाराणा प्रताप के अनुयायियों ने शपथ ली थी कि वे मुगलों को हराने तक किसी भी शहर में प्रवेश नहीं करेंगे। उनके वंशज आज के राजस्थान में रहने वाली खानाबदोश गड़िया लोहार

जनजाति के लोग हैं। इस जनजाति की उत्पत्ति के अध्ययन पर पूरा शोध उपलब्ध है। अंग्रेजों ने आर्यों को विदेशी आक्रमणकारी बताकर भारत में अपने साम्राज्य को औचित्य साबित करने का प्रयास किया। भारत में आर्य और द्रविड़ सभ्यता जैसी कोई अलग सभ्यता थी ही नहीं।'

'किसी के बोलते समय टोकना असभ्य व्यवहार है,' उसके दाहिनी ओर से एक आवाज़ आई, और उसी समय दूसरी आवाज़ ने कहा, 'मैं अध्यक्ष से अनुरोध करती हूँ कि वे इस महिला को रोकें जो सर्वज्ञानी की तरह बोलती है। कोई सार्थक प्रगति नहीं हुई है!'

अध्यक्ष ने उनसे ऊँची और कठोर आवाज़ में कहा, 'महोदया रज़िया, क्या आप कृपया संयम बरतेंगी? ऐसी परिस्थितियाँ न बनाएँ जो मुझे आपके खिलाफ कठोर निर्णय सुनाने के लिए मजबूर करें।'

लक्ष्मी ने सिर हिलाया और बैठ गई, उसके बाद उसने कुछ नहीं कहा। उन्होंने अपने मेहमानों का चुनाव बहुत सोच-समझकर किया है। उन्होंने मुझे मेरे पिछले रिकॉर्ड के आधार पर आमंत्रित किया है। उसने फिर से हॉल पर नज़र डाली। यहाँ कोई भी ऐसा नहीं था जिसका कोई वैकल्पिक, या विरोध करने वाला विचार हो। शाम तक यह स्पष्ट हो गया कि प्रोफ़ेसर शास्त्री ने पूरे सेमिनार का संचालन किया था—इसके शीर्षक से लेकर मेहमानों की सूची तक, और वास्तव में किसे आमंत्रित करना है और क्यों, इसके लिए सिफ़ारिशें लिखने तक। उन्हें बस इतना पता है कि पिताजी की मृत्यु के बाद मैं पढ़ाई के लिए बैंगलोर छोड़कर नरसपुरा में रहने चली गई थी। उन्हें यह नहीं पता कि मैं वास्तव में क्या पढ़ रही थी। और उन्होंने मेरा नाम इस धारणा के साथ सुझाया कि मैं अभी भी वही क्रांतिकारी रजिया हूँ जिसे वे इतने वर्षों से जानते थे। और अब उन्हें बहुत बुरा लग रहा होगा, लेकिन फिर भी वे बहुत धैर्य दिखा रहे हैं क्योंकि मेरे बेटे ने...जो अब एक कट्टर शरिया पति है...उनकी बेटी से शादी कर ली है। एक तरह से यह सेमिनार अच्छा है...इसने मेरे भीतर जमा पाँच वर्षों के ज्ञान को एक ही बार में बाहर निकाल दिया। लेकिन उन्होंने मुझे उड़ान में यह क्यों नहीं बताया कि उन्होंने आमिर को भी आमंत्रित किया है? शायद मंत्रालय ने उन्हें बिना बताए यह सुझाव दिया हो?

~

उसने सपने में भी नहीं सोचा था कि वह उसे यहाँ देखेगा। उसे इस सेमिनार का मकसद नहीं पता था। निमंत्रण में कुछ भी स्पष्ट रूप से नहीं लिखा था। उसने देखा कि यह मंत्रालय से आया था, जिसमें बस इतना लिखा था कि 'कृपया सेमिनार में शामिल हों'। उसे नहीं पता था कि इसके पीछे कौन है। प्रोफेसर शास्त्री ने फोन पर भी उसे कुछ नहीं बताया। आजकल वे उसे शायद ही कभी फोन करते थे। आमिर को लगा कि उसके दूसरे निकाह से प्रोफेसर नाराज़ हो गए हैं, लेकिन उसे प्रोफेसर की नाराज़गी की ज़्यादा परवाह नहीं थी। मंत्रालय ने उसे राष्ट्रीय एकता को बढ़ावा देने के उद्देश्य से कई वृत्तचित्र परियोजनाओं का जिम्मा सौंपा था, इसीलिए उसे इस सेमिनार में आमंत्रित किया गया था। यह एक संतोषजनक जवाब लग रहा था।

उस हॉल में उसे देखते ही वह असहज महसूस करने लगा। उसने इस बारे में ज़्यादा सोचा नहीं था कि उससे मिलने पर उसकी क्या प्रतिक्रिया होगी। वह जानता था कि ऐसी संभावना तो है, लेकिन उसने इसके लिए सचेत रूप से तैयारी नहीं की थी—वह अपने पिता द्वारा वर्षों से एकत्रित की गई किताबों का अध्ययन कर रही थी और वह अपनी डॉक्यूमेंट्रीज़ में व्यस्त था। उसे यह एहसास होने लगा था कि हर बार जब वह उससे मिलने आती थी, तो बैंगलोर से नरसपुरा के बीच की दूरी बढ़ती जाती थी, यहाँ तक कि एक दिन यह स्पष्ट हो गया कि सड़क अपने आप ही दो अलग-अलग रास्तों में बँट गई है। उसे उनकी आखिरी फ़ोन बातचीत याद आई। उसने उसे फ़ोन किया था, 'मैंने सुना है कि तुमने किसी दूसरी औरत से निकाह कर लिया है।' जब उसने जवाब दिया, 'लेकिन मैंने तुम्हें तलाक़ नहीं दिया है,' तो उसे अपनी आवाज़ में कमज़ोरी महसूस हुई। उसके बाद कुछ नहीं। घमंडी औरत। या यह आत्मसम्मान था? लेकिन व्यक्ति का स्वभाव ही तय करता है कि यह अहंकार है या आत्मसम्मान... मुझे पता है कि वह इस सवाल पर मुझे कैसे घेर लेगी... इसे पुनरावृत्ति बताकर टाल देगी। ओह! और जब मैंने देखा कि कैसे उसने सुबह के सत्र में पूरी तरह से अपना दबदबा बनाए रखा, देश के हर तरह के बुद्धिजीवी दिग्गजों को रौंद डाला—दाढ़ी वाले अकादमिक हस्तियाँ जिनका अनुभव उनकी घनी भूरी, राख जैसी और सफेद दाढ़ी में झलकता था, अरबी और फारसी के विद्वान जिनकी लंबी सफेद दाढ़ियाँ किसी न किसी तरह उनकी विद्वत्ता को दर्शाती थीं, मार्क्सवादी दिग्गज जिन्होंने अपने लंबे करियर में बहसों में अपने विरोधियों को पछाड़ दिया था, माथे पर लंबा तिलक लगाए दो पारंपरिक हिंदू पंडित—और फिर अंत में मेरी आँखों में देखा और उन्हें ऐसे घूरने

लगी जैसे मैं कोई बेबस शिकार हूँ... मैं खुद को बेबस शिकार महसूस कर रहा था... उसकी केंद्रित निगाहें... धिक्कार है! ये सब सोची-समझी तरकीबें हैं, निर्देशक का जादू है, सिनेमाई प्रभाव हैं, लेकिन तब मुझे यह समझ क्यों नहीं आया? मैं उसकी निगाहों से आँखें क्यों नहीं मिला पा रहा था? मैंने नीचे क्यों देखा और उस फाइल का सहारा क्यों लिया? किसी की आँखों में न देखना हार मानना है, आत्मसमर्पण करना है। तब मुझे यह सरल तथ्य समझ क्यों नहीं आया? मैं हार गई थी और इसका सबसे बड़ा सबूत यह था कि जैसे ही मैंने नज़रें नीचे कीं, वह और भी आक्रामक हो गई। काश, मैंने उसकी आँखों में आँखें डालकर उसे भेद दिया होता और दिखा दिया होता कि मैं किसी भी सवाल, किसी भी चुनौती का सामना करने के लिए तैयार हूँ... इससे उसकी लगातार बोलने की आदत पर ज़रूर विराम लग जाता। धिक्कार है! एकदम सन्न रह जाने का क्या ही मौका था!

दोपहर के भोजन के बाद के सत्र में भी वह नहीं रुकी। उसने लगभग हर वक्ता के भाषण में दखल दिया। उसे यह स्पष्ट हो गया था कि पूरे समूह में कोई भी उसके जितनी अच्छी तैयारी करके नहीं आया था। वह उस व्यक्ति की आँखों में सीधे देखती रही जिसका तर्क वह गलत साबित कर रही थी। और उसने उसकी ओर एक बार भी नहीं देखा। लेकिन उसे यकीन था कि अगर चालाक अध्यक्ष ने उसे बोलने के लिए बुलाया, तो वह ज़रूर मुड़कर उसकी ओर देखेगी। और वह फिर हार जाएगा। उसने कोई तैयारी नहीं की थी। वह शर्मिंदा और परेशान था और घबराने लगा था। वह यहाँ रहना नहीं चाहता था। वैसे भी उसकी उपस्थिति का कोई खास महत्व नहीं था। वह ऐसी अनगिनत बैठकों में जा चुका था और जानता था कि उपस्थिति पत्रक पर केवल हस्ताक्षर ही काफी होते हैं। उसे सेमिनार के आखिरी दिन यात्रा भत्ता और महंगाई भत्ता मिल जाएगा। वह दिल्ली के लिए पहली उड़ान पकड़ने के लिए बहुत जल्दी उठा था और फिर भारी दोपहर के भोजन के कारण उसे नींद आ रही थी। वह चुपचाप उठा, हॉल से ऐसे बाहर निकला जैसे शौचालय जा रहा हो, और फिर इमारत से बाहर निकल गया। उन्होंने एक टैक्सी रोकी और कहा, 'होटल जनपथ।' उन्होंने रंगीन खिड़की से बाहर चौड़ी, चिकनी सड़क को देखा, जहाँ एक के बाद एक करीने से सजे पेड़ चलती कार के पास से तेज़ी से गुज़र रहे थे। हमेशा से ही होशियार और समझदार। बहस और तर्क में बेजोड़। वह सिर्फ़ मेरे कहानी के विचारों पर ही काम नहीं करती थीं... बल्कि पहल करती थीं और अथक परिश्रम करती थीं... पूर्णता से कम

कुछ नहीं। वह एक ऐसी लेखिका थीं जिन्हें हर निर्देशक पाना चाहता था। अंग्रेज़ी और कन्नड़ दोनों में धाराप्रवाह। और निडर। वह मुझसे लोकेशन को लेकर बहस करती थीं और ज़्यादातर मौकों पर उनकी ही बात अंतिम होती थी। कोई और होता तो मैं उसे दखलअंदाज़ी समझकर नज़रअंदाज़ कर देता... वह प्रेरणा थीं... उनके लिखे स्क्रीनप्ले को निर्देशित करना कितना आसान था! ज़ुबैदा पढ़ना-लिखना जानती हैं। लेकिन उनमें आत्मविश्वास बिल्कुल नहीं है। उन्होंने आठवीं कक्षा पास करने का सर्टिफिकेट हासिल किया और उसका इस्तेमाल एक उर्दू प्राथमिक विद्यालय में शिक्षिका की नौकरी पाने के लिए किया क्योंकि उस विद्यालय में महिला शिक्षकों की बहुत कमी थी। वह कक्षा में प्रवेश करते समय ही अपने बुर्के का मुखौटा हटाती थीं - यही उनकी आज़ादी थी। जनाब सत्तार साहब शिवाजीनगर बस स्टैंड के सामने एक छोटी सी फलों की दुकान चलाते थे। वे गरीब थे, लेकिन गरिमापूर्ण जीवन जीते थे। उन्होंने अपने परिवार की किसी भी महिला को बिना बुर्का पहने और अकेले घर से बाहर नहीं भेजा। एक साधारण सा... असल में, एक छोटा सा घर, जिसके चारों ओर दस फीट ऊंची चारदीवारी थी। पुश्तैनी घर, किसार अली खान साहब ने बताया, जिन्होंने अपना परिचय दिया था। और मुझसे बार-बार मिलते रहे। दबाव बाद में आया। धीरे-धीरे। बढ़ता हुआ। 'अगर तुमने किसी पवित्र मुस्लिम लड़की से शादी की होती तो ऐसा नहीं होता। हमारा समुदाय तुम्हारी बीबी को तुम्हें इस तरह छोड़ने की इजाज़त नहीं देता। इस लड़की से शादी कर लो। तुमने देखा है कि वह कैसी है... सुंदर दिखती है, चांदी की तरह दमकती है। वह तुम्हारे लिए एकदम सही साथी होगी।' अकेलापन असहनीय हो गया था। शादी के इतने सालों बाद मेरा शरीर अपनी इच्छाओं को पूरा करने का आदी हो गया था... क्या यह वैज्ञानिक रूप से सिद्ध नहीं है कि अगर इन ज़रूरतों को नज़रअंदाज़ किया जाए, तो वे दिमाग को बर्बाद कर देती हैं? मैं फिल्म जगत में भी हाथ आजमा सकता था... वहां महिलाओं की कोई कमी नहीं थी, पर वहां बात बहुत जल्दी फैल जाती है। हर कोई एक-दूसरे की कहानी जानता है... मुझे क्या चाहिए था? एक ऐसी स्त्री जो मेरे घर और मेरी देखभाल करे? एक जवान, खूबसूरत लड़की जो मेरी जवानी को फिर से जगा दे? आखिरकार मैंने हार मान ली, उससे शादी कर ली... कुछ ही घंटों बाद यह साफ हो गया कि आठवीं कक्षा की टीचर वाली उसकी सोच वहीं अटक गई थी। वह अच्छी लड़की थी—बहुत ख्याल रखने वाली, आज्ञाकारी और इज्जतदार। उसने कहा कि अगर मैं चाहूं तो वह अपनी नौकरी

छोड़ने को तैयार है। वह रसोइए से भी बेहतर खाना बनाती है और घर को साफ-सुथरा रखती है। और बिस्तर पर भी बहुत प्यार देती है। मैं हर रात उसके साथ मजे करता था... कुछ दिनों तो एक ही रात में एक से ज्यादा बार, पांच साल के भूखे रहने के बाद। फिर गर्भावस्था! मैं दादा बनने की उम्र का हो चुका था और अब, मैं पिता बनने वाला था। मैंने क्या कर दिया? शर्म और अपराधबोध ने मुझे घेर लिया। नाज़िर बत्तीस साल का है! मैंने उससे गर्भपात कराने को कहा। लेकिन वह जिद्दी थी, एक तरफ बच्चे को जन्म देने की उसकी स्वाभाविक प्रवृत्ति और दूसरी तरफ उसकी रूढ़िवादी परवरिश। वह अपने पिता के इस गहरे विश्वास के साथ पली-बढ़ी थी कि परिवार नियोजन पाप है। उस आदमी के ग्यारह बच्चे थे; पाँच प्रसव के दौरान मर गए थे। उसने बच्चे को रखने पर जोर दिया और मैं मान गया। असल में, मेरा गर्भपात कराने का मन ही नहीं हुआ। उसके भाई-बहन लगातार हमारे घर आने लगे और लंबे समय तक रहने लगे। क्या यह सब पहले से तय था? क्या जुबैदा के माता-पिता ने जनाब सत्तार को बिचौलिए के रूप में भेजा था क्योंकि उन्हें लगा कि मेरी शादी उससे करवाना एक अमीर परिवार से संबंध स्थापित करने का अच्छा तरीका है? फिर शुरू हुआ। किराने का सामान, अंडे, मांस, चिकन, तेल, मक्खन... और भी बहुत कुछ, मानो मेरे पास पैसों की कोई कमी न हो। मैंने खुद को बड़ी मुश्किल से रोका कि मैं उससे कहूँ कि वह अपनी बहनों को मेरे घर से बाहर जाने के लिए कहे। और उसने उस दबी हुई आवाज़ में मुझे डांटा - बल्कि मुझे फटकारा - घर से दूर रहने के लिए, अपनी फिल्म की शूटिंग के लिए हफ्तों तक बाहर रहने के लिए। मुझे यह समझने में कई महीने लग गए कि वह मुश्किल से पढ़ी-लिखी थी, लेकिन चालाकी से काम लेने में माहिर थी। मैंने उसे तलाक़ देने का फैसला किया, लेकिन दया ने मुझे रोक दिया... उसकी हालत और परवरिश पर, और सबसे ज़्यादा इसलिए कि मेरा बच्चा उसके गर्भ में था। तभी मुझे वह कहावत कितनी गहरी समझ में आई: चंदन बेचने वाले से मुक्केबाज़ी करना गोबर बेचने वाले से प्रेम करने से बेहतर है। एक पढ़ी-लिखी, बुद्धिमान, रचनात्मक और आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर पत्नी एक आदर्श जीवनसाथी थी। उसके द्वारा लाई गई संतुष्टिदायक दोस्ती बेजोड़ थी। रज़िया! मुझे उसकी कितनी याद आ रही थी... और मैंने उससे मिलने जाने का फैसला किया... वह कौन सा गाँव था? कुनिगल के पास कोई जगह। मैं वहाँ जाकर उसे मना सकता था। 'हम अभी भी पति-पत्नी हैं। मैंने तुम्हें तलाक़ नहीं दिया है। मेरे साथ रहो। फ्लैट में रहो। ज़ुबैदा को

वहाँ रहने दो। मैं तुम्हारे साथ रहूँगा और उसे हर महीने ज़रूरत का सामान और कुछ पैसे दूँगा। वैसे भी, उसे उसकी तनख्वाह मिलती है। हम पहले जैसे हो जाएँगे। बस तुम और मैं।' लेकिन नहीं। रजिया मान नहीं सकती थी। घमंडी! धिक्कार है! मैंने उसे मनाने के लिए कई तरीके सोचे, पुणे के फर्ग्यूसन में उस पहाड़ी पर बिताए पलों की याद दिलाई, उन लंबी, मीठी रातों की याद दिलाई जो हमने इतने सालों में साथ बिताई थीं। प्यार भरे शब्द फुसफुसाए। उससे मिन्नतें कीं। लेकिन मुझे पता था कि वह एक झटके में सब कुछ तोड़ देगी: 'फिर से कोशिश करो, आमिर, मैंने इससे बेहतर संवाद लिखे हैं।' इससे बड़ा अपमान और क्या हो सकता था... मैंने अपनी कार बाईं ओर मोड़ी, ब्रेक लगाया और कुछ मिनटों तक खाली निगाहों से आगे देखता रहा, फिर बैंगलोर की ओर यू-टर्न लेकर कुनिगल से दूर चला गया।

'होटल जनपथ, साहब,' ड्राइवर की आवाज दूर से आई।

अपने कमरे में पहुँचते ही वह बिस्तर पर लेट गया और आँखें बंद कर लीं। एयर कंडीशनिंग की ठंडी हवा सुकून दे रही थी, लेकिन नींद नहीं आई।

लगातार भेदन। उसकी आँखें खंजर जैसी थीं। और दोपहर के भोजन के समय उपेक्षा। बेरहमी। वह अब भी पढ़ी-लिखी, रचनात्मक और बेहद स्वतंत्र थी। मुझे गर्व है... लेकिन पति के प्रति थोड़ी सी विनम्रता दिखाना कितना मुश्किल है? हा हा! इसके लिए शिष्टाचार चाहिए। अचानक मुझे अच्छा लगा। धिक्कार है इन नौकरशाहों पर! इनमें पहले से मेहमानों की सूची भेजने की बुनियादी शिष्टाचार भी नहीं है। अगर मुझे पता होता कि वह यहाँ है तो मैं यहाँ नहीं आती। मुझे यह भावना पसंद नहीं है। मैं उन्हें उनकी औकात दिखाऊँगी। लेकिन सरकारी अधिकारी स्वभाव से ही अहंकारी होते हैं। मैं उनकी प्रतिक्रिया की कल्पना कर सकती हूँ। 'हमने आपको निमंत्रण भेजकर अपना कर्तव्य पूरा कर दिया। बाकी आप पर निर्भर था। हमें आपको कोई मेहमानों की सूची भेजने की कोई बाध्यता नहीं है।'

वह वहीं लेटा रहा और सूरज डूबने के काफी देर बाद तक लाइट जलाने के लिए भी नहीं उठा। अंधेरे में उसने अपनी घड़ी देखी क्योंकि उसे बहुत भूख लग रही थी। रात के 8 बज रहे थे। वह धीरे-धीरे बार और रेस्टोरेंट की ओर चला। उसे शराब पीने का मन कर रहा था। वह हर दिन नहीं पीता था, वह केवल काम के थका देने वाले दिन के बाद आराम करने के लिए या जब उसका मन उदास होता था, तब पीता था और दो पेग से ज्यादा नहीं। अब उसे याद आया कि वह हमेशा उसका साथ देती थी। इस याद

से उसे बहुत गुस्सा आया। उसने वेटर को इशारा किया, स्कॉच ऑर्डर किया और खाने का मेनू देखा। सुनहरे रंग के पेय ने उसके गले को गर्माहट दी और स्वादिष्ट चिकन के साथ उसका स्वाद और भी अच्छा लगा। खाने के बाद उसने और स्कॉच ऑर्डर किया और काफी देर तक वहीं बैठा रहा, पूरे अनुभव का आनंद लेता रहा। उसके चेहरे पर संतुष्टि भरी मुस्कान आ गई और उसे बहुत अच्छा लगा। बिल चुकाने के बाद जब वह उठा, तो उसे शारीरिक शक्ति का एक जबरदस्त उछाल महसूस हुआ। दिन भर का अवसाद गायब हो गया था। अब वह साफ-साफ सोच पा रहा था। मुझे यकीन है कि उन कमीने नौकरशाहों ने सभी मेहमानों को यहीं ठहराया होगा। यहां तक कि उसे भी। मैं पूछूंगा। वह रिसेप्शन काउंटर पर बहुत ही विनम्रता से बोले, 'रजिया बेगम। वह मंत्रालय की बैठक में शामिल होने आई हैं। कृपया कमरा नंबर बताइए?'

'श्रीमती रजिया बेगम कुरैशी। यह कमरा नंबर 314 होगा।'

उसने रिसेप्शनिस्ट को धन्यवाद दिया और लिफ्ट की ओर चल पड़ा। वह कमरा नंबर 215 में था, जो लगभग उसके कमरे के ठीक नीचे था।

उसने दरवाजे की घंटी बजाई और दरवाजा खुलने से पहले एक मिनट इंतजार किया।

यह वही थी। उसके घने और भरे-पूरे बालों का एक भी लट नहीं गिरा था। एक भी लट काली नहीं थी। उसने अब भी हरे और केसरिया रंग की साड़ी पहनी हुई थी। उसके पास पढ़ने का चश्मा था। उसके हाथ में एक पतली सी किताब थी।

उन्होंने कहा, 'यह मैं हूं।'

'मुझे पता है।'

'मुझे आपसे बात करनी है।'

‘आप अंदर आ सकते हैं,’ उसने कहा, मानो वह उसे अनुमति दे रही हो। उसने एक सोफे की ओर इशारा किया और जैसे ही वह कमरे के अंदर आया, वह दरवाजे तक गई, उसे बंद किया और उसके सामने वाले सोफे पर बैठ गई।

उसे इतनी आसानी की उम्मीद नहीं थी। उसने कहा था कि बस थोड़ी कहा-सुनी होगी, लेकिन अब वह बहुत खुश था। उसका आत्मविश्वास चरम पर था। अचानक वह भूल गया कि उसे क्या कहना था और कुछ कहने के लिए हड़बड़ी मच गई। उसने उसे सीधे-सीधे देखा।

‘मैंने रिसेप्शन में रजिया बेगम के बारे में पूछा। उस लड़की ने कहा कि रजिया बेगम कुरैशी कमरा नंबर 314 में हैं!’ उसकी आवाज में उत्साह था।

‘क्या इसका कोई विशेष महत्व है?’ जैसे ही उसने उसे लड़खड़ाते हुए सोफे की ओर आते देखा, उसे तुरंत एहसास हो गया कि वह नशे में है। उसकी आवाज़ में कोई भाव नहीं था।

‘हेहेहेहे... उसने मेरा कमरा नंबर या कार्ड नहीं माँगा। मेरा सरनेम ही सब कुछ बता देता! मुझे यकीन है कि वो पूछती कि हम अलग-अलग क्यों रह रहे हैं। हाहाहाहा!’ उसने आँख मारी। उसने कोई जवाब नहीं दिया। बल्कि, उसने अपनी निगाहें और सख्त कर लीं। आमिर अब डरा नहीं था। उसने भी उसकी निगाहों का जवाब दिया।

‘इस कमरे का किराया देने वाला अधिकारी भी शायद यही सवाल पूछेगा। मैं उसे क्या बताऊँ?’ उसने मुस्कुराते हुए कहा, ‘खैर, उन्हें भूल जाओ। मैं तुम्हारे साथ रहना चाहता हूँ। कम से कम आज रात तो।’

‘क्या आपने यहां आने से पहले इसकी योजना बनाई थी?’

‘मैं ऐसा क्यों करूं? हम तो पति-पत्नी हैं।’

‘इसका मतलब है कि मुझ पर तुम्हारा अधिकार है। क्योंकि तुमने अभी तक तलाक नहीं दिया है। तुम बस मुझे अपने पास रखना चाहते हो। है ना?’

‘ठीक है। और मैं ऐसा कभी नहीं करूँगा। कभी नहीं। अभी बताओ। मैं ज़ुबैदा को तलाक़ दे दूँगा। अभी! मुझे तुम चाहिए। सिर्फ़ तुम। हमेशा। प्लीज़,’ वह उठा और एक कदम में उसके करीब पहुँच गया।

यह सब घिनौना और थोड़ा डरावना लगा, लेकिन उसने हिम्मत जुटाकर कहा, 'अमीर, अपने घर वापस जाओ। हमें पहले कुछ बातें सुलझानी हैं।' वह अपने घर लौट गया।

“फिर कभी ऐसा करने की कोशिश मत करना। तुम्हें पता है—तुमने अनगिनत बलात्कार के दृश्य फिल्माए हैं—किसी पुरुष के लिए किसी महिला का बलात्कार करना वास्तव में मुश्किल होता है, जब तक कि वह शारीरिक रूप से बहुत कमजोर न हो या उसके पास कोई हथियार न हो। और तुम्हारे जैसा नशे में धुत व्यक्ति किसी का बलात्कार कैसे कर सकता है?”

‘तुम क्या कह रहे हो? क्या तुम्हें सच में लगता है कि मैं तुम्हारा बलात्कार करने आया था? मुझे पता है तुम गुस्से में हो, लेकिन अरे! तुम मेरी बीबी हो। हमेशा रहोगी। मैं तुम्हें कभी तलाक नहीं दूंगा। कभी नहीं। कभी नहीं। तलाक नहीं। मुझे तुम चाहिए। सिर्फ तुम। तुम। मैं उसे तलाक दे दूंगा। यहीं से...फोन...फोन...अभी। मैं जुबैदा को तलाक दे दूंगा। मुझे तुम चाहिए।’

‘कोई भी अपनी पत्नी को भी यौन संबंध बनाने के लिए मजबूर नहीं कर सकता। यह गैरकानूनी है। हम दोनों का पंजीकरण कराना और अलग-अलग कमरों में रहना ही इस बात का पर्याप्त सबूत है कि मेरी इसमें कोई दिलचस्पी नहीं है और आपने मेरे कमरे में जबरदस्ती प्रवेश किया है।’

‘क्या बकवास है! ऐसा लगता है कि तुमने तय कर लिया है कि मैं यहाँ सिर्फ तुम्हारा बलात्कार करने आया हूँ!’

'हां। क्योंकि आपने बार-बार यही कहा है कि आपने मुझे तलाक नहीं दिया है। आप शायद यह भूल गए हैं कि मैं भी आपको तलाक दे सकता हूं।'

'हाँ? किसी भी महिला को यह अधिकार नहीं है...ठीक है, चलिए मैं आपसे सैद्धांतिक रूप से पूछती हूँ। किस महिला को अपने पति को तलाक देने का अधिकार है?'

‘इस देश का संविधान मुझे उस धर्म को कानूनी रूप से छोड़ने का अधिकार देता है जिसमें तलाक के नियमों को लेकर ऐसी पाबंदी है। मैं अदालत में एक हस्ताक्षरित हलफनामा दाखिल करूंगी जिसमें मैं इस्लाम का त्याग कर हिंदू धर्म में लौटना चाहती हूं। आमिर, मुझे कानून की अच्छी जानकारी है। मैंने वह फैसला पढ़ा है जिसमें कहा गया है कि कोई भी पुरुष या महिला जो अपना वर्तमान धर्म छोड़ता है, वह केवल उसी धर्म के नियमों के अनुसार ऐसा कर सकता है जिसमें उसने शादी की है। लेकिन फिर मैं सुप्रीम कोर्ट जाऊंगी और हंगामा खड़ा करूंगी, यह कहते हुए कि तुमने मुझसे शादीशुदा रहते हुए दूसरी महिला से शादी करके मुझे बहुत मानसिक यातना दी है। मैं इस सब की नाइंसाफी के बारे में चिल्लाऊंगी—कि तुम्हें एक ही समय में चार महिलाओं से शादी करने का अधिकार है। मैं उस स्रोत पर सवाल उठाऊंगी जिससे तुम्हें यह अधिकार मिला है। सोचो इससे तुम्हारी छवि पर क्या असर पड़ेगा।’

‘क्या...क्या? फिर से कहो।’ उसे उसकी बात पूरी तरह समझ नहीं आई। जब उसने अपनी बात दोहराई, तो उसका चेहरा उतर गया। उसे फिर से खालीपन महसूस हुआ। वही उदास खालीपन जो दोपहर भर और रात के खाने तक बना रहा। वह उसे घूर रही थी। उसने उसकी नज़रें नहीं मिलाईं और नीचे देखने लगा। काफी देर बाद, वह उठा, चलकर उसके पास बैठा। उसने कुछ नहीं कहा। अचानक उसने उसके हाथ अपने हाथों में लिए, झुककर फुसफुसाया, ‘मुझे पता है, मुझे पता है कि तुम मुझसे बहुत नाराज़ हो क्योंकि मैंने दोबारा शादी कर ली है। मैं तुम्हारा गुस्सा समझता हूँ, कसम से समझता हूँ। लेकिन ज़रा सोचो। क्या इससे तुम्हें यह एहसास नहीं होता कि तुम्हारे बिना मैं कितना अकेला हूँ?’

वह थोड़ी नरम पड़ी, लेकिन पल भर में खुद को संभालते हुए बोली, 'जो हो गया सो हो गया। तुमने अपनी मर्जी से शादी की। लेकिन उसे ही क्यों? तुम्हें कोई ऐसी मिल सकती थी जो तुम्हारे जैसी हो? कोई ऐसी जो शिक्षा और उपलब्धियों में तुम्हारे बराबर हो? इस लड़की के साथ तुम क्या साझा कर सकते हो?'

‘आप जानते हैं कि हम लड़कियों को शिक्षा प्राप्त करने की अनुमति नहीं देते। यह निषिद्ध है। केवल कुछ धनी और शिक्षित परिवार ही अपनी बेटियों को मनचाही डिग्री या डॉक्टरेट प्राप्त करने की अनुमति देते हैं। भला कौन चाहेगा कि उसकी बेटी मुझ जैसे बूढ़े आदमी की दूसरी पत्नी बने?’

यह सुनकर उसे उस पर बहुत दया आई। क्या यह शराब का असर था? या अपनी भावनात्मक कमजोरी को देखते हुए उसने सब कुछ कह दिया? या दोनों का मिश्रण था? वह निश्चित नहीं थी। उसका दिल थोड़ा नरम हुआ और उसने प्यार से उसका हाथ दबाते हुए कहा, 'ज़ुबैदा। उसका नाम यही है ना? उसे फिर से स्कूल भेजो। उसके बाद उसे कॉलेज जाने दो। पता लगाओ कि उसे क्या पसंद है और उन क्षेत्रों में गहन प्रशिक्षण की व्यवस्था करो। मुझे यकीन है कि आठ से दस साल में वह तुम्हारे बराबर हो जाएगी।'

‘ठीक है। और तब तक मैं सत्तर साल का हो जाऊंगा। लेकिन बात ये नहीं है। गहन प्रशिक्षण से किसी ऐसे व्यक्ति को कोई फायदा नहीं होगा जिसकी रुचि ही न हो। आपको उसकी क्षमताओं का अंदाजा नहीं है।’

'हम्म।'

उसे उस पर दया आई। उसके विचार अंतर्मुखी हो गए। उसने उसका हाथ नहीं छोड़ा। पाँच मिनट बाद उसने कहा, “एक और बात: आधुनिक शिक्षा ही किसी व्यक्ति के बौद्धिक विकास का एकमात्र तरीका है। यदि आप चाहते हैं कि आपकी स्त्रियाँ बौद्धिक रूप से उस स्तर तक विकसित हों जहाँ वे आप जैसे पुरुष के बराबर हो सकें, तो आपको उन्हें शिक्षा के नाम पर केवल इस्लामी शिक्षा देना बंद करना होगा। लेकिन याद रखें, आधुनिक शिक्षा प्राप्त करने वाली प्रत्येक स्त्री जीवन के सभी पहलुओं में समानता की मांग करेगी: सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, वैवाहिक और आध्यात्मिक। वह असहज प्रश्न पूछेगी। भगवान केवल पुरुष ही क्यों होने चाहिए? हिंदू धर्म में देवियों की संख्या देवताओं के बराबर है। और फिर ऐसी देवियाँ भी हैं जो देवताओं से अधिक शक्तिशाली हैं। क्या आपने देवी चामुंडेश्वरी की कहानी नहीं सुनी? देवता राक्षस महिषा की शक्ति का सामना करने में असमर्थ थे। वे दुर्गा के पास गए, जिन्होंने चामुंडेश्वरी का रूप धारण किया और युद्ध में उसे मार डाला।” इस्लाम से पूर्व अरब में अनेक स्त्री देवताओं की पूजा होती थी, लेकिन पैगंबर मुहम्मद (उन पर शांति हो) के सत्ता संभालने के बाद उन्होंने स्त्री देवताओं की पूजा पर प्रतिबंध लगा दिया और अपने अनुयायियों के लिए केवल पुरुष ईश्वर, अल्लाह को ही चुना। एक शिक्षित मुस्लिम महिला पूछेगी कि उन्होंने स्त्री देवताओं की पूजा पर प्रतिबंध क्यों लगाया। और यह केवल महिलाओं की बात नहीं है। आज की शिक्षा से प्रभावित कोई भी व्यक्ति—जो किसी भी प्रकार के भेदभाव को घृणित मानता है—नारीवादी बन जाएगा। मुझे याद आया। लगभग बीस साल पहले, मैं बैंगलोर में शौकिया महिला लेखिका संघ द्वारा आयोजित एक कार्यक्रम में गई थी। एक महिला ने अपनी लिखी एक लघु कहानी पढ़ी। यह सीता की अग्नि परीक्षा पर आधारित थी। जब राम सीता से अग्नि में कूदकर अपनी पवित्रता सिद्ध करने को कहते हैं, तो सीता उनसे भी अग्नि में कूदने को कहती हैं क्योंकि उनकी तरह वह भी यह जानना चाहती हैं कि उनकी अनुपस्थिति में राम उनके प्रति वफादार रहे हैं या नहीं। यह उस महिला की अग्नि परीक्षा की कहानी थी। उस पाठ सत्र में हम सात महिलाएं थीं, जिनमें मैं भी शामिल थी। एक अन्य महिला खड़ी हुई और चिल्लाई, 'यह काफी नहीं है। इसे बदलो।' सीता से कहो कि उसकी गर्दन पकड़वाकर उसके दोनों गालों पर कम से कम चार थप्पड़ मारे!’ मैंने यह इसलिए बताया ताकि आपको भेदभाव के प्रति प्रचलित मानसिकता का एक छोटा सा नमूना दिखा सकूँ। और यह मानसिकता हाल ही में और भी बढ़ गई

है—आप जानते ही हैं कि कुंती, अहल्या, द्रौपदी, सीता और मंदोदरी के बारे में किस तरह का साहित्य लिखा जा रहा है। हमारी नारीवादी लेखिकाएँ इन महिलाओं को आग के गोले के रूप में चित्रित कर रही हैं। आप यह जानते ही हैं, है ना?'

वह काफी देर तक चुप रहे, फिर 'हम्म' कहते हुए सिर हिलाया। और वह आगे बोलीं, 'अगर आप अपने धर्म की महिलाओं को इस तरह की शिक्षा नि:शुल्क और खुले तौर पर दें, तो वे ठीक यही सवाल पूछेंगी और ठीक इसी तरह का साहित्य तैयार करेंगी। विशुद्ध जैविक दृष्टिकोण से और प्रजनन के उद्देश्य से, वे पूछेंगी, क्या पुरुष और स्त्री का भेद आवश्यक है? यदि है, तो वे पूछेंगी, किसकी भूमिका अधिक महत्वपूर्ण है? और फिर इस प्रश्न का एक बिल्कुल अलग उत्तर निकलेगा कि ईश्वर पुरुष होना चाहिए या स्त्री। आप जानते हैं, पिछले पांच वर्षों के अपने अध्ययन में, मैंने वेदांत का भी अध्ययन किया है। यह कहता है कि ब्रह्म नामक परम और शाश्वत वास्तविकता न तो पुरुष है और न ही स्त्री। यह लिंगहीन है। वेदांत ग्रंथ इसे नपुंसक लिंग में संदर्भित करते हैं। यहां तक कि जिसे ईश्वर कहा जाता है, वह भी ब्रह्म का ही एक रूप है। यह संसार ब्रह्म में निहित आदिम ब्रह्मांडीय ऊर्जा से निर्मित है और इस ब्रह्मांडीय ऊर्जा को शक्ति के रूप में परिकल्पित किया गया है।' और शक्ति एक स्त्री है जो समस्त सृष्टि को जन्म देती है और समय-स्थान के माध्यम से उसका पालन-पोषण करती है। हमें उसकी शरण में जाना चाहिए और उसकी पूजा करनी चाहिए। समझे इसका क्या अर्थ है? कि ईश्वर स्त्री है। और जो ईश्वर से परे है, वह लिंगहीन है। प्रतीकों, भाषा, प्रार्थनाओं और अनुष्ठानों के माध्यम से हमारी सभी पूजा अंततः इसी देवी तक पहुँचने के लिए है। जिन्हें देवता कहा जाता है—पुरुष—वे इस देवी के अधीन भूमिका निभाते हैं, जैसे मधुमक्खियाँ रानी मधुमक्खी की सेवा करती हैं। जब गहन चिंतन आध्यात्मिक ऊँचाइयों तक पहुँचता है, तो प्रत्येक नारीवादी वेदांत का अभ्यासी बन जाती है। लिंग भेद केवल प्रकृति और सहज प्रवृत्ति के स्तर पर होता है। वेदांत पुरुष और स्त्री के लिए अलग-अलग आत्माओं के अस्तित्व को स्वीकार नहीं करता। क्या आपके साथी धर्मी ऐसे विचारों को स्वीकार करने के लिए तैयार हैं? आमिर?

फिर सन्नाटा छा गया। उसने मुड़कर उसे देखा। उसकी आँखें नींद से भारी थीं, वह शराब के नशे में चूर हो चुका था। उसे निराशा हुई। उसका लंबा-चौड़ा भाषण उस पर बिल्कुल बेअसर रहा। वह जानती थी कि उसने जोश से बात की थी। उसे

लगा था कि वह अपने विचार साझा कर रही है, लेकिन उस पर उनका कोई असर नहीं हुआ। उसे हल्का सा उदास महसूस हुआ। तभी उसके कंधों पर पड़े भार ने उसे झकझोर कर रख दिया। आमिर उस पर झुक गया था। वह लगभग वहीं उसके बिस्तर पर सो ही गया था। वह उठी, उसके दोनों कंधे पकड़े और उसे झटक दिया।

'अमीर! तुम्हें बहुत नींद आ रही है। चलो, मैं तुम्हें तुम्हारे कमरे में ले चलता हूँ।'

उसने कुछ बुदबुदाया।

'आपका कमरा नंबर, आमिर!'

'हम्मम्मम्म।'

उसने उसका हाथ उसकी पतलून की जेब में डाला, चाबी निकाली और कमरे का नंबर पढ़ा—215। उसने चाबी वापस उसकी जेब में रख दी। फिर उसने उसके दोनों कंधों पर हाथ रखकर उसे खड़ा किया। वह धीरे-धीरे उसे अपने कमरे से बाहर गलियारे में ले गई। जब वे इस तरह कुछ दूर चले गए, तो उसने अपने फ्लोर के बेलबॉय को देखा और उसे इशारा किया।

'ये लीजिए। इस साहब को उनके कमरे तक ले जाइए। ये चाबी ले लीजिए।'

जी जी मैडम।

वह तब तक खड़ी देखती रही जब तक कि वे दोनों लिफ्ट में नहीं चढ़ गए।

~

जब वह बिस्तर पर लेटी, तो उसे नींद नहीं आ रही थी। दिन भर की घटनाओं ने उसे बुरी तरह झकझोर दिया था। सेमिनार के असली मकसद का पता चलने पर वह स्तब्ध रह गई थी। और अब आमिर की नशे में की गई बकवास ने उसके दबे हुए भावनात्मक उथल-पुथल को लहरों की तरह लगातार उछाल दिया था। उसने इस सोच में सांत्वना ढूंढी कि उसने गुस्से में आकर दोबारा शादी कर ली थी। आखिर वह क्या उम्मीद कर रहा था? वह उस बेचारी लड़की के लायक ही था। लेकिन जब उसे आमिर की यह बात याद आई कि वह उसके बिना अकेला महसूस करता है, तो उसकी बेचैनी फिर से जाग उठी। इसके साथ ही उसे एहसास हुआ कि वह भी अकेली है। एक पल के लिए उसने आमिर की कही बात पर गौर किया: 'मैं उसे तलाक दे दूंगा और पहले की तरह तुम्हारे साथ रहूंगा।' यह बात उसे लुभा रही थी। अचानक उसे अपराधबोध हुआ। अगर वह मान गई, तो वह फिर कभी खुद का सामना नहीं कर पाएगी। उस बेहद अन्यायपूर्ण कानून का समर्थन करना, जो उस

बेचारी औरत को बेघर कर देगा, अकल्पनीय था। वैसे भी, उसे एहसास हुआ कि अब उसके मन में आमिर के लिए पहले जैसा प्यार नहीं रहा। वह उठी, लेटी, करवटें बदलती रही, आँखें बंद कीं और फिर खोल दीं, और अंत में पीठ के बल लेटकर छत को घूरने लगी। उसे नींद नहीं आ रही थी और भोर होने पर उसे राहत मिली।

वह उठी, नहाई, कपड़े पहने, नाश्ता किया और एक टैक्सी बुलाई। वह पिछली सीट पर बैठी और बंद रंगीन खिड़की से बाहर देखने लगी, कुछ खास नहीं दिख रहा था, तभी एक चौड़ी सड़क के कोने पर लगे साइनबोर्ड पर उसकी नज़र पड़ी—औरंगज़ेब रोड। वह चौंक गई। फिर उसे याद आया कि अकबर के नाम पर भी एक सड़क है। क्या औरंगज़ेब वाकई एक ऐसा ऐतिहासिक व्यक्ति था जिसे सम्मान के साथ याद किया जाना चाहिए? वह स्वतंत्र भारत के सत्ताधारी अभिजात वर्ग की मानसिकता को समझ नहीं पा रही थी। या फिर यह वोट बैंक की एक और चाल थी जिसके तहत हर ऐतिहासिक व्यक्ति का समान रूप से सम्मान करना ज़रूरी था? क्या यह कुछ और ही भयावह था? वह जानती थी कि इसके बाद क्या जवाब आएगा: औरंगज़ेब एक ऐतिहासिक वास्तविकता है और उसे याद रखना हमारा कर्तव्य है। तो फिर उसके कार्यों को, जो कि एक ऐतिहासिक वास्तविकता ही हैं, स्कूल की पाठ्यपुस्तकों से क्यों मिटाया जाए? उसने आज सेमिनार में इस मुद्दे को उठाने का इरादा किया था।

वह बहुत जल्दी पहुँच गई थी। अभी तक कोई नहीं आया था। बरामदे में टहलते हुए उसके मन में एक विचार आया। दिल्ली में एक दिन और रुकना, टैक्सी बुक करना और शहर और उसके आसपास के महत्वपूर्ण ऐतिहासिक स्थलों का भ्रमण करना अच्छा विचार था। लाल किला, जामा मस्जिद, तुगलकाबाद, हुमायूँ का मकबरा और अन्य प्रमुख और छोटे मुस्लिम स्मारक और स्थल गहन अध्ययन के योग्य थे। इससे उसे उपन्यास की पांडुलिपि को और परिष्कृत करने में मदद मिलेगी। तभी उसने लगभग पचास वर्ष के एक व्यक्ति को अपनी ओर आते देखा।

'नमस्ते। मेरा नाम डॉ. राजवर्धन है, मैं इलाहाबाद विश्वविद्यालय के इतिहास विभाग में रीडर हूं। आपको अंदाजा नहीं है कि कल आपका साहसिक भाषण मुझे कितना पसंद आया। आप यहां एकमात्र पुरुष हैं।'

'तो फिर तुमने कल मेरा साथ क्यों नहीं दिया?' उसने अपनी आवाज में व्याप्त ठंडेपन को छिपाए बिना सीधे उससे पूछा।

‘क्या तुमने कल यह ऐलान नहीं किया था कि मुस्लिम शासन ने भारत के सभी पुरुषों को नपुंसक बना दिया है?’ वह अपने ही मजाक पर हँस पड़ा। उसने अपनी जेब से एक छोटा पैकेट निकाला, उसे खोला, अपने दाहिने हाथ की हथेली पर थोड़ा सा तंबाकू डाला, उसमें एक चुटकी सफेद चूना मिलाया, अपने बाएं अंगूठे से उसे जोर से रगड़ा, मिश्रण को अपने मुंह में डाला और फिर बोला, ‘तुमने अपना नाम रजिया बेगम दर्ज कराया है, लेकिन मैं बता सकता हूँ कि तुम जन्म से मुसलमान नहीं हो।’

'आप क्यों कहते हो कि?'

‘जन्म से मुसलमान कोई भी व्यक्ति सपने में भी वो बातें नहीं कह सकता जो आपने कल कही थीं। आपकी प्रेम विवाह हुआ था और आपने धर्म परिवर्तन किया क्योंकि अन्यथा आप शादी नहीं कर पातीं। क्या मैं सही कह रही हूँ? और मुझे खेद है। मुझे आपके निजी जीवन के बारे में बात करने का कोई अधिकार नहीं है।’

वह इस बारे में सोचने लगी। शायद मेरे जाने के बाद प्रोफेसर ने मेरे बारे में उसे बताया होगा। उसने सोचा कि क्या वह इस आदमी से पूछे कि उसे उसकी निजी जिंदगी के बारे में इतनी जानकारी कैसे है, लेकिन यह बुद्धिमानी नहीं होगी। तभी उसे कुछ आवाज सुनाई दी और वह मुड़ी—प्रोफेसर की विशेष कार, जो मंत्रालय द्वारा उन्हें दी गई एक विशेष सुविधा थी, आ गई थी। दरवाजे खुले और प्रोफेसर और मंत्रालय के एक विशेष सचिव बाहर आए। सचिव जल्दी से दिन की तैयारियों का जायजा लेने के लिए हॉल की ओर चले गए। डॉ. राजवर्धन प्रोफेसर के पास गए और चौड़ी मुस्कान के साथ बोले, 'बस एक मिनट, महोदय। मुझे आपको कुछ बताना है...' वे रुके और फिर अपनी आवाज थोड़ी धीमी करके बोले, 'हस्तरेखा शास्त्र मेरा शौक है। यकीन मानिए, मैं यह पैसे के लिए नहीं करता। अब अगर आप मुझे अपनी हथेली दिखाने का सम्मान दें...' उन्होंने प्रोफेसर का दाहिना हाथ पकड़ा और बिना किसी जवाब का इंतजार किए उसे ऊपर की ओर कर दिया। उन्होंने अपने चश्मे को थोड़ा ठीक किया, थोड़ा झुके और बड़ी गंभीरता से हथेली का अध्ययन किया। उन्होंने हाथ छोड़ा और बोले, 'तो सब कुछ इसी ओर इशारा करता है। मैं किसी भी कोण से देखूं।' आप सर्वोच्च सम्मान पाने से बस एक कदम दूर हैं। सर्वोच्च सम्मान! भारत में इसका अर्थ है भारत रत्न। है ना, महोदय?’ डॉ. राजवर्धन ने अब सीधे प्रोफेसर के चेहरे की ओर देखा। प्रोफेसर का चेहरा चमक उठा।

‘क्या आप सचमुच ऐसा सोचते हैं? वैसे तो मैं इन सब चीजों में विश्वास नहीं करता... मतलब, हस्तरेखा शास्त्र और ज्योतिष, ये सब। लेकिन मैं आपको हतोत्साहित नहीं करना चाहता और क्योंकि आपने मेरी हथेली पढ़ी है, तो मुझे बताइए कि आपको और क्या दिखता है?’

डॉ. राजवर्धन ने जानबूझकर मुस्कुराया, उनके होंठ धीरे-धीरे खुले और मुंह से तंबाकू के रस की कुछ बूँदें टपकने लगीं। उन्होंने इसे अनदेखा किया और प्रोफेसर के हाथ को फिर से देखा। लक्ष्मी को स्पष्ट हो गया था कि वह एक माहिर अनुमानक थे —वे किसी व्यक्ति के व्यवहार का त्वरित विश्लेषण करके उसके भविष्य की भविष्यवाणी कर देते थे।

शाम को लक्ष्मी की बारी थी।

‘मैडम, क्या मैं आपका हाथ देख सकता हूँ?’

भविष्य से उम्मीद रखने वाले लोग ज्योतिष की ओर आकर्षित होते हैं। मुझे ऐसी कोई उम्मीद नहीं है। और हां, मेरे निजी जीवन के बारे में आपका अनुमान बिल्कुल सही निकला। बधाई हो! आप वाकई प्रतिभाशाली हैं।

वह ज़ोर से हँसे और बोले, 'मुझमें कोई प्रतिभा नहीं है। मैंने कल तुम्हारे बारे में हो रही बातचीत सुन ली थी। इसी से मुझे तुम्हारे निजी जीवन के बारे में पता चला। मुझे यह भी पता था कि तुम अतीत में प्रगतिशील आंदोलन का हिस्सा थीं। और फिर, यहाँ बहुत से लोग जानते हैं कि तुमने शादी करने के लिए इस्लाम धर्म अपना लिया था। प्रोफ़ेसर शास्त्री ने तुम्हारा नाम इस उम्मीद में शामिल किया था कि तुम्हें उनके "राष्ट्रीय एकता" प्रोजेक्ट के एक शक्तिशाली समर्थक के रूप में इस्तेमाल किया जा सके, लेकिन तुमने पूरी तरह से यू-टर्न ले लिया। तुम्हें अंदाज़ा भी नहीं है कि तुमने उन्हें कितना बड़ा झटका दिया है। मंत्री भी हैरान हैं। उन्हें सम्मेलन की कार्यवाही की रिपोर्ट दिन में दो बार मिलती है। एक तरह की रिपोर्ट जिसमें बताया जाता है कि किसने क्या कहा, सभा की आम सहमति क्या है... इस तरह की रिपोर्ट। मंत्री ने प्रोफ़ेसर शास्त्री से तुम्हारे चयन पर सवाल उठाया, एक मुस्लिम महिला जिसने...उम्म...एजेंडा के खिलाफ़ काम किया। अपने बचाव में, प्रोफ़ेसर ने उन्हें तुम्हारी पृष्ठभूमि, तुम्हारे जीवन आदि के बारे में बताया।'

उनके शब्दों ने उनके इस संदेह को और पुख्ता कर दिया कि यह सभा चापलूसों का एक चुनिंदा समूह था। उन्हें आज की घटनाएँ याद आ गईं। हालाँकि वह जानती

थीं कि उनकी उपस्थिति में हो रही इस निरर्थक विकृति पर बहस करना व्यर्थ था, फिर भी वह वक्ताओं को बीच-बीच में टोकने से खुद को रोक नहीं पाईं। "...प्राथमिक स्रोत ऐसा नहीं कहते! मुस्लिम दरबारी इतिहासकारों द्वारा स्वयं दर्ज की गई बातों को नकारना वैज्ञानिक नहीं है...जब तक हम इतिहास की कड़वी सच्चाइयों को स्वीकार नहीं करेंगे, तब तक हम इतिहास से मिलने वाले सच्चे सबक नहीं सीख पाएंगे...हिंदू समाज ने मनु की गलतियों को ईमानदारी से स्वीकार किया है, उन गलतियों के लिए माफी मांगी है और पिछले सौ वर्षों से उन्हें सुधार रहा है। इस देश में दलितों और हिंदू समाज के पिछड़े वर्गों के साथ भेदभाव करना गैरकानूनी है। उन्हें कानूनी और पुलिस सुरक्षा दी जाती है। भेदभाव करने वालों को कड़ी सजा दी जाती है। उन्हें मंदिरों में पुजारी बनने की अनुमति दी गई है। हम मुस्लिम समाज को सुधार का वही अवसर क्यों नहीं दे रहे हैं? सुधार शिक्षा से शुरू होता है, की गई गलतियों को समझने से शुरू होता है।" और यह समझ इतिहास के घटित तथ्यों के आधार पर किए गए अध्ययन से ही आती है।

इस पर, दाढ़ी-मूंछ साफ किए हुए एक प्रोफेसर ने उनसे अत्यंत विनम्र स्वर में पूछा, 'मान लेते हैं कि मुस्लिम शासकों के अत्याचारों के बारे में आप जो कहती हैं वह सच है। लेकिन क्या आज हमारे मुस्लिम भाइयों को सताने के लिए, उनके खिलाफ नफरत भड़काने के लिए, इसे आधार बनाना उचित है? क्या इससे राष्ट्रीय एकता हासिल होगी?'

इतिहास पढ़ने का उद्देश्य किसी का उपहास या निंदा करना नहीं है। और ऐसा होना भी नहीं चाहिए। सर्वोत्तम स्थिति में, इतिहास का अध्ययन हमें अपने पूर्वजों के गुणों और बुराइयों को निष्पक्ष और ईमानदारी से समझने में मदद करे और उन सीखों का उपयोग अपने वर्तमान और भविष्य को संवारने के लिए करे। और इसमें सच्चाई को बिना किसी पूर्वाग्रह के देखना शामिल है; इसमें पूर्ण ईमानदारी शामिल है—सच्चाई का सामना करना—और इस तरह के सेमिनार ऐसा होने से रोक रहे हैं। आप सही कह रहे हैं। आज के मुसलमान अतीत में मुस्लिम राजाओं द्वारा किए गए कार्यों के लिए जिम्मेदार नहीं हैं। लेकिन जब तक वे ईमानदारी से इस सच्चाई को स्वीकार नहीं करते कि हाँ, उनके पूर्वजों ने वे अत्याचार किए थे, इसका सीधा सा मतलब होगा कि वे उन अत्याचारों को उचित ठहराते रहेंगे। हाल ही में...लगभग हमारे ही समय में, जापानियों ने खुले तौर पर, ईमानदारी से कोरिया के साथ किए गए अपने कार्यों पर

खेद व्यक्त किया। इससे हमें क्या पता चलता है? और फिर हमारे पास जर्मनी का उदाहरण है, जिसने न केवल माफी मांगी बल्कि शपथ भी ली कि वह नाजियों द्वारा किए गए भयानक अपराध को कभी नहीं दोहराएगा—आप जानते हैं कि इससे क्या संदेश मिलता है? इसमें लिखा है: हम अपने पूर्वजों के अपराधों का समर्थन नहीं करते, हम अलग हैं, हम इंसान हैं और हम सभ्य हैं। और आप भले लोग, आप इस देश के मुसलमानों को इस तरह का नैतिक साहस विकसित नहीं करने दे रहे हैं। बोध—यही वह है जो कड़वी सच्चाइयों को स्वीकार करने से मिलता है। बोध तब आता है जब हम ईमानदारी से अतीत की गलतियों को स्वीकार करते हैं और इससे स्वतः ही वह जिम्मेदारी पैदा होती है जो हमें उन्हीं गलतियों को दोहराने से रोकती है। राष्ट्रीय एकता और भाईचारा तभी बेहतर ढंग से हासिल किया जा सकता है जब वे सत्य की नींव पर टिके हों। जैसे हिंदू समाज ने मनु की गलतियों को स्वीकार किया है। है ना?

अध्यक्ष के बार-बार दोहराए जाने वाले हस्तक्षेप, जिन्हें उसने पूरी तरह से अनदेखा कर दिया था, भी उतने ही तीव्र थे: 'अपना दृष्टिकोण साझा करने के लिए धन्यवाद। श्रोताओं ने आपको सुन लिया है। कृपया दूसरों को भी अपना दृष्टिकोण साझा करने दें।' उसके मन के एक कोने में यह बात खटक रही थी कि अगर प्रोफेसर की बेटी नाज़िर की बेगम न होती, तो वह उसे कब का सत्र से बाहर निकाल चुके होते।

~

नरसपुरा लौटने के बाद, उन्होंने संगोष्ठी के चर्चा विषय से सीधे संबंधित सामग्री - विशिष्ट इतिहास, प्राथमिक स्रोत और दरबारी इतिहासकारों द्वारा लिखित इतिहास - का अध्ययन शुरू किया। फिर उन्होंने संदर्भों की एक सूची तैयार करना शुरू किया। उनका इरादा इस सूची की प्रतियां छापकर अगली संगोष्ठी में प्रस्तुत करना था।

एक महीने बाद, उन्हें डॉ. राजवर्धन का एक पत्र मिला।

मैडम रजिया को मेरा सलाम।

मैं आपसे दोबारा मिलने की खुशी ज़ाहिर करने के लिए यह पत्र लिख रहा हूँ। मुझे उम्मीद है कि आप इस महीने की 24, 25 और 26 तारीख को होने वाले दूसरे सेमिनार में ज़रूर शामिल होंगे। इस बार मैं आपसे इतिहास से जुड़े कुछ पहलुओं पर विस्तार से चर्चा करना चाहता हूँ। उम्मीद है आप स्वस्थ होंगे।

आपका,

डॉ. राजवर्धन

उन्हें कोई निमंत्रण पत्र नहीं मिला था। असली निमंत्रण पत्र मिलने से पहले वह यह पत्र नहीं लिख सकते थे। वह हैरान रह गईं। फिर उन्हें अचानक समझ आया और वह परेशान हो गईं। क्या सत्यमेव जयते (सत्य की ही जीत होती है) जैसे राष्ट्रीय आदर्श वाक्य वाले देश में यही सब चलता है?

~

वह पूरे दो सप्ताह तक परेशान रही। फिर जिज्ञासा ने उसे सताने लगी। दूसरे सेमिनार में क्या हुआ, यह जानने के लिए वह बेचैन हो गई। सबसे आसान विकल्प था डॉ. राजवर्धन को पत्र लिखना, लेकिन उसने ऐसा न करने का फैसला किया। लिखित रिकॉर्ड हमेशा जोखिम भरा साबित हो सकता था। फोन करना बेहतर विकल्प था। उसने वह कार्ड ढूंढा जो उन्होंने उसे पहले सेमिनार के आखिरी दिन दिया था। उस पर उनका घर का फोन नंबर छपा हुआ था। सरकार द्वारा पूरे भारत को जोड़ने के रोज़ाना के वादे के बावजूद, नरसपुरा में अभी भी एक भी टेलीफोन लाइन नहीं थी। अगली सुबह वह कुनिगल स्टेशन पर उतरी और एक सार्वजनिक बूथ से उन्हें फोन किया। चार घंटी बजने के बाद उन्होंने फोन उठाया।

'रजिया जी! बधाई हो! आपने अकेले ही भारत में इतिहास लेखन की दिशा बदल दी है!' उन्होंने उत्साहपूर्वक कहा।

'मैं...उह...क्या आप कृपया समझा सकते हैं?'

'कृपया एक पल के लिए लाइन पर बने रहिए। मैं यह तंबाकू थूककर आपके साथ जुड़ जाता हूँ।' उसने रिसीवर नीचे रखने की आवाज़ सुनी। लगभग एक मिनट बाद, उसने उसे गला साफ़ करते हुए सुना, 'आप जानते हैं, जातिवादी इतिहासकार...नहीं, नहीं, सांप्रदायिक इतिहासकार...आप जानते हैं, सांप्रदायिक इतिहासकार वे हैं जो मुस्लिम राजाओं को धार्मिक कट्टरपंथी कहते हैं...तो ये सांप्रदायिक इतिहासकार औरंगज़ेब को इस तथ्य को साबित करने के लिए सबसे अच्छे उदाहरण के रूप में पेश करते हैं कि मुस्लिम राजा धार्मिक कट्टरपंथी थे। लेकिन फिर, आप जानते हैं, वह कट्टरपंथी नहीं था...वह सहिष्णु, धर्मनिरपेक्ष था...या...खैर, इस सेमिनार में लोगों ने यही निष्कर्ष निकाला है। उस पर शोध करने के लिए विशेषज्ञों का एक पैनल गठित किया गया है और वे लेखों, शोध पत्रों...कुछ पुस्तकों की एक श्रृंखला प्रकाशित करेंगे, जो उसे एक सख्त, लेकिन सक्षम और धर्मनिरपेक्ष शासक के रूप में चित्रित करेंगे। दो साल इंतज़ार कीजिए। औरंगज़ेब हमारी आँखों के सामने बदल जाएगा।' वह हँसा,

‘ओह! और क्या आप जानते हैं कि काशी विश्वनाथ मंदिर कैसे नष्ट हुआ था?’ औरंगज़ेब अपने दल के साथ काशी जा रहा था, जिसमें हिंदू राजा और उनकी पत्नियाँ शामिल थीं। जब वे बनारस के पास पहुँचे, तो हिंदू राजाओं ने औरंगज़ेब से अनुरोध किया कि उन्हें वहाँ ठहरकर भगवान विश्वनाथ की पूजा करने की अनुमति दी जाए। औरंगज़ेब न केवल अन्य धर्मों के प्रति सहिष्णु था, बल्कि वह सभी धर्मों के लोगों की आस्थाओं को सक्रिय रूप से प्रोत्साहित करता था। इसलिए उसने न केवल उनका अनुरोध स्वीकार किया, बल्कि उनके लिए व्यापक सुरक्षा व्यवस्था भी की। बनारस तक जाने वाले पाँच मील के पूरे रास्ते में सैनिकों की बटालियनें तैनात की गईं। हिंदू राजाओं की पत्नियों ने गंगा में स्नान किया और विश्वनाथ मंदिर में प्रवेश किया। उन्होंने अपनी पूजा पूरी की और मंदिर से बाहर आईं। एक रानी को छोड़कर... क्या आप वहाँ हैं?

‘मैं सुन रही हूँ। कृपया जारी रखें,’ उसने कहा।

‘अरे! मुझे लगा लाइन कट गई। कुछ आवाज़ तो करो ताकि मुझे पता चले कि तुम वहाँ हो। हे हे...’

'ठीक है।'

ठीक है। तो एक रानी को छोड़कर बाकी सभी मंदिर से बाहर आ गईं। लापता रानी की तलाश शुरू की गई। उन्होंने मंदिर के हर कोने की छानबीन की, लेकिन वह नहीं मिलीं। जब बादशाह को इस बात का पता चला, तो वह बहुत क्रोधित हुआ। उसने अपने उच्च अधिकारियों को रानी की तलाश में भेजा। इन अधिकारियों ने हर मूर्ति को थपथपाया और हिलाया, तब उन्हें पता चला कि दीवार में खुदी हुई गणेश जी की आदमकद मूर्ति थोड़ी ढीली है। उन्होंने उसे जोर से धक्का दिया और वह क्षैतिज रूप से पीछे खिसक गई, जिससे एक भूमिगत मार्ग की ओर जाने वाली सीढ़ियाँ दिखाई दीं। वे उस मार्ग में नीचे गए और वहाँ उन्हें अंततः लापता रानी मिल गईं। उनके साथ बलात्कार हुआ था और वह लगातार रो रही थीं। यह भूमिगत मार्ग विश्वनाथ मंदिर के शिवलिंग के ठीक नीचे था। हिंदू राजा क्रोधित हो गए और उन्होंने बादशाह पर उस अपराधी को ढूंढकर उसे कड़ी सजा देने का दबाव डाला।

“एक सम्राट के रूप में, जिसने तपस्या का उपदेश दिया और उसका पालन किया, और धर्म में पूर्ण पवित्रता से कम कुछ भी स्वीकार नहीं किया, औरंगजेब अपने हिंदू राजाओं की पीड़ा को तुरंत समझ गया। उनके सबसे पवित्र मंदिर को अपवित्र

कर दिया गया था। और इसका दोषी विश्वनाथ मंदिर के मुख्य पुजारी, महंत के अलावा और कोई नहीं हो सकता था। गर्भगृह में किसी और को प्रवेश की अनुमति नहीं थी। इसलिए उसने शिवलिंग को स्थानांतरित करने, मंदिर को ध्वस्त करने और महंत को कैद करने का आदेश दिया। यह शर्मनाक ऐतिहासिक घटना हिंदू धर्म में व्याप्त भ्रष्टाचार को भी दर्शाती है। इस समय, हमारे इतिहासकार इस भूमिका में उन्हें प्रमाणित करने वाली सामग्री खोजने में व्यस्त हैं...”

लक्ष्मी ने उसे बीच में ही रोक दिया। “हाँ, उसने उस मंदिर को इसलिए ध्वस्त कर दिया क्योंकि वह अपवित्र हो गया था। तो फिर इस बात का क्या स्पष्टीकरण है कि उसने ध्वस्त मंदिर की अपवित्र सामग्री का उपयोग पवित्र मस्जिद के निर्माण में क्यों किया? मथुरा के केशवरया मंदिर में वास्तव में किस प्रकार की अपवित्रता हुई थी? उदयपुर महल के सामने स्थित मंदिर के विध्वंस के बारे में वे क्या मनगढ़ंत कहानी लिखेंगे? और उदयपुर और उसके आसपास के एक सौ बहत्तर मंदिरों का क्या? चित्तौड़ के तिरसठ मंदिरों का क्या? और आमेर के छियासठ मंदिरों का क्या? मंदिरों के विनाश का जो विवरण है, उस 'मसीर-ए-आलमगिरी' के बारे में वे क्या कहेंगे?”

'अरे, आपको अंदाजा भी नहीं है! जब आपके पास असीमित सरकारी धन और इतिहास के एक वैचारिक संस्करण को थोपने की हठधर्मी इच्छाशक्ति हो, तो कल्पनाशीलता स्वतः ही उपजाऊ हो जाती है। आप जो चाहें, वैसी कल्पना गढ़ सकते हैं।'

लेकिन क्या आपने सेमिनार में इस बेतुकी बात का विरोध नहीं किया था?

‘रज़िया जी, ये मनगढ़ंत बातें कभी किसी सेमिनार में चर्चा का विषय नहीं बनेंगी। इन्हें खास लोगों के चुने हुए समूह द्वारा गढ़ा जाता है। फिर धीरे-धीरे...लगभग लापरवाही से इन्हें सार्वजनिक कर दिया जाता है। एक जैसी सोच वाले लोग इन्हें तुरंत अपना लेते हैं और इन्हें प्रामाणिक सत्य के रूप में पेश करते हैं।’ वह हँसे। ‘स्कॉच का असर तो होता ही है, मैडम। जब उन्होंने मुझे औरंगज़ेब पर हुई उस चर्चा में शामिल किया, तो उन्हें लगा कि मैं भी उन्हीं में से एक हूँ।’

सभी प्रमुख प्रकाशनों में राष्ट्रीय एकता सम्मेलन की खबरें छपीं। अंग्रेजी अखबारों ने प्रोफेसर के उद्घाटन और समापन भाषण के महत्वपूर्ण अंशों को प्रमुखता से प्रकाशित किया। अन्य वक्ताओं को भी उचित प्रचार मिला। लक्ष्मी का नाम गायब था। ऐसा लग रहा था मानो वह न केवल सम्मेलन में उपस्थित नहीं हुई थीं, बल्कि मानो उनका अस्तित्व ही न हो। संपादकीय, विचार-विमर्श, आमंत्रित लेख, सिंडिकेटेड कॉलम और संपादक को लिखे पत्र एक जैसे थे। केवल शब्द अलग थे। वही घिसा-पिटा वाक्य, जिसकी उन्हें अब आदत हो चुकी थी और जिसका वह कभी हिस्सा थीं: अंग्रेजों की फूट डालो और राज करो की नीति ने हिंदुओं और मुसलमानों के बीच गहरा अविश्वास पैदा कर दिया, जो सदियों से पूर्ण भाईचारे की भावना से रहते आए थे। यह नीति इसलिए बेहद सफल रही क्योंकि कुछ इतिहासकार आज भी उन्हीं झूठों को दोहरा रहे थे। वे इस सच्चाई को स्वीकार नहीं करना चाहते थे कि मुस्लिम राजाओं ने पैगंबर मोहम्मद के सार्वभौमिक भाईचारे के उच्च सिद्धांत के अनुसार ही शासन किया था। जब तक ऐसे झूठों को जड़ से उखाड़ा नहीं जाता, तब तक सार्थक राष्ट्रीय एकता संभव नहीं थी। इसे पढ़ना बेहद घृणित था और इससे वह चिंतित हो गई। उसने निष्कर्ष निकाला कि राष्ट्र की सामूहिक बुद्धि एक पागलपन के वायरस से संक्रमित हो गई है।

तब से, वह प्रतिदिन अखबारों को खंगालने लगीं और पाया कि हालांकि ऐसे लेखों की संख्या कम होती जा रही थी, फिर भी वे कभी-कभार प्रकाशित हो जाते थे। उन्हें एक भी ऐसा लेख नहीं मिला जो कोई वैकल्पिक या विरोधी दृष्टिकोण प्रस्तुत करता हो। एक महीने बाद, लक्ष्मी ने वह विरोधी दृष्टिकोण लिखने का निश्चय किया। उन्होंने एक लंबा निबंध लिखा जिसकी शुरुआत दिल्ली में आयोजित सेमिनार में उनकी यात्रा और वहां पूछे गए प्रश्नों से हुई, और यह भी कि उन्हें एक भी संतोषजनक और तथ्यात्मक रूप से सही उत्तर नहीं मिला। वह बैंगलोर गईं, इसे टाइप करवाया और प्रतियां तैयार करवाईं और एक प्रति एक व्यापक रूप से प्रसारित अंग्रेजी दैनिक को और एक प्रति एक कन्नड़ दैनिक को भेजी, जो अपने 'साहसी पत्रकारिता' पर गर्व करता था।

एक हफ़्ता बीत गया, फिर दो, फिर तीन, और फिर चार। कुछ नहीं हुआ। किसी भी अख़बार ने इसे प्रकाशित नहीं किया। दोनों में से किसी भी संपादक की ओर से उन्हें एक संदेश तक नहीं मिला जिसमें प्रकाशन न कर पाने का खेद व्यक्त किया गया हो। उन्होंने दोनों को पत्र लिखकर पूछा कि 'आपने विपरीत मत क्यों प्रकाशित नहीं किया' और इसे पंजीकृत डाक से भेज दिया।

अभी तक कोई जवाब नहीं मिला।

वह बैंगलोर गईं और वहां अंग्रेजी दैनिक के रेजिडेंट एडिटर से मिलीं। फिल्म निर्माता के तौर पर अपने दिनों से ही वह आनंदन को जानती थीं। आनंदन ने उनका गर्मजोशी से स्वागत किया और कोक का ऑर्डर दिया। उन्होंने फालतू की बातें छोड़कर सीधे मुद्दे पर बात की।

‘ओह?’ उसने खुले मुँह से आश्चर्य जताते हुए कहा, ‘मैं...मुझे सच में नहीं पता। मुझे नहीं पता। मेरा मतलब है, मुझे लगता है कि उप-संपादक ने इसे प्रकाशित नहीं किया।’

‘ज़रूर। चलो उसे फोन करके पता लगाते हैं। यह मामूली बात नहीं है। मैं इसे ऐसे ही जाने नहीं दे सकती,’ उसने ठंडे स्वर में कहा।

'आपको यह तो पता ही होगा कि बाहरी लोगों की मौजूदगी में उससे पूछताछ करना अच्छा नहीं लगता।'

‘ठीक है। मेरे निबंध की एक प्रति ले आओ और अभी पढ़ लो। मैं इंतजार करूँगी। अगर तुम्हारे पास प्रति नहीं है...तो ये लो,’ उसने अपना बैग खोला और कागजों का एक बंडल उसकी मेज पर रख दिया।

उसके चेहरे पर पल भर में आए बदलाव ने उसे बता दिया कि वह समझ गया था कि वह घिर गया है।

‘कृपया इसे यहीं छोड़ दीजिए। मैं... अभी बहुत व्यस्त हूँ। मैं इसे पढ़ लूँगा। मैं आपसे वादा करता हूँ,’ उसने कहा। उसकी आवाज़ में अब हताशा झलक रही थी।

ठीक है। मुझे बता दीजिए कि आपसे दोबारा कब मिलना चाहिए... और मैं यह स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि मुझे अपना नाम छपने में ज़रा भी दिलचस्पी नहीं है। यह सिर्फ़ मेरी रचना प्रकाशित करवाने की इच्छा से कहीं बढ़कर है। यह ऐसी बात है जिसे हर किसी को जानना चाहिए, जानना ही होगा। इस रचना के पीछे कई वर्षों का गहन शोध लगा है। इसे हल्के में न लें।

‘ये नीतिगत निर्णय हैं, महोदया। ये मेरे नियंत्रण में नहीं हैं। इस तरह के निर्णय मुख्यालय द्वारा लिए जाते हैं। मुझसे ऐसे प्रश्न न पूछें जिनका उत्तर मेरे पास न हो।’ उसने अपने हाथ ऊपर उठाए और उन्हें चौड़ा फैला दिया, हथेलियाँ छत की ओर थीं, जो उसकी लाचारी का संकेत था।

‘तो फिर मुझे अपने मुख्यालय का पता बताइए,’ उसने मांग की।

'खुशी से,' उसने कहा और उसे एक कार्ड थमा दिया।

उसने अपने निबंध की एक प्रति पत्र सहित अखबार के मुख्यालय को भेजी। वहां से भी कोई जवाब नहीं आया।

फिर वह कन्नड़ दैनिक के कार्यालय गईं। संपादक ने उनका बड़े उत्साह से स्वागत किया और पुरानी यादों में खो जाने वाली लंबी बातचीत शुरू कर दी। आपने शहर क्यों छोड़ा? क्या आपको वह गाँव बहुत पसंद है... उसका नाम क्या था? हम आपको याद करते हैं... बैंगलोर का पूरा कला जगत आपको याद करता है। कितनी प्रतिभा है! पाँच साल। बहुत लंबा समय। रंगमंच में नए रुझान। नए सितारे। ओह माफ़ कीजिए... मैंने आपको सितारा कहकर आपकी गरिमा को ठेस नहीं पहुँचाई, लेकिन फिर भी... उन्होंने मुस्कुराते हुए सिर हिलाया और उचित शब्दों में जवाब दिया। बातचीत अचानक व्यक्तिगत हो गई।

‘तुम्हें पता है, तुम और आमिर को अलग नहीं होना चाहिए था। मुझे अफ़सोस है। मतलब, सिर्फ़ मैं ही नहीं, यहाँ हर कोई तुम्हारे लिए बुरा महसूस कर रहा है। अगर उसे शादी करनी ही थी, तो बुर्का पहनने वाली लड़की से ही क्यों? समझदार महिलाओं की कमी कहाँ थी? उसके बाद से वो एकदम... एकदम चुप हो गया है। भला उससे निजी सवाल कौन पूछेगा जब वो खुलकर बात करने को तैयार ही नहीं है?’

‘क्या महिला मुक्ति आंदोलन के लोगों ने अपने फेफड़े नहीं फाड़ दिए थे? मेरा मतलब है, बहुविवाह, अन्याय और बाकी सब?’ उसने पूछा।

‘आप जानती हैं कि कैसा होता है। अल्पसंख्यक। कोई कुछ नहीं बोलता। रचनात्मक बहरापन। और क्या मैं आपको बताऊँ कि आप यहाँ क्यों आई हैं?’ वह रुका और उसे लगभग शरारती लेकिन समझदारी भरी नज़र से देखते हुए बोला, ‘आप यहाँ मुझसे यह पूछने आई हैं कि मैंने आपका लेख क्यों नहीं छापा। क्या मैं सही कह रहा हूँ? यह एक उत्कृष्ट रचना है। मैं समझ सकता हूँ कि आपने इसे लिखने में

कितनी मेहनत की होगी। और मैं डरा हुआ हूँ। मैं इसे प्रकाशित नहीं कर सकता। मैं नहीं करूँगा। वे मेरे दफ्तर में भीड़ लगा सकते हैं। वे पत्थर फेंक सकते हैं, फर्नीचर तोड़ सकते हैं और मेरे कर्मचारियों और मुझ पर हमला कर सकते हैं। वे इस जगह को आग लगा सकते हैं या रास्ते में हमारी वैन पर पेट्रोल डालकर माचिस जला सकते हैं। कुछ भी हो सकता है। अरे, वे मेरी हत्या भी कर सकते हैं। अगर इनमें से कुछ भी नहीं हुआ, तो भी मेरी नौकरी पक्की है। मुझे गैरजिम्मेदारी के लिए निकाल दिया जाएगा: एक संपादक के रूप में, क्या मुझे कुछ खास तरह के लेख प्रकाशित करने के परिणामों की जानकारी नहीं थी? जैसा कि मैंने कहा, मैं जोखिम नहीं ले सकता।' फिर सत्ताधारी पार्टी है जो इस तरह के लेखन और उन्हें प्रकाशित करने वाले अखबारों पर कड़ी नजर रखती है। अगर वह हमारे लिए मुसीबत खड़ी करने का फैसला करती है, तो यकीन मानिए, वह लाखों तरीकों से ऐसा कर सकती है। आप अपना निबंध किसी भी अखबार को भेज सकते हैं: मैं आपको गारंटी देता हूं, हर संपादक मेरी तरह ही सोचेगा।

हम किस तरह के लोकतंत्र में जी रहे हैं? शोध की स्वतंत्रता, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता... प्रेस की स्वतंत्रता प्रतिबंधित है। डर। चिंताजनक विचार।

उसने उसे धन्यवाद दिया और चली गई। शाम को वह नरसपुरा पहुँची और खूब सोचने लगी। अब तक वह अपने पिता के पुस्तकालय की सारी किताबें पढ़ चुकी थी, साथ ही अपनी खरीदी हुई किताबें भी। दुनिया में पढ़ने के लिए बहुत कुछ था और वह उन्हें पढ़ना शुरू कर सकती थी, लेकिन इसका क्या फायदा? इससे केवल और सबूत इकट्ठा होंगे, मुख्यधारा के समाज में कोई बदलाव नहीं आएगा। वह इतिहास की किताब लिख सकती थी, लेकिन उसमें कोई उत्साह नहीं था। उसने फैसला किया कि वह अपने उपन्यास को आखिरी बार संवारेगी और उसे प्रकाशित करेगी।

~

उपन्यास पूरा करने में उन्हें तीन सप्ताह से भी कम समय लगा। यह एक पूर्ण उपन्यास से ज़्यादा एक लघु उपन्यास था। उन्होंने इसे टाइप करवाया और पांडुलिपि अलग-अलग चार प्रकाशकों को भेजी। फिल्म निर्माता के रूप में उनकी प्रसिद्धि ने उनकी थोड़ी मदद की। प्रकाशकों ने उनका नाम सुना था और उनकी पांडुलिपि का खुले दिल से स्वागत किया और उसे पूरी दिलचस्पी से पढ़ा। उनकी प्रतिक्रिया एक ही थी: यह एक उत्कृष्ट कृति है, लेकिन हम इसे प्रकाशित नहीं कर सकते। वे बहुत

हंगामा करेंगे। वे हमारी दुकानें जला सकते हैं और हमें शारीरिक रूप से नुकसान पहुंचा सकते हैं। या सरकार इस पर प्रतिबंध लगा सकती है। क्षमा करें, लेकिन हम इसे प्रकाशित नहीं कर सकते। आप कुछ और लिखें। हम वादा करते हैं कि इसे बिना देरी किए प्रकाशित करेंगे।

मैं कागज, छपाई और जिल्दबंदी का खर्च उठाऊंगा। अगर किताब बिक जाती है, तो आप मुझे पैसे वापस कर सकते हैं। अगर कोई अप्रिय घटना होती है, तो नुकसान मेरा होगा।

वे अपने इनकार पर अड़े रहे।

वह गुस्से से उबल रही थी।

मैं एक कलाकार हूँ। मैं एक ऐसा लेखक हूँ जिसने एक नया उपन्यास लिखा है। मुझे इस मूक आतंकवाद से डरने की ज़रूरत नहीं है जो उन्हें मेरी रचना प्रकाशित करने से रोकता है।

वह एक प्रिंटिंग प्रेस में गई, जिसे उसने अच्छा समझा, और दर के बारे में पूछताछ की। मालिक ने बताया कि एक हजार प्रतियां छापने में तीस हजार रुपये लगेंगे। इस रकम में बाइंडिंग भी शामिल थी। उसने कुछ अग्रिम राशि दी और नरसपुरा लौट आई।

प्रिंटर ने तय समय पर किताबें पहुंचा दीं। उन्होंने प्रत्येक पुस्तक की एक समीक्षा प्रति प्रमुख दैनिक समाचार पत्रों और पत्रिकाओं को एक पत्र के साथ भेजी, जिसमें उनसे समीक्षा करने का अनुरोध किया गया था। उन्होंने जाने-माने बुद्धिजीवियों और शिक्षाविदों को भी मानद प्रतियां भेजीं और उनसे प्रतिक्रिया मांगी। फिर उन्होंने तीन लोकप्रिय पुस्तक दुकानों से संपर्क किया और प्रत्येक को सौ प्रतियां दीं और उनसे कहा कि यदि उनकी किताबें बिकती हैं तो वे उन्हें पैसे दें।

कोई प्रतिक्रिया नहीं आई। किसी ने न तो कार्ड लिखा और न ही फोन करके बताया कि उन्हें उनकी किताब मिल गई है। वह दिन भर उदास और परेशान रहती थी, क्योंकि उसे लगता था कि इस चुप्पी के पीछे बौद्धिक साजिश रची जा रही है।

और फिर वो आ ही गया। एक व्यापक रूप से प्रसारित कन्नड़ समाचार पत्र के रविवार के परिशिष्ट में एक लंबी समीक्षा के रूप में।

एक ऐसा उपन्यास जो राष्ट्र के साथ विश्वासघात करता है

जब 1947 में इस महान राष्ट्र का विभाजन हुआ, तो मातृभूमि के प्रति प्रेम के कारण यहीं रह गए हमारे भाई भारत के अल्पसंख्यक बन गए। शुरुआत में, यह उपन्यास केवल उनकी भावनाओं को ठेस पहुँचाने और उनके प्रति घृणा उत्पन्न करने के उद्देश्य से लिखा गया प्रतीत होता है। उपन्यास के कुछ हिस्सों में, उकसावा इतना गंभीर है कि यह समाज के कुछ वर्गों की भावनाओं को भड़का सकता है और उन्हें हमारे निर्दोष भाइयों के खिलाफ शारीरिक हिंसा करने के लिए प्रेरित कर सकता है, जिन्हें बिना किसी गलती के पीड़ित किया जा रहा है। यह उपन्यास अपनी लेखिका लक्ष्मी उर्फ रजिया बेगम के सड़े हुए दिमाग की दुर्गंध को उजागर करता है। यह उपन्यास पन्ने-दर-पन्ने इस्लाम के प्रति अतार्किक घृणा से भरा हुआ है, जबकि पूरी दुनिया जानती है कि 'इस्लाम' शब्द का अर्थ 'शांति' है। लेकिन लेखिका ने इस्लाम को एक आतंकवादी धर्म के रूप में चित्रित किया है, जिससे हमारे अल्पसंख्यकों की आस्थाओं का अपमान हुआ है। हम उस दूसरे कुटिल उद्देश्य को भी अनदेखा नहीं कर सकते जिसे उसने पूरा करने का प्रयास किया है लेकिन असफल रही है: मनु द्वारा पाँच हज़ार वर्ष पूर्व स्थापित पदानुक्रमित हिंदू समाज के अत्याचारों को छिपाना।

सबसे बढ़कर, लेखिका ने स्वयं संविधान का दुरुपयोग किया है। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अधिकार का प्रयोग करने की आड़ में, उन्होंने एक खतरनाक पुस्तक लिखी है—जो साहित्यिक दृष्टि से गंभीर प्रतीत होती है—और जिसमें सांप्रदायिक घृणा भड़काने की अपार क्षमता है। यह एक खतरनाक पुस्तक है और यदि इसे तुरंत प्रतिबंधित नहीं किया गया, तो मौजूदा सरकार को इसके भयावह परिणामों का सामना करना पड़ेगा।

—एक समीक्षक

समीक्षक ने अपना असली नाम नहीं बताया था। लक्ष्मी ऐसे लोगों को जानती थी। वे घटिया किस्म के लोग थे जो विचारधारा की सेवा में अपना सिर गड़ा देते थे, इसलिए उनके असली नाम का कोई महत्व नहीं था। अपमानजनक समीक्षा से उसे कोई फर्क नहीं पड़ा। उसने सोचा कि एक तरह से यह अच्छा ही हुआ। कम से कम यह बात तो फैल जाएगी कि ऐसा उपन्यास भी है। इसके बाद, उसे पुस्तक पर प्रतिबंध लगने की आशंका से थोड़ी चिंता होने लगी। अगर वाकई प्रतिबंध लग गया, तो उसे समझ नहीं आ रहा था कि वह क्या कर सकती है। आज रविवार था। सरकारी दफ्तर और

किताबों की दुकानें बंद होंगी। उसने कल बेंगलुरु जाकर उन किताबों की दुकानों पर जाकर यह पता लगाने का फैसला किया कि उसके उपन्यास का क्या हाल है।

फिर उसने समीक्षा के बारे में सोचा। यह वास्तव में समीक्षा नहीं थी। इसमें कथानक, विषय, तकनीक या गद्य का कोई ज़िक्र नहीं था, और उसने अपने द्वारा प्रस्तुत किए गए विस्तृत ऐतिहासिक प्रमाणों का भी पूरी तरह से उल्लेख नहीं किया था। यह लेखक पर किए गए तीखे और घिसे-पिटे हमलों की एक निरंतर धारा मात्र थी, एक घटिया, सतही स्तर की राजनीतिक प्रचार-प्रसार का रूप। किसी कारणवश, उसे अपना बीता हुआ जीवन याद आ गया। अगर उसके पिता की मृत्यु के बाद जीवन न बदला होता, अगर वह यहाँ न आई होती, तो उसने भी कमोबेश इसी तरह की समीक्षा लिखी होती।

उसने अपना उपन्यास दोबारा पढ़ा और उसे कोई बड़ी त्रुटि नहीं मिली। उपन्यास में वर्णित अधिकांश ऐतिहासिक घटनाओं के साथ फुटनोट दिए गए थे, लेकिन सभी विवरणों में प्राथमिक स्रोतों और उद्धरणों का उल्लेख नहीं था। उसे इस बात का अफसोस था कि उसने पुस्तक के अंत में एक विस्तृत ग्रंथसूची देने के बारे में नहीं सोचा था। अभी भी बहुत देर नहीं हुई थी। वह जल्दी से एक ग्रंथसूची तैयार कर सकती थी और उसे परिशिष्ट के रूप में दे सकती थी।

~

उस शाम एक पुलिस जीप उसके घर के सामने आकर रुकी। उसमें से एक सब-इंस्पेक्टर और पांच कांस्टेबल उतरे। कुछ मिनट बाद, जीप से कुछ मीटर पीछे एक ट्रक खड़ा हुआ। उसमें से लगभग दस कांस्टेबल उतरे।

उनके आने का कारण स्पष्ट था। इसलिए किताबों पर प्रतिबंध को तेज़ी से लागू किया जा रहा था। वह वहाँ खड़ी थी, समझ नहीं पा रही थी कि क्या करे और उसने एक बाहरी व्यक्ति की तरह अपनी स्थिति को समझने की कोशिश की। यह एक और नया अनुभव था।

सब-इंस्पेक्टर उसके पास गया और बोला, 'क्या आप लक्ष्मी उर्फ रजिया बेगम हैं?'

उसने सिर हिलाया।

हमें सरकार से आपकी पुस्तक की सभी प्रतियां जब्त करने के आदेश मिले हैं। कृपया सहयोग करें।

उसके जवाब का इंतज़ार किए बिना, उसने पुलिसकर्मियों को इशारा किया, जो तुरंत अंदर आए और तलाशी अभियान शुरू कर दिया। उन्होंने घर की पूरी तरह से छानबीन की, बर्तनों के पीछे ऐसी जगहें ढूंढीं जहाँ इसे बेगुनाह छिपाया जा सकता था। वे अटारी पर चढ़े और बिस्तर और तकियों के नीचे भी देखा।

कुछ समय बाद सब-इंस्पेक्टर की नज़र आंगन में पड़े बंडलों पर पड़ी। बीस-बीस के बंडलों में छह सौ प्रतियां थीं। प्रत्येक बंडल पर उपन्यास का नाम छपा हुआ एक स्टिकर लगा था। उसने अपने तीनों कांस्टेबलों को उन्हें ट्रक में रखने का आदेश दिया।

फिर सब-इंस्पेक्टर ने अपने अध्ययन कक्ष में प्रवेश किया, कमरे में एक संक्षिप्त नज़र डाली और चिल्लाकर कहा, 'इन सभी को ले लो!' कांस्टेबल उस सादे कमरे में उमड़ पड़े, अलमारियां खोलीं और किताबें बाहर निकालीं, और एक बार में छह या सात किताबें ऐसे उठा लीं जैसे उन्हें गले लगा रहे हों।

'बस करो!' लक्ष्मी चिल्लाई और दरवाज़ा रोक दिया। 'पहली बात तो तुमने मुझे ज़ब्ती का आदेश नहीं दिखाया। दूसरी बात, आदेश मेरे लिखे उपन्यास की प्रतियों को ज़ब्त करने का है, इन्हें नहीं। ये तो बहुत पुरानी किताबें हैं, कुछ तो पचास साल से भी ज़्यादा पुरानी हैं। कृपया इन्हें वहीं रहने दो।'

"महोदया, हमें यहाँ मिलने वाली सभी पुस्तकों को लाने का आदेश दिया गया है। इन्हें वर्गीकृत करना हमारी ज़िम्मेदारी नहीं है। हम वही करते हैं जो हमें कहा जाता है। आप अदालत में आवेदन देकर इन्हें वर्गीकृत करवा सकती हैं," उसने शांत भाव से कहा और एक कांस्टेबल को इशारा किया। पल भर में ही कांस्टेबल ने उसका कंधा पकड़कर उसे ज़बरदस्ती रास्ते से हटा दिया।

कुछ ही मिनटों में सब कुछ खत्म हो गया। उसके घर से सारी किताबें निकाल ली गईं, जो अब ट्रक में बेतरतीब ढंग से बिखरी पड़ी थीं। किताबों के विशाल संग्रह में पुलिसकर्मियों के खड़े होने की भी जगह नहीं बची थी। उनमें से कुछ बेपरवाही से किताबों पर खड़े हो गए।

वह उन्हें बिना किसी भावना के देखती रही और कुछ देर बाद चिंतन में डूब गई। ये कांस्टेबल ऐसी संस्कृति से आते हैं जहाँ किताबों को विद्या की देवी सरस्वती के समान पूजा जाता है। अगर गलती से भी पैर कागज के किसी टुकड़े पर पड़ जाए, तो आप देवी से क्षमा मांगने के भाव में अपनी आँखों को छू लेते हैं। संस्कृति की बात

छोड़िए, क्या इन लोगों में किताबों के साथ उचित व्यवहार करने की बुनियादी तमीज़ भी नहीं थी?

पहले जीप चली, फिर ट्रक। सब कुछ ज़ब्त कर लिया गया था—इतिहास की किताबें, यात्रा वृत्तांत, प्राथमिक स्रोत, उसके पिता के नोट्स और संदर्भ सामग्री। उन्हें वापस पाने के लिए उसे दशकों तक अदालतों के चक्कर लगाने पड़ते। अगर अंत में वह उन्हें वापस पा भी लेती, तो वे बुरी तरह क्षतिग्रस्त और अनुपयोगी हो चुके होते। इससे उसके मन में एक डरावना विचार आया। यह एक बहुत बड़ी संभावना थी कि वे पूरे भारत के पुस्तकालयों में इन किताबों की प्रतियाँ ढूँढ़ेंगे और फिर उन सबको नष्ट कर देंगे।

उस रात उसे नींद नहीं आई। बेबसी, उदासी और डर की भावनाएँ उसे जकड़ रही थीं। उसकी साँसें और दिल की धड़कनें बेकाबू हो गई थीं। उसकी हालत ठीक वैसी ही थी जैसी उसने अपने बनाए हुए नायक की थी—उसके अंडकोष कुचले हुए थे। अब उसका अनुभव उसे भी झेलना पड़ रहा था। वह जिज्ञासा, विचार और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर हो रहे इस दमन से लड़ने के तरीके सोचने लगी। इस अन्याय के खिलाफ लड़ना नामुमकिन नहीं था। तभी उसे मुर्गे की बांग सुनाई दी।

~

वह घिसटते हुए बिस्तर से उठी, नहाई और नाश्ते में रागी की रोटी नारियल की चटनी के साथ खाई। कॉफी की जगह उसने एक कटोरी दही पी ली। इससे उसे आराम मिला। उसे नींद आने लगी। वह अध्ययन कक्ष में गई और अपने पिता के बिस्तर पर लेट गई। धीरे-धीरे जो नींद उसे आई, वह बहुत अच्छी लगी।

कुछ मिनट बाद, उसे महसूस हुआ कि लक्ष्मम्मा ने उसके कंधे पर धक्का दिया है।

‘अम्मा, कोई आपको ढूंढते हुए आया है। वो कार से आया है। वो कहता है कि बहुत जरूरी है। मैंने उसे बताया कि आप सो रही हैं, लेकिन उसने मुझे जगाने पर जोर दिया। वो पागलों जैसी हरकतें कर रहा है।’ लक्ष्मी को होश में आने में काफी समय लगा। वह बहुत गहरी नींद में सो गई थी।

जब वह आंगन में आई, तो उसने सुबह की धूप में एक बिल्कुल नई कार को चमकते हुए देखा। आमिर बरामदे में बैठा था। वह अचंभित और उत्सुक थी, लेकिन इससे पहले कि वह कुछ प्रतिक्रिया दे पाती, वह तेजी से उसके पास आया और

फुसफुसाते हुए बोला, 'यह बहुत जरूरी है। तुम्हें मेरी बात सुननी होगी... क्या हम यहीं बात कर सकते हैं?'

'अंदर आओ,' उसने कहा।

जब वे अध्ययन कक्ष में अकेले थे, तो उसने एक कुर्सी की ओर इशारा किया और उसे बैठने का संकेत दिया। वह नहीं बैठा। उसने जल्दी से एक बार पीछे मुड़कर देखा, फिर कमरे में चारों ओर देखा और फिर बहुत धीमी आवाज़ में कहा, 'बाकी बातें मैं तुम्हें रास्ते में बता दूँगी। सरकार ने तुम्हारे नाम पर गिरफ्तारी वारंट जारी किया है। पुलिस के आने से पहले तुम्हें भाग जाना होगा। हम एक अच्छा वकील लेंगे और सीधे उच्च न्यायालय से अग्रिम जमानत ले लेंगे। अगर तुम्हें गिरफ्तार कर लिया गया, तो जमानत मिलने में दिन, सप्ताह, यहाँ तक कि महीने भी लग सकते हैं। मुझे लगता है कि उनका मकसद तुम्हें जेल में सड़ने देना है ताकि वे तुम पर और भी मुकदमे थोप सकें। वे तुम पर सांप्रदायिक सद्भाव भंग करने का आरोप लगाएंगे। फिर वे तुम पर देश के सामाजिक ताने-बाने को नष्ट करने की कोशिश करने का आरोप लगाएंगे...और इसी तरह। तीन-चार दिन के कपड़े पैक कर लो। हम कुनिगल-बैंगलोर वाला सामान्य राजमार्ग नहीं लेंगे। हम गाँव की सड़कों से होकर मगदी और फिर बैंगलोर पहुँचेंगे। किसी दोस्त के घर रुकना...जिस पर तुम सच में भरोसा कर सको। घर से बिल्कुल बाहर मत निकलना।' मैं अग्रिम जमानत का इंतजाम कर दूंगा।'

उसने जल्दी से कुछ कपड़े और शौच सामग्री पैक की, रसोई में गई और लक्ष्मम्मा को बताया कि वह अदालती काम से तुमकुर जा रही है। 'मुझे नहीं पता मैं कब वापस आऊंगी। अगर कोई आपसे पूछे—चाहे पुलिस ही क्यों न पूछे—तो उन्हें बता देना कि मैं शहर में नहीं हूँ। उन्हें यह भी बता देना कि मैं आपको कभी नहीं बताती कि मैं कहाँ जाती हूँ। अगर वे ज़िद करें, तो उन्हें बता देना कि नौकर का मालिक से ऐसे सवाल पूछना शिष्टाचार नहीं है।'

वह आमिर के बगल में आगे की सीट पर बैठ गई। जब कार नरसपुरा बस स्टैंड पर पहुँची, तो उसने कहा, 'दाएँ मुड़िए। पाँच मील बाद एक गाँव आएगा - डोड्डाघट्टा। वहाँ से बाएँ मुड़िए। वहाँ से बैंगलोर तक का बाकी का रास्ता गाँवों से होकर गुज़रता है। हम मुख्य सड़कों से पूरी तरह ओझल हो जाएँगे। चिंता मत कीजिए।'

उसमें एक अजीब सा आत्मविश्वास आ गया था। अब उसके विचार स्पष्ट रूप से बनने लगे थे।

वे मुझे गिरफ्तार कर लेंगे। फिर क्या? दरअसल, इससे मेरी ताकत और बढ़ेगी। मैं सत्याग्रह के ज़रिए संघर्ष करूंगी। मैं आमरण अनशन करूंगी। उसने उन पुरुषों और महिलाओं के बारे में सोचा जिनके जीवन का उसने इन पांच वर्षों में अध्ययन किया था। उसने उन पुरुषों और महिलाओं के बारे में सोचा जिन्हें उसने अपने उपन्यास में गढ़ा था। तुलना में अपनी गिरफ्तारी इतनी डरावनी नहीं लग रही थी।

दोनों में से किसी ने एक शब्द भी नहीं कहा। डोड्डाघट्टा पर आमिर के बाएं मुड़ने के बाद, उसे कुछ याद आया। वह इस तरह यहाँ क्यों आया? नाटकीय...अचानक... और इतनी सारी घटनाओं के बाद इतना स्नेहपूर्ण? उसने मुड़कर उसके चेहरे को ध्यान से देखा। वह बीच-बीच में तिरछी नज़रों से उसे देख रहा था। और अब उनकी आँखें मिलीं।

'मैं जानती हूँ कि तुम क्या कहना चाहते हो... सड़कें बहुत खराब हैं। मुझे ड्राइविंग पर ध्यान देना होगा। चलो किसी अच्छी सड़क पर चलते हैं। हम कहीं रुकेंगे और मैं तुम्हें सब कुछ बताऊँगी। तुम जानते हो कि हमारे पुलिसवाले कितने कमाल के हैं। हम जितनी देर चाहें बात कर सकते हैं। वे कभी इस तरफ नहीं आएंगे।'

उसने सिर हिलाया, फिर कोमलता से उसके कंधे को छुआ।

लगभग एक मील तक धीमी और ऊबड़-खाबड़ सड़क पर गाड़ी चलाने के बाद, उसने सावधानी से गाड़ी को दाईं ओर मोड़ा और एक विशाल जंगल की ओर जाने वाले कीचड़ भरे रास्ते पर चला गया। उसने जंगल के बीचोंबीच गाड़ी रोकी और इंजन बंद कर दिया। काफी देर तक दोनों में से किसी ने कुछ नहीं कहा। फिर आमिर बोला।

'उस रात तुम्हारे कमरे में... मैं नशे में था... मैं...' वह रुका, उसकी आँखों में आँखें डालकर देखने के बाद बोला, 'सुबह मुझे हमारी बातचीत का ज़्यादातर हिस्सा याद आ गया। अगले दिन मैं बहुत देर से उठा और सोचता रहा कि सेमिनार में आऊँ या नहीं। सच कहूँ तो, तुमसे मिलने से डर लग रहा था, लेकिन मैंने तुम्हें डराने नहीं दिया। मैं आया। तुमने... मुझे नज़रअंदाज़ कर दिया। कम से कम मुझे तो यही लगा। जैसे-जैसे सेमिनार आगे बढ़ा और लोग शिष्टाचार के बहाने तुम्हें फिर से नीचा दिखाने लगे, मैं तुम्हारी हिम्मत की तारीफ़ किए बिना नहीं रह सका। तुमने उन सबका अकेले सामना किया! और तुम्हारी विद्वत्ता! पता नहीं कब मेरी तारीफ़ एक ऐसे सम्मान में बदल गई जिसे मैं शब्दों में बयान नहीं कर सकता। मैं बीच में दखल देकर उन्हें चुप

रहने को कहना चाहता था अगर वे तुम्हारे तर्कों का खंडन नहीं कर सकते, लेकिन मैंने ऐसा नहीं किया क्योंकि मैं उन सभी लोगों के सामने, और सबसे बढ़कर सरकार के प्रतिनिधि प्रोफ़ेसर शास्त्री की मौजूदगी में बोलने की हिम्मत नहीं जुटा पाया। मैं वहीं तुम्हारे सामने सिर झुकाना चाहता था।' आप बिल्कुल सही हैं। आपने जो भी कहा, वह ठोस सबूतों पर आधारित है। आपने अपनी छात्रवृत्ति पूरी की है। यह आपकी ही है। मैं... आपसे फिर से प्यार करने लगी हूँ।'

उसने बिना कोई भाव दिखाए उसकी ओर देखा लेकिन कुछ नहीं कहा।

नहीं। वो रोमांटिक प्यार नहीं... फिल्मों में दिखाए जाने वाले प्यार जैसा नहीं, बल्कि समझदारी वाला प्यार। एक ऐसा बंधन जो मैंने उस सेमिनार से पहले कभी महसूस नहीं किया था। वो प्यार नहीं जो किसी स्त्री की बुद्धिमत्ता को पूरी तरह समझे बिना पनपता है। मेरा मतलब उस भावना से है जो आती है... हर पुरुष के जीवन में आनी चाहिए, जब उसे अपनी स्त्री पर गर्व हो, जब उसका प्यार पूजा के स्तर तक पहुँच जाए। मैंने वो महसूस किया। तुम्हारे लिए। मैं उस शाम फिर से तुम्हारे कमरे में आकर तुम्हें ये सब बताना चाहता था, लेकिन डर गया था। और मुझे दिल्ली पहुँचने के बाद ही पता चला कि तुम्हें दूसरे सेमिनार में आमंत्रित नहीं किया गया था। तुम जानती हो सरकार कैसी है। उन्होंने मुझे डॉक्यूमेंट्री फिल्मों का एक और सेट बनाने का काम सौंपा है। ये बहुत फायदेमंद है। मुझे हर फिल्म से 75 प्रतिशत मुनाफा मिलता है। इसी से मैंने ये नई कार खरीदी है। खैर, मैं उस रात तुमने जो कहा था, उसके बारे में सोचता रहा। मैं उस स्त्री के साथ कुछ भी साझा नहीं कर सकता जो किसी भी तरह से मेरे बराबर नहीं है। मैं घमंडी नहीं बनना चाहता... तुम मेरे विचारों में छाई हुई हो। मैं बैंगलोर लौटने के बाद आपसे मिलने आना चाहता था, लेकिन काम के बोझ तले दब गया था।

तेज़ हवा चली। उसने उसका चेहरा नज़रों से हटाकर चारों ओर देखा। खुले मैदान में हवा का आनंद लेने के लिए मौसम एकदम सही था।

'चलो उस बेंच पर बैठते हैं,' उसने कहा और उसकी प्रतिक्रिया का इंतजार किए बिना अपनी तरफ का दरवाजा खोल दिया।

जब वे एक दूसरे के बगल में बैठे, तो उसने कहा, 'मैंने कल सुबह उठने के बाद सप्लीमेंट पढ़ा। क्या आप वेंकट राव को जानते हैं?'

'वह फिल्म पत्रकार?'

जी हां। उन्होंने कुछ समय पहले मेरा इंटरव्यू लिया था। उन्होंने कहा था कि इसे संडे सप्लीमेंट में छापा जाएगा। जब मैंने उसे खोला, तो मैंने आपके उपन्यास की समीक्षा देखी और मैं थोड़ा हैरान, चौंक गया। मुझे तो पता भी नहीं था कि आप उपन्यास लिख रहे हैं। मुझे यकीन है कि आपने इसे पढ़ा होगा। मेरा मतलब समीक्षा से है।

'हां। मुझे कन्नड़ के तीन और अंग्रेजी का एक पेपर मिलता है।'

'क्या गोबर का वो टुकड़ा वाकई समीक्षा है? मुझे लगा किसी पागल ने लिखा होगा, लेकिन भाषा ने मुझे सोचने पर मजबूर कर दिया। मेरा मतलब है, उपन्यास में ऐसी गाली-गलौज को उकसाने वाली कोई बात तो ज़रूर थी। कोई भी किताब की दुकान खुली नहीं थी। मैंने आपके सहायक मोहन कुमार को फोन किया, जो खुद को कन्नड़ साहित्य का कट्टर प्रशंसक बताते हैं।' वे थोड़ा मुस्कुराए। 'उन्होंने कहा, "सर, मैंने इसे पहले ही पढ़ लिया है। किताब मेरे पास है। इससे आपको दुख हो सकता है।" मैंने कहा कि मुझे परवाह नहीं है और उनसे किताब भेजने को कहा। जैसे ही मैंने इसे पढ़ा, मुझे लगा...पता नहीं...मैं उलझन में था, गुस्सा था, दुखी था और हैरान था। मुझे लगा कि यह अविश्वसनीय है कि ऐसी बातें सच में हुई थीं। हालाँकि मैं इस पर विश्वास नहीं करना चाहता था, लेकिन मुझे पता था कि यह सच है—वे सभी फुटनोट, सुल्तानों और बादशाहों के प्रत्यक्ष विवरण और यात्रियों के वृत्तांत मनगढ़ंत नहीं हो सकते। आपकी किताब ने मुझे उनमें से कुछ पढ़ने के लिए प्रेरित किया, लेकिन मुझे नहीं पता था कि मैं उन्हें कहाँ पाऊँगा।'

मुझे उस शाम टीवी पर खबर मिली। "लोकप्रिय पटकथा लेखिका रजिया बेगम के उपन्यास ने एक विशेष समुदाय की भावनाओं को गहरी ठेस पहुंचाई है, जिसके चलते वे विरोध जताने के लिए सड़कों पर उतर आए हैं। एमजी रोड पर सुबह से ही हल्की हिंसा की खबरें आ रही हैं। व्यापारिक प्रतिष्ठानों और सरकारी परिवहन की बसों पर पथराव किया गया है। आगजनी की कुछ घटनाएं भी सामने आई हैं। सरकार ने स्थिति को शीघ्र ही नियंत्रण में कर लिया है। उसने उपन्यास पर प्रतिबंध की घोषणा भी कर दी है और गृह मंत्रालय की नवीनतम रिपोर्टों के अनुसार, पुलिस को इस कार्य के लिए तैनात कर दिया गया है। समुदाय ने उपन्यासकार की तत्काल गिरफ्तारी की भी मांग की है।"

‘तुम्हारी सुरक्षा को लेकर मैं बहुत डरा हुआ था और मैंने डीआईजी को फोन करके अपना परिचय दिया। मुझे लगता है कि इतना काफी था।’ वह मुस्कुराया। ‘उन्होंने मुझे एक संक्षिप्त रिपोर्ट दी, शायद मुझे प्रभावित करने के लिए। उन्होंने कहा कि उनकी पुलिस बल लेखक की पूरी लाइब्रेरी, जिसमें उस आपत्तिजनक उपन्यास की प्रतियां भी शामिल थीं, लेकर लौट चुकी है। उन्होंने कहा कि उन्हें पूरा भरोसा है कि कल दंगे पूरी तरह से रुक जाएंगे। मैंने उनसे तुम्हारी गिरफ्तारी की मांग के बारे में पूछा। उन्होंने कहा कि वे इससे ज्यादा कुछ नहीं कह सकते। मैंने उन्हें धन्यवाद दिया और फोन रखने के बाद, मुझे पता चल गया कि उन्होंने टीवी समाचार की पुष्टि कर दी है। तुम्हें गिरफ्तार किया जाएगा। उसके बाद मुझे नींद ही नहीं आई। जब मैंने अपनी आंखें बंद कीं, तो मैं तुम्हें सेमिनार में बहस करते हुए देख सकता था। मैं तुम्हें प्राथमिक स्रोतों के नाम सुनाते हुए सुन सकता था। मुझे वह रात याद आ गई...हम झूले पर ऐसे बैठे थे और तुम्हारे पैर मेरे पैरों से टकरा रहे थे जब तुम मुझसे टीपू सुल्तान के बारे में जोश से बहस कर रहे थे। मुझे उन किताबों को पढ़ने का मन हुआ जिनका तुमने अपने उपन्यास में जिक्र किया है। तुमने कहा था कि तुम्हारे पिता ने उन्हें अपने पैसों से खरीदा था।’ और अब वे चले गए हैं और एक बार पुलिस उन्हें पकड़ ले तो वे हमेशा के लिए चले जाएंगे।'

जब उसने उसके चेहरे की ओर देखा, तो उसे उसमें एक खामोश समझदारी की झलक दिखाई दी। वे उठे और कार की ओर चल पड़े।

जब वे रास्ते में थे, तो उसने पूछा, 'मुझे जिज्ञासा है। आपको क्या लगता है कि वह समीक्षा किसने लिखी थी?'

‘पहले आप अपना अनुमान बताइए। मैं आपको अपना अनुमान बताऊंगा।’

‘क्या यह प्रोफेसर शास्त्री हो सकते हैं?’

मुझे भी ऐसा ही लगता है। हो सकता है उसने खुद न लिखा हो। उसके पास ऐसे लोगों की कमी नहीं है जो उसकी मदद के लिए तैयार रहते हैं। या फिर अखबार में किसी ने लिखा हो। ऐसी समीक्षा से अखबार का प्रसार बहुत बढ़ जाएगा। अगर मैं उसे अच्छी तरह जानता हूँ, तो उसने खुद नहीं लिखा होगा। वह बहुत चालाक है। उसे पता है कि उसकी बेटी की शादी आपके बेटे से हुई है और उसे यह भी पता है कि नाज़िर आपसे बहुत प्यार करता है। प्रोफेसर कभी भी खुद को किसी भी चीज़ में फँसने नहीं देगा।

वे काफी देर तक चुपचाप सफर करते रहे। अचानक वह धीमा हुआ और कुछ याद आने के अंदाज़ में उसकी ओर देखा और बोला, 'क्या तुम्हें उन किताबों के नाम याद हैं जो पुलिस ने ज़ब्त की थीं? अगर तुम्हें प्रकाशकों के नाम भी याद हों तो और भी अच्छा होगा।'

'क्यों?'

‘उन किताबों की एक सूची बनाइए। इससे उन्हें जारी करवाने के लिए आवेदन दाखिल करते समय हमारा मामला मजबूत होगा। साथ ही एक अस्वीकरण भी जोड़िए जिसमें यह बताया गया हो कि आपकी सूची संपूर्ण नहीं है।’

उसने कुछ देर इस बारे में सोचा। उसे यह बात तर्कसंगत लगी और इससे एक और संभावना खुल गई। उसने कहा, 'बात सिर्फ किताबों को प्रकाशित करवाने की नहीं है। मैं अदालत में यह तर्क दे सकती हूं कि अगर मेरी किताब पर लगा प्रतिबंध जायज़ है तो इन सभी किताबों पर भी प्रतिबंध लगना चाहिए क्योंकि मेरे उपन्यास में इन किताबों को सबूत के तौर पर पेश किया गया है।'

वे देर शाम बैंगलोर पहुंचे। आमिर ने उसे उसके दोस्त नंजुंदप्पा के घर छोड़ दिया। रात के खाने के बाद, उसने याददाश्त के आधार पर सूची तैयार करना शुरू कर दिया।

1.	अबू-अल-फजल अल्लामी	ऐ-इन-आई-अकबरी, अनुवादक: एच. ब्लोचमैन, खंड 1, 2 और 3, 1927, पुनर्मुद्रित, दिल्ली: डीके पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स प्राइवेट लिमिटेड, 1949।
2.	अबू-अल-फजल	अकबरनामा, अनुवादक: एच. बेवरिज, खंड 1 और 2, 1902, पुनर्मुद्रित, दिल्ली: डीके पब्लिशर्स एंड

		डिस्ट्रीब्यूटर्स प्राइवेट लिमिटेड, 1939।
3.	ए.के. प्रियोलकर	डॉ. डेलॉन और डॉ. बुकानन द्वारा दिए गए विवरणों के साथ गोवा जांच, 1961, पुनः मुद्रित, वॉयस ऑफ इंडिया, 1991।
4.	*अल्बेरुनी का भारत*	एड. एडवर्ड सी. साचाउ, खंड I और II, 1910, पुनर्मुद्रित, 1989, 1993, 1996।
5.	*बाबर-नाम*	अनुवादक: एनेट एस. बेवरिज, 2 खंड, 1921, पुनर्मुद्रित, 1989, 1997।
6.	सर एच.एम. इलियट और जॉन डाउसन	भारत का इतिहास, जैसा कि इसके स्वयं के इतिहासकारों द्वारा बताया गया है, 8 खंड। (इन आठ खंडों में समकालीन मुस्लिम इतिहासकारों द्वारा अपने-अपने समय के

		मुस्लिम राजाओं की सेवा में छोड़े गए वृत्तांतों के अनुवाद शामिल हैं और इनमें भारत पर आक्रमण, उनके द्वारा लड़े गए युद्धों और उनके साम्राज्य के प्रशासन का विस्तृत वर्णन है।)
7.	डेविड फ्रॉले और नवरत्न एस. राजाराम	आज के युग में इस्लाम (मिथक और सत्य), बैंगलोर: नैमिषा रिसर्च फाउंडेशन।
8.	डेविड फ्रॉले, एस.वी. शेषगिरी राव और नवरत्न एस. राजाराम	भारत में धर्मयुद्ध: उत्तर-औपनिवेशिक विश्व में ईसाई धर्म का अस्तित्व संघर्ष, बैंगलोर: नैमिषा रिसर्च फाउंडेशन।
9.	हर्ष नारायण	जिज़्या और इस्लाम का प्रसार, नई दिल्ली: वॉयस ऑफ इंडिया, 1990।
10.	*इस्लामी त्रयी श्रृंखला*	मोहम्मद और अविश्वासी, खंड I; अविश्वासियों के

		लिए हदीस, खंड II; एक सरल कुरान: पठनीय और समझने योग्य, खंड III; एक संक्षिप्त कुरान, खंड IV; मोहम्मद, अल्लाह और यहूदी, खंड V, मूलभूत सिद्धांत; मोहम्मद, अल्लाह और ईसाई, खंड VI, मूलभूत सिद्धांत; मोहम्मद, अल्लाह और हिंदू धर्म, खंड VII, मूलभूत सिद्धांत; मोहम्मद, अल्लाह और बुद्धिजीवी, खंड VIII, मूलभूत सिद्धांत, राजनीतिक इस्लाम अध्ययन केंद्र, CSPI प्रकाशन।
11.	Ishwar Sharan	सेंट थॉमस की मिथक और मायलापुर शिव मंदिर, वॉयस ऑफ इंडिया, 1991।
12.	Jadunath Sarkar	औरंगजेब का संक्षिप्त इतिहास, 1930, पुनर्मुद्रित,

		ओरिएंट लॉन्गमैन, 1954, 1962, 1979; शिवाजी और उनका समय, 1919, पुनर्मुद्रित, ओरिएंट लॉन्गमैन, 1973, 1992, 1997; जयपुर का इतिहास, 1939-40; भारत का सैन्य इतिहास, 1960, पुनर्मुद्रित, ओरिएंट लॉन्गमैन।
13.	जेम्स टॉड	राजस्थान का इतिहास और पुरातनता, 2 खंड, 1829, लंदन: रूटलेज केगन पॉल लिमिटेड, पुनर्मुद्रित, रूपा एंड कंपनी, 1997।
14.	जॉन एफ. रिचर्ड्स	द न्यू कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इंडिया: द मुगल एम्पायर, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली: फाउंडेशन बुक्स, 1993।
15.	कोएनराड एल्स्ट	अयोध्या और उसके बाद: हिंदू समाज के समक्ष मुद्दे;

भारत में निषेधवाद: इस्लाम के इतिहास को छुपाना; पैगंबरवाद का मनोविज्ञान; राम जन्मभूमि बनाम बाबरी मस्जिद: हिंदू-मुस्लिम संघर्ष का एक केस स्टडी, वॉयस ऑफ इंडिया; भगवा स्वस्तिका (हिंदू फासीवाद की धारणा) खंड 1 और 2, वॉयस ऑफ इंडिया; डॉ. बी.आर. अंबेडकर, एक सच्चे आर्य; स्वदेशी भारतीय: अगस्त्य से अंबेडकर तक।

16. के.एम. पणिक्कर मालाबार और पुर्तगाली, 1929, पुनः मुद्रित, वॉयस ऑफ इंडिया, 1997।

17. के.एस. लाल मुगल हरम, नई दिल्ली: आदित्य प्रकाशन; मध्यकालीन भारत में मुस्लिम दास प्रथा, नई दिल्ली: आदित्य प्रकाशन;

भारतीय मुसलमान: वे कौन हैं, वॉयस ऑफ इंडिया;
भारत में मुस्लिम राज्य का सिद्धांत और व्यवहार, नई दिल्ली: आदित्य प्रकाशन;
भारत में मुस्लिम शासन की विरासत, नई दिल्ली: आदित्य प्रकाशन।

18. मासिर-ए-आलमगिरी साकी मुस्तद खान, अंग्रेजी अनुवाद। जदुनाथ सरकार, 1947, आरपीटी, कलकत्ता: रॉयल एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल, 1986।

19. Navaratna S Rajaram इतिहास की राजनीति (आर्यन आक्रमण सिद्धांत और विद्वत्ता का विघटन), वॉयस ऑफ इंडिया;
भारतीय इतिहास में राष्ट्रवाद और विकृतियाँ, बैंगलोर: नैमिषा रिसर्च फाउंडेशन; विश्व का एक हिंदू दृष्टिकोण: बौद्धिक

		क्षत्रिय परंपरा पर निबंध, वॉयस ऑफ इंडिया; धोखे के प्रोफाइल (अयोध्या और डेड सी स्क्रॉल), वॉयस ऑफ इंडिया; हिंदुत्व और राष्ट्र, बैंगलोर: नैमिषा रिसर्च फाउंडेशन; आर्यन आक्रमण: राजनीतिक मिथक का ऐतिहासिक सिद्धांत, विजिल (एक जनमत मंच), मद्रास।
20.	Navaratna S. Rajaram, David Frawley	वैदिक आर्य और सभ्यता की उत्पत्ति (एक साहित्यिक और वैज्ञानिक परिप्रेक्ष्य), क्लाउस के. क्लोस्टरमायर द्वारा प्रस्तावना।
21.	आर.सी. मजूमदार	भारतीय जनसमुदाय का इतिहास और संस्कृति, 11 खंड, भारतीय विद्या भवन।
22.	सैमुअल पी. हंटिंगटन	सभ्यताओं का टकराव और विश्व व्यवस्था का

		पुनर्निर्माण, पेंगुइन।
23.	Suhas Majumdar	जिहाद (स्थायी युद्ध का इस्लामी सिद्धांत), वॉयस ऑफ इंडिया।
24.	स्वपन दासगुप्ता, रामा जोइस, अरुण जेटली, एस.पी. गुप्ता, कोएनराड एल्स्ट, अरुण शौरी	अयोध्या संदर्भ, सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय और उस पर टिप्पणियाँ।
25.	Shrikant G. Talageri	आर्यन आक्रमण सिद्धांत और भारतीय राष्ट्रवाद, वॉयस ऑफ इंडिया; आर्यन आक्रमण सिद्धांत: एक पुनर्मूल्यांकन, एस.आर. राव द्वारा प्रस्तावना। दिल्ली: आदित्य प्रकाशन।
26.	सीता राम गोयल	हिंदू-ईसाई मुठभेड़ों का इतिहास (304 ई. से 1996 ई.) वॉयस ऑफ इंडिया। हिंदू मंदिर—उनका क्या हुआ, खंड 1, एक प्रारंभिक सर्वेक्षण; इस्लामी साक्ष्य, खंड 11; कलकत्ता कुरान

याचिका, वॉयस ऑफ इंडिया; मैं कैसे हिंदू बना (एक परिशिष्ट के साथ पुनर्मुद्रित), वॉयस ऑफ इंडिया; अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता (धर्मनिरपेक्ष सिद्धांत बनाम उदार लोकतंत्र), वॉयस ऑफ इंडिया; नेहरूवाद की उत्पत्ति और विकास, खंड 1, साम्यवाद के प्रति प्रतिबद्धता; कैथोलिक आश्रम: संन्यासी या धोखेबाज?, वॉयस ऑफ इंडिया; पोपशाही: इसका सिद्धांत और इतिहास; स्टालिनवादी 'इतिहासकारों' द्वारा फैलाया गया बड़ा झूठ; भारत की राजनीतिक शब्दावली का विकृतिकरण; घेराबंदी में हिंदू समाज; मुस्लिम

		अलगाववाद: कारण और परिणाम; छद्म-धर्मनिरपेक्षता: ईसाई मिशन और हिंदू प्रतिरोध; हिंदू समाज की रक्षा। मुस्लिम आक्रमणकारियों के विरुद्ध वीर हिंदू प्रतिरोध (636-1206 ईस्वी); हिंदू और हिंदू धर्म: अर्थों का हेरफेर; भारत का धर्मनिरपेक्षता: राष्ट्रीय विध्वंस का नया नाम, अनुवादक: यशपाल शर्मा।
27.	स्टैनली लेन-पूल	औरंगजेब और मुगल साम्राज्य का पतन, 1890, पुनर्मुद्रित, 1930, 1990।
28.	व्हीलर थैक्स्टन, संपादक, अनुवादक, टिप्पणी सहित	जहांगीरनामा: जहांगीर के संस्मरण, न्यूयॉर्क: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
29.	अलेक्जेंडर रोजर्स, अनुवादक, हेनरी बेवरिज,	तुज़ुक-ए-जहाँगीरी: जहाँगीर के संस्मरण, 2

	संपादक।	खंड, 1909-14।
30.	गुल बदन बेगम	हुमायूँ का इतिहास (हुमायूँ नामा), अनुवादक: एनेट एस. बेवरिज, परिचय, टिप्पणियाँ और चित्र सहित, 1902।
31.	विलियम इरविन	भारतीय मुगलों की सेना: इसका संगठन और प्रशासन।

पहले उद्धृत सभी पुस्तकों में काशी विश्वनाथ मंदिर के विध्वंस का विस्तृत वर्णन किया गया है। लक्ष्मी ने अपनी लघु उपन्यास में मंदिर के विध्वंस की घटना के लिए इन पुस्तकों को संदर्भ के रूप में इस्तेमाल किया था।

उन्होंने अपने पांच साल के लंबे शोध में कई अन्य पुस्तकों का भी उपयोग किया था, जिनके नाम भी उन्होंने लिखना शुरू कर दिया था।

32.	अनवर शेख	इस्लाम: अरब साम्राज्यवाद; इस्लाम, सेक्स और हिंसा, कार्डिफ: द प्रिंसिपैलिटी पब्लिशर्स, यूके, 1999।
33.	अरुण शौरी	प्रख्यात इतिहासकार: उनकी तकनीक, उनकी विचारधारा, उनका धोखा, नई दिल्ली: एएसए; एक

		धर्मनिरपेक्ष एजेंडा, नई दिल्ली: एएसए; फतवों की दुनिया या क्रिया में शरिया, नई दिल्ली: एएसए; भारतीय विवाद: राजनीति में धर्म पर निबंध, नई दिल्ली: एएसए; राज्य एक ढोंग के रूप में, नई दिल्ली: एएसए; भारत में मिशनरी, नई दिल्ली: एएसए; हमारी आत्माओं का दोहन, नई दिल्ली: एएसए; हिंदू धर्म: सार और परिणाम, नई दिल्ली: एएसए; अरुण शौरी और उनके ईसाई आलोचक, वॉयस ऑफ इंडिया।
34.	डेविड फ्रॉले	उठो अर्जुन: हिंदू धर्म और आधुनिक दुनिया, वॉयस ऑफ इंडिया।
35.	डायना एल. एक	बनारस: प्रकाश का शहर, पेंगुइन।

36.	मार्माड्यूक पिकथॉल, अनुवादक।	कुरान, हर इंसान की लाइब्रेरी।
37.	इब्न वार्रक	मैं मुसलमान क्यों नहीं हूँ, न्यूयॉर्क: प्रोमेथियस बुक्स।
38.	Jagmohan	कश्मीर में मेरी जमी हुई उथल-पुथल, एलाइड पब्लिशर्स।
39.	किंग जेम्स संस्करण:	पवित्र बाइबिल, मानक पाठ संस्करण।
40.	सर विलियम मुइर	मुहम्मद का जीवन: मूल स्रोतों से, तीसरा संस्करण, 1894, लंदन, पहला भारतीय पुनर्मुद्रण, वॉयस ऑफ इंडिया।
41.	डी.एस. मार्गोलियूथ	मोहम्मद और इस्लाम का उदय, 1905, लंदन, पुनः मुद्रित, वॉयस ऑफ इंडिया, 1985।
42.	मार्टिन लिंग्स	मुहम्मद: उनका जीवन सबसे प्राचीन स्रोतों पर आधारित, जॉर्ज एलन एंड अनविन, 1983, पुनर्मुद्रित

1986, 1988। इस पुस्तक के अध्याय 11वीं में इस बात का वर्णन है कि बानू कुरैज़ा जनजाति के सात सौ पुरुषों के गले कैसे काटे गए और उनकी महिलाओं और बच्चों को सैनिकों में किस अनुपात में बाँटा गया। शेष महिलाओं और बच्चों को युद्ध के घोड़ों और हथियारों के बदले में दे दिया गया (पृष्ठ 320)। पाकिस्तान सरकार ने न केवल लिंग्स की पुस्तक को पुरस्कार दिया, बल्कि 1983 में इस्लामाबाद में आयोजित राष्ट्रीय सीरत सम्मेलन में इसे पैगंबर के बारे में अंग्रेजी में लिखी गई सर्वश्रेष्ठ कृति के रूप में चुना। 1990 में, काहिरा विश्वविद्यालय ने इस कृति की अत्यधिक प्रशंसा की।

		मिस्र के पूर्व राष्ट्रपति होस्नी मुबारक ने लेखक को पुरस्कार से सम्मानित किया। इसका अर्थ है कि लिंग्स की कृति को स्वयं मुसलमानों ने प्रामाणिक ग्रंथ के रूप में स्वीकार किया है। मैंने द इस्लामिक टेक्स्ट सोसाइटी, कैम्ब्रिज, यूके, 1991 द्वारा प्रकाशित प्रति का उपयोग किया है।
43.	सर विलियम मुइर	पुस्तक सत्रहवीं, मदीना की घेराबंदी और बेनी कुरेइज़ा का नरसंहार;
44.	डी.एस. मार्गोलियूथ	मोहम्मद और इस्लाम का उदय, 'प्रचार', अध्याय IV, 'यहूदियों का विनाश', अध्याय IX। ये अध्याय आज भी मुसलमानों के मन में इज़राइल और यहूदियों के प्रति मौजूद घृणा की जड़ को दर्शाते हैं; पॉल जॉनसन, यहूदियों का

		इतिहास, हार्पर पेरिनियल, पृष्ठ 166–7, 175।
45.	वी.एस. नायपॉल	विश्वास से परे: परिवर्तित लोगों के बीच इस्लामी भ्रमण, वाइकिंग।
46.	राम स्वरूप	विश्व एक रहस्योद्घाटन के रूप में: देवताओं के नाम, डेविड फ्रॉले द्वारा प्रस्तावना, 1980; ध्यान, योग, देवता, धर्म; इस्लाम में महिलाएं; सिख धर्म का भविष्य?; ईसाई धर्म और इस्लाम पर हिंदू दृष्टिकोण; पूर्वी धर्मों पर पोप जॉन पॉल द्वितीय का विचार; योग: एक हिंदू-बौद्ध प्रतिउत्तर
47.	रॉबर्ट सेवेल	एक भुला हुआ साम्राज्य (विजयनगर), एशियन एजुकेशनल सर्विसेज, नई दिल्ली-चेन्नई।
48.	एच.डी. शर्मा	द रियल टीपू, ट्र. मूल शीर्षक टीपू-निजा स्वरूपा,

		बैंगलोर: साहित्य सिंधु, 2003 से डॉ. प्रधान गुरुदत्त। इस पुस्तक के अंत में दी गई ग्रंथ सूची को पढ़ने की सलाह दी जाती है।
49.	श्रीराम साठे	Aryans: Who Were They? Mysore: Bharatiya Itihasa Sankalana Samiti, 1971; Bharatiya Historiography, Hyderabad: Bharatiya Itihasa Sankalana Samiti; Facts About Aryans, Hyderabad; European Secularism: Mother of Misconceptions.
50.	सतर्कता: एक जनमत मंच	कश्मीर: चेन्नई में प्रख्यात व्यक्तियों के विचार।

51.	एन.आर. वारद पांडे	नेहरू-पूजा का अभिशाप, बैंगलोर: साहित्य सिंधु प्रकाशन।
52.	पवित्र कुरान	एस. अब्दुल गफ्फार द्वारा कन्नड़ में अनुवादित, मंगलौर: शांति प्रकाशन। इस पुस्तक और एवरीमैन्स लाइब्रेरी द्वारा प्रकाशित कुरान के अंग्रेजी अनुवाद में सूरह संख्या में थोड़ा अंतर है।

निम्नलिखित संदर्भ सामग्री साधु द्वारा अपनी लघु उपन्यास के अध्याय 13 में गंगा तट पर दिए गए प्रवचन का समर्थन करने के लिए उपयोग की गई थी।

53.	*Kashi Ka Itihaas*	Varanasi: Vishwavidyalaya Prakashan.
54.	*Yagnavalkya Smriti*	पीपी. 100-1 1-343, दिल्ली: नाग पब्लिशर्स, 1985।
55.	*Raghuvamsham*	पृ. 4-43. रघुवंशम पर वल्लभदेव की टिप्पणी जहां उन्होंने 'धर्मविजय' की अवधारणा की व्याख्या

		की है। वल्लभदेव कश्मीर के विद्वान थे।
56.	एच.डी. वेलंकर, संपादक।	Raghuvamsham, Bombay: Nirnayasagar Press, 1948, p. 93.
57.	एन.एस. वेंकटनाथचार्य	कौटिल्यर्थशास्त्रम्, मैसूर: प्राच्य अनुसंधान संस्थान। अध्याय 5, खंड 176, भाग 13 और अध्याय 19, खंड 7, भाग 121 देखें।
58.	K.S. Narayanacharya	कौटिल्य की समकालीन प्रासंगिकता, मैसूर: कौटिल्य राष्ट्रीय अध्ययन संस्थान। श्री एस. गुरुमूर्ति ने एक प्रस्तावना लिखी है, जिसमें उन्होंने प्राचीन भारतीय युद्ध नैतिकता की तुलना यूनानी, ईसाई और इस्लामी युद्ध नैतिकता से की है। इस प्रस्तावना में प्रचुर मात्रा में विद्वतापूर्ण प्रमाण मौजूद हैं, जो लघु उपन्यास के तेरहवें अध्याय में साधु के संवाद का समर्थन करते हैं।

59.	वी.एस. नायपॉल	‘चचनामा अरबी या मुस्लिम शैली का लेखन है, सिंध की विजय की एक “सुखद कहानी”। लेकिन यह एक खूनी कहानी है, और स्कूलों की किताबों में शामिल इसके अंश काल्पनिक हैं...इतिहास का इतना चयनात्मक विश्लेषण शीघ्र ही अवास्तविकता की ओर ले जाता है। मोहम्मद से पहले अंधकार, गुलामी और शोषण था। मोहम्मद के बाद प्रकाश आया: गुलामी और शोषण गायब हो गए। लेकिन क्या सच में ऐसा हुआ? यह कैसे कहा या सिखाया जा सकता है? सिंध से खलीफा के पास वापस भेजे गए उन सभी गुलामों का क्या हुआ? कराची में घूमने वाले अफ्रीकी गुलामों के वंशजों का क्या हुआ? इसका कोई संतोषजनक उत्तर नहीं है: इसलिए आस्था वास्तविक दुनिया को नकारने या उस पर पर्दा डालने लगती है।’

अमंग द बिलीवर्स: एन इस्लामिक जर्नी, 1981।
'क्या किसी विशेष समुदाय के विरुद्ध जिहाद का आह्वान करना आह्वान करने वालों का धार्मिक अधिकार है, या यह उन लोगों के विरुद्ध मानवाधिकारों का उल्लंघन है जिन पर जिहाद की घोषणा और उसे अंजाम दिया जाता है?' (डॉ. जॉन गारंग, संयुक्त राष्ट्र, जिनेवा, 22 मार्च 1999) उद्धृत: द लेगेसी ऑफ जिहाद: इस्लामिक होली वॉर एंड द फेट ऑफ नॉन-मुस्लिम्स, संपादक एंड्रयू बोस्टम, इब्न वारक द्वारा लिखित प्रस्तावना, न्यूयॉर्क: प्रोमेथस बुक्स।

लक्ष्मी ने सूची को शुरू से अंत तक पढ़ा, कलम नीचे रखी और कागज को घूरने लगी। अचानक उसने कलम फिर उठाई और याददाश्त से लिखना शुरू कर दिया।

योगी सिखाते हैं कि मन स्वयं ही एक उच्चतर अवस्था में विद्यमान है, जो तर्क से परे है, एक अतिचेतन अवस्था है, और जब मन उस उच्चतर अवस्था को प्राप्त कर लेता है, तब मनुष्य को तर्क से परे यह ज्ञान प्राप्त होता है। उस मनुष्य को आध्यात्मिक और पारलौकिक ज्ञान प्राप्त होता है। तर्क से परे जाने की यह अवस्था, सामान्य मानवीय स्वभाव से ऊपर उठने की यह अवस्था, कभी-कभी संयोगवश उस व्यक्ति को भी प्राप्त हो सकती है जो इसके विज्ञान को नहीं समझता; वह मानो इस पर ठोकर खा

जाता है। जब वह इस पर ठोकर खाता है, तो वह सामान्यतः इसे बाहरी स्रोत से आया हुआ मानता है। इसलिए यह स्पष्ट होता है कि एक प्रेरणा, या पारलौकिक ज्ञान, विभिन्न देशों में समान क्यों हो सकता है, लेकिन एक देश में यह किसी देवदूत के माध्यम से, दूसरे में किसी देवता के माध्यम से, और तीसरे में ईश्वर के माध्यम से आता हुआ प्रतीत होता है। इसका क्या अर्थ है? इसका अर्थ है कि मन ने अपने स्वभाव से ही ज्ञान को उत्पन्न किया, और उस ज्ञान की प्राप्ति की व्याख्या उस व्यक्ति के विश्वास और शिक्षा के अनुसार की गई जिसके माध्यम से वह प्राप्त हुआ। वास्तविक तथ्य यह है कि ये विभिन्न मनुष्य मानो संयोगवश इस अतिचेतन अवस्था पर पहुँच गए।

योगी कहते हैं कि इस अवस्था तक अनजाने में पहुँचने में बहुत बड़ा खतरा है। कई मामलों में मस्तिष्क के असंतुलित होने का खतरा होता है, और आमतौर पर आप पाएंगे कि वे सभी लोग, चाहे वे कितने भी महान क्यों न रहे हों, जो इस अतिचेतन अवस्था को बिना समझे ही पा गए, अंधेरे में भटकते रहे, और आम तौर पर अपने ज्ञान के साथ-साथ कुछ अजीब अंधविश्वास भी रखते थे। वे मतिभ्रमों के शिकार हो जाते थे। मोहम्मद ने दावा किया कि एक दिन स्वर्गदूत जिब्राइल एक गुफा में उनके पास आए और उन्हें दिव्य घोड़े हरक पर बिठाकर स्वर्ग ले गए। लेकिन इन सबके साथ, मोहम्मद ने कुछ अद्‌भुत सत्य भी कहे। यदि आप कुरान पढ़ेंगे, तो आपको अंधविश्वासों के साथ-साथ सबसे अद्‌भुत सत्य भी मिलेंगे। आप इसकी व्याख्या कैसे करेंगे? वह व्यक्ति निस्संदेह ईश्वरीय प्रेरणा से प्रेरित था, लेकिन वह प्रेरणा मानो अनजाने में ही मिली थी। वह प्रशिक्षित योगी नहीं थे, और उन्हें अपने कार्यों का कारण नहीं पता था। मोहम्मद ने दुनिया के लिए जो अच्छा किया, उसके बारे में सोचें, और उनके कट्टरवाद के कारण हुए बड़े नुकसान के बारे में सोचें! सोचिए, उनकी शिक्षाओं के कारण लाखों लोगों का नरसंहार हुआ, माताएं अपने बच्चों से वंचित हो गईं, बच्चे अनाथ हो गए, पूरे देश तबाह हो गए, लाखों-करोड़ों लोग मारे गए!

इसलिए हम मोहम्मद और अन्य महान शिक्षकों के जीवन का अध्ययन करके इस खतरे को देख सकते हैं। फिर भी, साथ ही साथ हम यह भी पाते हैं कि वे सभी ईश्वरीय प्रेरणा से प्रेरित थे। जब भी कोई पैगंबर अपनी भावनात्मक प्रकृति को बढ़ाकर अतिचेतन अवस्था में पहुँचता था, तो वह न केवल कुछ सत्य, बल्कि कुछ कट्टरता और अंधविश्वास भी अपने साथ लाता था, जिससे दुनिया को उतना ही नुकसान होता था जितना कि शिक्षा की महानता से लाभ होता था। मानव जीवन नामक असंगतता के

समूह से कोई तर्क प्राप्त करने के लिए, हमें अपनी तर्कशक्ति से ऊपर उठना होगा, लेकिन हमें इसे वैज्ञानिक रूप से, धीरे-धीरे, नियमित अभ्यास द्वारा करना होगा, और हमें सभी अंधविश्वासों का त्याग करना होगा। हमें अतिचेतन अवस्था का अध्ययन उसी प्रकार करना चाहिए जैसे किसी अन्य विज्ञान का। हमें तर्क पर अपनी नींव रखनी होगी, हमें तर्क का अनुसरण करना होगा जहाँ तक वह ले जाए, और जब तर्क विफल हो जाए, तो तर्क स्वयं हमें उच्चतम स्तर का मार्ग दिखाएगा। जब आप किसी व्यक्ति को यह कहते हुए सुनें, 'मैं ईश्वरीय प्रेरणा से प्रेरित हूँ,' और फिर वह तर्कहीन बातें करे, तो उसे अस्वीकार कर दें। क्यों? क्योंकि ये तीनों अवस्थाएँ—प्रवृत्ति, तर्क और अतिचेतना, या अचेतन, चेतन और अतिचेतन अवस्थाएँ—एक ही मन से संबंधित हैं। एक व्यक्ति में तीन मन नहीं होते, बल्कि उसकी एक अवस्था दूसरी अवस्थाओं में विकसित होती है। प्रवृत्ति तर्क में विकसित होती है, और तर्क पारलौकिक चेतना में; इसलिए, कोई भी अवस्था दूसरी अवस्था का खंडन नहीं करती। वास्तविक प्रेरणा कभी तर्क का खंडन नहीं करती, बल्कि उसे पूर्ण करती है। जिस प्रकार महान पैगंबर कहते हैं, 'मैं विनाश करने नहीं, बल्कि पूर्ण करने आया हूँ,' उसी प्रकार प्रेरणा हमेशा तर्क को पूर्ण करने आती है और उसके साथ सामंजस्य में रहती है। (स्वामी विवेकानंद की संपूर्ण रचनाएँ, अद्वैत आश्रम, मायावती स्मारक संस्करण, 14वाँ संस्करण, खंड I, 1972, पृष्ठ 183-185)।

उसने कलम नीचे रख दी और सूची पर नज़र डाली: यह उसके शोध का एक चौथाई हिस्सा भी नहीं था। वह जानती थी कि समय के साथ-साथ, जैसे-जैसे उसे अन्य पुस्तकों और सामग्रियों के नाम याद आते जाएंगे, यह सूची बढ़ती जाएगी। बस उन्हें याद रखने की बात थी।

आभार

इस उपन्यास की प्रारंभिक तैयारी में कई लोगों ने मेरी मदद की है। मैं विशेष रूप से एक उपन्यासकार बहन और उनके परिवार की सहायता के लिए कृतज्ञता व्यक्त करना चाहता हूँ। पाँच दिनों तक उनके घर में रहने के दौरान, उन्होंने और उनके सुशिक्षित बच्चों ने मुझे रोज़मर्रा की ज़िंदगी और विशेष अवसरों पर मुसलमानों की परंपराओं, रीति-रिवाजों और तौर-तरीकों के बारे में विस्तार से समझाया। उनके पति

हर समय मेरे साथ रहे। नमाज़ के समय वे मुझे मस्जिद ले जाते थे और अपने रिश्तेदारों और दोस्तों से मेरा परिचय कराते थे, और उनसे मेलजोल बढ़ाने में मेरी मदद करते थे। उन्होंने मुझे मंगलौर स्थित शांति प्रकाशन द्वारा प्रकाशित मुस्लिम धार्मिक परंपराओं और अनुष्ठानों की पुस्तकें दिलवाईं और उनमें से महत्वपूर्ण बातों को समझाया। मैं इस मदद के लिए उनका सदा आभारी रहूँगा। मेरे पूर्व सहकर्मी, डॉ. सिद्दीकी, कई दिनों तक मेरे साथ बैठे और उत्तर भारतीय मुसलमानों, विशेषकर बनारस के मुसलमानों के रीति-रिवाजों और तौर-तरीकों के बारे में विस्तार से बताया। शिमोगा के डॉ. इब्राहिम साहब ने कई बारीकियों को समझाया, जिससे मेरे मन में बनी कुछ छवियों को और अधिक स्पष्टता मिली। मैं इन सभी लोगों का ऋणी हूँ। उपन्यास में बाकी विवरण मैंने अपनी पढ़ाई से लिए हैं।

हम्पी के बारे में मेरे विशिष्ट प्रश्नों और स्पष्टीकरणों के संबंध में, डॉ. एम. चिदानंद मूर्ति ने उतने ही स्पष्ट उत्तर दिए, साथ ही सहायक दस्तावेजी प्रमाण भी प्रस्तुत किए। मैं इस उपकार के लिए उनका आभारी हूँ। शतवधानी डॉ. आर. गणेश ने न केवल धर्म, भारतीय नैतिकता और भारतीय दार्शनिक विचारधाराओं के क्षेत्रों में विशिष्ट संदर्भों के सटीक स्रोत खोजे, बल्कि उपन्यास की पांडुलिपि की समीक्षा भी की। आदरणीय एन. बालासुब्रमण्य, डॉ. एस. रामास्वामी, बी.एस. चंद्रशेखर और डॉ. तुलसीरामचंद्र ने भी उपन्यास की पांडुलिपि पर अपनी बहुमूल्य प्रतिक्रिया और सुझाव दिए हैं। डॉ. प्रधान गुरुदत्त ने अंतिम पांडुलिपि पढ़ी, उसमें सुधार किए और उसकी विस्तृत समीक्षा की। डॉ. एच.एस. गोपाल राव ने कुछ दुर्लभ पुस्तकें खोजीं और मुझे उनकी फोटोकॉपी भेजीं। मुझे उन अनेक लोगों के नाम याद नहीं हैं, जिन्होंने मेरी मदद की है। यह पूरी तरह से मेरी गलती है कि मैंने उन लोगों के नाम नोट नहीं किए जिन्होंने विभिन्न रूपों में मेरी सहायता की है।

इन प्रतिष्ठित व्यक्तियों के प्रति विशेष आभार व्यक्त किया जाता है जिन्होंने उपन्यास के छपने से पहले उसका गहन अध्ययन किया। इनमें पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय के सेवानिवृत्त मुख्य न्यायाधीश, झारखंड और बिहार के पूर्व राज्यपाल और विधि पर कई विद्वतापूर्ण पुस्तकों के लेखक एम. रामा जोइस; वरिष्ठ वकील, पूर्व विधि मंत्री, गांधीवादी और सार्वजनिक जीवन में लंबी और विशिष्ट सेवा का रिकॉर्ड रखने वाले हरनाहल्ली रामास्वामी; और प्रख्यात वकील अशोक हरनाहल्ली शामिल हैं।

*****समाप्त *****

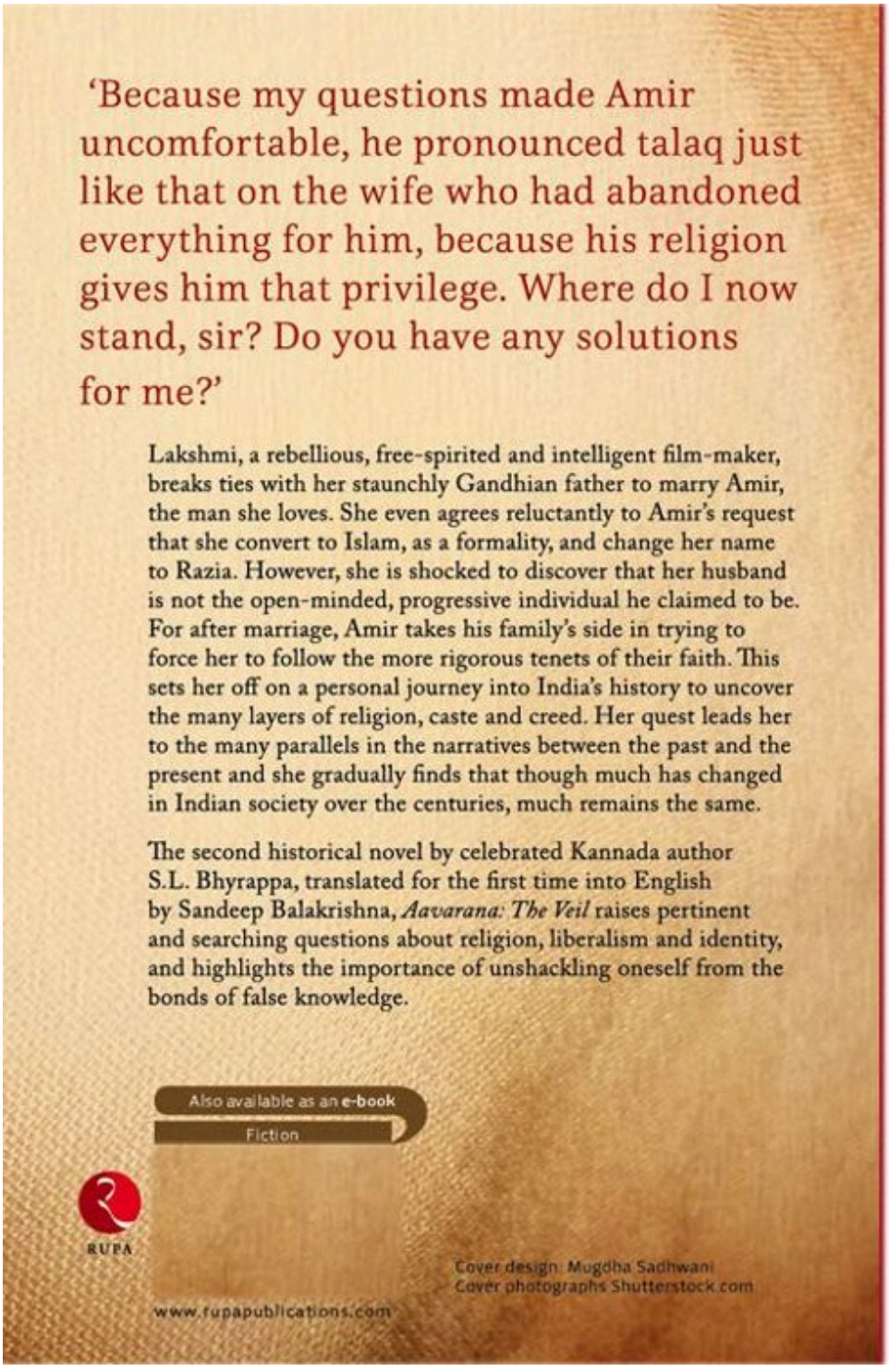
'Because my questions made Amir uncomfortable, he pronounced talaq just like that on the wife who had abandoned everything for him, because his religion gives him that privilege. Where do I now stand, sir? Do you have any solutions for me?'
Lakshmi, a rebellious, free-spirited and intelligent film-maker, breaks ties with her staunchly Gandhian father to marry Amir, the man she loves. She even agrees reluctantly to Amir's request that she convert to Islam, as a formality, and change her name to Razia. However, she is shocked to discover that her husband is not the open-minded, progressive individual he claimed to be. For after marriage, Amir takes his family's side in trying to force her to follow the more rigorous tenets of their faith. This sets her off on a personal journey into India's history to uncover the many layers of religion, caste and creed. Her quest leads her to the many parallels in the narratives between the past and the present and she gradually finds that though much has changed in Indian society over the centuries, much remains the same.
The second historical novel by celebrated Kannada author S.L. Bhyrappa, translated for the first time into English by Sandeep Balakrishna, Aavarana: The Veil raises pertinent and searching questions about religion, liberalism and identity, and highlights the importance of unshackling oneself from the bonds of false knowledge.
Also available as an e-book
Fiction
RUPA
Cover design: Mugdha Sadhwani
Cover photographs Shutterstock.com
www.rupapublications.com